

कृषि ज्ञान मंजुषा



कृषि विभाग
उत्तर प्रदेश



कार्यालय, दूरभाष / फैक्स : 2239247
सी.एच. : 2213256

कार्यालय कक्ष संख्या 69–70
मुख्य भवन

दिनांक : 19.06.2023

सूर्य प्रताप शाही

मंत्री

कृषि, कृषि शिक्षा एवं
कृषि अनुसंधान विभाग
उत्तर प्रदेश

सन्देश

प्रदेश की अर्थव्यवस्था को गति देने के लिए कृषि से होने वाली आय में वृद्धि के लिए कृषि प्रसार की तकनीक को सुदृढ़ करके एवं नवीन लाभकारी जानकारी किसान भाइयों तक पहुँचाकर ही उन्हें विकास की धारा से जोड़ा जा सकता है। नवीनतम कृषि तकनीकों को संकलित कर, प्रदेश के सभी कृषकों तक सुलभता से जानकारी उपलब्ध कराने के उद्देश्य से “**कृषि ज्ञान मंजूषा**” का नवीन संस्करण का प्रकाशन किया जा रहा है। इस पुस्तक में पारम्परिक कृषि के साथ नवोन्मेषी भौगोलिक संकेतों का कृषि में महत्व, पौधों की किस्मों और किसानों के अधिकारों का संरक्षण अधिनियम 2001, कुपोषण से निजात पाने के लिए विकसित जैव संवर्धित (बायोफोर्टिफाइड) किस्में एवं श्री अन्न (मिलेट्स) की खेती पर आधारित सभी विषयों को समावेशित किया गया है।

“कृषि ज्ञान मंजूषा” द्वारा कृषि विभाग के अधिकारियों/कर्मचारियों तथा कृषकों को नवीन तकनीकी पहुँचाने का एक सशक्त माध्यम सिद्ध होगा। किसान भाई नवीन तकनीकी को अपने खेतों पर उतार कर लाभान्वित होंगे। कृषि ज्ञान मंजूषा के भाग-1 व भाग-2 के पाठ्यक्रम का चयन एवं उनकी सामग्री तैयार करने में प्रसार शिक्षा एवं प्रशिक्षण ब्यूरो के सहायक निदेशक, डॉ सुरेश सिंह यादव व श्री नीलेश चौरसिया के अथक प्रयास एवं पुस्तिका को तैयार कराने व नेतृत्व प्रदान करने में श्री राजेन्द्र कुमार सिंह, संयुक्त कृषि निदेशक (ब्यूरो) की भूमिका सराहनीय रही। डॉ जितेन्द्र कुमार तोमर, प्रबन्ध निदेशक, उ0प्र0 बीज विकास निगम का प्रयास विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक में सम्मिलित विषय पूरे प्रदेश के किसान भाइयों तथा कृषि क्षेत्र से जुड़े समस्त व्यक्तियों हेतु लाभप्रद होगी एवं कृषि क्षेत्र में आय को दोगुना करने के संकल्प तथा कृषि को उद्यम के रूप में स्थापित करने में सहयोग प्रदान करेगी।

मैं “कृषि ज्ञान मंजूषा” को तैयार करने में जुड़े सभी अधिकारियों/कर्मचारियों की सराहना करते हुए प्रकाशन हेतु शुभकामनाएं देता हूँ।

सूर्य प्रताप शाही
(सूर्य प्रताप शाही)

मंत्री, कृषि, कृषि शिक्षा एवं
कृषि अनुसंधान विभाग
उत्तर प्रदेश



उत्तर प्रदेश सचिवालय
8, नवीन भवन, लखनऊ
दूरभाष : 0522—2238171 (का.)

दिनांक : 19.06.2023

बलदेव सिंह औलख

राज्य मंत्री

कृषि, कृषि शिक्षा एवं
कृषि अनुसंधान विभाग,
उत्तर प्रदेश

सन्देश

यह बड़े हर्ष का विषय है कि कृषि प्रसार एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम के सुदृढ़ीकरण एवं अन्तर्राष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष 2023 के माध्यम से श्री अन्न (मिलेट्स) की पोषकता को जनमानस तक पहुँचाने के दृष्टिगत कृषि में सम्मिलित करने के उद्देश्य से कृषि विभाग द्वारा कृषि प्रसार अधिकारियों तथा कृषकों हेतु लाभदायक “कृषि ज्ञान मंजूषा” के नवीन संस्करण का प्रकाशन किया जा रहा है।

“कृषि ज्ञान मंजूषा” में पारम्परिक कृषि के साथ—साथ नवोन्मेषी कृषि एवं तकनीक, श्री अन्न (मिलेट्स) की खेती के साथ—साथ पशुपालन, वानिकी, उद्यान, मत्स्यपालन आदि विषय का चयन एवं साहित्य संकलन करने में प्रसार शिक्षा एवं प्रशिक्षण ब्यूरो के कर्मचारियों द्वारा श्री राजेन्द्र कुमार सिंह, संयुक्त कृषि निदेशक (ब्यूरो) के निर्देशन में सराहनीय कार्य किया गया है।

मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक में सम्मिलित विषय, कृषि क्षेत्र से जुड़े समस्त लोगों के लिए लाभकारी एवं उपयोगी सिद्ध होंगे एवं कृषि क्षेत्र में नयी तकनीक के प्रयोग के साथ श्री अन्न की खेत में वापसी से जनमानस को सवास्थ्यवर्धक श्री अन्न (मिलेट्स) की थाली में वापसी को प्रोत्साहन मिलेगा।

मैं इसके प्रकाशन के लिए अपनी शुभकामनाएं देते हुए इसे तैयार करने में लगे अधिकारियों / कर्मचारियों के प्रयास की सराहना करता हूँ।

(बलदेव सिंह औलख)

राज्य मंत्री

कृषि, कृषि शिक्षा एवं
कृषि अनुसंधान विभाग,
उत्तर प्रदेश



डॉ. देवेश चतुर्वेदी

आई.ए.एस.

अपर मुख्य सचिव, कृषि,
उत्तर प्रदेश



अर्द्धशा. पत्र संख्या :

कृषि, कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान,
कृषि विपणन, कृषि विदेश व्यापार
एवं निर्यात प्रोत्साहन विभाग,
उत्तर प्रदेश शासन।

25, नवीन भवन, सचिवालय, लखनऊ।

कार्या. : 0522—2237617

फैक्स : 0522—2235488

Email : psup.agri@gmail.com

दिनांक : 20.06.2023

सन्देश

प्रदेश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि एवं कृषि क्षेत्र हैं। बढ़ती आबादी को खाद्यान्न व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि हम कृषि उत्पादन बढ़ायें। पर्यावरण परिवर्तन के कारण बढ़ते तापमान एवं असमय व असामान्य वर्षा के दृष्टिगत श्री अन्न (मिलेट्स) को कृषि में सम्मिलित कर, जहाँ एक ओर उत्पादन लागत कम कर पायेंगे वहीं दूसरी ओर कृषि को लाभप्रद बना पायेंगे। यह तभी सम्भव है जब विभिन्न प्रसार माध्यम जैसे— किसान मेला, किसानों से संवाद, किसान गोष्ठी, कृषक प्रशिक्षण, कृषक उपयोगी सहित्यों के माध्यम से उन्तक उन्नत कृषि तकनीक एवं अन्तर्राष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष 2023 द्वारा श्री अन्न (मिलेट्स) को बढ़ावा देने तथा इन खाद्यान्न के पोषण संबन्धित जानकारी पहुँचायें। इसी कड़ी में कृषि विभाग द्वारा “**कृषि ज्ञान मंजूषा**” के नवीन संस्करण का प्रकाशन किया जा रहा है जो हर्ष का विषय है।

इस पुस्तक के नवीन संस्करण में कृषि फसलों के साथ भौगोलिक संकेतों का कृषि में महत्व, पौधों की किस्मों और किसानों के अधिकारों का संरक्षण अधिनियम 2001, कुपोषण से निजात पाने के लिए विकसित जैव संवर्धित (बायोफोर्टिफाइड) किस्में, श्री अन्न (मिलेट्स), पशुपालन, उद्यान, सब्ज़ी उत्पादन, मूल्य संवर्धन, कृषक उत्पादन संगठन एवं अन्य नवोन्मेषी कृषि विषयों को सम्मिलित किया गया है जो कृषि विभाग के अधिकारियों एवं क्षेत्रीय कर्मचारियों के ज्ञान वर्धन में सहायक होगी।

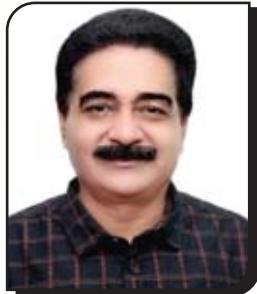
कृषि ज्ञान मंजूषा के भाग—1 व भाग—2 के पाठ्यक्रम का चयन एवं उनकी सामग्री तैयार करने में एवं नेतृत्व प्रदान करने में श्री राजेन्द्र कुमार सिंह, संयुक्त कृषि निदेशक (ब्यूरो) की भूमिका सराहनीय रही एवं दोनों संस्करण को अन्तिम रूप देने में डॉ० जितेन्द्र कुमार तोमर, प्रबन्ध निदेशक, उ०प्र० बीज विकास निगम का प्रयास विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

मैं इस विश्वास के साथ, कि यह पुस्तक हमारे प्रदेश के किसान भाइयों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं, कृषि स्नातकों एवं प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने वाले अभ्यर्थियों के लिए एक सशक्त माध्यम सिद्ध होगी, जिससे हमारे किसान भाई उत्पादक ही नहीं अपितु उद्यमी बनकर अपनी आय में वृद्धि कर सकेंगे।

(डॉ. देवेश चतुर्वेदी)

आई.ए.एस.

अपर मुख्य सचिव, कृषि
उत्तर प्रदेश



विवेक कुमार सिंह
कृषि निदेशक, उत्तर प्रदेश



कृषि भवन
मदन मोहन मालवीय मार्ग,
लखनऊ

कार्यालय : 0522 - 2205868-69
फैक्स : 0522 - 2206582
ई-मेल : dirag@nic.in
पत्रांक : कृ०नि०शि०-८८
दिनांक : 20 / 06 / 2023

प्राक्कथन

भारतीय कृषि सतत् विकास की ओर अग्रसर है, इससे भोजन और रोजगार दोनों ही ग्रामीणों को मिल रहा है। यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि नवीनतम विकसित कृषि तकनीकों के साथ-साथ श्री अन्न (मिलेट्स) की खेती आदि विषयों को संकलित कर, प्रदेश के सभी कृषकों, कृषि स्नातकों एवं कृषि सेवा संवर्ग की प्रतियोगी परीक्षा की तैयारी कर रहे छात्रों तक कृषि तकनीकी ज्ञान को सुलभ कराने के उद्देश्य से “**कृषि ज्ञान मंजूषा**” नवीन संस्करण को स्वरूप प्रदान करने में संयुक्त कृषि निदेशक (ब्यूरो), श्री राजेन्द्र कुमार सिंह का विशेष योगदान रहा है, जिसमें प्रक्षेत्र प्रणाली पर आधारित सभी विषयों को भाग-1 एवं भाग-2 में समावेशित किया गया है।

कृषि क्षेत्र में लगातार अनुसंधान कर, तकनीकों को शोध संस्थान द्वारा विकसित किया जा रहा है, वर्तमान में जलवायु परिवर्तन के दृष्टिगत श्री अन्न (मिलेट्स) उत्पादन की उन्नत तकनीक जिसे कृषकों तक पहुँचाने हेतु विभिन्न माध्यम अपनाये जा रहे हैं। कृषक प्रशिक्षण इन सभी विधाओं में सीधा संवाद स्थापित करने का एक सशक्त माध्यम है। किसी भी प्रशिक्षण में तकनीकी साहित्य का एक महत्वपूर्ण स्थान है। आशा है कि सभी कृषक, कृषि स्नातक एवं कृषि कार्य तथा कृषि उत्पादन से जुड़े हुए सभी व्यक्ति / संस्थाएं लाभान्वित होंगे। “**कृषि ज्ञान मंजूषा**” को तैयार करने में इससे जुड़े सभी तकनीकी एवं गैर तकनीकी कार्मिकों का प्रयास सराहनीय है।

मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक कृषक भाइयों / कृषि कार्य से जुड़ी संस्थाओं / कृषक संगठनों / कृषि विज्ञान के विद्यार्थियों के ज्ञान वर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी।


(विवेक कुमार सिंह)
कृषि निदेशक,
उत्तर प्रदेश।

उत्तर प्रदेश के कृषि जलवायु अंचल



1. तराई क्षेत्र ●
2. पश्चिमी मैदानी क्षेत्र ●
3. मध्य पश्चिमी मैदानी क्षेत्र ●
4. दक्षिणी पश्चिमी अर्द्धशुष्क मैदानी क्षेत्र ●
5. मध्य मैदानी क्षेत्र ●
6. बुन्देलखण्ड क्षेत्र ●
7. उत्तर-पूर्वी मैदानी क्षेत्र ●
8. पूर्वी मैदानी क्षेत्र ●
9. विन्ध्य क्षेत्र ●

चावल में कृषि-पारिस्थितिकी तंत्र विश्लेषण



मित्र जीव

रात्रु जीव



मित्र कीट जिन्हें संरक्षित करें



जाइदगोग्रामा कीट



नियोचिटिना बीटल



हाईड्रोमिया



पैरासाइटिक वास्प से ग्रसित कीट



जिन्थोपिम्पला



क्राइसोपला कीट



प्रेइंग मेन्टिस



रोल बीटल



ड्रैगन फ्लाई



ग्राउन्ड बीटल



म्रिड बग



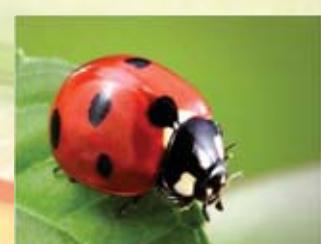
काक्सीनेला



वाटर बग



मीडो ग्रासहॉपर



गोल मकड़ी



बौनी मकड़ी



चार जबड़े वाली मकड़ी



हली बग पकड़ी

मित्र कीट जिन्हें संरक्षित करें



सिरफिड फ्लाई



कम्पोलेटिस



डिग्लीमस मोन्टोज्योरी



सिरफिड फ्लाई



रोव बीटल



इयर विग



झींगुर



प्रीडेटरी वास्प (ततैया)



ट्राईकोग्रामा



डेमसेल फ्लाई



ब्रेकॉन फ्लाई



पेपर वास्प



एप्रिकेनिया वास्प



कोटेशिया वास्प



ग्राउण्ड बीटल



एफिड मिज



माइनूट पाइरेट बग

फसलों में पोषक तत्वों की कमी के लक्षण

लाभदायक फसल उत्पादन के लिए पोषक तत्वों की कमी के लक्षणों को पहचान कर, उनका सही उपचार करना प्रत्येक कृषक का कर्तव्य होना चाहिए। वैज्ञानिकों द्वारा कमी के लक्षणों को जो फसलों की पत्तियों / तनों एवं पुष्प में दिखाई देते हैं, की पहचान के तरीके बताये गये हैं। उनके आधार पर फसलों को देखकर उनकी कमी के लक्षणों की जानकारी की जा सकती है। पोषक तत्वों की कमी प्रायः पौधों की पत्तियों में रंग परिवर्तन से ज्ञात होता है। आवश्यक पोषक तत्वों की कमी के लक्षण निम्नवत् हैं :

बोरान

वर्धनशील खण्ड के पास की पत्तियों का रंग पीला हो जाता है। कलियां सफेद या हल्के भूरे मृत ऊतक की तरह दिखाई देती हैं।

गंधक (सल्फर)

पत्तियां, शिराओं सहित, गहरे हरे से पीले रंग में बदल जाती हैं तथा बाद में सफेद हो जाती है। सबसे पहले नई पत्तियां प्रभावित होती हैं।

मैग्नीज

पत्तियों का रंग पीला-धूसर या लाल-धूसर हो जाता है तथा शिराएं हरी होती हैं। पत्तियों का किनारा और शिराओं का मध्य खण्ड हरितिमाहीन हो जाता है। हरितिमाहीन पत्तियां अपने सामान्य आकार में रहती हैं।

जस्ता (ज़िंक)

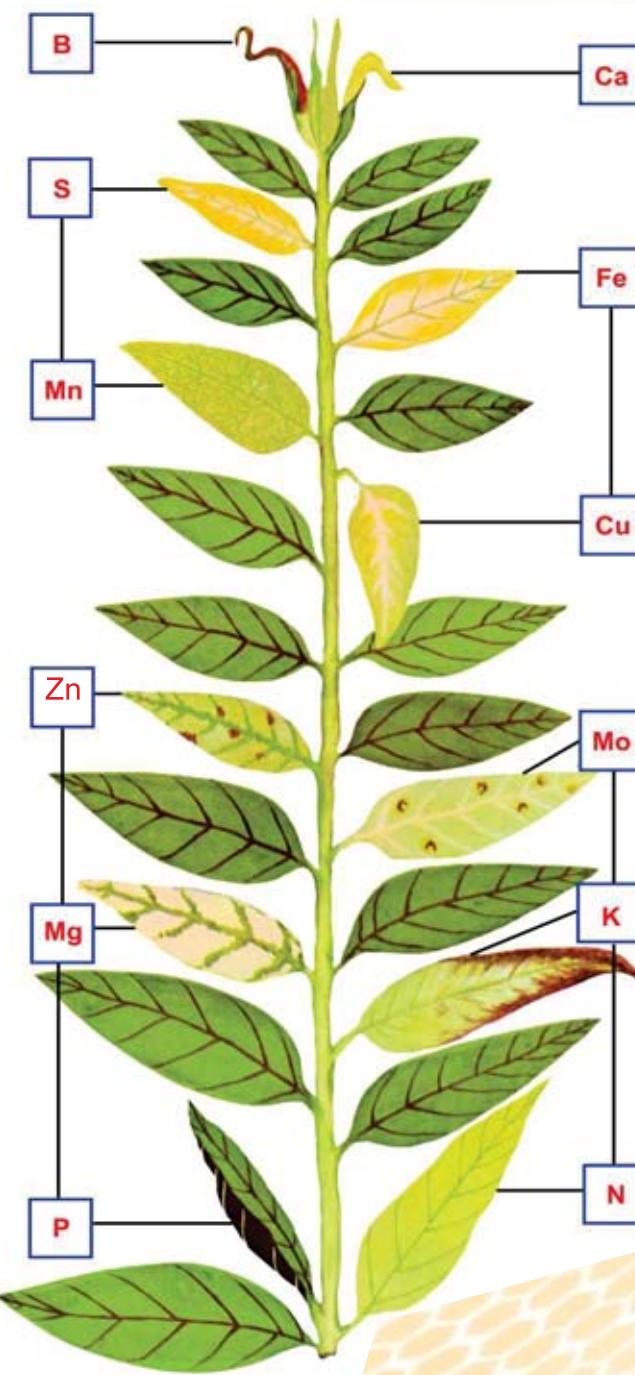
सामान्य तौर पर पत्तियों के शिराओं के मध्य हरितिमाहीन के लक्षण दिखाई देते हैं और पत्तियों का रंग ताँबे की तरह हो जाता है।

मैग्नीशियम

पत्तियों के अग्रखण्ड का रंग गहरा हरा होकर शिराओं का मध्य खण्ड सुनहरा पीला हो जाता है अन्त में किनारे से अन्दर की ओर लाल-बैंगनी रंग के धब्बे बन जाते हैं।

फॉरस्फोरस

पौधों की पत्तियाँ फारस्फोरस की कमी के कारण छोटी रह जाती हैं तथा पौधों का रंग गुलाबी होकर गहरा हरा हो जाता है।



कैलिशियम

प्राथमिक पत्तियां पहले प्रभावित होती हैं तथा देर से निकलती हैं। शीर्ष कलियां खराब हो जाती हैं। मक्के की नोंकें विपक जाती हैं।

लोहा (आयरन)

नई पत्तियों में तने के ऊपरी खण्ड पर सबसे पहले हरितिमाहीन के लक्षण दिखाई देते हैं। शिराओं को छोड़कर पत्तियों का रंग एक साथ पीला हो जाता है। उक्त कमी होने पर भूरे रंग का धब्बा या मृत ऊतक के लक्षण प्रकट होते हैं।

तांवा (कॉपर)

नई पत्तियां एक साथ गहरी पीले रंग की हो जाती हैं तथा सूख कर गिरने लगती हैं। खाद्यान्वाली फसलों में गुच्छों में वृद्धि होती है तथा शीर्ष में दाने नहीं होते हैं।

मॉलिडेनम

नई पत्तियां सूख जाती हैं, हल्के हरे रंग की हो जाती हैं मध्य शिराओं को छोड़कर पूरी पत्तियों पर सूखे धब्बे दिखाई देते हैं। नाइट्रोजन के उचित ढंग से उपयोग न होने के कारण पुरानी पत्तियाँ हरितिमाहीन होने लगती हैं।

पोटेशियम

पुरानी पत्तियों का रंग पीला / भूरा हो जाता है और बाहरी किनारे कट-फट जाते हैं। मोटे अनाज जैसे मक्का एवं ज्वार में ये लक्षण पत्तियों के अग्रखण्ड से प्रारम्भ होते हैं।

नाइट्रोजन

पौधे हल्के हरे रंग के या हल्के पीले रंग के होकर बोने रह जाते हैं। पुरानी पत्तियां पहले पीली (हरितिमाहीन) हो जाती हैं। मोटे अनाज वाली फसलों में पत्तियों का पीलापन अग्रखण्ड से शुरू होकर मध्य शिराओं तक फैल जाता है।



उ.प्र. में पोषक तत्वों की क्रांतिक सीमायें तथा सम्बन्धित तत्वों हेतु उर्वरक संस्तुतियाँ

सूक्ष्म/मुख्य पोषक तत्व	उर्वरता श्रेणी	उर्वरता स्तर (पी.पी.एम.)	उर्वरक संस्तुति किग्रा./हे.	अभ्युक्ति	
1	2	3	4	5	
अ. मुख्य पोषक तत्व					
1. नाइट्रोजन	अतिन्यून	< 0.20	मृदा परीक्षण के आधार पर विभिन्न फसलों में उर्वरकों की संस्तुति की जाती है। संस्तुति के अनुसार उर्वरकों को प्रयोग करना चाहिए।	यूरिया व पोटाश का पर्णीय छिड़काव के अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।	
	न्यून	0.21 - 0.5			
	मध्यम	0.51 - 0.8			
	उच्च	> 0.8			
2. फॉस्फोरस	अतिन्यून	< 10.0		यूरिया व पोटाश का पर्णीय छिड़काव के अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।	
	न्यून	10.1 - 20.0			
	मध्यम	20.1 - 40.0			
	उच्च	> 40.0			
3. पोटाश	अतिन्यून	< 50.00			
	न्यून	51 - 100			
	मध्यम	101 - 250			
	उच्च	> 250			
ब. द्वितीयक पोषक तत्व					
1. कैल्शियम	प्रदेश में कैल्शियम एवं मैग्नीशियम की कमी परिलक्षित नहीं हो रही है।				
3. सल्फर	कम स्तर	< 10	200 किग्रा. जिस्प्सम/हे.	—	
	सीमान्त कमी	10 - 15	100 किग्रा. जिस्प्सम/हे.	—	
	अधिकता	> 15		—	
स. सूक्ष्म पोषक तत्व					
1. ज़िंक	कम स्तर	< 0.6	50 किग्रा. ज़िंक सल्फेट/हे.	तेल वाली फसलों के लिए ज़िंक सल्फेट की मात्रा आधी कर देनी चाहिए मृदा में ज़िंक सल्फेट दो वर्ष या चार फसलों के बाद प्रयोग करना चाहिए।	
	सीमान्त कमी	0.6 - 1.2	25 किग्रा. ज़िंक सल्फेट/हे.		
	अधिकता	> 1.2			
2. लोहा	कम स्तर	< 4	50 किग्रा. फेरस सल्फेट/हे.	1 प्रतिशत फेरस सल्फेट के घोल को 7 से 10 दिन के अन्दर 3 छिड़काव करने चाहिए। छिड़काव टिलरिंग अवस्था से प्रारम्भ करें छिड़काव की संख्या तत्व की कमी के स्तर को देखते हुए घटाई या बढ़ाई जा सकती है।	
	सीमान्त कमी	4 - 8	25 किग्रा. फेरस सल्फेट/हे.		
	अधिकता	> 8			
3. ताँबा	कम स्तर	< 0.2	5 किग्रा. कॉपर सल्फेट/हे.	—	
	सीमान्त कमी	0.2 - 0.4	2.5 किग्रा. कॉपर सल्फेट/हे.	—	
	अधिकता	> 0.4		—	
4. मैंगनीज	कम स्तर	< 2	20 किग्रा. मैंगनीज सल्फेट/हे.	टिलरिंग/कल्ला निकलने की अवस्था अथवा उसके 10 दिन के अन्तर पर मैंगनीज सल्फेट के 1.0 प्रतिशत घोल के तीन छिड़काव करें।	
	सीमान्त कमी	2 - 4	10 किग्रा. मैंगनीज सल्फेट/हे.		
	अधिकता	> 4			
5. बोराँन	कम स्तर	< 0.25	10 किग्रा. बोरेक्स सल्फेट/हे.	कमी प्रायः सब्जियों एवं फलों में पायी जा रही है। गेहूँ की फसल में दुग्धावस्था में पर्णीय छिड़काव लाभदायक होता है।	
	सीमान्त कमी	0.25 - 0.5	5 किग्रा. बोरेक्स सल्फेट/हे.		
	अधिकता	> 0.5			
6. मॉलिब्डेनम	कमी	< 0.05	1 से 2 किग्रा. सोडियम मॉलिब्डेनम या अमोनियम मॉलिब्डेनम/हे.	—	

विषय सूची

भाग-1

क्र.सं.	विषय	पृष्ठां
	“खरीफ फसलों की उन्नतशील खेती”	
	धान्य फसलें :	
1.	धान की उन्नतशील खेती	01
2.	संकर धान की उन्नतशील खेती	28
3.	ब्लैक राइस की खेती	31
4.	कालानमक धान की आधुनिक खेती	32
5.	खरीफ मक्का की उन्नतशील खेती	36
	दलहन फसलें :	
6.	अरहर की उन्नतशील खेती	43
7.	मूँग की उन्नतशील खेती	49
8.	उर्द की उन्नतशील खेती	55
9.	लोबिया की उन्नतशील खेती	59
	तिलहनी फसलें :	
10.	मूँगफली की उन्नतशील खेती	61
11.	सोयाबीन की उन्नतशील खेती	65
12.	तिल की उन्नतशील खेती	69
13.	तोरिया की उन्नतशील खेती	71
	श्री अन्न (मिलेट्स) फसलें :	
14.	बाजरा की उन्नतशील खेती	75
15.	ज्वार की उन्नतशील खेती	79
16.	साँवां की उन्नतशील खेती	83
17.	रागी (मडुवा) की उन्नतशील खेती	86
18.	कोदों की उन्नतशील खेती	90
19.	चेना की उन्नतशील खेती	93
20.	कुट्टू की उन्नतशील खेती	95
21.	रामदाना की उन्नतशील खेती	98
22.	कुटकी की उन्नतशील खेती	100
	नकदी फसल :	
23.	गन्ना की उन्नतशील खेती	102
	“रबी फसलों की उन्नतशील खेती”	
	धान्य फसलें :	
24.	गेहूँ की उन्नतशील खेती	119
25.	काला गेहूँ उन्नतशील की खेती	136
26.	जौ की उन्नतशील खेती	137
27.	रबी—मक्का की उन्नतशील खेती	143
28.	शिशु मक्का (बेबी कॉर्न) की खेती	145

क्र.सं.	विषय	पृष्ठां संख्या
	दलहन फसलें :	
29.	चना की उन्नतशील खेती	147
30.	मटर की उन्नतशील खेती	153
31.	मसूर की उन्नतशील खेती	158
	तिलहन फसलें :	
32.	राई—सरसों की उन्नतशील खेती	163
33.	अलसी की उन्नतशील खेती	168
34.	कुम्भु की उन्नतशील खेती	173
	“जायद फसलों की उन्नतशील खेती”	
	धान्य फसलें :	
35.	जायद मक्का की उन्नतशील खेती	175
	दलहन फसलें :	
36.	जायद मूँग की उन्नतशील खेती	177
37.	जायद उर्द्द की उन्नतशील खेती	180
	तिलहन फसलें :	
38.	जायद सूरजमुखी की उन्नतशील खेती	183
	रेशा फसलें :	
39.	कपास की उन्नतशील खेती	187
	सब्जियों की खेती	
40.	आलू की उन्नतशील खेती	191
41.	टमाटर की उन्नतशील खेती	194
42.	बैंगन की उन्नतशील खेती	196
43.	फूल गोभी की उन्नतशील खेती	199
44.	पात गोभी की उन्नतशील खेती	203
45.	भिण्डी की उन्नतशील खेती	205
46.	सब्ज़ी मटर की उन्नतशील खेती	207
47.	प्याज की उन्नतशील खेती	209
48.	लहसुन उत्पादन की उन्नत तकनीक व प्रसंस्करण	211
49.	मिर्च की उन्नतशील खेती	213
	फलों की खेती :	
50.	आम की उन्नतशील खेती	215
51.	अमरुद की उन्नतशील खेती	219
52.	केला की उन्नतशील खेती	221
53.	आँवला की उन्नतशील खेती	223
54.	पपीता की उन्नतशील खेती	224

क्र.सं.	विषय	पृष्ठां सं.
	औषधीय फसलें :	
55.	अश्वगंधा की उन्नतशील खेती	225
56.	सफेद मूसली की उन्नतशील खेती	226
57.	सर्पगंधा की उन्नतशील खेती	228
58.	शतावरी की उन्नतशील खेती	230
59.	तुलसी (बासिल) की उन्नतशील खेती	231
60.	स्टीविया की उन्नतशील खेती	233
	फूलों की खेती :	
61.	गुलाब की उन्नतशील खेती	237
62.	गेंदा की उन्नतशील खेती	239
63.	ग्लैडियोलस की उन्नतशील खेती	242
64.	रजनीगंधा (ट्यूबरोज) की उन्नतशील खेती	243
	“प्रक्षेत्र प्रणाली प्रबन्धन”	
	पशुपालन :	
65.	पशुपालन प्रबन्धन	245
66.	मत्स्य पालन तकनीक	251
67.	रिसर्कुलेशन एक्वाकल्चर सिस्टम (आरएएस) के द्वारा मछली पालन	254
68.	मधुमक्खी पालन	261
69.	व्यावसायिक ब्रॉयलर पालन	266
70.	कड़कनाथ कुकुट पालन	273
71.	व्यावसायिक बटेर पालन	275
72.	सूकर पालन : एक लाभकारी व्यवसाय	282
73.	बकरी पालन : एक लाभकारी व्यवसाय	284
74.	मीठे जल में महाझींगा पालन	286
75.	दुग्ध उत्पादन	288

1. धान की उन्नतशील खेती

खरीफ फसलों में धान प्रदेश की प्रमुख फसल है। धान की अधिक पैदावार प्राप्त करने हेतु निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है:—

1. स्थानीय परिस्थितियों जैसे क्षेत्रीय जलवायु, मिट्टी, सिंचाई साधन, जल भराव तथा बुवाई एवं रोपाई की अनुकूलता के अनुसार ही धान की संस्तुत प्रजातियों का चयन करें।
2. शुद्ध प्रमाणित एवं शोधित बीज बोयें।
3. मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरकों, हरी खाद एवं जैविक खाद का समय से एवं संस्तुत मात्रा में प्रयोग करें।
4. उपलब्ध सिंचन क्षमता का पूरा उपयोग कर समय से बुवाई/रोपाई करायें।
5. पौधों की संख्या सुनिश्चित करने हेतु 50–55 हिल प्रति वर्ग मी. रखी जाय।
6. कीट, रोग एवं खरपतवार नियंत्रण किया जाय।
7. कम उर्वरक दे पाने की स्थिति में भी उर्वरकों का अनुपात 4:2:1 ही रखा जाय।

1. भूमि की तैयारी

गर्मी की जुताई करने के बाद 2–3 जुताई करके खेत की तैयारी करनी चाहिए। साथ ही खेत की मजबूत मेड़बन्दी भी कर देनी चाहिए ताकि खेत में वर्षा का पानी अधिक समय तक संचित किया जा सके। अगर हरी खाद के रूप में ढैंचा/सनई ली जा रही है तो इसकी बुवाई के साथ ही फार्स्फोरस का प्रयोग भी कर लिया जाय। धान की बुवाई/रोपाई के लिए एक सप्ताह पूर्व खेत की सिंचाई कर दें, जिससे खरपतवार उग आयें, इसके पश्चात बुवाई/रोपाई के समय खेत में पानी भरकर जुताई कर दें।



2. भूमि शोधन :

फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा हारजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेठो 60–75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें। दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1 प्रतिशत डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड्स की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेठो 60–75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

3. प्रजातियों का चयन

प्रदेश में धान की खेती असिंचित व सिंचित दशाओं में सीधी बुवाई एवं रोपाई द्वारा की जाती है। प्रदेश के विभिन्न जलवायु, क्षेत्रों और परिस्थितियों के लिए धान की संस्तुत प्रजातियों का उल्लेख तालिका-1 में किया गया है। तालिका-1 में उल्लिखित प्रजातियों में से मुख्य प्रजातियों के गुण एवं विशेषतायें भी तालिका-2 में अंकित हैं।

तालिका - 1

उत्तर प्रदेश के विभिन्न जलवायु, क्षेत्रों, दशा एवं

क्र. सं.	क्षेत्र	भावर एवं तराई क्षेत्र	पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	मध्य पश्चिमी मैदानी क्षेत्र
1	2	3	4	5
1.	असिंचित दशा			
	शीघ्र पकने वाली			
●	सीधी बुवाई	गोविन्द, नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97	गोविन्द, नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97	शुष्क सम्राट
●	रोपाई	गोविन्द, नरेन्द्र-80, शुष्क सम्राट, मालवीय धान-2 (एच.यू.आर.-3022)	गोविन्द, नरेन्द्र-80, शुष्क सम्राट,	गोविन्द, शुष्क सम्राट
2.	सिंचित दशा			
●	शीघ्र पकने वाली (100-120 दिन)	नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97, शुष्क सम्राट, मालवीय धान-2 (एच.यू.आर.-3022), मनहर, पूसा-169, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12	नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97, शुष्क सम्राट, मालवीय धान-2 (एच.यू. आर.-3022), मनहर, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सम्राट, बारानी दीप	नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97, शुष्क सम्राट, मालवीय धान-2 (एच.यू.आर.-3022), मनहर, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, नरेन्द्र ^{लालमती, शुष्क सम्राट,} ^{बारानी दीप}
●	मध्यम अवधि में पकने वाली (120-140 दिन)	पन्त धान-10, पन्त धान-4, सरजू-52, नरेन्द्र-359, पूसा-44, नरेन्द्र धान-2064 नरेन्द्र धान-3112-1 नरेन्द्र धान-2026	पन्त धान-10, पन्त धान-4, सरजू-52, पूसा-44, नरेन्द्र धान-2064 नरेन्द्र धान-3112-1 नरेन्द्र धान-2026	पन्त धान-10, पन्त धान-4, सरजू-52, पूसा-44,, नरेन्द्र-359, नरेन्द्र धान-2064 नरेन्द्र धान-3112-1 नरेन्द्र धान-2026

परिस्थितियों के लिए धान की संस्तुत उन्नतशील प्रजातियां

दक्षिण पश्चिमी अर्द्धशुष्क क्षेत्र	मध्य मैदानी क्षेत्र	बुन्देलखण्ड क्षेत्र	उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्र	पूर्वी मैदानी क्षेत्र	विन्ध्य क्षेत्र
आगरा मण्डल के समस्त जनपद	लखनऊ, कानपुर, प्रयागराज मण्डल (प्रतापगढ़ को छोड़कर)	झांसी एवं चित्रकूट धाम मण्डल	गोण्डा, बहराइच, बस्ती, देवरिया, गोरखपुर, सिद्धार्थनगर, महाराजगंज, कुशीनगर, बलरामपुर, श्रावस्ती, संतकबीर नगर	बाराबंकी, अयोध्या, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, जौनपुर, आजमगढ़, बलिया, गाजीपुर, वाराणसी, चन्दौली, मऊ, अम्बेडकर नगर, भदोही	मिर्जापुर, प्रयागराज, सोनभद्र, चन्दौली के पठारी भाग
6	7	8	9	10	11
गोविन्द	गोविन्द, नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97	गोविन्द, नरेन्द्र-97	नरेन्द्र-97, नरेन्द्र-118, गोविन्द, बारानी दीप, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट	नरेन्द्र-97, नरेन्द्र-118, गोविन्द, बारानी दीप, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट	नरेन्द्र-97, नरेन्द्र-118, गोविन्द, बारानी दीप, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट
गोविन्द, शुष्क सप्राट	गोविन्द, शुष्क सप्राट	गोविन्द, शुष्क सप्राट	नरेन्द्र-118, गोविन्द, नरेन्द्र-97, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप	नरेन्द्र-118, गोविन्द, नरेन्द्र-97, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप	नरेन्द्र-118, गोविन्द, अशिवनी, नरेन्द्र-97, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप
मनहर, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, आई.आर.-50, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप	मनहर, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, आई.आर.-50, साकेत-4, शुष्क सप्राट, बारानी दीप		आई.आर.-50, नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97, आई.आर.-36, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, आई.आर.-50, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप	आई.आर.-50, नरेन्द्र-118, नरेन्द्र-97, आई.आर.-36, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, आई.आर.-50, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप	आई.आर.-50, नरेन्द्र-80, पन्त धान-12, आई.आर.-50, नरेन्द्र लालमती, शुष्क सप्राट, बारानी दीप
क्रान्ति, पन्त धान-4, पन्त धान-10, सरर्जू-52, नरेन्द्र-359, नरेन्द्र धान-3112-1, नरेन्द्र धान-2064, नरेन्द्र धान-2065, नरेन्द्र धान-2026	सरर्जू-52, पन्त धान-4, सीता पन्त-4, पन्त धान-10, नरेन्द्र-359, क्रान्ति, नरेन्द्र धान-2064, नरेन्द्र धान-2065, नरेन्द्र धान-3112-1 नरेन्द्र धान-2026		सरर्जू-52, सीता पन्त-4, नरेन्द्र धान-3112-1, नरेन्द्र धान-2064, नरेन्द्र धान-2065, नरेन्द्र धान-2026	सरर्जू-52, सीता पन्त-4, नरेन्द्र-359, नरेन्द्र धान-3112-1, नरेन्द्र धान-2064, नरेन्द्र धान-2065, नरेन्द्र धान-2026	सरर्जू-52, सीता पन्त-4, नरेन्द्र-359, नरेन्द्र धान-3112-1, नरेन्द्र धान-2064, नरेन्द्र धान-2065, नरेन्द्र धान-2026

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	क्षेत्र	भावर एवं तराई क्षेत्र	पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	मध्य पश्चिमी मैदानी क्षेत्र
1	2	3	4	5
●	देर से पकने वाली (140 दिन से अधिक)	—	उन.डी.आर.—8002, टा—23	—
3.	सुगन्धित धान	टा—3, पूसा बासमती—1, हरियाणा बासमती—1, पूसा सुगन्ध—4 एवं 5, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, मालवीय सुगन्ध—10—9	टा—3, पूसा बासमती—1, हरियाणा बासमती—1, तारावडी बासमती—1, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, मालवीय सुगन्ध—10—9, मालवीय सुगन्ध—1, पूसा बासमती—1692, पूसा बासमती—1718, पूसा बासमती—1637	टा—3, बासमती—370, पूसा बासमती—1, हरियाणा बासमती—1, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, मालवीय सुगन्ध—10—9, मालवीय सुगन्ध—1
4.	ऊसरीली	एच.यू.बी.आर.—2—1, साकेत—4, झोना—349, साकेत—4, ऊसर धान—1, नरेन्द्र ऊसर धान—2, सी. एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर, धान—2008	एच.यू.बी.आर.—2—1, ऊसर धान—1, नरेन्द्र ऊसर धान—2, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर, धान—2008	एच.यू.बी.आर.—2—1, ऊसर धान—1, नरेन्द्र ऊसर धान—2, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर, धान—2008
5.	निचले एवं जल भराव वाले क्षेत्र			
●	30 सेमी.	महसूरी	महसूरी	महसूरी
●	30—50 सेमी.	—	—	—
●	50—75 सेमी.	एनडीजीआर—201	एनडीजीआर—201	एनडीजीआर—201
●	75—120 सेमी.	—	—	—
6.	एक मीटर से अधिक गहरा पानी	—	—	—
7.	बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों के लिए	—	—	—

दक्षिण पश्चिमी अर्द्धशुष्क क्षेत्र	मध्य मैदानी क्षेत्र	बुन्देलखण्ड क्षेत्र	उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्र	पूर्वी मैदानी क्षेत्र	विन्ध्य क्षेत्र
6	7	8	9	10	11
पूसा—44	टा—23, महसूरी, सांभा मंसूरी, एम.टी. यू—1001, स्वर्णा	—	एन.डी.आर.—8002, टा—23, महसूरी, नरेन्द्र मयंक, नरेन्द्र नारायणी, नरेन्द्र जलपुष्प, स्वर्णा सब—1	टा—23, महसूरी, स्वर्णा, नरेन्द्र मयंक, नरेन्द्र नारायणी, नरेन्द्र जलपुष्प, स्वर्णा सब—1	टा—23, महसूरी, स्वर्णा
टा—3, बासमती—370, पूसा बासमती—1, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, नरेन्द्र सुगन्ध	टा—3, पूसा बासमती—1, पूसा सगन्धित—4,5, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, नरेन्द्र सुगन्ध	टा—3, पूसा बासमती—1, हरियाणा बासमती—1, वल्लभ बासमती— 22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3 नरेन्द्र सुगन्ध	टा—3, पूसा बासमती—1, बासमती—370, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, नरेन्द्र सुगन्ध	टा—3, पूसा बासमती—1, बासमती—370, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, नरेन्द्र सुगन्ध	टा—3, पूसा बासमती—1, बासमती—370, वल्लभ बासमती—22, मालवीय सुगन्ध—105, मालवीय सुगन्ध—4—3, नरेन्द्र सुगन्ध
ऊसर धान—1, नरेन्द्र ऊसर धान—2, नरेन्द्र धान—3, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर धान—2008, नरेन्द्र ऊसर धान—2009	ऊसर धान—1, सी.एस.आर.—10, सी.एस.आर.—30, सी.एस.आर.—36, सी.एस.आर.—43, सी.एस.आर.—13, नरेन्द्र ऊसर धान—2, नरेन्द्र ऊसर धान—2008, नरेन्द्र ऊसर धान— 2009	ऊसर धान—1, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर धान—2008, नरेन्द्र ऊसर धान—2009	ऊसर धान—1, नरेन्द्र—2008, नरेन्द्र ऊसर धान—2009 ऊसर धान—1, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर धान—2008, नरेन्द्र ऊसर धान—2009	ऊसर धान—1, सी.एस.आर.—30, सी.एस.आर.—36, सी.एस.आर.—43, सी.एस.आर.—13, सी.एस.आर.—10, ऊसर धान—1,2,3, नरेन्द्र ऊसर धान— 2008, नरेन्द्र ऊसर धान—2009	ऊसर धान—1, नरेन्द्र ऊसर धान—2, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर धान— 2008, नरेन्द्र ऊसर धान—2009
—	—	—	—	—	—
—	—	—	महसूरी	महसूरी, सोना महसूरी	—
—	—	—	जल लहरी, एन.डी. आर.—8002	महसूरी, जल लहरी, एन.डी.आर. —8002, नरेन्द्र नारायणी, नरेन्द्र जलपुष्प, नरेन्द्र मयंक	—
—	—	—	स्वर्णा सब—1 (15 दिन से कम जल भराव के लिए ^{उपयुक्त})	स्वर्णा सब—1, (15 दिन से कम जल भराव के लिए ^{उपयुक्त})	—
—	—	—	चकिया—59, जलप्रिया	चकिया—59, जलप्रिया	—
—	—	—	जल निधि, जलमग्न	जल निधि, जलमग्न	—
—	—	—	मधुकर बाढ़ अवरोधी स्वर्णा सब—1	मधुकर बाढ़ अवरोधी स्वर्णा सब—1	—

तालिका-2

धान की प्रमुख प्रजातियों की विशेषताएं

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति है.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
अ.	शीघ्र पकने वाली प्रजाति								
1.	नरेन्द्र-118	5.5.88	85-90	45-50	महीन लम्बा	महीन सफेद	65-70	-	असिंचित उपरहार क्षेत्र के लिए
2.	नरेन्द्र-80	6.3.87	110-120	50-60	तदैव	तदैव	65-70	झोंका रोग रोधी	पूर्वी उ.प्र. सिंचित दशा प्रकाश अप्रभावित ऊसरीली के लिए उपयुक्त अवरोधी
3.	नरेन्द्र-1	-	100-105	40-45	छोटा	महीन	70	ब्लास्ट	-
4.	नरेन्द्र-2	-	110-115	40-45	महीन लम्बा	महीन	70	झोंका रोग	-
5.	मनहर	-	119-122	48-50	महीन लम्बा	महीन सफेद	70	जीवाणु झुलसा के लिए मध्यम अवरोधी	-
6.	नरेन्द्र-97	15.11.92	85-90	40-45	तदैव	तदैव	70	-	असिंचित उपरहार क्षेत्र में भी संस्तुत
7.	पन्त धान-11	1.1.96	115-122	50-60	महीन लम्बा	महीन सफेद	70-72	जीवाणु झुलसा, भूरा धब्बा रोग अवरोधी तथा भूरे फुदके के लिए मध्यम अवरोधी	-
8.	बारानी दीप	20.9.06	5-100	40-45	तदैव	तदैव	-	-	-
9.	आई.आर.-50	-	105-110	45-50	तदैव	तदैव	-	-	-
10.	रत्ना	-	120-125	40-45	तदैव	तदैव	-	-	-
11.	शुष्क सम्राट	6.2.07	105-110	40-45	तदैव	सफेद	-	-	-
12.	नरेन्द्र लालमती	27.8.09	105-110	30-35	महीन छोटा	हल्का लाल	-	-	-

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति हे.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
13.	मालवीय धान—2 (एच.यू.आर.—3022)	2005	110—115	50—55	तदैव	तदैव	—	—	—
14.	मालवीय धान—17 (एच.यू.आर.—917)	27.11.14	135—140	50—55	छोटा मध्यम	सुगन्धि त	—	ब्लास्ट शीथ बैकटीरियल	ब्लाइट लीफ ब्लाइट
15.	सी.ओ.—51		105—110	60—65	मोटा	—	69	ब्लास्ट अवरोधी	—
16.	शियाट्स धान—5		120—125	40—50	लम्बा	—	65.7	ब्राउन प्लान्ट बैकटीरियल	हॉपर एवं लीफ ब्लाइट
17.	सी.एस.आर.—6		120—125	60—70	मध्यम	—	—	उसरीली भूमि के लिए	
18.	पूसा बासमती—1692	—	110—115	60—65	मध्यम	—	—	—	—
ब. मध्यम देर से पकने वाली प्रजाति									
1.	नरेन्द्र—359	2.9.94	130—135	60—65	लम्बा मोटा	मध्यम सफेद	72	जीवाणु झुलसा मध्यम अवरोधी	सभी कल्लों में बाली खासतौर से निकलती है
2.	पन्त धान—4	9.4.85	125—130	50—60	महीन लम्बा	तदैव	70	जीवाणु झुलसा मध्यम अवरोधी	—
3.	पन्त धान—10	17.8.93	125—130	55—60	तदैव	तदैव	70	झोंका अवरोधी मध्यम झुलसा अवरोधी	उ.प्र. पश्चिमी मैदानी क्षेत्र रोपाई हेतु उपयुक्त
4.	सीता	—	130—135	45—50	मध्यम लम्बा	सफेद मध्यम	—	—	—
5.	सरजू—52	14.1.82	130—135	50—60	मध्यम लम्बा	सफेद मध्यम	70	जीवाणु झुलसा	—
6.	मालवीय धान—36	9.9.97	130—135	45—56	महीन छोटा दाना	सफेद महीन	65.70	बैकटीरियल लीफ ब्लाइट अवरोधी हरे भूरे फुदके के लिए मध्यम अवरोधी	पूर्वी उ.प्र. हेतु
7.	नरेन्द्र धान—2064	27.8.09	115—120	50—55	मध्यम लम्बा	सफेद	50.55	—	सम्पूर्ण उ.प्र.
8.	नरेन्द्र धान—3112—1	27.8.09	125—130	50—55	मध्यम	सफेद	55.60	—	तदैव
9.	नरेन्द्र धान—2065	—	120—125	50—55	लम्बा मोटा	सफेद	70.5	मध्यम अवरोधी	तदैव
10.	मालवीय धान—1	—	120—125	55—60	महीन	सफेद	—	तदैव	तदैव

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति हे.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
11.	शियाट्स धान—1	—	125—128	45—65	लम्बा	महीन	66.7	बैकटीरियल लीफ ब्लाइट स्पॉट एवं शीथ ब्लाइट के प्रति मध्यम अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
12.	शियाट्स धान—2	—	125—128	45—65	लम्बा	महीन	65.00	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
13.	शियाट्स धान—4	—	130—135	48—52	मध्यम	महीन	65.0	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
14.	आई.आर.—64 सब—1	—	120—125	40—45			69.30	शीथ ब्लास्ट नेक ब्लास्ट प्लान्ट हॉपर बी.पी. एच. अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
15.	एन.डी.आर. 9930111	—	140—145	45—50	शार्ट	गोल्ड दाने	—	शीथ ब्लास्ट शीथ रॉट, नेक ब्लास्ट स्टेम बोरर, मध्यम सहिष्णु, बी. पी.एच. अवरोधी	—
स.	देर से पकने वाली प्रजाति								
1.	महसूरी	13.4.89	140—150	30—40	मध्यम	सफेद मध्यम	70	मध्यम अवरोधी	30—40 सेमी. गहरे पानी में भी होता है
2.	सांभा महसूरी	—	155	60	छोटा पतला	सफेद	70		बौनी
3.	शियाट्स धान—3		130—138	46—50	महीन	महीन	64.5	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
द.	सुगन्धित धान प्रजाति								
1.	टाइप—3	—	130—145	30—35	महीन लम्बा	महीन सफेद	66	—	सुगन्धित धान
2.	कस्तूरी	6.11.89	115—125	30—40	महीन लम्बा	महीन सफेद	67	जीवाणु झुलसा एवं झाँका रोग ग्राही	—
3.	पूसा बासमती—1	6.11.89	125—130	35—45	तदैव	तदैव	68	—	—

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति हे.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
4.	हरियाणा बासमती—1	22.11.91	140	35—45	लम्बा पतला	तदैव	—	हरे फुटके के लिए सहिष्णुशील	—
5.	बासमती—370	—	135	22—25	लम्बा पतला	तदैव	—	—	सम्पूर्ण उ.प्र. के लिए उपयुक्त
6.	तारावड़ी बासमती	—	145—150	25—30	लम्बा पतला सुगन्धित	—	—	बीमारी / कीट से प्रभावित	—
7.	मालवीय सुगन्ध	—	135	40—45	मध्यम लम्बा	सफेद	—	ब्लास्ट बैकटीरियल ब्लाइट	—
8.	मालवीय सुगन्ध—4.3	—	130—135	45—50	पतला लम्बा	सफेद	—	ब्लास्ट बैकटीरियल ब्लाइट अवरोधी	—
9.	वल्लभ बासमती—22	—	140	35—40	सुपर फाइन	सफेद	67	गालमिज अवरोधी	—
10.	नरेन्द्र लालमती	—	105—110	30—35	मध्यम लम्बा	हल्का लाल	—	नेक ब्लास्ट एवं बैकटीरियल ब्लास्ट के लिए सहिष्णुशील	—
11.	नरेन्द्र सुगन्ध	—	125—130	40—45	पतला लम्बा	सफेद	70.7	मध्यम अवरोधी	—
12.	पूसा—1637	—	115—120	40—45	पतला लम्बा	—	—	ब्लास्ट अवरोधी	—
13.	पूसा बासमती—1718	2017	140—145	40—45	पतला लम्बा	—	—	जीवाणु लीफ ब्लाइट मध्यम प्रतिरोधी	—
14.	पूसा बासमती—1728	—	136—138	50—60	पतला लम्बा	—	—	ब्लास्ट बैकटीरियल ब्लास्ट अवरोधी	—
15.	एच.यू.आर.—1309	—	115—125	50—55	लम्बे महीन	—	60	राइस, नेक बैकटीरियल लीफ ब्लाइट मध्यम अवरोधी	—
16.	एचयू.आर.—1304	—	108—110	40—45	—	—	—	नेक ब्लास्ट, बैकटीरियल लीफ ब्लास्ट मध्यम अवरोधी	—

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति हे.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
य.	सुगन्धित धान प्रजाति								
1.	ऊसर धान—1	24.7.85	140—145	45—50	छोटा मोटा	छोटा सफेद	—	—	ऊसरीली भूमि के लिए उपयुक्त
2.	सी.एस.आर.—10	6.11.89	115—120	50—60	तदैव	तदैव	—	—	ऊसर के लिए उपयुक्त
3.	नरेन्द्र ऊसर धान—2 एवं ऊसर धान—3	15.5.98	125—130	45—50	लम्बा गोल	मध्यम सफेद	50—62	भूरा धब्बा तथा शाकाणु झुलसा अवरोधी तथा तना गलन व धारीदार शाकाणु रोग से मध्यम अवरोधी	सिंचित ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त बौनी
4.	सी.एस.आर.—30	2002	155	20—30	बासमती	—	58.60	स्टेम रॉट अवरोधी	ऊसरीली भूमि के लिए उपयुक्त
5.	सी.एस.आर.—36	5.11.05	135	40—65	लम्बा गोल	—	69	राइस लीफ फोल्डर अवरोधी	ऊसरीली भूमि के लिए उपयुक्त
6.	सी.एस.आर.—43	24.1.14	110	40—50	छोटा मोटा	—	69	भूरा धब्बा के लिए मध्यम अवरोधी	ऊसरीली भूमि के लिए उपयुक्त
7.	सी.एस.आर.—13	—	110—115	50—60	पतला लम्बा	सफेद	60	—	—
8.	नरेन्द्र ऊसर धान—2008	—	125—130	45—50	लम्बा मोटा	सफेद	65	—	—
9.	नरेन्द्र ऊसर धान—2009	—	120—125	45—50	मोटा	मध्यम सफेद	64	—	—
10.	सी.एस.आर.—56	—	2018	120—130	लम्बा मोटा	—	65—70	लीफ ब्लाइट, ब्लास्ट, ब्राउन स्पॉट, स्टेम बोरर अवरोधी	—
11.	सी.एस.आर.—60	—	2018	120—130	लम्बा पतला	—	65—70	लाजिंग एवं सैटरिंग अवरोधी	—

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति हे.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
र.	निचले एवं जल भराव वाले क्षेत्र एवं बाढ़ग्रस्त क्षेत्र के लिए								
1.	स्वर्णा एम.टी.यू. 7029 (उथला जलभराव)	9.4.85	165	65–70	छोटा	सफेद पतला	75	—	बौनी
2.	एन.डी.आर. –8002	—	145	40–45	लम्बा पतला	—	65	—	30 सेमी. गहरे पानी हेतु
3.	जल लहरी	—	145	40–50	लम्बा	गोल सफेद	65	—	—
4.	जलमग्न	19.12.78	150–200	35–40	छोटा मोटा	मोटा सफेद	67	—	गहरे जल भराव वाले क्षेत्र (120 सेमी. से अधिक)
5.	मधुकर	—	145–150	30–40	छोटा मोटा	छोटा सफेद	65	—	सामयिक बाढ़ वाले क्षेत्र हेतु
6.	जल निधि	2.9.94	170–200	35–40	मध्यम सुडौल हल्का चपटा	मध्यम लालिमा सा	65–70	विभिन्न रोगों की अवरोधी	पौधा काफी लम्बा पानी के साथ कमल की तरह बढ़ता है
7.	जल प्रिया	4.5.95	150–160	30–35	लम्बा सुडौल	लम्बा सफेद	75	रोगों से आंशिक एवं पूर्ण रूप से अवरोधी	अद्वितीय गहरा जल भराव (50–100) सेमी. तक उपयुक्त
8.	एन.डी.जी.आर. –201	1.2.13	150–155	35–40	मध्यम मोटा	लाल दाना	67–68	—	—
9.	बाढ़ अवरोध	9.9.97	145–155	35–40	मध्यम सुडौल	सफेद	75	नेक ब्लास्ट ब्राउन स्पाट रोग के प्रति आंशिक रूप से अवरोधी	जलप्लावन सहनशील
10.	स्वर्णा सब-1	27.8.09	145–150	35–40	छोटा पतला	सफेद	75	—	—
11.	नरेन्द्र नारायणी	2009 17–18 / 200 8 एस.ओ. 4 / 20 / 20.1.2009	135–140	45–50	लम्बा मोटा	खाने में मीठा	71	जीवाणु झुलसा, पत्ती झुलसा एवं स्टेम बोरर	7–10 दिन बाढ़ अवरोधी एवं सूखा अवरोधी

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का दिनांक	पकने की अवधि	उपज कुन्तल प्रति हे.	धान का प्रकार	चावल का प्रकार	चावल की निकासी प्रतिशत	रोगों से अवरोधिता	चावल की विशेषता
12.	नरेन्द्र जलपुष्प	2009 17-18 / 20 08 एस.ओ. 4 / 20 / 20.1.2009	140-145	45-50	लम्बा मोटा	लम्बा मोटा खाने में मीठा	70.5	स्टेम बोरर, पत्ती लपेटक, पत्ती झुलसा अवरोधी	10-15 बाढ़ अवरोधी
13	नरेन्द्र मयंक	2009 17-18 / 20 08 एस.ओ. 4 / 20 / 20.1.2009	140-145	48-52	लम्बा महीन	लम्बा नान बासमती	72.2	पत्ती झुलसा, भूरा धब्बा, शीथ झुलसा एवं स्टेम बोरर	10-12 दिन बाढ़ अवरोधी

बासमती की अन्य अधिसूचित प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजाति का नाम	संस्थान का नाम	अधिसूचना संख्या एवं दिनांक
1.	बासमती 217	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना	4045 – 24.09.1969 361 (ई)– 30.06.1973
2.	बासमती 370	राइस फार्म, काला शाह काकू (अब पाकिस्तान में)	786 – 02.02.1976 361 (ई)– 30.06.1973
3.	टाइप 3 (देहरादूनी बासमती)	चावल अनुसंधान केंद्र, नगीना, उ.प्र	13 – 19.12.1978
4.	पंजाब बासमती 1 (बाउनी बासमती)	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना	596 (ई)– 13.08.1984
5.	पूसा बासमती 1	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली	615 (ई)– 06.11.1989
6.	कस्तूरी	चावल अनुसंधान निदेशालय, राजेंद्र नगर, हैदराबाद, तेलंगाना	615 (ई)– 06.11.1989
7.	हरियाणा बासमती 1	सीसीएसएचएयू चावल अनुसंधान केंद्र, कौल जनपद–कैथल, हरियाणा	793 (ई)– 22.11.1991
8.	माही सुगंधा	चावल अनुसंधान केंद्र, बांसवाड़ा, राजस्थान	408 (ई)– 04.05.1995
9.	तराओरी बासमती (एच.बी.सी. 19 / करनाल लोकल)	सीसीएसएचएयू चावल अनुसंधान केंद्र, कौल जनपद–कैथल, हरियाणा	1(ई)– 01.01.1996
10.	रणबीर बासमती	चावल अनुसंधान केंद्र, आर. एस पुरा, जम्मू	1 (ई)– 01.01.1996
11.	बासमती 386	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना	647 (ई)– 09.09.1997
12.	संशोधित पूसा बासमती 1 (पूसा 1460)	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली	1178 (ई)– 20.07.2007

क्र. सं.	प्रजाति का नाम	संस्थान का नाम	अधिसूचना संख्या एवं दिनांक
13.	पूसा बासमती 1121 संशोधन के बाद	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली	1566 (ई)– 05.11.2005 2547 (ई)– 29.10.2008
14.	वल्लभ बासमती 22	सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ	2187 (ई)– 27.08.2009
15.	पूसा बासमती 6 (पूसा 1401)	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली	733 (ई)– 01.04.2010
16.	पंजाब बासमती 2	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना	1708 (ई)– 26.07.2012
17.	बासमती सीएसआर 30 संशोधन के बाद	केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल, हरियाणा	1134 (ई)– 25.11.2009 2126 (ई)– 10.09.2012
18.	मालवीय बासमती धन 10—9 (आईईटी 21669)	बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी, यूपी	2817 (ई)– 19.09.2013
19.	वल्लभ बासमती 21 (आईईटी 19493)	सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ	2817 (ई)– 19.09.2013
20.	पूसा बासमती 1509 (आईईटी 21960)	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली	2817 (ई)– 19.09.2013
21.	पंत बासमती—1 (आईईटी—21665)	जीबीपीयूए एंड टी, पंत नगर	112 (ई)– 12.01.2015
22.	पंत बासमती—2 (आईईटी – 21953)	जीबीपीटीए एंड टी, पंत नगर	112 (ई)– 12.01.2015
23.	बासमती 564	शेर—ए—कश्मीर कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, जम्मू छठा, जम्मू	268 (ई)– 28.01.2015
24.	वल्लभ बासमती 23	सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ	268 (ई)– 28.01.2015
25.	वल्लभ बासमती 24	सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मोदीपुरम, मेरठ	268 (ई)– 28.01.2015
26.	पूसा बासमती 1609	भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली	2680 (ई)– 01.10.2015
27.	पंजाब बासमती — 3	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना	3540 (ई)– 22.11.2016
28.	पूसा बासमती — 1637	आईएआरआई, नई दिल्ली।	3540 (ई)– 22.11.2016
29.	पूसा बासमती—1728	आईएआरआई, नई दिल्ली।	3540 (ई)– 22.11.2016
30.	पूसा बासमती 1718 (आईईटी 24565) (पूसा 1718—14—2—150)	आईएआरआई, नई दिल्ली।	2805 (ई)– 25.08.2017
31.	पंजाब बासमती — 4 (आरवाईटी 3404) (आईईटी – 25399)	पीएयू लुधियाना।	1379 (ई)– 27.03.2018
32.	पंजाब बासमती — 5 (आरवाईटी 3432) (आईईटी 26153)	पीएयू लुधियाना।	1379 (ई)– 27.03.2018
33.	हरियाणा बासमती 2	सीसीएसएचएयू चावल अनुसंधान केंद्र, कौल जनपद—कैथल, हरियाणा	3220 (ई)– 5.9.2019
34.	पूसा बासमती 1692	आईएआरआई, नई दिल्ली	3482 07.10.2020

3. शुद्ध एवं प्रमाणित बीज : प्रमाणित बीज से उत्पादन अधिक मिलता है और कृषक अपनी उत्पाद (संकर प्रजातियों को छोड़कर) को ही अगले बीज के रूप में सावधानी से प्रयोग कर सकते हैं। तीसरे वर्ष पुनः प्रमाणित बीज लेकर बुवाई की जाय।

4. उर्वरकों का संतुलित प्रयोग एवं विधि : उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना उपयुक्त है। यदि किसी कारणवश मृदा का परीक्षण न हुआ तो उर्वरकों का प्रयोग निम्न प्रकार किया जाय:

स्थिति: सिंचित दशा में रोपाई

(1) अधिक उपज देने वाली प्रजातियाँ : उर्वरक की मात्रा : किग्रा./हे.

(क) शीघ्र पकने वाली	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
	120	60	60

प्रयोग विधि : फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई से पूर्व तथा नत्रजन की एक तिहाई मात्रा रोपाई के 7 दिनों के बाद, एक तिहाई मात्रा कल्ले फूटते समय तथा एक तिहाई मात्रा बाली बनने की अवस्था पर टॉपड्रेसिंग द्वारा प्रयोग करें।

(ख) मध्यम देर से पकने वाली प्रयोग विधि	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
(ग) सुगंधित धान (बौनी) प्रयोग विधि	120	60	60
(2) देशी प्रजातियाँ : उर्वरक की मात्रा – कि./हे.	नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
(क) शीघ्र पकने वाली	60	30	30
(ख) मध्यम देर से पकने वाली	60	30	30
(ग) सुगंधित धान	60	30	30

प्रयोग विधि : रोपाई के एक सप्ताह बाद एक तिहाई नत्रजन तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के पूर्व तथा नत्रजन की शेष मात्रा को बराबर-बराबर दो बार में कल्ले फूटते समय तथा बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था पर प्रयोग करें। दाना बनने के बाद उर्वरक का प्रयोग न करें।

सीधी बुवाई :

(क) अधिक उपजदायी प्रजातियाँ : उर्वरक की मात्रा : किग्रा./हे.

नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
100–120	50–60	50–60

प्रयोग विधि : नत्रजन की एक चौथाई भाग तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूर्ण मात्रा कूँड़ में बीज के नीचे डालें, शेष नत्रजन का दो चौथाई भाग कल्ले फूटते समय तथा शेष एक चौथाई भाग बाली बनने की प्रारम्भिक अवस्था पर प्रयोग करें।

(ख) देशी प्रजातियाँ : उर्वरक की मात्रा : किग्रा./हे.

नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
60	30	30

प्रयोग विधि : सीधी बुवाई की भाँति करें।

वर्षा आधारित दशा में : उर्वरक की मात्रा – किग्रा./हे.

नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
60	40	30

प्रयोग विधि : सम्पूर्ण उर्वरक बुवाई के समय बीज के नीचे कूँड़ों में प्रयोग करें।

नोट : लगातार धान – गेहूँ वाले क्षेत्रों में गेहूँ धान की फसल के बीच हरी खाद का प्रयोग करें अथवा धान की फसल में 10–12 टन प्रति हेट्ट गोबर की खाद का प्रयोग करें।

जायद में मैंग की खेती करने से धान की फसल में 15 किग्रा. नत्रजन की बचत होती है। इसी प्रकार हरी खाद (सनई अथवा ढैंचा) से लगभग 40–60 किग्रा. नत्रजन की बचत होती है। अतः इस दशा में नत्रजन उर्वरक तदनुसार प्रयोग करें। यदि कम्पोस्ट 10–12 टन का प्रयोग किया जाय तो उसमें भी तत्व प्राप्त होते हैं तथा मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता है।

ऊसरीली क्षेत्र में ही जीवांश पदार्थ बढ़ाने के लिए ढैंचे की बुवाई करना विशेष रूप से लाभप्रद होता है। 2 कुन्तल प्रति हे. जिसम का प्रयोग बेसल के रूप में किया जा सकता है। इससे धान की फसल को गन्धक की आवश्यकता पूरी हो जायेगी। सिंगल सुपर फास्फेट के प्रयोग से भी गन्धक की कमी दूर की जा सकती है। पोटाश का प्रयोग बेसल ड्रेसिंग में किया जाय किन्तु हल्की दोमट भूमि में पोटाश उर्वरक को यूरिया के साथ टॉपड्रेसिंग में प्रयोग किया जाना उचित रहता है।

अतः ऐसी भूमि में रोपाई के समय पोटाश की आधी मात्रा का प्रयोग करना चाहिए और शेष आधी मात्रा को दो बार में नत्रजन के साथ टॉपड्रेसिंग करना चाहिए। जिन स्थानों में धान के खेतों में पानी रुकता हो और उसके निकास की सुविधा न हो रोपाई के समय ही सारा उर्वरक देना उचित होगा। यदि किसी कारणवश यह सम्भव न हो तो ऐसे क्षेत्रों में यूरिया के 2–3 प्रतिशत घोल का छिड़काव दो बार कल्ला निकलते समय तथा बाली निकलने की प्रारम्भिक अवस्था पर करना लाभदायक होगा। यूरिया की टॉपड्रेसिंग के पूर्व खेत से पानी निकाल देना चाहिए और यदि किसी क्षेत्र में ये सम्भव न हो तो यूरिया को उसकी दुगुनी मिट्टी में एक चौथाई गोबर की खाद मिलाकर 24 घन्टे तक रख देना चाहिए। ऐसा करने से यूरिया अमोनियम कार्बोनेट के रूप में बदल जाती है ओर रिसाव द्वारा नष्ट नहीं होती है।

5. जल प्रबन्धन : प्रदेश में सिंचन क्षमता के उपलब्ध होते हुए भी धान का लगभग 60–62 प्रतिशत क्षेत्र ही सिंचित है, जबकि धान की फसल, खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक पानी की आवश्यकता होती है। फसल को कुछ विशेष अवस्थाओं में रोपाई के बाद एक सप्ताह तक कल्ले फूटने, बाली निकलने, फूल खिलने तथा दाना भरते समय खेत में पानी बना रहना चाहिए। फूल खिलने की अवस्था पानी के लिए अति संवेदनशील है। परीक्षणों के अधार पर यह पाया गया है कि धान की अधिक उपज लेने के लिए लगातार पानी भरा रहना आवश्यक नहीं है इसके लिए खेत की सतह से पानी अदृश्य होने के एक दिन बाद 5–7 सेमी. सिंचाई करना उपयुक्त होता है।

वर्षा के अभाव के कारण पानी की कमी दिखाई दे तो सिंचाई अवश्य करें। खेत में पानी रहने से फास्फोरस, लोहा तथा मैंगनीज तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है और खरपतवार भी कम उगते हैं। यह भी ध्यान देने योग्य है कि कल्ले निकलते समय 5 सेमी. से अधिक पानी अधिक समय तक धान के खेत में भरा रहना भी हानिकारक होता है। अतः जिन क्षेत्रों में पानी भरा रहता हो वहाँ जल निकासी का प्रबन्ध करना बहुत आवश्यक है, अन्यथा उत्पादन पर कुप्रभाव पड़ेगा। सिंचित दशा में खेत में निरन्तर पानी भरा रहने की दशा में खेत से पानी अदृश्य होने की स्थिति में एक दिन बाद 5 से 7 सेमी. तक पानी भर दिया जाय इससे सिंचाई के जल में भी बचत होगी।

5.1 बीज शोधन : नर्सरी डालने से पूर्व बीज शोधन अवश्य कर लें। इसके लिए जहाँ पर जीवाणु झुलसा या जीवाणु धारी रोग की समस्या हो वहाँ पर स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 90% + टेट्रासाइक्लोरोइड 10% की 4 ग्राम मात्रा को प्रति 25 किग्रा. बीज की दर से 100 लीटर पानी में मिलाकर रात भर भिगो दें दूसरे दिन छाया में सुखाकर नर्सरी डालें। वहाँ यदि शाकाणु झुलसा की समस्या क्षेत्रों में नहीं है तो 25 किग्रा. बीज को रातभर पानी में भिगोने के बाद दूसरे दिन निकाल कर अतिरिक्त पानी निकल जाने के बाद 62.5 ग्राम थीरम या 50 ग्राम कार्बोन्डाजिम को 8–10 लीटर पानी में घोलकर बीज में मिला दिया जाये इसके बाद छाया में अंकुरित करके नर्सरी में डाली जाये। इसके अतिरिक्त बीज शोधन हेतु 4.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज ट्राइकोर्डर्मा का भी प्रयोग किया जाये।

5.2 नर्सरी : एक हे. क्षेत्रफल की रोपाई के लिए 800–1000 वर्ग मी. क्षेत्रफल में महीन धान का 30 किग्रा. मध्यम धान का 35 किग्रा. और मोटे धान का 40 किग्रा. बीज पौध तैयार करने हेतु पर्याप्त होती है। ऊसर भूमि में यह मात्रा सवा गुनी कर दी जाय। एक हे. नर्सरी से लगभग 15 हे. क्षेत्रफल की रोपाई होती है। समय से नर्सरी में बीज डालें और नर्सरी में 100 किग्रा. नत्रजन तथा 50 किग्रा. फास्फोरस प्रति हे. की दर से प्रयोग करें। ट्राइकोर्डर्मा का एक छिड़काव नर्सरी लगाने के

10 दिन के अन्दर कर देना चाहिए। बुवाई के 10–14 दिन बाद एक सुरक्षात्मक छिड़काव रोगों तथा कीटों के बचाव हेतु करें। खैरा रोग के लिए एक सुरक्षात्मक छिड़काव 5 किग्रा. जिंक सल्फेट को 20 किग्रा. यूरिया या 2.5 किग्रा. बुझे हुए चूने के साथ 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से पहला छिड़काव बुवाई के 10 दिन बाद एवं दूसरा 20 दिन बाद करना चाहिए। सफेदा रोग के नियंत्रण हेतु 4 किग्रा. फेरस सल्फेट को 20 किग्रा. यूरिया के घोल के साथ बनाकर छिड़काव करना चाहिए। झोंका रोग की रोकथाम के लिए 500 ग्राम कार्बोन्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी० का प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें तथा भूरे धब्बे के रोग से बचने के लिए 2 किग्रा. मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्ल्यू०पी. का प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें नर्सरी में लगने वाले कीटों से बचाव हेतु 1.25 लीटर क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करें। नर्सरी में पानी का तापक्रम बढ़ने पर उसे निकाल कर पुनः पानी देना चाहिए।

5.3 सीधी बुवाई : मैदानी क्षेत्रों में सीधी बुवाई की दशा में 90 से 110 दिन में पकने वाली प्रजातियों को चुनना चाहिए। बुवाई मध्य जून से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक समाप्त कर देना चाहिए। 40 से 50 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की दर से 20 सेमी. की दूरी पर लाइनों में बोना चाहिए। पंक्तियों में बुवाई करने से यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण में सुविधा होती है तथा पौध सुरक्षा उपचार भी सुगमतापूर्वक किये जा सकते हैं। इस विधि से बुवाई करने पर पौधों की संख्या भी सुनिश्चित की जा सकती है।

यदि लेव लगाकर धान की बुवाई करनी हो तो 100 से 110 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। बीज को 24 घण्टे पानी में भिगोकर 36–48 घण्टे तक ढेर बनाकर रखना चाहिए जिससे बीज में अंकुरण प्रारम्भ हो जाय। इस अंकुरित बीज को खेत में लेव लगाकर दो सेमी. खड़े पानी में छिड़कवां बोया जाना चाहिए। आगरा मण्डल में, जहाँ कुओं का पानी खारा है और धान की पौध अच्छी प्रकार तैयार नहीं हो सकती, इस विधि को अपनाना ज्यादा अच्छा है।

5.4 समय से रोपाई : 130–140 दिन में पकने वाली धान की प्रजातियों जैसे नरेन्द्र–2026, नरेन्द्र धान–2064, पूसा–44 आदि की रोपाई जून के तीसरे सप्ताह से जुलाई के मध्य तक अवश्य कर लेनी चाहिए, अन्यथा उसके बाद उपज में निरन्तर कमी होने लगती है। यह कमी 30–40 किग्रा. प्रतिदिन प्रति हेक्टेयर होती है। शीघ्र पकने वाली प्रजातियों जैसे पूसा–169, नरेन्द्र–80, शुष्क सम्राट आदि की रोपाई जून के तीसरे सप्ताह से जुलाई के अन्तिम सप्ताह तक की जा सकती है। देर से पकने वाली प्रजातियां जैसे महसूरी, नरेन्द्र मयंक, नरेन्द्र जलपुष्प, तथा सुगन्धित धान जैसे बासमती–22, पूसा बासमती–1847, पूसा बासमती–1718 आदि की रोपाई जुलाई के अन्तिम सप्ताह तक की जानी चाहिए। अधिक उपज देने वाली सुगन्धित किस्में जैसे पूसा बासमती–1 की रोपाई 15 जुलाई तक कर देनी चाहिए। क्वारी और कार्तिकी धान की बौनी प्रजातियों को 21–25 दिन की पौध की रोपाई के लिए उपयुक्त होती है। देशी तथा देर से पकने वाली प्रजातियां को 30–35 दिन की पौध रोपाई के लिए उपयुक्त होती है। ऊसर में रोपाई हेतु 35 दिन की पौध का प्रयोग करें तथा एक स्थान पर 2 से 3 पौधे लगायें तथा पंक्ति से पंक्ति की दूरी 15 सेमी. रखी जाय। शीघ्र मध्यम एवं विलम्ब से पकने वाली प्रजातियों की नर्सरी की रोपाई विषम परिस्थितियों में क्रमशः 30–35, 40–45 एवं 50–55 दिनों में की जा सकती है। स्वर्णा, सोना महसूरी व महसूरी की मई के अन्त से 15 जून तक रोपाई कर देनी चाहिए। विलम्ब से रोपाई करने से फूल आने में कठिनाई होती है।

5.5 उचित गहराई व दूरी पर रोपाई : बौनी प्रजातियों की पौध की रोपाई 3–4 सेमी. से अधिक गहराई पर नहीं करना चाहिए। अन्यथा कल्ले कम निकलते हैं और उपज कम हो जाती है। साधारण उर्वरा भूमि में पंक्तियों व पौधों की दूरी 20 X 10 सेमी. एवं उर्वरा भूमि में 20 X 15 सेमी. रखें। एक स्थान पर 2–3 पौध लगाने चाहिए। यदि रोपाई में देर हो जाय तो एक स्थान पर 3–4 पौध लगाना उचित होगा। साथ ही पंक्तियों से पंक्तियों की दूरी 5 सेमी. कम कर देनी चाहिए। इस बात पर विशेष ध्यान दें कि प्रति वर्ग मीटर क्षेत्रफल में सामान्य स्थिति में 50 हिल अवश्य होना चाहिए एवं ऊसर तथा देर से रोपाई की स्थिति में 65–70 हिल होनी चाहिए।

5.6 धान की रोपाई में पैडी ट्रान्सप्लान्टर का प्रयोग : पैडी ट्रान्सप्लान्टर छ: लाइन वाली हस्तचालित तथा शक्ति चालित आठ लाइन वाली धान की रोपाई की मशीन है। इस यन्त्र से रोपाई हेतु मैट टाइप नर्सरी की आवश्यकता होती है। इस नर्सरी में धान का अंकुरित बीज प्रयोग किया जाता है। इस मशीन द्वारा कतार से कतार की दूरी 20 सेमी. निश्चित हैं।

अतः 20–10 सेमी. की दूरी पर रोपाई हेतु 50 किग्रा. प्रति हे. बीज की आवश्यकता होती है। अच्छा अंकुरण 30 डिग्री सेंटीग्रेड तापक्रम पर प्राप्त होता है। धान को पानी में 24 घण्टे भिगोने के पश्चात छाया में या बोरे में दो या तीन दिन अथवा ठीक से अंकुरण होने तक ढक कर रखना चाहिए। बोरे पर अंकुर निकलने के समय तक पानी छिड़कते रहें। अंकुर फूटने पर बीज नर्सरी में बोने के लिए तैयार समझना चाहिए।

5.7 मैट टाइप नर्सरी उगाना : धान की नर्सरी उगाने के लिए 5–6 सेमी. गहराई तक की खेत की ऊपरी सतह की मिट्टी एकत्र कर लेते हैं। इसे बारीक कूटकर छलने से छान लेते हैं। जिस क्षेत्र में नर्सरी डालनी है उसमें अच्छी प्रकार पड़लिंग करके पाटा कर दें तत्पश्चात खेत का पानी निकाल दें और एक या दो दिन तक ऐसे ही रहने दें जिससे सतह पर पतली पर्त बन जाय। अब इस क्षेत्र पर एक मीटर चौड़ाई में आवश्यकतानुसार लम्बाई तक लकड़ी की पटियाँ लगाकर मिट्टी की 2 से 3 सेमी. ऊँची मेड़ बनायें और इस क्षेत्र में नर्सरी हेतु तैयार की गयी छनी हुई मिट्टी के एक सेमी. ऊँचाई तक बिछाकर समतल कर दें तथा इसके ऊपर अंकुरित बीज 800 से 1000 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से छिड़क दें अब इसके ऊपर थोड़ी छनी हुई मिट्टी इस प्रकार डालें कि बीज ढक जाये। तत्पश्चात् नर्सरी को पुआल घास से ढक दें 4–5 दिन तक पानी का छिड़काव करते रहें नर्सरी में किसी प्रकार के उर्वरक का प्रयोग न करें।

5.8 रोपाई : 15 दिन की पौध रोपाई करने हेतु स्क्रेपर की सहायता से (20–50 सेमी. के टुकड़ों में) पौध इस प्रकार निकाली जाय ताकि छनी हुई मिट्टी की मोटाई तक का हिस्सा उठकर आये। इन टुकड़ों को पैडी ट्रान्सप्लान्टर की ट्रे में रख दें मशीन में लगे हथें को जमीन की ओर हल्के झटके के साथ दबाएं। ऐसा करने से ट्रे में नर्सरी पौध की रुकाई 6 पिकर काटकर 6 स्थानों पर खेत में लगा दें फिर हथें को अपनी ओर खीच कर पीछे की ओर कदम बढ़ाकर मशीन को उतना खीचें जितना पौध से पौध की (सामान्यतः 10 सेमी) रखना चाहते हैं। पुनः हथें को जमीन की ओर हल्के झटके से दबाएं। इस प्रकार की पुनरावृत्ति करते जायें, इससे पौध की रोपाई का कार्य पूर्ण होता जायेगा।

5.9 गैप फिलिंग : रोपाई के बाद जो पौधे मर जायें उनके स्थान पर दूसरे पौधों को तुरन्त लगा दें, ताकि प्रति इकाई पौधों की संख्या कम न होने पाये। अच्छी उपज के लिए प्रति वर्ग मीटर 250 से 300 बालियाँ अवश्य होनी चाहिए।

धान में फसल सुरक्षा :

धान के प्रमुख कीट :

क)	असिंचित दशा में	ख)	सिंचित दशा में
1.	दीमक	1.	दीमक
2.	जड़ की सूड़ी	2.	जड़ की सूड़ी
3.	पत्ती लपेटक	3.	नरई कीट
4.	गन्धी बग	4.	पत्ती लपेटक
5.	सैनिक कीट	5.	हिस्पा
		6.	बंका कीट
		7.	तना बेधक
		8.	हरा फुदका
		9.	भूरा फुदका
		10.	सफेद पीठ वाला फुदका
		11.	गन्धी बग
		12.	सैनिक कीट
1.	दीमक : यह एक सामाजिक कीट है तथा कालोनी बनाकर रहते हैं। एक कालोनी में लगभग 90 प्रतिशत श्रमिक, 2–3 प्रतिशत सैनिक, एक रानी व एक राजा होते हैं। श्रमिक पीलापन लिए हुए सफेद रंग के पंखहीन होते हैं। जो उग रहे बीज, पौधों की जड़ों को खाकर क्षति पहुँचाते हैं।		
2.	जड़ की सूड़ी : इस कीट की गिडार उबले हुए चावल के समान सफेद रंग की होती है। सूड़ियाँ जड़ के मध्य में रहकर हानि पहुँचाती हैं जिसके फलस्वरूप पौधे पीले पड़ जाते हैं।		
3.	नरई कीट (गाल मिज) : इस कीट की सूड़ी गोभ के अन्दर मुख्य तने को प्रभावित कर प्याज के तने के आकार की रचना बना देती है, जिसे सिल्वर शूट या ओनियन शूट कहते हैं। ऐसे ग्रसित पौधों में बाली नहीं बनती है।		
4.	पत्ती लपेटक कीट : इस कीट की सूड़ियाँ प्रारम्भ में पीले रंग की तथा बाद में हरे रंग की हो जाती हैं, जो पत्तियों को लम्बाई में मोड़कर अन्दर से उसके हरे भाग को खुरच कर खाती है।		

5. **हिस्पा :** इस कीट के गिडार पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को खाते हैं, जिससे पत्तियों पर फफोले जैसी आकृति बन जाती है। प्रौढ़ कीट पत्तियों के हरे भाग को खुरच कर खाते हैं।
6. **बंका कीट :** इस कीट की सूड़ियाँ पत्तियों को अपने शरीर के बराबर काटकर खोल बना लेती हैं तथा उसी के अन्दर रहकर दूसरे पत्तियों से चिपककर उसके हरे भाग को खुरच के खाती हैं।
7. **तना बेधक :** इस कीट की मादा पत्तियों पर समूह में अण्डा देती है। अण्डों से सूड़ियाँ निकलकर तनों में छुसकर मुख्य शूट को क्षति पहुँचाती हैं, जिससे बढ़वार की स्थिति में मृतगोभ तथा बालियाँ आने पर सफेद बाली दिखाई देती है।
8. **हरा फुदका :** इस कीट के प्रौढ़ हरे रंग के होते हैं तथा इनके ऊपरी पंखों के दोनों किनारों पर काले बिन्दु पाये जाते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पत्तियों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं, जिससे ग्रसित पत्तियाँ पहले पीली व बाद में कथर्ड रंग की होकर नोंक से नीचे की तरफ सूखने लगती हैं।
9. **भूरा फुदका :** इस कीट के प्रौढ़ भूरे रंग के पंखयुक्त तथा शिशु पंखहीन भूरे रंग के होते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पत्तियों एवं किल्लों के मध्य रस चूस कर छति पहुँचाते हैं, जिससे प्रकोप के प्रारम्भ में गोलाई में पौधे काले होकर सूखने लगते हैं, जिसे 'हापर बर्न' भी कहते हैं।
10. **सफेद पीठ वाला फुदका :** इस कीट के प्रौढ़ कालापन लिए हुए भूरे रंग के तथा पीले शरीर वाले होते हैं। इनके पंखों के जोड़ पर सफेद पट्टी होती है। शिशु सफेद रंग के पंखहीन होते हैं तथा इनके उदर पर सफेद एवं काले धब्बे पाये जाते हैं। इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पत्तियों एवं किल्लों के मध्य रस चूसते हैं, जिससे पौधे पीले पड़कर सूख जाते हैं।
11. **गन्धी बग :** इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ लम्बी टांगों वाले भूरे रंग के विशेष गन्ध वाले होते हैं, जो बालियों की दुग्धावस्था में दानों में बन रहे दूध को चूसकर क्षति पहुँचाते हैं। प्रभावित दानों में चावल नहीं बनते हैं।
12. **सैनिक कीट :** इस कीट की सूड़ियाँ भूरे रंग की होती हैं, जो दिन के समय किल्लों के मध्य अथवा भूमि की दरारों में छिपी रहती है। सूड़ियाँ शाम को किल्लो अथवा दरारों से निकलकर पौधों पर चढ़ जाती हैं तथा बालियों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर नीचे गिरा देती है।

आर्थिक क्षति स्तर :

क्र.सं.	कीट का नाम	फसल की अवस्था	आर्थिक क्षति स्तर
1.	जड़ की सूड़ी	वानस्पतिक अवस्था	5 प्रतिशत प्रकोपित पौधे
2.	नरई कीट	वानस्पतिक अवस्था	5 प्रतिशत सिल्वर सूट
3.	पत्ती लपेटक	वानस्पतिक अवस्था	2 ताजा प्रकोपित पत्ती प्रति पुंज
4.	हिस्पा	वानस्पतिक अवस्था	2 प्रकोपित पत्ती या 2 प्रौढ़ प्रति पुंज
5.	बंका कीट	वानस्पतिक अवस्था	2 ताजा प्रकोपित पत्ती प्रति पुंज
6.	तना बेधक	बाली अवस्था	5 प्रतिशत मृत गोभ प्रति वर्ग मी०
7.	हरा फुदका	वानस्पतिक एवं बाली अवस्था	1-2 कीट प्रति वर्ग मी० 10-20 कीट प्रति पुंज
8.	भूरा फुदका	वानस्पतिक एवं बाली अवस्था	15-20 कीट प्रति पुंज
9.	सफेद पीठ वाला फुदका	वानस्पतिक एवं बाली अवस्था	5-20 कीट प्रति पुंज
10.	गन्धी बग	बाली की दुग्धावस्था	4-2 कीट प्रति पुंज
11.	सैनिक कीट	बाली की परिपक्वता की अवस्था	4-5 सूड़ी प्रति वर्ग मी०

नियंत्रण के उपाय :

1. खेत एवं मेड़ों को घासमुक्त एवं मेड़ों की छटाई करना चाहिए।
2. समय से रोपाई करना चाहिए।
3. फसल की साप्ताहिक निगरानी करना चाहिए
4. कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं के संरक्षण हेतु शत्रु कीटों के अण्डों को इकट्ठा कर बम्बू केज—कम—परचर में डालना चाहिए।
5. दीमक बाहुल्य क्षेत्र में कच्चे गोबर एवं हरी खाद का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
6. फसलों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
7. उर्वरकों की संतुलित मात्रा का ही प्रयोग करना चाहिए।
8. जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
9. भूरा फुदका एवं सैनिक कीट बाहुल्य क्षेत्रों में 20 पंक्तियों के बाद एक पंक्ति छोड़कर रोपाई करना चाहिए।
10. अच्छे जल निकास वाले खेत के दोनों सिरों पर रस्सी पकड़ कर पौधों के ऊपर से तेजी से गुजारने से बंका कीट की सूड़ियाँ पानी में गिर जाती हैं, जो खेत से पानी निकालने पर पानी के साथ बह जाती है।
11. तना बेधक कीट के पूर्वानुमान एवं नियंत्रण हेतु 5 फेरोमोन ट्रैप प्रति हेठो प्रयोग करना चाहिए।
12. नीम की खली 10 कुटुंबों प्रति हेठो की दर से बुवाई से पूर्व खेत में मिलाने से दीमक के प्रकोप में धीरे—धीरे कमी आती है।
13. ब्यूवेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. प्रति हेठो 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से दीमक सहित सभी भूमि जनित कीटों का नियंत्रण हो जाता है।
14. यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए –
 1. दीमक एवं जड़ की सूड़ी के नियंत्रण हेतु क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई०सी० 2.5 ली० प्रति हेठो की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।
 2. नरई कीट के नियंत्रण के लिए निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठो बुरकाव 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए—
 - ◆ कार्बोफ्यूरान 3 जी 20 किग्रा. प्रति हेठो 3—5 सेमी. स्थिर पानी में।
 - ◆ फिप्रोनिल 0.3 जी 20 किग्रा. 3—5 सेमी. स्थिर पानी में।
 - ◆ क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई०सी० 1.25 लीटर।
 3. हरा, भूरा एवं सफेद पीठ वाला फुदका के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठो बुरकाव / 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए –
 - ◆ एसिटामिप्रिड 20 प्रतिशत एस.पी. 100 ग्राम / हेठो 500—600 ली पानी में घोलकर छिड़काव करें।
 - ◆ कार्बोफ्यूरान 3 जी 20 किग्रा. 3—5 सेमी. स्थिर पानी में।
 - ◆ फिप्रोनिल 0.3 जी 20 किग्रा. 3—5 सेमी. स्थिर पानी में।
 - ◆ इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस०एल० 125 मि०ली०।
 - ◆ थायामेथोक्सैम 25 प्रतिशत डब्ल्यूएजी० 100 ग्राम।
 - ◆ क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई०सी० 1.50 लीटर।
 - ◆ क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई०सी० 1.50 लीटर।
 - ◆ एजाडिरेक्टन 0.15 प्रतिशत ई०सी० 2.50 लीटर।

4. तना बेधक, पत्ती लपेटक, बंका कीट एवं हिस्पा कीट के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठला बुरकाव / 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए—
 - ◆ बाईफेन्थ्रिन 10 प्रतिशत ई.सी. 500 मिली. / हेठला 500 ली पानी में घोलकर छिड़काव करें।
 - ◆ कार्बोफ्यूरान 3 जी 20 किग्रा. 3—5 सेमी. स्थिर पानी में।
 - ◆ कारटाप हाइड्रोक्लोरोआइड 4 जी 18 किग्रा. 3—5 सेमी. स्थिर पानी में।
 - ◆ क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. 0 1.50 लीटर।
 - ◆ क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. 0 1.50 लीटर।
5. गन्धी बग एवं सैनिक कीट के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठला बुरकाव करना चाहिए—
 - ◆ मैलाथियान 5 प्रतिशत धूल 20—25 किग्रा।
 - ◆ फेनवैलरेट 0.04 प्रतिशत धूल 20—25 किग्रा।
6. गन्धी बग के नियंत्रण हेतु एजाडिरेक्टन (नीम औयल) 0.15 प्रतिशत ई.सी. 0 की 2.50 लीटर मात्रा प्रति हेठला 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना लाभप्रद होता है।

प्रमुख रोग :

- | | |
|---------------|------------------|
| 1. सफेदा रोग | 5. भूरा धब्बा |
| 2. खैरा रोग | 6. जीवाणु झुलसा |
| 3. शीथ ब्लाइट | 7. जीवाणु धारी |
| 4. झोंका रोग | 8. मिथ्या कण्डुआ |
1. **सफेदा रोग :** यह रोग लौह तत्व की कमी के कारण नर्सरी में अधिक लगता है। नई पत्ती कागज के समान सफेद रंग की निकलती है।
 2. **खैरा रोग :** यह रोग जिंक की कमी के कारण होता है। इस रोग में पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं, जिस पर बाद में कत्थर्ई रंग के धब्बे बन जाते हैं।
 3. **शीथ ब्लाइट :** इस रोग में पत्र कंचुल (शीथ) पर अनियमित आकार के धब्बे बनते हैं, जिसका किनारा गहरा भूरा तथा मध्य भाग हल्के रंग का होता है।
 4. **झोंका रोग :** इस रोग में पत्तियों पर आँख की आकृति के धब्बे बनते हैं, जो मध्य में राख के रंग के तथा किनारे गहरे कत्थर्ई रंग के होते हैं। पत्तियों के अतिरिक्त बालियाँ, डण्ठलों, पुष्ण शाखाओं एवं गांठों पर काले भूरे धब्बे बनते हैं।
 5. **भूरा धब्बा :** इस रोग में पत्तियों पर गहरे कत्थर्ई रंग के गोल अथवा अण्डाकार धब्बे बन जाते हैं। इन धब्बों के चारों तरफ पीला धेरा बन जाता है तथा मध्य भाग पीलापन लिए हुए कत्थर्ई रंग का होता है।
 6. **जीवाणु झुलसा :** इस रोग में पत्तियाँ नोंक अथवा किनारे से एकदम सूखने लगती हैं। सूखे हुए किनारे अनियमित एवं टेढ़े—मेढ़े हो जाते हैं।
 7. **जीवाणु धारी झुलसा :** इस रोग में पत्तियों पर नसों के बीच कत्थर्ई रंग की लम्बी—लम्बी धारियाँ बन जाती हैं।
 8. **मिथ्या कण्डुआ :** इस रोग में बालियों के कुछ दाने पीले रंग के पाउडर में बदल जाते हैं, जो बाद में काले हो जाते हैं।

नियंत्रण के उपाय :

1. बीज उपचार :

- (1) जीवाणु झुलसा एवं जीवाणु धारी झुलसा रोग के नियंत्रण हेतु स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 90 प्रतिशत + टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड 10 प्रतिशत की 4.0 ग्राम मात्रा को प्रति 25 किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- (2) झोंका रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लूएस० की 2.50 ग्राम मात्रा अथवा कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी० की 2.0 ग्राम मात्रा को प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- (3) शीथ ब्लाइट रोग के नियंत्रण हेतु कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी० की 2.0 ग्राम मात्रा को प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- (4) भूरा धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू०एस० की 2.50 ग्राम मात्रा अथवा ट्राइकोडर्मा की 4.0 ग्राम मात्रा को प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- (5) मिथ्या कण्डुआ रोग के नियंत्रण हेतु कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी० की 2.0 ग्राम मात्रा को प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।

भूमि उपचार :

- (1) खैरा रोग: के नियंत्रण हेतु जिक सल्फेट 20–25 किग्रा. प्रति हे० की दर से बुवाई / रोपाई से पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से खैरा रोग का प्रकोप नहीं होता है।
- (2) जीवाणु झुलसा / जीवाणुधारी रोग : के नियंत्रण हेतु बायोपेस्टीसाइड स्यूडोमोनास फ्लोरसेन्स 0.5 प्रतिशत डब्लू०पी० की 2.50 किग्रा. प्रति हे० की दर से 10–20 किग्रा. बारीक बालू में मिलाकर बुवाई / रोपाई से पूर्व उर्वरकों की तरह से बुरकाव करना लाभप्रद होता है। उक्त बायोपेस्टीसाइड की 2.50 किग्रा. मात्रा को प्रति हे० 100 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर लगभग 5 दिन रखने के उपरान्त बुवाई से पूर्व भूमि में मिलाया जा सकता है।
- (3) भूमि जनित रोगों : के नियंत्रण हेतु बायोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरडी 1 प्रतिशत अथवा ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2 प्रतिशत की 2.5 किग्रा. प्रति हे० 60–75 किग्रा. सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से शीथ ब्लाइट, मिथ्या कण्डुआ आदि रोगों के प्रबन्धन में सहायक होता है।

3. पर्णीय उपचार :

सफेदा रोग : इसके नियंत्रण हेतु 5 किग्रा. फेरस सल्फेट को 20 किग्रा. यूरिया अथवा 2.50 किग्रा. बुझे हुए चूने को प्रति हे० की दर से 1000 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

खैरा रोग : इसके नियंत्रण हेतु 5 किग्रा. जिक सल्फेट को 20 किग्रा. यूरिया अथवा 2.50 किग्रा. बुझे हुए चूने को प्रति हे० की दर से 1000 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

शीथ ब्लाइट : इसके नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन, बायोपेस्टीसाइड में से किसी एक रसायन को प्रति हे० 500–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए –

1. कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी०	500 ग्राम
2. थायोफिनेट मिथाइल 70 प्रतिशत डब्लू०पी०	1.0 किग्रा०
3. हेक्साकोनाजोल 5.0 प्रतिशत ई०सी०	1.0 ली०
4. प्रोपिकोनाजोल 25 प्रतिशत ई०सी०	500 मिली०
5. कार्बैण्डाजिम 2 प्रतिशत+मैंकोजेब 63 प्रतिशत डब्लू०पी०	750 ग्राम

झोंका रोग : इसके नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति है 0 500–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए—

1. कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी०	500 ग्राम
2. एडीफेनफास 50 प्रतिशत ई०सी०	500 मिली०
3. हेक्साकोनाजोल 5.0 प्रतिशत ई०सी०	1.0 ली०
4. मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी०	2.0 किग्रा०
5. जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी०	2.0 किग्रा०
6. कार्बैण्डाजिम 12 प्रतिशत+मैंकोज़ेब 63 प्रतिशत डब्लू०पी०	750 ग्राम
7. आइसोप्रोथियोलॉन 40 प्रतिशत ई०सी०	750 मिली प्रति है०
8. कासूगामाइसिन 3 प्रतिशत एम.एल.	1.15 ली प्रति है०

भूरा धब्बा : इसके नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति है 0 500–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए —

1. एडीफेनफास 50 प्रतिशत ई०सी०	500 मिली०
2. मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी०	2.0 किग्रा०
3. जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी०	2.0 किग्रा०
4. ज़िरम 80 प्रतिशत डब्लू०पी०	2.0 किग्रा०
5. थायोफिनेट मिथाइल 70 प्रतिशत डब्लू०पी०	1.0 किग्रा०

जीवाणु झुलसा एवं जीवाणु धारी झुलसा : इसके नियंत्रण हेतु 15 ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 90 प्रतिशत+टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड 10 प्रतिशत को 500 ग्राम कापर आक्सीक्लोराइड 50 प्रतिशत डब्लू०पी० के साथ मिलाकर प्रति है 0 500–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

मिथ्या कण्डुआ : इसके नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति है 0 500–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए —

1. कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी०	500 ग्राम
2. कापर हाइड्राक्साइड 77 प्रतिशत डब्लू०पी०	2.0 किग्रा०

प्रमुख खरपतवार :

(क) जल भराव की दशा में : बुलरस, छतरीदार मोथा, कन्द वाला मोथा आदि।

(ख) सिंचित दशा में :

1. सकरी पत्ती — सांवा, सांवकी, बूटी, मकरा, कांजी, बिलुआ कंजा आदि।
2. चौड़ी पत्ती — मिर्च बूटी, फूल बूटी, पान पत्ती, बोन झलोकिया, बमभोली, घारिला, दादमारी, साथिया, कुसल आदि।

नियंत्रण के उपाय :

शस्य क्रियाओं द्वारा : शस्य क्रियाओं द्वारा खरपतवार नियंत्रण हेतु गमट्ट में मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई, फसल चक्र अपनाना, हरी खाद का प्रयोग, पड़लिंग आदि करना चाहिए।

यांत्रिक विधि : इसके अन्तर्गत खुरपी आदि से निराई—गुड़ाई कर भी खरपतवार नियंत्रित किया जा सकता है।

रासायनिक विधि : इसके अन्तर्गत विभिन्न खरपतवारनाशी रसायनों को फसल की बुवाई/रोपाई के पश्चात संस्तुत मात्रा में प्रयोग किया जाता है, जो तुलनात्मक दृष्टि से अल्पव्ययी होने के कारण अधिक लाभकारी व ग्राह्य है—

1. नर्सरी में खरपतवार नियंत्रण हेतु प्रेटिलाक्लोर 30.7 प्रतिशत ई0सी0 500 मिली0 प्रति एकड़ की दर से 5—7 किग्रा. बालू में मिला कर पर्याप्त नमी की स्थिति में नर्सरी डालने के 2—3 दिन के अन्दर प्रयोग करना चाहिए।
2. सीधी बुवाई की स्थिति में प्रेटिलाक्लोर 30.7 प्रतिशत ई0सी0 1.25 लीटर बुवाई के 2—3 दिन के अन्दर अथवा बिसपाइरीबैक सोडियम 10 प्रतिशत एस0सी0 0.20 लीटर बुवाई के 15—20 दिन बाद प्रति हेठो की दर से नमी की स्थिति में 500 लीटर पानी में घोलकर फ्लैटफैन नॉजिल से छिड़काव करना चाहिए।
3. रोपाई की स्थिति में — सकरी एवं चौड़ी पत्ती दोनों प्रकार के खरपतवारों के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को प्रति हेठो 500 लीटर पानी में घोलकर फ्लैटफैन नॉजिल से 2 इंच भरे पानी में रोपाई के 3—5 दिन के अन्दर छिड़काव करना चाहिए—

(1) ब्यूटाक्लोर 50 प्रतिशत ई0सी0	3—4 लीटर
(2) एनीलोफास 30 प्रतिशत ई0सी0	1.25—1.50 लीटर
(3) प्रेटिलाक्लोर 50 प्रतिशत ई0सी0	1.50 लीटर
(4) पाइराजोसल्फ्यूरान इथाईल 10 प्रतिशत डब्लू0पी0	0.15 किग्रा.
(5) बिसपाइरीबैक सोडियम 10 प्रतिशत एस0सी0 0.20 लीटर रोपाई के 15—20 दिन बाद नमी की स्थिति में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को प्रति हेठो 500 लीटर पानी में घोलकर फ्लैटफैन नॉजिल से बुवाई के 25—30 दिन बाद छिड़काव करना चाहिए—	
(1) मेटसल्फ्यूरान मिथाईल 20 प्रतिशत डब्लू0पी0	20 ग्राम
(2) इथाक्सी सल्फ्यूरान 15 प्रतिशत डब्लू0डी0जी0	100 ग्राम
(3) 2.4—डी इथाईल ईस्टर 38 प्रतिशत ई0सी0	2.5 लीटर

प्रमुख चूहे : धान की फसल चूहों द्वारा भी प्रभावित होती है, जिनमें खेत का चूहा (फील्ड रैट), मुलायम बालों वाला खेत का चूहा (सापट फर्ड फील्ड रैट) एवं खेत का चूहा (फील्ड माउस) आदि मुख्य चूहे की हानिकारक प्रजातियाँ हैं।

चूहों के नियंत्रण के उपाय : इनके नियंत्रण हेतु खेतों की निगरानी एवं जिंकफास्फाइड 80 प्रतिशत का प्रयोग करना चाहिए तथा नियंत्रण का साप्ताहिक कार्यक्रम निम्न प्रकार सामूहिक रूप से किया जाय तो अधिक सफलता मिलती है—

पहला दिन — खेत की निगरानी करें तथा जितने चूहे के बिल हो उसे बन्द करते हुए पहचान हेतु लकड़ी के डन्डे गाड़ दें।

दूसरा दिन — खेत में जाकर बिल की निगरानी करें जो बिल बन्द हो वहाँ से गड़े हुए डन्डे हटा दें जहाँ पर बिल खुल गये हों वहाँ पर डण्डे गड़े रहने दें। खुले बिल में एक ग्राम सरसों का तेल एवं 48 ग्राम भुने हुए दाने में जहर मिला कर रखें।

तीसरा दिन — बिल की पुनः निगरानी करें तथा बिना जहर मिला हुआ चारा पुनः बिल में रखें।

चौथा दिन — जिंक फास्फाइड 80 प्रतिशत की 1.0 ग्राम मात्रा को 1.0 ग्राम सरसों के तेल एवं 48 ग्राम भुने हुए दाने में बनाये गये जहरीले चारे का प्रयोग करना चाहिए।

पाँचवा दिन — बिल की निगरानी करें तथा मरे हुए चूहे को जमीन में खोद कर दबा दें।

छठा दिन —

1. बिल को पुनः बन्द कर दें तथा अगले दिन यदि बिल खुल जाये तो इस साप्ताहिक कार्यक्रम को पुनः अपनायें।
2. ब्रोमोडियोलोन 0.005 प्रतिशत के बने बनाये चारे की 10 ग्राम मात्रा प्रत्येक जिंदा बिल में रखना चाहिए। इस दवा को चूहा 3—4 बार खाने के बाद मरता है।

धान की फसल में एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन

(अ) शस्य क्रियाएँ :

1. गर्मी की मिट्टी पलट हल से गहरी जुताई करने से भूमि में कीटों की विभिन्न अवस्थाएं जैसे— अण्डा, सूँड़ी, शंखी एवं प्रौढ़ अवस्थाएं नष्ट हो जाती हैं तथा चिड़िया भी कीटों को चुगकर खा जाती है। इसके अतिरिक्त भूमिजनित रोगों यथा— उकठा, जड़ सड़न, डैम्पिंग आफ, कालर राट आदि भी सूर्य के प्रकाश में नष्ट हो जाते हैं। इसी प्रकार खरपतवारों के बीज भी मिट्टी में नीचे दब जाते हैं, जिससे खरपतवारों का जमाव बहुत ही कम हो जाता है।
2. रवरथ एवं रोगरोधी प्रजातियों की बुवाई/रोपाई करना चाहिए।
3. बीज शोधन कर समय से बुवाई/रोपाई के साथ—साथ फसल चक्र अपनाना चाहिए।
4. नर्सरी समय से उठी हुई क्यारियों पर लगाना चाहिए।
5. पौधों से पौधों और लाइन से लाइन के बीच वाँछित दूरी रखना चाहिए।
6. उर्वरकों की संस्तुत मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।
7. खेत के मेड़ों को धासमुक्त एवं साफ सुथरा रखना चाहिए।
8. जल निकास का समुचित प्रबन्ध करना चाहिए।
9. कटाई जमीन की सतह से करना चाहिए।
10. फसलों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।

(ब) यांत्रिक नियंत्रण :

1. धान के पौधे की छोटी काटकर रोपाई करना चाहिए।
2. खेतों से अण्डों व सूँड़ियों को यथा सम्भव एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए।
3. कीट एवं रोग ग्रसित पौधों की पत्तियाँ अथवा आवश्यकतानुसार पूरा पौधा उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
4. खरपतवारों को निराई—गुड़ाई द्वारा खेत से निकाल देना चाहिए।
5. हिस्पा ग्रसित पौधों की पत्तियों का उपरी हिस्सा काट देना चाहिए।
6. केसर्वर्म की सूँड़ियों को रस्सी द्वारा पानी में गिरा देना चाहिए।
7. खेतों में प्रकाश—प्रपंच का प्रयोग कर हानिकारक कीटों को नष्ट कर देना चाहिए।
8. तना बेधक कीट के आंकलन एवं नियंत्रण हेतु फेरोमोन प्रपंच का प्रयोग करना चाहिए।
9. खेत में यथा सम्भव वर्ड पर्चर का प्रयोग करना चाहिए।
10. पत्ती लपेटक कीट के नियंत्रण हेतु बेर की झाड़ियों से फसल के उपरी भाग पर घुमा देने से पत्तियाँ खुल जाती हैं, जिससे सूँड़ियाँ नीचे गिर जाती हैं।

(स) जैविक नियंत्रण :

1. खेत में मौजूद परभक्षी यथा मकड़ियाँ, वाटर वग, मिरिड वग, ड्रेगन फ्लाई, मिडो ग्रासहापर आदि एवं परजीवी यथा ट्राइकोग्रामा (बायो एजेण्ट्स) कीटों का संरक्षण करना चाहिए।
2. परजीवी कीटों को प्रयोगशाला में सर्वाधित कर खेतों में छोड़ना चाहिए।
3. शत्रु एवं मित्र (2:1) कीटों का अनुपात बनाये रखना चाहिए।
4. यथासंभव बायोपेस्टीसाइड का प्रयोग करना चाहिए।

(द) रासायनिक नियंत्रण :

1. कीट एवं रोग नियंत्रण हेतु कीटनाशी रसायनों का प्रयोग अंतिम उपाय के रूप में करना चाहिए।
2. सुरक्षित एवं संस्तुत रसायनों को उचित समय पर निर्धारित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए।
3. रसायनों का प्रयोग करते समय सावधानियाँ अवश्य बरतनी चाहिए।
4. खरपतवारनाशकों का प्रयोग संस्तुतियों के अनुसार ही करना चाहिए।

कटाई : धान की फसल की कटाई 90 प्रतिशत परिपक्वता पर की जानी चाहिए।

मङ्गाई : खेत में लांक एक दो दिन से अधिक नहीं छोड़ना चाहिए। हल्की धूप में खूब सुखाकर भण्डारण करें।

धान की फसल में माहवार महत्वपूर्ण कार्य बिन्दु –

मई	1.	नरेन्द्र धान—2026, शुष्क सम्प्राट, नरेन्द्र धान—3112—1 की नर्सरी डालें।
	2.	धान के बीज शोधन हेतु 4 ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट को 45 ली. पानी में घोलकर 25 किग्रा. बीज को 12 घन्टे पानी में भिगोकर तथा सुखाकर नर्सरी में बोना।
जून	1.	धान की नर्सरी डालना सुगम्भित प्रजातियाँ शीघ्र पकने वाली।
	2.	नर्सरी में खैरा रोग लगाने पर जिंक सल्फेट तथा यूरिया का छिड़काव सफेदा रोग हेतु फेरस सल्फेट तथा यूरिया का छिड़काव।
	3.	धान की रोपाई।
	4.	रोपाई के समय संस्तुत उर्वरक का प्रयोग एवं रोपाई के एक सप्ताह के अंदर ब्यूटाक्लोर से खरपतवार नियंत्रण।
जुलाई	1.	धान की रोपाई प्रत्येक वर्गमीटर में 50 हिल तथा प्रत्येक हिल पर 2—3 पौधे लगाना एवं ब्यूटाक्लोर से खरपतवार नियंत्रण।
	2.	ऊसर क्षेत्र हेतु नरेन्द्र ऊसर धान—2008, सी.एस.आर.—10, नरेन्द्र ऊसर धान—2009 की रोपाई 35—40 दिन की पौध लगाना। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 15 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. एवं एक स्थान पर 4—5 पौध लगाना।
अगस्त	1.	धान में खैरा रोग नियंत्रण हेतु 5 किग्रा. जिंक सल्फेट तथा 20 किग्रा. यूरिया अथवा 2.5 किग्रा. बुझा चूना को 800 लीटर पानी प्रति हे।।
	2.	धान में फुदका की रोकथाम हेतु मोनोक्रोटोफास 36 एस.एल. (750 मी.ली.) 500—600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. छिड़काव।
सितम्बर	1.	धान में फूल खिलने पर सिंचाई।
	2.	धान में दुग्धावस्था में सिंचाई।
	3.	धान में भूरा धब्बा एवं झौका रोग की रोकथाम हेतु जिंक मैंगनीज कार्बमेट अथवा जीरम 80: 2 किग्रा. प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।
	4.	धान में पत्तियों एवं पौधों के फुदकों के नियंत्रण हेतु मोनोक्रोटोफास 1 लीटर का 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. छिड़काव।
	5.	धान में फलेग लीफ अवस्था पर नत्रजन की टाप ड्रेसिंग।
अक्टूबर	1.	धान में सैनिक कीट नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत सी.जी. अथवा फेन्थोएट का 2 प्रतिशत चूर्ण 25—30 किग्रा. प्रति हे 0 बुरकाव करें।
	2.	धान में गंधी कीट नियंत्रण हेतु मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण के 25—30 किग्रा. प्रति हे. बुरकाव करें।

धान का आभासी कण्डुआ (फाल्स स्मट) रोग

धान के आभासी कण्डुआ रोग का प्रकोप उन क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है जहाँ वायुमण्डल में आर्द्रता (90 प्रतिशत से अधिक) तथा तापमान 25–35 डिग्री सेल्सियस होता है, रोग का प्रसार हवा के द्वारा एक पौधे से दूसरे पौधे में होता है। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा भी इस रोग की तीव्रता का कारण है। जल भराव एवं नाइट्रोजन की अधिकता वाली भूमियों में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है।

लक्षण :

यह रोग एक प्रकार के कवक अस्टिलैगिन्वाड़िया वाईरेन्स (*Ustilaginoidea virens*) के कारण होता है। इस रोग के लक्षण पुष्पीकरण के दौरान दिखाई देते हैं, विशेष रूप से तब जब छोटी बाली परिपक्वता तक पहुँचने वाली होती हैं। नारंगी, मखमली, अण्डाकार हिस्सा, जिसका व्यास लगभग एक सेमी. होता है, अलग-अलग दानों पर दिखाई देते हैं। बाद में दाने पीले हरे या हरे काले रंग में बदल जाते हैं। पुष्पगुच्छ के कुछ ही दाने रोगाणु के स्पोर्स में परिवर्तित होते हैं, पौधे के अन्य भाग इस रोग से प्रभावित नहीं होते। दानों के वजन एवं बीज अंकुरण में कमी आती है।

रोग की प्रारंभिक अवस्था के दौरान पीले रंग व बाद की अवस्था में काले रंग की स्पोर्स



उपचार : बुवाई से पहले / नर्सरी / पौध की अवस्था से लेकर रोपाई की अवस्था तक :

- ◆ इस रोग से प्रभावित भूमियों की गर्मी में गहरी जुताई करें।
- ◆ उपलब्ध प्रतिरोधक प्रजातियों का चयन करें।
- ◆ रोग से प्रभावित खेत की सफाई जैसे— पुवाल, धान की बाल व अन्य डेब्रिस आदि।
- ◆ फसल चक्र अपनाना।
- ◆ फसल की उचित समय पर बुवाई करें।
- ◆ धान के बीज को 52° सेंट्रें. तक गर्म जल में 10 मिनट तक भिगोने के बाद उसकी बुवाई करें।
- ◆ 5 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन करें।
- ◆ पौध की जड़ों को स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस 5 ग्राम प्रति लीटर पानी से बने हुए घोल में 30 मिनट तक डुबोकर रखें उसके बाद उसकी रोपाई करें।
- ◆ नीम की खली 150 किग्रा. प्रति हे. की दर से प्रयोग करें।

वानस्पतिक वृद्धि से लेकर बाली निकलने की अवस्था तक :

- ◆ पोषक तत्वों की उचित एवं संतुलित मात्रा का प्रयोग करें।

- ◆ नाइट्रोजन की अधिक मात्रा के प्रयोग से बचें।
- ◆ रथाई तौर पर खेत में पानी भरने के बजाय खेतों की भिगोने और सुखाने की एक के बाद एक प्रक्रिया अपनाएँ (आद्रता कम करने के लिए)।
- ◆ स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस को 5 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का पर्णीय छिड़काव रोपाई के 15 दिन के बाद करें।

पुष्पावस्था से परिपक्वता की अवस्था तक :

- ◆ खेत की सतत निगरानी करें।
- ◆ फसल की कटाई के समय रोगग्रस्त पौधों को नष्ट कर दें जिससे कि अगले फसल में इसका प्रभाव कम किया जा सके।
- ◆ आवश्यकता पड़ने पर निम्नलिखित फफूँदनाशकों का बाली निकलते समय किसी एक का सुरक्षात्मक छिड़काव करें—

संस्तुत फफूँदनाशी की सूची

फफूँदनाशी का नाम	मात्र प्रति हेक्टेयर			प्रतीक्षा अवधि अंतिम छिड़काव से फसल कटाई तक (दिन)
	सक्रिय तत्व (ग्राम)	संगठन (ग्राम/मिली.) प्रतिशत	पानी की मात्रा (लीटर)	
कॉपरहाइड्रॉक्सी क्लोराइड 53.8 प्रतिशत	525	1500	500	10
कॉपर हाइड्रोक्साइड 77 प्रतिशत	1000	200 ग्राम	750	—
फ्लूपयरम 17.7 + टेबुकोनाज़ोल 17.7 प्रतिशत डब्लू/ डब्लू एस.सी.	फ्लूपयरम 10 + टेबुकोनाज़ोल 10	550 ग्राम/हे.	500	22
पिकोजाईस्टारबिन 7.05 प्रतिशत + प्रोपिकोनाज़ोल 11.7 प्रतिशत एस.सी.	200	1000	500	24
टेबुकोनाज़ोल 50 प्रतिशत + ट्राईफ्लोविसनस्टारबिन 25 प्रतिशत डब्लू.जी.	—	350—400	500	35



2. संकर धान की उन्नतशील खेती

धान विश्व की तीन महत्वपूर्ण खाद्यान्न फसलों में से एक है जोकि 2.7 बिलियन लोगों का मुख्य भोजन है। इसकी खेती विश्व में लगभग 150 मिलियन हेक्टेयर एवं एशिया में 135 मिलियन हेक्टेयर में की जाती है। भारतवर्ष में लगभग 44 मिलियन हेक्टेयर तथा उत्तर प्रदेश में करीब 5.9 मिलियन हेक्टेयर में धान की खेती विभिन्न परिस्थितियों : सिंचित, असिंचित, जल प्लावित, असिंचित ऊसरीली एवं बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में की जाती है। विभिन्न परिस्थितियों अर्थात् अनुकूल सिंचित एवं विषम परिस्थितियों हेतु धान की उच्च उत्पादकता वाली संकर प्रजातियों के विकास पर बल दिये जाने की आवश्यकता है। सर्वप्रथम संकर प्रजातियों के विकास का कार्यक्रम चीन में वर्ष 1964 में आरम्भ हुआ। पिछले 20 वर्षों के अथव प्रयासों के उपरान्त विकसित संकर प्रजातियों से सामान्य प्रजातियों के सापेक्ष 15–20 प्रतिशत अधिक उत्पादन प्राप्त हो रहा है क्योंकि इनमें उपलब्ध संकर ओज एवं प्रभावी जड़तंत्र, सूखा एवं मृदा लवणता के प्रति मध्यम स्तर का अवरोधी होता है। संकर प्रजातियों से कृषक कम क्षेत्रफल में सीमित संसाधनों से सफल विविधीकरण द्वारा अधिक उपज प्राप्त कर सकता है। उत्तर प्रदेश में लगभग 18.50 लाख हेक्टेयर में संकर धान की खेती की जा रही है। प्रमुख संकर किस्मों का विवरण सारणी-1 में दिया गया है।

संकर धान की खेती सामान्य किस्मों की तरह ही की जाती है। परीक्षणों से सिद्ध हो चुका है कि संकर प्रजातियां सामान्य प्रजातियों की तुलना में 10–12 कुन्तल /हेक्टेयर अधिक उपज देती है क्योंकि इनमें प्रति पौध बालियों तथा प्रति बाली दानों की संख्या अधिक होने के साथ—साथ विषम परिस्थितियों के लिए उपयुक्त है।

ज्ञातव्य है कि संकर किस्में दो विभिन्न आनुवांशिक गुणों वाली प्रजातियों के नर एवं मादा के संयोग/संसर्ग/संकरण से विकसित की जाती है इनमें पहली पीढ़ी का ही बीज नई किस्म के रूप में प्रयोग किया जाता है क्योंकि पहली पीढ़ी में एक विलक्षण ओज क्षमता पायी जाती है जो सर्वोत्तम सामान्य किस्मों की तुलना में अधिक उपज देने में सक्षम होती है ध्यान रहे कि अगली पीढ़ी में उनके संकलित गुण विघटित हो जाने के कारण ओज क्षमता में बहुत झास होता है तथा पैदावार कम हो जाती है। परिणामतः संकर बीज किसानों को हर साल खरीदना पड़ता है।

सारणी 1 : धान की प्रमुख संकर प्रजातियाँ एवं गुण :

क्र.सं.	संकर/विकसित वर्ष	पकने की अवधि (दिन)	औसत पैदावार कु./हे.	राज्य हेतु विकसित
1.	के.आर.एच.-2 (1996)	130–135	7.40	आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, त्रिपुरा, उ.प्र. महाराष्ट्र, हरियाणा, उत्तरांचल एवं राजस्थान
2.	पन्त संकर धान-1 (1997)	115–120	6.80	उत्तर प्रदेश
3.	पी.एच.बी.-71 (1997)	130–135	7.86	हरियाणा, उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु
4.	नरेन्द्र संकर धान-2 (1998)	125–130	6.15	उत्तर प्रदेश
5.	बायर-6201 (2000) एराइज	125–130	6.18	पूर्वी राज्यों, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक एवं तमिलनाडु, उ.प्र.
6.	बायर-6444 (2001) एराइज	135–140	6.11	उ.प्र., बिहार, त्रिपुरा, उड़ीसा, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक
7.	सवा- 127	110–115	5.00	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
8.	पी.ए.सी. 835. 837	120–130	6.50	पूर्वी उ.प्र.
9.	पूसा आर.एच.-10 (2001)	120–125	4.35	हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, पश्चिमी उ.प्र.
10.	गंगा	125–130	5.64	उत्तराखण्ड, हरियाणा, पंजाब, उ.प्र.
11.	नरेन्द्र ऊसर संकर धान-3 (2004)	130–135	5.15	उत्तर प्रदेश के ऊसर क्षेत्रों हेतु
12.	सहयाद्री-4 (2008)	113–118	5.70	महाराष्ट्र, हरियाणा, पंजाब, उ.प्र., पं. बंगाल

क्र. सं.	संकर / विकसित वर्ष	पकने की अवधि (दिन)	औसत पैदावार कु. / हे.	राज्य हेतु विकसित
13.	एच.आर.आई. 157	130—135	65.10	उ.प्र., म.प्र., बिहार, झारखण्ड, छत्तीसगढ़, उडीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु
14.	डी.आर.आर.एच.—3	125—130	60.70	आन्ध्र प्रदेश, उडीसा, गुजरात, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश
15.	यू.एस.—312	125—130	60.70	तमिलनाडु, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल
16.	वी. एस. आर.—202	130—135	65.00	उ.प्र. उत्तराखण्ड, पश्चिम बंगाल, महाराष्ट्र, तमिलनाडु
17.	आर.एच.—1531	125—130	65.00	म.प्र., उ.प्र., आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक
18.	एराइज प्राइमा	126—130	65.00	पूर्वी उत्तर प्रदेश
19.	यू.एस.—312	125—130	57.50	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु
20.	एराइज 6644 गोल्ड	130—135	60—70	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु
21.	27पी.31	125—130	80—90	उ.प्र., झारखण्ड, बिहार
22.	27पी.63	132—135	60—67	उ.प्र., आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक
23.	इन्दम 200—017	125—130	75.00	उत्तर प्रदेश
24.	जे.के.आर.एच.—401	135—140	75.00	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश हेतु
25.	जे.के.आर.एच.—174	132—138	65—75	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश हेतु

सारणी—1 (अ) संकर प्रजातियों के रोग व कीट अवरोधी गुण

क्र.सं.	संकर	अवरोधी	मध्यम अवरोधी
1.	जे.के.आर.एच.—1	—	ब्लास्ट
2.	जे.के.आर.एच.—1	ब्लास्ट	—
3.	के.आर.एच.—2	ब्लास्ट, शीथ राइट	—
4.	सहयाद्री	—	बैकट्रीरियल लीफ ब्लाइट
5.	नरेन्द्र संकर धान—2	ब्लास्ट	बैकट्रीरियल लीफ ब्लाइट, शीथ रॉट
6.	पी.एच.बी.—71	—	बैकट्रीरियल लीफ ब्लाइट, ब्लास्ट
7.	प्रोएग्रो—6201 एराइज	ब्लास्ट	ब्राउन प्लान्ट हॉपर
8.	प्रोएग्रो—6444 एराइज	ब्लास्ट	बी.एल.बी., शीथ रॉट
9.	पूसा आर.एच.—10	—	बी.एल.बी., ब्राउन प्लान्ट हॉपर
10.	आर.एच.—204	—	बी.पी.एच. डब्ल्यू.बी.पी.एच

बीज दर : 15—20 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है।

नर्सरी प्रबन्धन : संकर धान का नर्सरी प्रबन्धन अन्य अधिक उत्पादन देने वाली सामान्य प्रजातियों की तुलना से भिन्न होता है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में संकर धान रोपाई हेतु 700 से 800 वर्गमीटर क्षेत्र की नर्सरी पर्याप्त होती है जोकि सामान्य धान के लिए भी बांधित है। ध्यान रहे कि संकर धान के बीज की मात्रा नर्सरी हेतु कम होने के बावजूद भी क्षेत्रफल घटाना उचित नहीं है। फलस्वरूप नर्सरी में पौधे बिरले रहते हैं तथा उनकी अच्छी वृद्धि होती है। नर्सरी की बुवाई से पूर्व 100 किग्रा. नत्रजन, 50 किग्रा. फास्फोरस एवं 50 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालते हैं। नर्सरी में यदि जस्ता या लोहे की कमी के लक्षण दिखाई पड़े तो 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट एवं 0.2 प्रतिशत फेरस सल्फेट के घोल का छिड़काव करना चाहित है।

उर्वरक प्रबन्धन : संकर धान की अच्छी पैदावार लेने के लिए 150 किग्रा. नत्रजन, 75 किग्रा. फास्फोरस तथा 75 किग्रा. पोटाश एवं आवश्यकतानुसार 25 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। नत्रजन की आधी तथा फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई के समय तथा शेष नत्रजन मात्रा दो बराबर भागों में कल्ले निकलते समय तथा गोभ बनते समय देना चाहिए जहाँ तक संभव हो उर्वरक की मात्रा भूमि का परीक्षण कराकर ही सुनिश्चित किया जाय तथा गोबर की 10 से 15 टन खाद या हरी खाद का प्रयोग किया जाय।

संकर धान के बीज उत्पादन हेतु उपयुक्त पैकेज : संकर बीज उत्पादन हेतु निम्नलिखित शर्य क्रियाएं अच्छे एवं स्वस्थ बीज उत्पादन हेतु आवश्यक हैं जिनका प्रयोग करने से 20 से 25 कुन्तल / हे. संकर बीज आसानी से पैदा किया जा सकता है—

क्रियाएं	प्रयोग विधि	
बीज दर	'ए' लाइन या मादा जाति : 15 किग्रा.	
	'ब' अथवा 'आर लाइन' या नर जाति : 5 किग्रा.	
नरसरी	बिरल नरसरी 20 ग्राम/वर्ग मीटर बीज पर्याप्त	
पंक्ति अनुपात	2 बी : 8 ए नर पौधों के उत्पादन हेतु	2 आर : 10 ए संकर बीज उत्पादन हेतु
पौध संख्या/हिल	1 या 2 पौध/हिल मादा पौध	2 से 3 पौधे/हिल नर पौधे
दूरी	नर : नर = 30 सेमी.	नर : मादा = 20 सेमी.
	मादा : मादा = 15 सेमी.	पौध : पौध = 15 सेमी. या 10 सेमी.
जी.ए.-3 (जिबेरेलिक एसिड) प्रयोग	60 से 90 ग्राम प्रति हे. 500 लीटर पानी में 5-10 फीसदी बाली निकल आने पर दो बार में प्रयोग करें।	
पूरक सेचन क्रियाएं (सप्लीमेंट्री पॉलीनेशन)	पराग कर्णों के निकलने के समय 4 से 5 बार 30 मिनट के अन्तराल पर फूल अवधि पर।	
अवांछित पौधों को निकलना	वानस्पतिक अवस्था — मार्फलॉजिक गुणों के आधार पर पत्तियों एवं पौधों के आधार को ध्यान में रखते हुए।	
	पुष्पावस्था — बालियों के गुणों को ध्यान में रखते हुए।	
	परिपक्वता अवस्था — दानों के गुणों को ध्यान में रखते हुए।	

सावधानियां / मुख्य बिन्दु : संकर धान की किस्मों की आनुवांशिक क्षमता का भरपूर लाभ लेने हेतु इसका बीज हर साल नया प्रयोग करना चाहिए क्योंकि संकर धान की फसल से प्राप्त बीज दूसरे वर्ष अपेक्षाकृत कम पैदावार देते हैं तथा दूसरे वर्ष की फसल में ऊँचाई, परिपक्वता एवं दानों में विभिन्नता आ जाती है जबकि संकर धान की पहली फसल में पर्याप्त समरूपता रहती है।

चूंकि संकर धान की उत्तम खेती हेतु मात्र 15-20 किग्रा. बीज/हे. प्रयोग किया जाता है। अतः नरसरी प्रबन्धन नितान्त आवश्यक है।

नोट : शेष क्रियाएं एवं विधायें धान की खेती के अनुसार करें।

3. ब्लैक राइस की खेती

काले चावल की खेती कराएगी किसानों की आमदनी दोगुनी, विदेशों तक एक्सपोर्ट होगी उपज। पूर्वी उत्तर प्रदेश के चंदौली जिले के किसानों ने कमाल कर दिखाया है। किसानों ने काला चावल यानी ब्लैक राइस की खेती की है, जो कि अब विदेशों में धूम मचाने वाला है। आने वाले समय में इसकी पैदावार को बढ़ाया जाएगा, साथ ही ऐसी व्यवस्था की जाएगी, जिससे किसान खुद ही अपनी पैदावार विदेशों तक बेच सकें। बता दें कि यूपी के चंदौली जिले को धान का कटोरा भी कहा जाता है, क्योंकि यहाँ अधिकतर किसान धान की खेती करते हैं।



आमदनी बढ़ाने का साधन :

इसकी खेती किसानों को अच्छी कमाई भी करा सकती है। पारम्परिक चावल के मुकाबले अधिक कमाई इस धान की खेती से हो सकती है। कई राज्यों की सरकारें इसकी खेती के लिए किसानों को प्रोत्साहित भी कर रही हैं।



बीज उपलब्धता :

काले चावल की खेती करनेवाले पूर्वोत्तर के राज्यों मणिपुर आदि से बीज मंगा रहे हैं। वहाँ ई-कॉर्मर्स कंपनियां भी इन इलाके के लोगों से इसके बीज खरीद अपने माध्यम से बेच रही हैं।

पौधे की ऊँचाई :

धान के पौधों की ऊँचाई करीब साढ़े चार फुट तक होती है तथा पूरी खेती भारतीय पद्धति से की जाती है।

स्वास्थ्य के साथ कमाई भी :

जैविक तरीके से खेती की वजह से यह धान लोगों की पसंद बन रहा है। असम के कई किसानों को इससे मोटी कमाई हो रही है। आमतौर पर जहाँ चावल 15 से 80 रु0 प्रति किग्रा. के बीच बिकता है वहाँ इसके चावल की कीमत 250 रुपए से शुरू होती है और ऑर्गेनिक काले धान की कीमत इससे भी अधिक मूल्य में बिकता है।

पारम्परिक से कुछ अधिक होती पौधे की लंबाई :

काले धान की फसल को तैयार होने में औसतन 100 से 110 दिन लगते हैं। विशेषज्ञ बताते हैं कि पौधे की लंबाई आमतौर के धान के पौधे से बड़ा है। इसके बाली के दाने भी लंबे होते हैं। यह धान कम पानी वाले जगह पर भी हो सकता है। इसे कम सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्रों में उपजाया जा सकता है। कृषि विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा इसकी खेती चन्दौली जनपद में 2018 से कर रहा है।

काला चावल की पौष्टिकता :

काले धान का चावल केंसर जैसी बीमारी से लड़ने में भी कारगर माना जाता है। इसकी खेती में रासायनिक खाद का प्रयोग न होने से इस धान की रोग प्रतिरोधक क्षमता अधिक होती है। काला चावल एंटीऑक्सीडेंट के गुणों से भरपूर होता है। यूँ तो कॉफी और चाय में भी एंटी-ऑक्सीडेंट पाए जाते हैं। लेकिन काले चावल में इसकी मात्रा सर्वाधिक होती है।

विटामिन व एंटी ऑक्सीडेंट का खजाना :

बताया जाता है कि इस धान से निकले चावल में विटामिन बी, ई के अलावा कैल्शियम, मैग्नीशियम, आयरन तथा जिंक आदि प्रचुर मात्रा में मिलता है। ये तत्व मानव शरीर में एंटी ऑक्सीडेंट का काम करते हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि यह चावल केंसर एवं मधुमेह रोग में उपयोगी माना जाता है। इसके सेवन से रक्त शुद्धीकरण भी होता है। साथ ही इस चावल के सेवन से चर्बी कम करने तथा पाचन शक्ति बढ़ने की बात कही जा रही है। ■

4. कालानमक धान की आधुनिक खेती

कालानमक धान पूर्वांचल की पहचान, अतिसुगन्धित और औषधीय गुणों से परिपूर्ण है। उत्तर प्रदेश सरकार की 'एक जिला एक उत्पाद' के नीति के अनुरूप सिद्धार्थनगर जिले को कालानमक उत्पादन का बढ़ावा देने की जिम्मेदारी मिली है। लगभग तीन हजार वर्षों से इसकी क्षेत्र से भगवान बुद्ध के जीवनकाल से इसकी खेती होती आ रही है। एक समय ऐसा भी था जब पूर्वांचल में 50 हजार हेक्टेयर से भी अधिक क्षेत्रफल में इसकी खेती होती थी, किन्तु अधिक उपजशील प्रजातियों के आने से कालानमक पर उपयोगी अनुसंधान और प्रजातियों के आभाव में और इसकी खेती से कम आमदनी होने के कारण, कालानमक की खेती अलाभकारी हो गई। अतः इसका क्षेत्रफल गत 20 वर्षों में 2 हजार हेक्टेयर से भी घटने लगा। इस प्रकार कालानमक धान लगभग विलुप्त होने के कगार पर आ गया था।



जननद्रव्य का संकलन, प्रजातियों का प्रजनन, बौद्धिक सम्पदा की संरक्षा और जैविक खेती की नवोंमेषी विधि के विकास और कालानमक का बाजारीकरण, एक—एक करके जुड़ते रहे। किसानों का सहयोग और उत्साह मिला। इस कारण विलुप्त होता कालानमक अब एक बार पुनः अपनी पुरानी खेती प्राप्त करने और किसानों को समृद्धि दिलाने की ओर अग्रसर हो रहा है। सामान्य धान की खेती तथा कालानमक धान की खेती में कोई विशेष अन्तर नहीं है। इन्हीं भिन्नताओं और उपलब्धियों का संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है।

कालानमक की प्रजातियाँ :

कालानमक धान एक क्षेत्रीय प्रजाति (लैण्ड रेस) बन गया था जिसकी कोई भी विमोचित अथवा भारत सरकार द्वारा विज्ञप्ति प्रजाति नहीं थी। इसकी पहली प्रजाति जो उत्तर प्रदेश के कृषि विभाग द्वारा विमोचित तथा भारत सरकार द्वारा विज्ञप्ति हुई वह वर्ष 2010 में कालानमक के.एन.-3 के नाम से आई। यह सुगन्धित तो थी परन्तु लम्बी बढ़ने वाली तथा इसकी पैदावार भी कम थी। इसके बाद अधिक उपजशील और बौनी प्रजाति बौना कालानमक 101 वर्ष 2016 तथा बौना कालानमक 102 वर्ष 2017 में आई। विस्तृत विवरण के लिए तालिका 1 देखें।

तालिका 1 कालानमक की तीन प्रजातियों के एन-3, बौना कालानमक-101 और बौना कालानमक-102 के विशिष्ट एवं पहचाने जाने वाले गुण :

इससे स्पष्ट है कि कालानमक धान की वर्ष 2017 तक कुल तीन प्रजातियाँ ही उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा विमोचित तथा भारत सरकार द्वारा विज्ञप्ति हैं। कालानमक के विषय में कुछ अन्य जानने योग्य बातें निम्न हैं—

- वर्ष 2012 से कालानमक PPV & FRA प्राधिकरण द्वारा पंजीकृत है अतः कालानमक को अन्य कोई व्यक्ति, संस्था अथवा देश अपनी संम्पत्ति न तो घोषित कर सकते हैं और न ही इसके नाम का उपयोग व्यापारिक या अन्य कार्यों के लिए अधिकृत रूप से कर सकते हैं।
- कालानमक की मात्र 3 प्रजातियाँ हैं जिनका प्रजनक और आधार बीज पीआरडीएफ संस्था द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। इसका प्रमाणित बीज उत्तर प्रदेश बीज विकास निगम, राष्ट्रीय बीज निगम तथा अन्य संस्थाओं द्वारा पैदा

तालिका 1 : कालानमक धान की प्रजातियाँ

क्र. सं.	पादप और दाने के गुण	के.एन.—3	बौना कालानमक—101	बौना कालानमक—102
1.	विमोचन का वर्ष	2010	2016	2017
2.	प्रजनन की विधि	शुद्ध वंश क्रम वरण (सिद्धार्थनगर का जननद्रव्य)	संकरण (के.एन 3 / स्वर्णा सब-1)	संकरण (के.एन 3 / इम्प्रूव्ड साम्भा मंसूरी)
3.	पर्ण आवरण रंग	हरा	हरा	हरा
4.	पुष्पन की अवधि (प्रकाश अवधि—संवेदी)	115 (प्रकाश अवधि—संवेदी)	105 (प्रकाश अवधि—संवेदी)	105 (प्रकाश अवधि—संवेदी)
5.	पकने की अवधि (दिन)	145 (प्रकाश अवधि—संवेदी)	133 प्रकाश अवधि—संवेदी)	135 (प्रकाश अवधि—संवेदी)
6.	पौधे की ऊँचाई	142 सेमी.	95 सेमी.	95 सेमी.
7.	बाली की लम्बाई	31 सेमी.	35 सेमी.	35 सेमी.
8.	दाने में सुगन्ध	अत्यन्त सुगन्धित	अत्यन्त सुगन्धित	अत्यन्त सुगन्धित
9.	दाने पर टूड	नहीं	थोड़ा	नहीं
10.	भूसी का रंग	बैंगनी काला	भूरा काला	भूरा काला
11.	चावल की लम्बाई	5.76 मिमी.	5.76 मिमी.	5.76 मिमी.
12.	चावल की मोटाई	2.18 मिमी.	2.18 मिमी.	2.18 मिमी.
13.	लम्बाई : मोटाई का अनुपात	2.64	2.64	2.64
14.	चावल की श्रेणी	मध्यम पतला	मध्यम पतला	मध्यम पतला
15.	चावल का रंग	सफेद	सफेद	सफेद
16.	1,000 दाने का वजन	15 ग्राम	15 ग्राम	15 ग्राम
17.	चावल की प्रतिशत	75	75	75
18.	साबुल चावल	70	70	70
19.	क्षार मान	6—7	6—7	6—7
20.	आयतन प्रसरण अनुपात	4.5	4.5	4.5
21.	जैल अविरोध	80एमएम	80एमएम	80एमएम
22.	एमाईलोज प्रतिशत	21	21	21

किया जाता है। इसपर उत्तर प्रदेश राज्य बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा प्रमाणित रहता है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई भी कालानमक लिखा हुआ बीज सर्वथा गैर कानूनी है। बीज विक्रेता ऐसे बीज को बेचने से बचें और किसान इसको अपने खेत पर बीज के रूप में उपयोग करने से भी बचें। गैर कानूनी उपयोग कर आर्थिक और कारागार के दण्ड का प्रावधान है।

3. भौगोलिक सूचकांक के अन्तर्गत भारत सरकार के बौद्धिक संपदा संस्थान, चैन्सई द्वारा वर्ष 2012 में कालानमक को मान्यता दी गई है। अतः इसकी खेती नियमत: गोरखपुर तथा बस्ती मण्डल के सभी 7 जिले तथा देवीपाटन मण्डल के समस्त 4 जिलों में ही की जा सकती है।
4. वर्ष 2013 से कालानमक की जैविक खेती का प्रोटोकाल बना दिया गया है। उक्त प्रोटोकाल का उपयोग करके किसान कालानमक का जैविक उत्पादन कर सकते हैं तथा पीआरडीएफ गोरखपुर से जैविक प्रमाण पत्र प्राप्त कर सकते हैं।

5. गोरखपुर स्थित पीआरडीएफ संस्था राष्ट्रीय जैविक खेती का रिजनल काउन्सिल है। इसके अन्दर प्रदत्त अधिकारी से पीआरडीएफ पार्टीसिपेटरी गारन्टी सिस्टम (पीजीएस) प्रणाली में जैविक उत्पाद को प्रमाण पत्र देने में सक्षम है। अतः जो किसान कालानमक धान या किसी अन्य फसल का जैविक उत्पादन करना चाहते हैं वे पीआरडीएफ से सम्पर्क करके अपने उत्पाद का जैविक प्रमाणीकरण करा सकते हैं। इसके लिए उन्हें संस्तुत की गई प्रक्रिया को अपनाना होगा।
6. वर्ष 2018 में पहली बार कालानमक चावल का निर्यात सिंगापुर के लिए किया जा रहा है। कालानमक का निर्यात कालानमक के उत्पादकों और विक्रेताओं को मिलने वाले लाभ को बढ़ावा देगा और साल दर साल उनके लाभ का तीन गुना करेगा।

कालानमक धान की खेती :

यदि किसान कालानमक केएन-3 अर्थात् लम्बी बढ़ने वाली प्रजाति की खेती करना चाहते हैं तो उसमें खाद की मात्रा 60 किलोग्राम नत्रजन, 30 किलोग्राम फास्फोरस और 30 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर से अधिक नहीं होना चाहिए।

यदि किसान बौना कालानमक 101 अथवा बौना कालानमक 102 की खेती करना चाह रहे हैं तो 120:60:60 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश का उपयोग करें। जिन क्षेत्रों में जरूरी की कमी होती है वहाँ 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर जिंक सल्फेट रोपाई के प्रयोग से पहले प्रयोग में लाना चाहिए।

जैविक खेती करने की दशा में केवल हरी खाद, गोबर की खाद, कम्पोस्ट आदि जैविक खादों का ही उपयोग कर सकते हैं। यह पाया गया है कि यदि ढैंचा की हरी खाद का उपयोग किया जाये तो 80 किलोग्राम नत्रजन स्वतः मिल जाता है फास्फोरस और पोटाश तत्वों को गोबर की खाद तथा अन्य स्रोतों से दे सकते हैं।

बोने का समय और रोपाई :

प्रमाणित बीज उपचारित होने के बाद ही मिलता है। अतः उसको दोबारा उपचारित करने की आवश्यकता नहीं पड़ती किन्तु यदि घर का बीज का प्रयोग करना है अथवा खेती के लिए नर्सरी उगानी है तो बीज को दो ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति किलोग्राम बीज के उपचारत करके ही नर्सरी उगायें। इससे बीज जनित बीमारियों से बचाव में सहायता मिलेगी। कालानमक की तीनों प्रजातियों प्रकाशअवधि की संवेदी हैं अर्थात् इनमें बाली 20 अक्टूबर के आस-पास ही निकलती हैं जबकि दिन 12 घण्टे से छोटा होता है। अतः नर्सरी की बुआई मई में करने से भी इसकी बाली निकलने का समय 20 अक्टूबर होगा जैसा कि जून की बुआई करने से होगा। पहले बुआई या रोपाई करने से फसल की देख-भाल व्यर्थ में करनी पड़ती है इसलिये कालानमक का बेहन उगाने का सेवोत्तम समय 15 से 30 जून के बीच ही है। जब पौध 20 से 30 दिन की हो जाये तो उसकी रोपाई 20 सेन्टीमीटर दूरी के कतार में 15 सेन्टीमीटर की दूरी पर करें। एक स्थान पर दो या तीन पौधे ही लगायें।

फसल की देखभाल :

चूंकि कालानमक की रोपाई जुलाई महीने के अन्त तक की जाती है अतः रोपाई से पहले खेत की तैयारी करते समय सभी उगे हुए खर पतवार नष्ट हो जाते हैं। इस कारण रोपाई के एक महीने के अन्दर एक बार हाथ से निराई करके खर-पतवार का नियन्त्रण कर सकते हैं। इसके बाद कालानमक की फसल स्वयं ही खरपतवारों को खेत में उगने नहीं देती। अतः दूसरी बार निराई अथवा रसायनिक खर-पतवारनाशी के उपयोग करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

फसल सुरक्षा :

कालानमक की फसल में तना छेदक कीट का प्रकोप अधिक होता है क्योंकि वे इसके सुगन्ध से आकर्षित होते हैं। प्रारम्भिक अवस्था में कल्ले मरते हैं जिसकी जगह नये कल्ले निकलकर क्षतिपूर्ति कर देते हैं। परन्तु बाली निकलते समय सफेद बाली के रूप में तनाछेदक का नुकसान दिखायी पड़ता है। इसकी क्षतिपूर्ति सम्भव नहीं है। किसान घबराहट में अनेक कीटनाशी का छिड़काव करते हैं जोकि आर्थिक रूप से ठीक नहीं है। यदि कल्ले निकलते समय तनाछेदक का

प्रकोप अधिक गम्भीर है तो कारटोप हाइड्रोक्लोराइड 4-जी के दाने 20 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से बिखरें। जैविक खेती करने की दशा में फसल पर केवल नीम से बनाये हुए उत्पाद का ही प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त ट्राईकोकार्ड का उपयोग रोपाई के एक महीने बाद 15 दिन के अन्तराल पर 3 बार करें। सामान्य खेत में गन्धी कीट जोकि दाने का रस चूसता है, को नियंत्रित करने के लिए मैलाथीयान धूल का प्रयोग कर सकते हैं। झुलसा (शीथ ब्लाइट) जो एक फफूँद से होने वाली बीमारी है, का प्रकोप कालानमक की बौनी प्रजातियों में देखा गया है। बीमारी की प्रारम्भिक अवस्था में ही हैक्साकोनाजॉल अथवा प्रोपीकोनाजोल का 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। ट्राईकोडर्मा के घोल का भी छिड़काव जैविक खेती करने वाले किसान कर सकते हैं। इससे बीमारी बढ़ने से रुक जायेगी।

कटाई और सुखाई :

बाली निकलने के बाद सामान्य धान लगभग 30 दिन में कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। किन्तु कालानमक की फसल पकने के समय धूप कम हो जाती है तथा रात को ओस भी पड़ने लगती है। इसके कारण दाने की नमी धीरे-धीरे सूखती है। अतः फसल 40 दिन बाद ही कटाई के लिए तैयार हो पाती है। फसल के पूर्णरूप से सूख जाने पर जब दाने में नमी 18 प्रतिशत हो तो उसकी कटाई करनी चाहिए। फसल पूर्ण रूप से पकने के पहले काटने से कुटाई करते समय हरे-हरे चावल नजर आयेंगे जोकि गुणवत्ता में अच्छे नहीं माने जाते। फसल काटने के तुरन्त बाद मङ्गाई करके दाने अलग कर लें और 3 से 4 दिन तक धूप में सुखायें। रात को दानों को खुले मत रहने दें अर्थात उसको इकट्ठी करके ढेर बना कर ढक दें। जब दानों में नमी 12 प्रतिशत आ जाये तो उसे प्लास्टिक के बोरे अथवा बखारी या टीन से बने भण्डारण पात्र में सुरक्षित रख दें।

कुटाई :

कालानमक की कुटाई आवश्यकानुसार ही करें अर्थात् धान का भण्डारण करें न की चावल का। इससे उसकी सुगन्ध तथा गुणवत्ता बनी रहती है। पुरानी कहावत है कि धान पुराना और चावल नया ही उत्तम होता है।

कालानमक धान की महक को चावल में सुरक्षित रखने के लिए कुटाई अच्छी मिल में ही करें। आज कल ट्रैक्टर ट्राली के पीछे लगी मिलें घर-घर घूमती नजर जाती हैं। इसमें ऊपर से धान डालने पर एक ही बार में चावल निकल आता है। यह अत्यन्त हानिकारक है दो कारणों से। पहला – ऐसी मिल वाले 10 प्रतिशत या उससे अधिक चावल को छीलकर उसका पालिश निकाल देते हैं। इस कारण किसान को कम चावल मिलता है। दूसरा कारण है कि सुगन्ध और पोषक तत्व चावल के ऊपरी फतह में होते हैं जो इन मिलों द्वारा निकाल लिए जाते हैं। अतः चावल की सुगन्ध तथा गुणवत्ता दोनों ही



खराब हो जाती हैं। इसलिये सुझाव दिया जाता है कि चावल की कुटाई अच्छी मिलों में ही करें, जहाँ कि एक बार धान डालने से उसकी भूसी उतरती है और दूसरी बार भूसी उतरा चावल डालने से सफेद चावल निकलता है। भूसी निकलने के बाद चावल को फैलाकर ठण्डा कर लेना चाहिए और फिर उसे दोबारा पालिश करने के लिए मिल में डाले। मिल से निकलने के बाद चावल निकलने पर बहुत ही गर्म होता है जिसको ठण्डा करके ही प्लास्टिक के बोरी में भरकर सिल दें। कभी भी 5 प्रतिशत से अधिक पालिश न करें। इस प्रकार कालानमक चावल की सुगन्ध और गुणवत्ता बनी रहेगी। ■

5. खरीफ मक्का की उन्नतशील खेती

खरीफ फसलों में धान के बाद मक्का प्रदेश की मुख्य फसल है। इसकी खेती, दाने/भुट्टे एवं हरे चारे के लिए की जाती है।

मक्का के अन्तर्गत अधिकतर क्षेत्रफल वर्षा पर आधारित है, जिसके कारण उत्पादकता कम है। मक्का की अच्छी उपज के लिए आवश्यक है कि समय से बुवाई, निकाई-गुड़ाई खरपतवार नियंत्रण, उर्वरकों की संतुलित प्रयोग, समय से सिंचाई एवं कृषि रक्षा साधनों को अपनाया जाय। संस्तुत सघन पद्धतियां अपनाकर संकर/संकुल प्रजातियों की उपज सरलता से 35–40 कु. प्रति हेठो प्राप्त की जा सकती है। साथ ही अत्यधि की फसल होने के कारण बहु फसली खेती के लिए इसका अत्यन्त महत्व है।



सघन पद्धतियां :

- भूमि उपयुक्तता :** मक्का की खेती के लिए उत्तम जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि उपयुक्त होती है।
- भूमि शोधन :** फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा.मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।
- खेत की तैयारी :** पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा अन्य दो या तीन जुताई देशी हल या कल्टीवेटर या रोटावेटर द्वारा करनी चाहिए।
- शुद्ध बीज का प्रयोग :** अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु उन्नतशील प्रजातियों का शुद्ध बीज ही बोना चाहिए। बुवाई के समय एवं क्षेत्र अनुकूलता के अनुसार प्रजाति का चयन करें। विभिन्न क्षेत्रों के लिए संस्तुत प्रजातियों की सूची, विशेषताएं तथा उपज क्षमता निम्न तालिका में दर्शायी गई है:

क्रमांक	प्रजाति का नाम	पकने की अवधि (दिन में)	उपज (कु. / हेठो)
क)	संकर		
1	गंगा-11	100-105	45-50
2	सरताज	100-110	45-50
3	एच.क्यू.पी.एम-5, एच.क्यू.पी.एम. 8 (QPM)	105-110	50-55
4	दक्ण-107	90-95	40-45
5	मालवीय संकर मक्का-2	90-95	40-45
6	जे.एच.-3459	80-85	35-40
7	प्रकाश	80-85	35-40
8	पूसा संकर मक्का-5	80-85	35-45
9	विवेक संकर मक्का-27	75-80	25-30
10	शक्ति-1 (QPM) 80-85	80-85	30-35

क्रमांक	प्रजाति का नाम	पकने की अवधि (दिन में)	उपज (कु./हे.)
11	प्रो-316 (4640)	105-110	40-45
12	बायो-9681	105-110	40-45
13	वाई-1402 K	105-110	40-45
14	प्रो-303 (3461)	90-95	40-45
15	केएच-9451	90-95	40-45
16	केएच-510	90-95	40-45
17	एमएमएच-69	90-95	40-45
18	बायो-9637	90-95	40-45
19	बायो-9682	90-95	40-45
20	एमएमएच-113	80-85	35-40
21	एक्स-1123 G(3342)	80-85	35-40
22.	पी.ए.सी.-740 (2009)	110-115	50-60
23.	एन.एम.एच.-920 (2012)	110-115	60-70
24.	एल.जी. 32-81 (2013) (युवराज गोल्ड)	90-95	60-75
25.	सीडटेफ-740 (2001)	100-105	65-70
26.	CoH (M) 8 (2014)	90-95	65-70
27.	एन.एम.एच. 713	110-115	60-70
ख)	संकुल		
1	प्रभात	100-110	40-45
2	नवजोत	85-90	35-40
3	पूसा कम्पोजिट-2	85-90	35-40
4	श्वेता सफेद	85-90	35-40
5	नवीन	85-90	35-40
6	आजाद उत्तम	80-85	30-35
7	प्रगति	80-85	30-35
8	गौरव	80-85	30-35
9	कंचन	75-80	25-30
10	सूर्या	75-80	25-30
11.	शियाट्स मक्का-3 (2016)	75-80	35-40

प्रजातियों की परिपक्वता अवधि एवं उपज का वर्गीकरण

क्र. सं.	अतिशीघ्र पकने वाली (75 दिन से कम)	शीघ्र पकने वाली (85 दिन से कम)	मध्यम अवधि में पकने वाली (95 दिन से कम)	देर से पकने वाली (95 दिन से अधिक)
	संकर 25-30 कु./हे.	संकर 30-35 कु./हे.	संकर 40-45 कु./हे.	संकर 40-45 कु./हे.
1.	विवेक संकर मक्का-17 (2005)	प्रकाश (1997)	मालवीय संकर मक्का-2 (2007)	गंगा- (1988)
2.	विवेक संकर मक्का-27 (2007)	जे.एच.-3459 (2001)	एच.एम.-4 (2005)	सरताज (1988)
3.	विवेक संकर मक्का-5 (2001)	डी.एच.एम.-107 (1993)	बायो-9637 (2008)	बुलन्द (2005)
4.	विवेक संकर मक्का-5 (2005)	एक्स-3342 (1998)	डी.के.-701 (2003)	पी.एम.एच.-3 (2008)

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	अतिशीघ्र पकने वाली (75 दिन से कम)	शीघ्र पकने वाली (85 दिन से कम)	मध्यम अवधि में पकने वाली (95 दिन से कम)	देर से पकने वाली (95 दिन से अधिक)
	संकर 25–30 कु./हे.	संकर 30–35 कु./हे.	संकर 40–45 कु./हे.	संकर 40–45 कु./हे.
5.	पी०एन०एच०–२ (2006)	एम.एम.एच.–१३३ (1997)		बायो–९६८१ (1997) एन.के.–६१ (2007) प्रा.–३११ (1997) सीडटेक–२३२४ (2001) एच.एम.एच.–३९०४ (2009) एच.क्यू.पी.एम.–४ (2010) एच.क्यू.पी.एस–५ (2007) एच.क्यू.पी.एम.–१ (2005)
	संकुल 20–25 कु./हे.	संकुल 20–25 कु./हे.	संकुल 20–25 कु./हे.	संकुल 35–40 कु./हे.
1.	दायरा– (1984)	पूसा संकर मक्का–४ (2005)	नवजोत (1983)	नवजोत (1983)
2.		आजाद उत्तर (1991)	नवनीत (1982)	
3.		गौरव (1999)	श्वेता (सफेद) (1984)	
4.		मेघा (1993)	शक्ति (क्यू.पी.एम.) (1997)	
5.		सूर्या (1988)		
6.		किरण (1986)		
7.		कंचन (1982)		
	मक्का के अन्य प्रयोग हेतु प्रजातियाँ :			
1.	पॉपकॉर्न	बी.एल. पॉपकॉर्न, अम्बर पॉपकॉर्न, पर्ल पॉपकॉर्न, जवाहर प्रभाव प्रजातियाँ।		
2.	बेबीकॉर्न	1. एल.एम.–४, बी.एल. बेबी कॉर्न और आजाद कमल	2. वी.एल. बेबीकॉर्न–१	
3.	स्वीटकॉर्न	माधुरी, विनौरेंज, प्रिया एच.एस.सी.–१ (संकर मक्का)		
4.	चारे के लिए	1. अफ्रीकन टॉल	2. जै–१००६	3. प्रताप चरी–६

4. बुवाईः

- (अ) **बुवाई का समय :** देर से पकने वाली मक्का की बुवाई मध्य मई से मध्य जून तक पलेवा करके करनी चाहिए, जिससे वर्षा प्रारम्भ होने से पहले ही खेत में पौधे भली भांति स्थापित हो जायें और बुवाई के 15 दिन बाद एक निराई भी हो जाय। शीघ्र पकने वाली मक्का की बुवाई जून के अन्त तक कर ली जाय तथा वर्षा के समय वाली 10 जुलाई तक बुवाई कर ली जाय।
- (ब) **बीजोपचार :** बीज बोने से पूर्व यदि शोधित न किया गया हो तो 1.5 किग्रा बीज के थीरम 75% डब्ल्यू.पी. ग्राम या 2 ग्राम कार्बन्डाजिम 50% डब्ल्यू.पी. से बोने से पहले शोधित कर ले।
- (ब) **भूमि–शोधन तथा जिंक का प्रयोग :** जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप होता है वहाँ आखिरी जुताई पर क्लोरोपाइरीफास 20 ई.सी. की 2.5 लीटर मात्रा को 5 लीटर पानी में घोलकर 20 किग्रा. बालू में मिलाकर प्रति हे. की दर से बुवाई के पहले मिट्टी में मिला दें जिंक तत्व की कमी के कारण पत्तियों के शिराओं के दोनों ओर सफेद लम्बी धारियाँ पड़ जाती हैं। जिन क्षेत्रों में गत वर्ष ऐसे लक्षण दिखाई दिये हों उनमें अन्तिम जुताई के साथ

20 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलाकर बीज बोना चाहिए। इसका प्रयोग फास्फोरस उर्वरक के साथ मिलाकर न किया जाय।

- (द) **बीज दर :** देशी—छोटे दाने वाली प्रजाति के लिए 16—18 किग्रा. संकर के लिए 20—22 किग्रा. है. एवं संकुल प्रजातियों के लिए 18—20 किग्रा. प्रति है।
- (य) **बुवाई की विधि :** बुवाई हल के पीछे कूड़ों में 3.5 सेमी. की गहराई पर करें। लाइन से लाइन की दूरी अगेती किस्मों में 45 सेमी. तथा मध्यम एवं देर से पकने वाली प्रजातियों में 60 सेमी. होनी चाहिए। इसी प्रकार अगेती किस्मों में पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी. तथा मध्यम एवं देर से पकने वाली प्रजातियों में 25 सेमी. होनी चाहिए।

5. खरपतवार नियंत्रण :

मक्का की खेती में निराई—गुड़ाई का अधिक महत्व है। निराई—गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही ऑक्सीजन का संचार होता है, जिससे जड़ें दूर तक फैल कर भोज्य पदार्थ को एकत्र कर पौधों को देती है। पहली निराई जमाव के 15 दिन बाद कर देना चाहिए और दूसरी निराई 35—40 दिन बाद करनी चाहिए—

1. एट्राजीन 2 किग्रा. प्रति है. अथवा 800 ग्राम प्रति एकड़ मध्यम से भारी मृदाओं में तथा 1.25 किग्रा. प्रति है. अथवा 500 ग्राम प्रति एकड़ हल्की मृदा में बुवाई के बाद या जमाव से पूर्व 2 दिनों में 500 लीटर/ है. पानी में मिलाकर स्प्रे करना चाहिए।

इस शाकनाशी के प्रयोग से एकवर्षीय घासकुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार बहुत ही प्रभावी रूप से नियमित हो जाते हैं। इस रसायन द्वारा विशेषरूप से पथरचट्टा (ट्राइएन्थीमा मोनोगाइना) भी नष्ट हो जाता है।

2. खरपतवारों जैसे कि वन पट्टा (चेरिया रेप्टान्स), रसभरी (कोमेलिया बैनौलेन्सिस) को नियन्त्रित करने हेतु बुवाई के दो दिनों के अन्दर एट्राजीन 600 ग्राम + पेण्डीमेथिलीन 1 लीटर प्रति एकड़ अच्छी तरह से मिलाकर 200 लीटर पानी के साथ प्रयोग करने पर प्रभावी नियंत्रण होता है।

6. उर्वरकों का संतुलित प्रयोग:

- (अ) **मात्रा :** मक्का की भरपूर उपज लेने के लिए संतुलित उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है। अतः कृषकों को मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। यदि किसी कारणवश मृदा परीक्षण न हुआ हो तो देर से पकने वाली संकर एवं संकुल प्रजातियों के लिए क्रमशः 120:60:60 व शीघ्र पकने वाली प्रजातियों के लिए 100:60:40 तथा देशी प्रजातियों के लिए 80:40:40 किग्रा. नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश प्रति है। प्रयोग करना चाहिए। गोबर की खाद 10 टन प्रति है। प्रयोग करने पर 25% नत्रजन की मात्रा कम कर देनी चाहिए।

- (ब) **विधि :** बुवाई के समय एक चौथाई नत्रजन, पूर्ण फास्फोरस तथा पोटाश कूड़ों में बीज के नीचे डालना चाहिए। अवशेष नत्रजन तीन बार में बराबर—2 मात्रा में टॉपड्रेसिंग के रूप में करें। पहली टॉपड्रेसिंग बोने के 25—30 दिन बाद (निराई के तुरन्त बाद) दूसरी नर मंजरी निकलते समय करें एवं तीसरी नर मंजरी से आधा पराग गिरने के बाद करें। यह अवस्था संकर मक्का में बुवाई के 50—60 दिन बाद एवं संकुल में 45—50 दिन बाद आती है।

7. **जल प्रबन्धन :** पौधों को प्रारम्भिक अवस्था तथा सिलिंकग से दाना पड़ने की अवस्था पर पर्याप्त नमी आवश्यक है। अतः यदि वर्षा न हो रही हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करना चाहिए। सिलिंकग के समय पानी न मिलने पर दाने कम बनते हैं, वर्षा के बाद खेत से पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए, अन्यथा पौधे पीले पड़ जाते हैं और उनकी बढ़वार रुक जाती है।

8. **अन्य आवश्यक क्रियाएं** : वर्षा के पानी और तेज हवा से फसल को बचाने के लिए पौधों की जड़ों पर मिट्टी पलटने वाले हल से मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।
9. **फसल की रखवाली** : कौआं, चिड़ियों तथा जानवरों से फसल की रक्षा हेतु रखवाली आवश्यक है।
10. **कटाई—मढ़ाई** : फसल पकने पर भुट्टों को ढकने वाली पत्तियां जब 75% पीली पड़ने लगने पर कटाई की जाये। इस अवस्था पर कटाई करनी चाहिए। भुट्टों की तुड़ाई करके उसके पत्ती को छीलकर धूप में सुखाकर हाथ या मशीन द्वारा दाना निकाल देना चाहिए।

फसल सुरक्षा

(अ) कीट:

1. **तना छेदक कीट** : आर्थिक क्षति स्तर – 10 प्रतिशत मृत गोभ।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : पूर्ण विकसित सूँडी 20–25 मिमी. लम्बी, भूरे सफेद रंग की होती है। इसका सिर काला होता है तथा शरीर पर चार भूरी धारियाँ पाई जाती हैं। इसका प्रौढ़ पीले भूरे रंग का होता है एवं रात में सक्रिय होता है।

इस कीट की सूँडियाँ तनों में छेद करके अन्दर ही अन्दर खाती रहती हैं। फसल के प्रारम्भिक अवस्था में प्रकोप के फलस्वरूप मृतगोभ बनता है परन्तु बाद की अवस्था में प्रकोप होने पर पौधे कमज़ोर हो जाते हैं, भुट्टे छोटे आते हैं तथा हवा चलने पर पौधा बीच से टूट जाता है।

2. **प्ररोह मक्खी** : आर्थिक क्षति स्तर – 10 प्रकोपित मृत गोभ।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : यह घरेलू मक्खी से छोटे आकार की होती है जिसकी सूँडी जमाव के प्रारम्भ होते ही फसल को हानि पहुँचाती है। हानि के फलस्वरूप मृतगोभ बनता है।

3. **पत्ती लपेटक कीट :**

पहचान एवं हानि की प्रकृति : इस कीट की सूँडी हल्के पीले रंग की होती है जो पत्तियों के दोनों किनारों को रेशम जैसे सूत से लपेट कर अन्दर ही रहती है तथा अन्दर से हरे पदार्थ को खुरचकर खाती है।

4. **कमला कीट :**

पहचान एवं हानि की प्रकृति : सूँडियाँ 40–45 मिमी. लम्बी होती हैं। इनका शरीर घने भूरे रंग के बालों से ढका रहता है। इस कीट की सूँडियाँ पत्तियों को खाकर काफी नुकसान पहुँचाती हैं।

5. **माहू :**

पहचान एवं हानि की प्रकृति : हरी टागों वाली गहरे भूरे या पीले रंग वाली पंखहीन एवं पंखयुक्त गोभ, हरे भुट्टों एवं पत्तियों से रस चूस कर हानि पहुँचाती है। प्रत्येक मादा 1–5 शिशु/दिन की दर से 10–25 दिन में 24–47 शिशु पैदा करती है।

6. **छाले वाला भूंग :**

पहचान एवं हानि की प्रकृति : मध्यम आकार की 25–25 सेमी. लम्बी चमकीले नीले, हरे, काले या भूरे रंग की होती है। छेड़ने पर ये अपने फीमर के अन्तिम छोर से कैन्सेडिन युक्त एक तरल पदार्थ निकालती है जिस के त्वचा पर लगने से छाले पड़ जाते हैं। इनके प्रौढ़ फूलों एवं पत्तियों को खाकर नुकसान पहुँचाते हैं। ये भूमि में अण्डे देते हैं।

7. फाल आर्मी वर्म :

पहचान एवं हानि की प्रकृति : फाल आर्मी वर्म का लार्वा भूरा, धूसर रंग का होता है तथा इसके पाश्व में तीन पतली सफेद धारियां और सिर पर उल्टा अंग्रेजी अक्षर वाई (Y) दिखता है। शरीर के दूसरे अन्तिम खण्ड में चार वर्गाकार गहरे बिन्दु दिखाई देते हैं तथा अन्य खण्डों पर चार छोटे-छोटे बिन्दु समलम्ब आकार में व्यवस्थित होते हैं। यह कीट फसल की सभी अवस्थाओं में हानि पहुँचाता है। यह कीट मक्का की पत्तियों (गोम) के साथ-साथ बाली को भी नुकसान पहुँचाता है।

एकीकृत प्रबन्धन :

- ◆ खेत में पड़े पुराने खरपतवार एवं अवशेषों को नष्ट करना चाहिए।
- ◆ संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।
- ◆ प्ररोह मक्खी प्रभावी क्षेत्रों में 20 प्रतिशत बीज दर को बढ़ा कर बुवाई करना चाहिए।
- ◆ प्ररोह मक्खी प्रभावित क्षेत्रों में बुवाई मानसून आने के 10—15 दिन बाद करना चाहिए।
- ◆ सप्ताह के अन्तराल पर फसल का निरीक्षण करना चाहिए।
- ◆ मृतगोभ दिखाई देते ही प्रकोपित पौधों को भी उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ प्ररोह मक्खी प्रभावित क्षेत्रों में 10—12 प्रति हे. की दर से पालीथीन मछली प्रपंच लटकाना चाहिए।
- ◆ प्रारम्भिक अवस्था में कमला कीट की झुण्ड में पाई जाने वाली गिडारों को सावधानी से पकड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ तना छेदक एवं पत्ती लपेटक कीटों के लिए ट्राइकोग्रामा परजीवी 50,000 प्रति हे. की दर से अंकुरण के 8 दिन बाद 5—6 दिन के अन्तराल पर 4—5 बार खेत में अवमुक्त करना चाहिए।
- ◆ माहू के प्रकोप की दशा में क्राइसोपर्ला कार्निया को 50000 प्रति हे. की दर से सप्ताह के अन्तराल पर अवमुक्त करना चाहिए।
- ◆ भण्डारण भुट्टों से दाने निकाल कर ही करना चाहिए।

रासायनिक प्रबन्धन :

कीट एवं उपचार :

दीमक

- ◆ खड़ी फसल में प्रकोप होने पर सिंचाई के पानी के साथ क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई0सी0 2.5 ली0 प्रति हे0 की दर से प्रयोग करें।

सूत्रकृमि

- ◆ रसायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई से एक सप्ताह पूर्व खेत में 10 किग्रा. कार्बोफ्यूरान 3% सी.जी. फैलाकर मिला दें।

तना छेदक कीट एवं प्ररोह मक्खी

निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठले बुरकाव / 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए –

- ◆ कार्बोफ्यूरान 3 सी.जी. 20 किग्रा. अथवा डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई0सी0 1.0 ली0 प्रति हेठले अथवा क्यूनॉलफास 25 प्रतिशत ई0सी0 1.50 लीटर ।
- ◆ फॉलआर्मी वर्म मक्का की फसल में लगने वाला धातक कीड़ा है। इसके नियंत्रण हेतु इन्डाक्साकार्ब 500 मिली. प्रति हेठले अथवा कलोरएन्ट्रानिलिप्रोल 200 मिली. प्रति हेठले का प्रयोग 500–800 लीटर पानी में घोलकर करें।
- ◆ 5 प्रतिशत पौध तथा 10 प्रतिशत गोभ क्षति की अवस्था में कीट नियंत्रण हेतु एन.पी.वी. 250 एल.ई. अथवा मेटाराइजियम एनाइसोप्ली 5 ग्राम/लीटर पानी अथवा बी.टी. 2 ग्राम प्रति लीटर पानी अथवा नीम आयल 5 मिली/लीटर पानी की दर से छिड़काव करना प्रभावी होता है।

रोग एवं उपचार :

1. **पहचान :** इस रोग में पत्तियों पर पीली धारियां पड़ जाती हैं। पत्तियों के नीचे की सतह पर सफेद रुई के समान फफूँदी दिखाई देती है। ये धब्बे बाद में गहरे अथवा लाल भूरे पड़ जाते हैं। रोगी पौधों में भुट्टे कम बनते हैं। या बनते ही नहीं हैं। रोगी पौधे बौने एवं झाड़ीनुमा हो जाते हैं।

2. **तुलासिता रोग :** निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठले बुरकाव / 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए –

जिरम 80 प्रतिशत डब्लूपी0 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लूपी0 2.0 किग्रा. अथवा मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लूपी0 2.0 किग्रा0 ।

3. **गुलाबी उकठा रोग :** निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हेठले बुरकाव / 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए –

जिरम 80 प्रतिशत डब्लूपी0 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लूपी0 2.0 किग्रा. अथवा मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लूपी0 2.0 किग्रा0 ।

पत्तियों का झुलसा रोग :

पहचान : इस रोग में पत्तियों पर बड़े लम्बे अथवा कुछ अण्डाकार भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। रोग के उग्र होने पर पत्तियां झुलस कर सूख जाती हैं।

उपचार : इसकी रोकथाम हेतु जिनेब या मैंकोज़ेब 75% डब्ल्यू पी. 2 किग्रा. अथवा जीरम 80 प्रतिशत 2 ली0 अथवा जीरम 27 प्रतिशत 3 ली0 प्रति हेठले की दर से छिड़काव करना चाहिए।

सूत्रकृमि :

उपचार : सूत्र कृमियों की रोकथाम के लिए गर्मी की गहरी जुताई करें एवं बुवाई के एक सप्ताह पूर्व खेत में 10 किग्रा. कार्बोफ्यूरान 3% सी.जी. फैलाकर मिला दें

6. अरहर की उन्नतशील खेती

दलहनी फसलों में उत्तर प्रदेश में चने के बाद अरहर का स्थान है यह फसल अकेली तथा दूसरी फसलों के साथ भी बोई जाती है। ज्वार, बाजरा, उर्द और कपास, अरहर के साथ बोई जाने वाली प्रमुख फसलें हैं। हमारे प्रदेश की उत्पादकता राष्ट्रीय औसत से ज्यादा है। सघन पद्धतियों को अपनाकर इसे और बढ़ाया जा सकता है।

1. खेत का चुनाव : अरहर की फसल के लिए बलुई दोमट व दोमट भूमि अच्छी होती है। उचित जल निकास तथा हल्के ढालू खेत अरहर के लिए सर्वोत्तम होते हैं। लवणीय तथा क्षारीय भूमि में इसकी खेती सफलतापूर्वक नहीं की जा सकती है।

2. खेत की तैयारी : खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद 2–3 जुताई देशी हल/कल्टीवेटर/रोटावेटर से करनी चाहिए। जुताई के बाद पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए।

3. भूमि शोधन : फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा हरजियेनम 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजाति	बोने का उपयुक्त समय	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)	उपयुक्त क्षेत्र एवं विशेषताएं
क. अगेती प्रजातियाँ					
1.	पारस	जून प्रथम सप्ताह	130–140	18–20	उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्रों में इस प्रजाति की फसल ली जा सकती है।
2.	यू.पी.ए.एस. 120	जून प्रथम सप्ताह	130–135	16–20	सम्पूर्ण उ.प्र. (मैदानी क्षेत्र) नवम्बर में गेहूँ बोया जा सकता है।
3.	पूसा 992	जून प्रथम सप्ताह	150–160	16–20	उकठा रोग अवरोधी
4.	टा 21	अप्रैल प्रथम सप्ताह तथा जून का प्रथम सप्ताह	160–170	16–20	सम्पूर्ण उ.प्र. के लिए उपयुक्त।
5.	पी.ए.-6	जून प्रथम सप्ताह	130–135	18–20	सम्पूर्ण उ.प्र. (मैदानी क्षेत्र)
6.	आईसीपीएल-151	मध्य जून	120–140	15–18	
7.	पूसा अरहर-16	मध्य जून	120–140	20–22	
8.	आई.पी.ए.च. 15-03 (हाइब्रिड)	जून प्रथम सप्ताह	145–150	20–22	पश्चिमी उ.प्र., भूरे रंग का दाना एवं झुलसा अवरोधी।
9.	आई.पी.ए.च. 09-5	जून प्रथम सप्ताह	150–155	17–18	पश्चिमी उ.प्र., बांझापन मोजैक रोग एवं उच्च उत्पादन क्षमता।
ख. देर से पकने वाली प्रजातियाँ (260–275 दिन)					
1.	बहार	जुलाई	250–260	25–30	सम्पूर्ण उ.प्र. बंझा रोग अवरोधी।
2.	अमर	जुलाई	260–270	25–30	सम्पूर्ण उ.प्र. बंझा अवरोधी मिश्रित खेती।
3.	नरेन्द्र अरहर-1	जुलाई	260–270	25–30	सम्पूर्ण उ.प्र. बंझा अवरोधी एवं उकठा मध्यम अवरोधी।
4.	आजाद	जुलाई	260–270	25–30	तदैव

क्र. सं.	प्रजाति	बोने का उपयुक्त समय	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कृ. / हे.)	उपयुक्त क्षेत्र एवं विशेषताएं
5.	पूसा—9	जुलाई	260—270	25—30	बंझा अवरोधी सितम्बर में बुवाई के लिए उपयुक्त।
6.	आई.पी.ए.—203 (प्रकाश)	जुलाई	240—250	25—30	उ0प्र0, हल्का भूरा दाना एवं झुलसा अवरोधी।
7.	आई.पी.ए.—203 (गंगा)	जुलाई	245—250	25—26	उ0प्र0, बैंगनी रंग का दाना एवं झुलसा अवरोधी।
8.	आई.पी.ए.—15—2	जुलाई	245—255	22—24	पश्चिमी उ0प्र0, बांझपन मोजैक रोग अवरोधी।
9.	पी.डी.ए.—11	सितम्बर का प्रथम पखवाड़ा	225—240	18—20	बंझा अवरोधी सितम्बर में बुवाई के लिए उपयुक्त।
10.	मालवीय विकास (एम. एल.—6	जुलाई	250—270	25—30	उकठा एवं बंझा अवरोधी।
11.	मालवीय चमत्कार (एम.ए. एल.—13)	जुलाई	230—250	30—32	बंझा अवरोधी।
12.	नरेन्द्र अरहर—2	जुलाई	240—245	30—32	बंझा एवं उकठा अवरोधी सम्पूर्ण उ.प्र।
13.	आई.पी.ए.—303	जुलाई	246—250	19—20	
14.	आई.पी.ए.—206	—	245—250	25—26	विल्ट अवरोधी।
15.	पूसा अरहर—151	—	240—245	20.82	एस.एम.डी. अवरोधी, विल्ट ब्लाइट, लीफ स्पॉट मध्यम अवरोधी।

4. बुवाई का समय : देर से पकने वाली प्रजातियां जो लगभग 270 दिन में तैयार होती हैं, की बुवाई जुलाई माह में करनी चाहिए। शीघ्र पकने वाली प्रजातियों को सिंचित क्षेत्रों में जून के मध्य तक बो देना चाहिए, जिससे यह फसल नवम्बर के अन्त तक पक कर तैयार हो जाय और दिसम्बर के प्रथम पखवारे में गेहूँ की बुवाई सम्भव हो सके। अधिक उपज लेने के लिए टा—21 प्रजाति को अप्रैल प्रथम पखवारे में (प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में तराई को छोड़कर) ग्रीष्म कालीन मूँग के साथ सह—फसल के रूप में बोने के लिए जायद में बल दिया जा चुका है। इसके लाभ हैं :

- (अ) फसल नवम्बर के मध्य तक तैयार हो जाती है एवं गेहूँ की बुवाई में देर नहीं होती है।
- (ब) इसकी उपज जून में बोई गई फसल से अधिक होती है।
- (स) मेड़ों पर बोने से अच्छी उपज मिलती है।

5. बीज का उपचार : सर्वप्रथम एक किग्रा. बीज को 2 ग्राम थीरम तथा एक ग्राम कार्बोन्डाजिम के मिश्रण अथवा 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा + 1 ग्राम कार्बोक्सिन कार्बिन्डाजिम से उपचारित करें। बोने से पहले हर बीज को अरहर के विशिष्ट राइजोबियम कल्वर से उपचारित करें। एक पैकेट 10 किग्रा. बीज के लिए पर्याप्त होता है। एक पैकेट राइजोबियम कल्वर को साफ पानी में घोल बनाकर 10 किग्रा. बीज के ऊपर छिड़कर हल्के हाथ से मिलायें जिससे बीज के ऊपर एक हल्की पर्त बन जाये। इस बीज की बुवाई तुरन्त करें। तेज धूप से कल्वर के जीवाणु के मरने की आशंका रहती है। ऐसे खेतों में जहाँ अरहर पहली बार काफी समय बाद बोई जा रही हो, कल्वर का प्रयोग अवश्य करें।

6. बीज की मात्रा तथा बुवाई विधि : बुवाई हल के पीछे कूड़ों में करनी चाहिए। प्रजाति तथा मौसम के अनुसार बीज की मात्रा तथा बुवाई की दूरी निम्न प्रकार रखनी चाहिए। बुवाई के 20—25 दिन बाद पौधे की दूरी, सघन पौधे को निकालकर निश्चित कर देनी चाहिए। अरहर की बुवाई रिज या रेज्ड बेड पर की जाय तो उकठा रोग एवं जल भराव की समस्या को नियंत्रित कर सकते हैं। जोड़ी पंक्ति (60 : 120 सेमी.) में बुवाई करने पर अन्तःफसल द्वारा अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में बाढ़ या लगातार वर्षा के कारण बुवाई में विलम्ब होने की दशा में सितम्बर के प्रथम पखवारे में बहार एवं पी.डी.ए.—11 की शुद्ध फसल के रूप में बुवाई की जा सकती है, परन्तु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी. एवं बीज की मात्रा 20—25 किग्रा. / हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।

7. उर्वरकों का प्रयोग : अरहर की अच्छी उपज लेने के लिए 10 से 15 किग्रा. नत्रजन, 40—45 किग्रा. फास्फोरस तथा 20 किग्रा. सल्फर की प्रति है. आवश्यकता होती है। अरहर की अधिक से अधिक उपज के लिए फास्फोरस युक्त उर्वरकों जैसे सिंगल सुपर फास्फेट, डाई अमोनियम फास्फेट का प्रयोग करना चाहिए। सिंगिल सुपर फास्फेट प्रति है. 250 किग्रा. या 100 किग्रा. डाई अमोनियम फास्फेट तथा 20 किग्रा. सल्फर पंक्तियों में बुवाई के समय चोंगा या नाई की सहायता से देना चाहिए, जिससे उर्वरक का बीज के साथ सम्पर्क न हो। यह उपयुक्त होगा कि फास्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा सिंगिल सुपर फास्फेट से दी जाय जिससे 12 प्रतिशत सल्फर की पूर्ति भी हो सके। यूरिया खाद की थोड़ी मात्रा (15—20 किग्रा. प्रति है.) केवल उन खेतों में जो नत्रजन तत्व में कमजोर हो, देना चाहिए। उर्द जैसी सह-फसलों को अरहर के लिए प्रयुक्त खाद की आधी मात्रा दें ज्वार तथा बाजरा की सह फसलों के रूप में बुवाई के समय उनकी पंक्तियों में 20 किग्रा. नत्रजन प्रति है. की दर से दें तथा एक महीना बाद 10 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की टापड़ेसिंग करें। सितम्बर में बुवाई हेतु 30 से 40 किग्रा. प्रति है. नत्रजन के प्रयोग से अच्छी उपज प्राप्त होती है।

8. सिंचाई : अरहर पी.ए.—291, अरहर टा—21 तथा यू.पी.ए.एस.—120 तथा आई.सी.पी.एल.—151 को पलेवा करके तथा अन्य प्रजातियों को वर्षाकाल में पर्याप्त नमी होने पर बोना चाहिए। खेत में कम नमी की अवस्था में एक सिंचाई फलियां बनने के समय अकट्टूबर माह में अवश्य की जाय। देर से पकने वाली प्रजातियों में पाले से बचाव हेतु दिसम्बर या जनवरी माह में सिंचाई करना लाभप्रद रहता है।

9. निकाई—गुड़ाई व खरपतवार नियंत्रण :

क्र.सं.	शाकनाशी का नाम	मात्रा प्रति है०
1.	फ्लूकलोरेलिन 45 ई.सी. (बुवाई के तुरन्त पहले स्प्रे करने के बाद मृदा में मिलाकर)	2—3 लीटर
2.	पेंडीमिथिलीन 30 ई.सी. (बुवाई के तुरन्त बाद)	2.5—3.00 लीटर
3.	आक्सीफलोरफेर 23.5 ई.सी. (बुवाई के तुरन्त बाद)	0.4—0.5 लीटर
4.	विवजैलोफाप 5 ई.सी. (बुवाई के 15 दिन बाद) (केवल धास कुल के खरपतवारों का नियंत्रण)	0.8—1.0 लीटर
5.	इमैजीथापर (बुवाई के 15—25 दिन बाद) सभी प्रकार के खरपतवारों का नियंत्रण	1.0 लीटर

10. फसल सुरक्षा :

(अ) कीट :

पत्ती लपेटक कीट :

पहचान एवं हानि की प्रकृति : इस कीट की सूँड़ी हल्के पीले रंग की होती है तथा प्रौढ़ कीट (पतंगा) छोटा एवं गहरे भूरे रंग का होता है। इस कीट की सूँड़ी चोटी की पत्तियों को लपेटकर जाला बुनकर उसी में छिपकर पत्तियों को खाती है। अगेती फसल में यह फूलों एवं फलियों को भी नुकसान पहुँचाती है।

अरहर की फली की मक्खी : आर्थिक क्षति स्तर — 5 प्रतिशत प्रकोपित फली।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : यह छोटी, चमकदार काले रंग की घरेलू मक्खी की तरह परन्तु आकार में छोटी मक्खी होती है। इसकी मादा फलियों में बन रहे दानों के पास फलियों के अपने अण्डरोपक की सहायता से अण्डे देती है, जिससे निकलने वाली गिड़ारे फली के अन्दर बन रहे दाने को खाकर नुकसान पहुँचाती है।

चने का फली बेधक कीट : आर्थिक क्षति स्तर : 2—3 अण्डे या 2—3 नवजात सूँड़ी या एक पूर्ण विकसित सूँड़ी प्रति पौधा या 5 से 6 पतंगे प्रति गन्धपास प्रति रात्रि लागातार तीन रात्रि तक।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : प्रौढ़ पतंगा पीले बादामी रंग का होता है। अगली जोड़ी पंख पीले भूरे रंग के होते हैं तथा पंख के मध्य में एक काला निशान होता है। पिछले पंख कुछ चौड़े मटमैले सफेद से हल्के रंग के होते हैं तथा किनारे परकाली पट्टी होती है। सूँडियां हरे, पीले या भूरे रंग की होती है तथा पार्श्व में दोनों तरफ मटमैले सफेद रंग की धारी पायी जाती है। इसकी गिड़ारे फलियों के अन्दर घुसकर दानों को खाती है। क्षतिग्रस्त फलियों में छिद्र दिखाई देते हैं।

पिछकी शलभ (प्यूम माथ) : आर्थिक क्षति स्तर — 5 प्रतिशत प्रकोपित फली।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : प्रौढ़ पतंगा आकार में छोटा एवं तथा हल्का पाण्डु वर्गीय होता है। जिसके अगले पंख पिछकी होते हैं तथा प्रत्येक पंखों पर दो दो गहरे धब्बे पाये जाते हैं। पिछले जोड़ी पंखों पर बीच में कांटे जैसे शल्क पाये जाते हैं।

कीट की सूँडियाँ फलियों को पहले ऊपर की सतह से खुरचकर खाती हैं फिर बाद में छेदकर अन्दर घुस जाती हैं तथा दानों में छेद बनाकर खाती है।

फलीबेधक (इटलो जिकनेला) : आर्थिक क्षति स्तर — 5 प्रतिशत प्रकोपित फली।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : प्रौढ़ कीट भूरे रंग को चौंच युक्त मुखांग का होता है। इसके उपरी पंख के बीच के किनारों पर पीले सफेद रंग का बैण्ड होता है। पिछले पंख के किनारों पर लाइन पाई जाती है। कीट की सूँडियाँ फूलों, नई फलियों तथा फलियों में बन रहे बीजों को खाकर नुकसान पहुँचाती है। प्रकोपित फलियाँ रंगहीन तथा लिसलिसी हो जाती हैं, जिससे दुर्गन्ध आती है।

धब्बे दार फलीबेधक (मौरुका टेस्टुलेलिस) : आर्थिक क्षति स्तर — 5 प्रतिशत प्रकोपित फली।

पहचान एवं हानि की प्रकृति : इस कीट का शलभ भूरे रंग का होता है इसके अगले पंखों पर दो सफेद धब्बे होते हैं। एवं पंख के किनारे पर छोटे—छोट काले धब्बे एवं लहरियादार धारी होती है। इसके पिछले पंख कुछ कुछ पीले सफेद रंग के होते हैं। और इनके किनारे पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक लहरियादार धब्बे फैले होते हैं। कीट की सूँडियाँ हरे सफेद रंग की तथा भूरे सिर वाली लगभग दो सेमी। लम्बी होती तथा इनके प्रत्येक खण्ड में छोटे—छोटे पीले एवं हरे भूरे रंग के रोम पाये जाते हैं। सूँडियाँ कलिकाओं, फूलों तथा फलियों को जाले से बांधकर उसमें छेद बनाकर बीज को खा जाती है।

अरहर का फलीबेधक (नानागुना ब्रेबियसकुला) :

पहचान एवं हानि की प्रकृति : नवजात सूँडी पीले सफेद एवं गहरे भूरे रंग के सिर वाली होती है इसकी 6 अवस्थाएं पायी जाती हैं तथा इन अवस्थाओं में इनका रंग परिवर्तनीय होता है। पूर्ण विकसित सूँडी 14 से 17 मिमी। लम्बी हल्के पीले, हल्के भूरे अथवा हल्के सफेद रंग तथा लाल भूरे सिर एवं पार्श्व में पट्टियायुक्त होती है। ये फलियां को जाले में बांधकर छेद करती हैं और दानों को खाती हैं।

नीली तितली (लैम्पीडस प्रजातिया) :

पहचान एवं हानि की प्रकृति : पूर्ण विकसित सूँडी पीली हरी, लाल तथा हल्के हरे रंग की होती है तथा इनके शरीर की निचली सतह छोटे छोटे बालों से ढकी होती है। प्रौढ़ तितली आसमानी नीले रंग की होती है। इसकी सूँडियाँ फलियों को छेदकर उनके दानों को नुकसान पहुँचाती हैं।

माहू (एफिस क्रेक्सीवोरा) :

पहचान एवं हानि की प्रकृति : यह एफिड गहरे कत्थर्ड अथवा काले रंग की बिना पंख अथवा पंख वाली होती है। एक मादा 8—30 बच्चों जन्म देती है तथा इनका जीवनकाल 10—12 दिन का होता है। इसके शिशु एवं प्रौढ़ पौधे के विभिन्न भागों विशेषकर फूलों एवं फलियों से रस चूसकर हानि करते हैं।

अरहर फली बग :

पहचान एवं हानि की प्रकृति : प्रौढ़ बच लगभग दो सेन्टीमीटर लम्बा कुछ हरे भूरे रंग का होता है। इसके शीर्ष पर एक शूल युक्त, प्रवक्ष पृष्ठक पाया जाता है। उदर प्रोथ पर मजबूत काँटे होते हैं। इसके शिशु एवं प्रौढ़ अरहर के तने, पत्तियों

एवं पुष्पों एवं फलियों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं प्रकोपित फलियों पर हल्के पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं तथा अत्याधिक प्रकोप होने पर फलियां सिकुड़ जाती हैं एवं दाने छोटे रह जाते हैं।

एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन :

- ◆ गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करना चाहिए।
- ◆ बुवाई मेड़ पर मध्य जून से जुलाई से प्रथम सप्ताह में करना चाहिए।
- ◆ पौधों के बीच उचित दूरी (75×25 सेमी.) रखना चाहिए।
- ◆ अरहर के साथ ज्वार की ऊँची लाक वाली प्रजाति की बुवाई करना चाहिए।
- ◆ फूल एवं फलियां बनते समय 50–60 बर्ड पर्चर प्रति हे. की दर से लगाना चाहिए।
- ◆ नीम के बीज के शत 5 प्रतिशत + साबुन के घोल 1 प्रतिशत का सप्ताह के अन्तराल 2–3 छिड़काव फूल आने एवं फलियों के बनते समय करना चाहिए।
- ◆ फूल एवं फलियां बनते समय सप्ताह के अन्तराल पर बराबर निरीक्षण करते रहना चाहिए।
- ◆ चने की फलीबेधक कीट के निरीक्षण हेतु पांच गंधपास एवं प्रबन्धन हेतु 20–25 गंधपास / हे. की दर से लगाकर नर प्रौढ़ कीटों को आकर्षित कर प्रतिदिन प्रातः मार देना चाहिए। पुराने सेप्टा को 14 दिनों पर बदलते रहना चाहिए।
- ◆ चने की फलीबेधक कीट के 5–6 प्रौढ़ पतंगे औसतन प्रति गंधपास 2–3 दिन लगातार आने पर या 3 से 3 अप्डे या 2–3 नवजात सूँड़ी या एक पूर्ण विकसित सूँड़ी प्रति पौधा दिखाई देने पर या पाँच प्रतिशत प्रकोपित फली होने पर एच.एन.पी.वी 250–300 सूँड़ी समतुल्य / हे. की दर से सायंकाल छिड़काव करना चाहिए। घोल में 1 ग्राम टीपाल / ली. की दर अवश्य मिलाना चाहिए।
- ◆ जमीन पर गिरी सूखी पत्तियों के मध्य पाये जाने वाले फलीबेधकों के कृमि कोषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ अरहर की फली मक्खी से प्रकोपित 5 प्रतिशत फली मिलने पर या माहू या फली चूसक कीटों का प्रकोप होने पर डाईमेथोएट 30 ई.सी. 1 ली. या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 200 मिली. अथवा एसिटामिप्रिड 20 डब्लू.पी. 150 ग्राम प्रति हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ अन्य फलीबेधकों से 5 प्रतिशत प्रकोपित फली पाये जाने पर बी.टी. 5 प्रतिशत डब्लू.पी. 1.5 किग्रा. इन्डाक्साकार्ब 14.5 एससी 400 मिली., क्यूनालफस 25 ई.सी. 1.50 ली., फेनवेलरेट 20 ई.सी. 750 मिली., साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी. 750 मिली. या डेकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 450 मिली. का प्रति हे. अथवा क्लोरेनट्रानिलिप्रोल 18.5% एस0सी0 150 मिली / हे0 अथवा इथियान 50% ई.सी. 1.15 ली./हे. अथवा फ्लूबेण्डामाइड 39.35% एस.सी. 100 मिली. / हे. 500–700 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(ब) रोग :

अरहर का उकठा रोग :

पहचान : यह फ्यूजेरियम नामक कवक से फैलता है। यह पौधों में पानी व खाद्य पदार्थ के संचार को रोक देता है, जिससे पंतियां पीली पड़कर सूख जाती हैं और पौधा सूख जाता है। इसमें जड़ें सङ्कर गहरे रंग की हो जाती हैं तथा छाल हटाने पर जड़ से लेकर तने की ऊँचाई तक काले रंग की धारियां पाई जाती हैं।

उपचार :

1. जिस खेत में उकठा रोग का प्रकोप अधिक हो, उस खेत में 3–4 साल तक अरहर की फसल नहीं लेना चाहिए।
2. ज्वार के साथ अरहर की सहफसल लेने से किसी हद तक उकठा रोग का प्रकोप कम हो जाता है।
3. थीरम एवं कार्बन्डाजिम को 2:1 के अनुपात में मिलाकर 3 ग्राम प्रति किग्रा. बीज उपचारित करना चाहिए।
4. ट्राईकोडर्मा 4 ग्राम तथा 1 ग्राम कार्बक्सीन / कार्बन्डाजिम बीज को उपचारित करके इससे उकठा रोग की रोकथाम की जा सकती है।

5. 2.5 किग्रा. ट्राईकोडर्मा का 60–65 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर एक सप्ताह बाद उसी हेठों की दर से खेत की तैयारी के समय भूमि में मिला दिया जाय।

अरहर का बन्धा रोग :

पहचान : ग्रसित पौधों में पत्तियाँ अधिक लगती हैं, फूल नहीं आते जिससे दाना नहीं बनता है। पत्तियाँ छोटी तथा हल्के रंग की हो जाती हैं। यह रोग माइट द्वारा फैलता है।

उपचार :

1. इसका अभी कोई प्रभावकारी रासायनिक उपचार नहीं निकला है।
2. जिस खेत में अरहर बोना हो उसके आसपास अरहर के पुराने ऐसे स्वयं उगे हुए पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।
3. रोग प्रतिरोधी प्रजातियाँ जैसे अम्बर या आजाद का चुनाव किया जाए।

सूत्रकृमि :

सूत्रकृमि जनित बीमारी की रोकथाम हेतु गर्मी की गहरी जुताई आवश्यक है। 50 किग्रा. निबौली प्रति हेटों की दर से प्रयोग करें।

कम अवधि की अरहर की फसल में एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन :

1. अरहर के खेत में चिड़ियों के बैठने के लिए बांस की लकड़ी का 'टी' आकार का 10 खपच्ची प्रति हेक्टेयर के हिसाब से गाड़ दें।
2. प्रथम छिड़काव के 15 दिन पश्चात एच.एन.पी.वी. का 500 एल.ई. प्रति हेटों के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए।
3. द्वितीय छिड़काव के 10 से 15 दिन पश्चात जरूरत के अनुसार निम्बोली के 5 प्रतिशत अर्क का छिड़काव करना चाहिए।

मध्यम एवं लम्बी अवधि की अरहर की फसल में एकीकृत कीट प्रबन्धन :

1. जब शत प्रतिशत पौधों में फूल आ गये हों और फली बनना शुरू हो गया हो। उस समय मोनोक्रोटोफास 0.04 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।
2. प्रथम छिड़काव के 15 दिन पश्चात डाइमेथोएट 0.03 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।
3. द्वितीय छिड़काव के 10 से 15 दिन पश्चात आवश्यकता— नुसार निम्बोली के 5 प्रतिशत अर्क या नीम के किसी प्रभावी कीट नाशक का छिड़काव करना चाहिए।



7. मूँग की उन्नतशील खेती

खरीफ में मूँग की बुवाई सामान्यतः प्रदेश के सभी जनपदों में की जाती है किन्तु इसका सबसे अधिक क्षेत्र झांसी, फतेहपुर, वाराणसी, उन्नाव, रायबरेली तथा प्रतापगढ़ जनपदों में हैं। मूँग में खरीफ के मौसम में पीली मोजैक रोग का अधिक प्रकोप होने के कारण इसकी औसत उपज बहुत कम प्राप्त होती है। इसी बात को ध्यान में रखकर मूँग की खेती को जायद में करने पर बल दिया गया है। खरीफ में इसकी अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु निम्न सघन पद्धतियां अपनाई जायें।

भूमि की तैयारी :

दोमट तथा हल्की दोमट भूमि जिसमें पानी का समुचित निकास हो, इस फसल के लिए उत्तम है। वर्षा के बाद पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा एक दो जुताई उन्नत कृषि यंत्रों से करके खेत को बुवाई हेतु जुलाई के प्रथम पक्ष में तैयार कर लेना चाहिए।

भूमि शोधन :

फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा हारजिएनम 2: डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हें0 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें। दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृषि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु व्यूवेरिया बैसियाना 1: डब्लू.पी. बायोपेर्स्टीसाइड्स की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हें0 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

बुवाई का समय :

मूँग की कम समय में पकने वाली प्रजातियों की बुवाई जुलाई के अन्तिम सप्ताह से अगस्त के तीसरे सप्ताह तक करनी चाहिए।

बुवाई की विधि : बुवाई कूँड़ में हल के पीछे करें। कूँड़ से कूँड़ की दूरी 30—35 सेमी. होनी चाहिए।

संस्तुत प्रजातियां :

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	विशेषता	बोने का उपयुक्त समय	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु./है.	कीट रोग ग्राहिता अवरोधिता	उपयुक्त क्षेत्र
1.	पन्त	—	धूमिल हरा दाना	25 जुलाई से 10 अगस्त तक	70—75	8—10	पीला मोजैक सहिष्णु	पूर्वी उ.प्र. तथा मैदानी क्षेत्र
2.	पन्त मूँ—3	—	धूमिल हरा दाना	तदैव	75—85	10—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
3.	नरेन्द्र मूँग—1	—	तदैव	तदैव	65—70	12—15	तदैव	तदैव
4.	पी.डी.एम.—54	—	हरा चमकदार दाना	तदैव	70—75	10—12	तदैव	पूर्वी उ.प्र.

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	विशेषता	बोने का उपयुक्त समय	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु. / हे.	कीट रोग ग्राहिता अवरोधिता	उपयुक्त क्षेत्र
5.	पन्त मूँग-4	—	धूमिल हरा दाना	तदैव	65—70	12—15	पीला मोजैक अवरोधी	समस्त उ.प्र.
6.	पी.डी.एम.—11	—	—	तदैव	65—70	10—12	पीला मोजैक सहिष्णु	समस्त उ.प्र.
7.	मालवीय ज्योति	—	हरा चमकदार दाना	तदैव	65—70	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
8.	मालवीय जागृति	2000	हरा दाना	तदैव	66—70	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
9.	सप्राट (पी.डी.एम 139)	2001	दाना हरा	25 जुलाई से 10 अगस्त तक	60—65	8—10	तदैव	समस्त उ.प्र.
10.	मालवीय जनप्रिया	2001	हरा दाना	तदैव	65—70	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
11.	मालवीय जनचेतना	2003	हरा एवं मध्यम बड़ा दाना	तदैव	660—65	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
12.	आशा	—	हरा दाना	तदैव	65—70	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
13.	मालवीय जन कल्याणी (एच.यू.एम.—16)	2006	हरा बड़ा दाना	25 जुलाई से 10 अगस्त तक	55—60	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
14.	टी.एम.—9937	—	हरा बड़ा दाना	जुलाई	60—75	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
15.	एम.एच.—2.15	—	हरा चमकदार दाना	25 जुलाई से 10 अगस्त तक	60—70	12—15	तदैव	समस्त उ.प्र.
16.	आई.पी.एम.—2—3	2009	हरा चमकदार दाना	तदैव	65—70	10—11	तदैव	पश्चिमी उ.प्र.
17.	श्वेता (एम.एम.—2241)	—	तदैव	तदैव	60—65	10—12	तदैव	समस्त उ.प्र.
18.	स्वाति (के.एम.—2195)	2010	तदैव	तदैव	60—65	10—11	पीला चित्रवर्ण अवरोधी	समस्त उ.प्र.
19.	आई.पी.एम.—2—14	2010	बड़ा दाना	जुलाई	62—70	10—12	पीला चित्रवर्ण अवरोधी	गर्मियों के लिए
20.	विराट (आई.पी.एम 205—7)	2016	तदैव	तदैव	52—56	10—12	पीला पाउड्री अवरोधी	समस्त उ.प्र.
21.	आई.पी.एम.—410—3 (शिखा)	2016	—	—	60—65	13—15	मुख्य रोग अवरोधी	समस्त उ.प्र.
22.	मेहा 9—125	2018	हरा चमकदार दाना	जुलाई	60—75	14—16	तदैव	समस्त उ.प्र.

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	विशेषता	बोने का उपयुक्त समय	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु./हे.	कीट रोग ग्राहिता अवरोधिता	उपयुक्त क्षेत्र
23.	वर्षा (आई.पी.एम.-2के14-)	2018	तदैव	तदैव	65-70	10-12	तदैव	समस्त उ.प्र.
24.	कनिका (आई.पी.एम.-302-2)	2018	बड़ा दाना	तदैव	61-78	9.22	एम.वाई.एम.वी. सर्कार्स्पोरा लीफ स्पॉट के प्रति अत्यधिक अवरोधी	समस्त उ.प्र.
25.	पूसा-1431	2018	-	-	65-66	13-14	एम.वाई.एम.वी. सर्कार्स्पोरा लीफ स्पॉट अवरोधी	समस्त उ.प्र.
26.	आई.पी.एम. -2014-9 (वर्षा)	2018	-	-	65-75	10-11	मुख्य रोग अवरोधी	समस्त उ.प्र.
27.	आई.पी.एम. -312-20 (वसुधा)	2020	-	-	70-80	12-14	पीला मोजैक रोग अवरोधी	समस्त उ.प्र.
28.	आई.पी.एम. -409-4 (हीरा)	2020	-	-	70-80	11-12	पीला मोजैक रोग अवरोधी	समस्त उ.प्र.
29.	आई.पी.एम. -512-1 (सूर्या)	2020	-	-	65-70	14-15	एम.वाई.एम.वी. सीएलएस, पत्ती झड़न अवरोधी	पूर्वी उ.प्र.
30.	आज़ाद मूँग-1 के.एम.-2342)	2020	मध्यम गोल दाना	तदैव	62-65	10-12	एम.वाई.एम.वी. सी.-25 एन्थ्रेक्नोस लीफ क्रिन्कल के प्रति अत्यधिक अवरोधी	समस्त उ.प्र.

बीज की मात्रा तथा उपचार :

(अ) बीज दर : 12-15 किग्रा. प्रति हे.।

(ब) उपचार : प्रति किग्रा. बीज को 2.0 ग्राम थीरम तथा 1 ग्राम कार्बन्डाजिम से शोधित करने के बाद मूँग को राइजोबियम कल्वर के एक पैकेट से 10 किग्रा. बीज का उपचार करना चाहिए। अरहर की खेती के अन्तर्गत दिये उपचार के अनुरूप करें।

उर्वरक :

15 किग्रा. नत्रजन तथा 40 किग्रा. फास्फोरस 20 किग्रा. गंधक प्रति हे. तत्व के रूप में बोते समय कूँड़ों में डालना चाहिए। फली बनने के समय 2 प्रतिशत यूरिया धोल के छिड़काव से उपज अधिक मिलती है। 25 किग्रा. सल्फर प्रति हे. 0 डाला जाय।

निराई-गुड़ाई :

खरपतवारों का नियंत्रण निराई-गुड़ाई के माध्यम से किया जाना चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण :

क्र.सं.	शाकनाशी का नाम	मात्रा प्रति हेक्टेयर
1.	पलूकलोरेलिन 45 ई.सी. (बुवाई के पूर्व)।	2.25 लीटर
2.	मेटोलाक्लोर 50 ई.सी. (बुवाई के दो दिनों में)।	2.00 लीटर
3.	क्लोरीम्यूरान 25 ई.सी. (बुवाई के दो दिनों में) (घासकुल चौड़ी पत्ती एवं मेथी कुल के खरपतवार का प्रभावी नियन्त्रण)।	30—40 मिली.
4.	फिनाक्साप्रोन 10 ई.सी. (बुवाई के 20—25 दिनों बाद)।	800—1000 मिली.
5.	विवजैलोफोप—पी—टरप्लूराइल 4.4 ई.सी. (बुवाई के 20—25 दिनों बाद) (केवल घास कुल के खरपतवारों का नियन्त्रण)।	750—1000 मिली.
6.	इमैजाथापर 10 ई.सी. पानी में मिलाकर बुवाई के 10—20 दिनों बाद छिड़काव करें।	750—1000 मिली.

फसल सुरक्षा :

कीट :

बिहार की बालदार सूँड़ी :

पहचान एवं हानि की प्रकृति — प्रौढ़ कीट हल्के पीले रंग का होता है तथा इसके ऊपरी तथा निचले पंखों पर काले रंग के धब्बे होते हैं। इसकी आँखे तथा भ्रूगिकायें काले रंग की होती हैं। पूर्ण विकसित सूँड़ी 40—45 मिमी. लम्बी दोनों किनारों पर काले तथा बीच में गन्दे पीले रंग के शरीर वाली होती हैं। इनका पूरा शरीर घने बालों से ढका होता है। कीट की सूँड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में पौधों की पत्तियों को खुरचकर खाती हैं। अधिक प्रकोप की दशा में पौधे के तने को छोड़कर सारी पत्तियाँ खा ली जाती हैं। सूँड़ियाँ बड़ी होने पर पूरे क्षेत्र में फैल कर फसल को हानि करती हैं।

लाल बालदार सूँड़ी :

पहचान एवं हानि की प्रकृति — प्रौढ़ कीट काले धब्बेयुक्त सफेद पंख वाला होता है इसका ऊपरी पंख का किनारा तथा पूरा उदर लाल होता है। सूँड़ी 25 मिमी. लम्बी लाल रंग की घने बालों वाली होती है। यह सूँड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में पौधों की पत्तियों को खुरचकर खाती हैं। अधिक प्रकोप की दशा में इनके द्वारा पौधे के तने को छोड़कर सारी पत्तियाँ खा ली जाती हैं। सूँड़ियाँ बड़ी होने पर पूरे क्षेत्र में फैल कर फसल को हानि करती हैं।

फली बेधक कीट (हेलीकोवार्पा आर्मीजेरा) : आर्थिक क्षति स्तर — 5 से 6 पतंगे प्रति गन्धपास प्रति रात्रि लगातार तीन रात्रि तक या 5 प्रतिशत प्रकोपित फली।

पहचान एवं हानि की प्रकृति — प्रौढ़ पतंगा पीले बादामी रंग का होता है। अगली जोड़ी पंख पीले भूरे रंग के होते हैं तथा पंख के मध्य में एक काला निशान होता है। पिछले पंख कुछ चौड़े मटमैले सफेद से हल्के रंग के होते हैं तथा किनारे पर काली पट्टी होती है। सूँड़ियाँ हरे, पीले या भूरे रंग की होती हैं तथा पार्श्व में दोनों तरफ मटमैले सफेद रंग की धारी पायी जाती है। इसकी गिडारें फलियों के अन्दर घुसकर दानों का खाती हैं। क्षतिग्रस्त फलियों में छिद्र दिखाई देते हैं।

सफेद मक्खी :

पहचान एवं हानि की प्रकृति — ये कीट आकार में छोटे लगभग एक से डेढ़ मिमी. लम्बे पीले रंग के शरीर वाले होते हैं इनका पूरा शरीर सफेद चूर्ण से ढका होता है इनके पंख सफेद होते हैं। शिशु तथा प्रौढ़ दोनों पत्तियों, कोमल टहनियों से रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं। यह मक्खी उदर में पीला चित्रवर्ण रोग का विषाणु फैलाती है। अतिरिक्त अधिक रस चूसने के कारण यह मधुस्राव करती है जिस पर काले कवक का आक्रमण हो जाता है तथा प्रकाश संश्लेषण किया बाधित होती है।

फली से रस चूसने वाला कीट (कलैवीग्रेला जिबोसा) :

पहचान एवं हानि की प्रकृति – प्रौढ़ बग लगभग दो सेन्टीमीटर लम्बा कुछ—कुछ हरे भूरे रंग का होता है। इसके शीर्ष पर एक शूल युक्त प्रवक्ष पृष्ठक पाया जाता है। उदर प्रोथ पर मजबूत कॉटे होते हैं। इसके शिशु एवं प्रौढ़ अरहर के तने, पत्तियों एवं पुष्पों एवं फलियों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं प्रकोपित फलियों पर हल्के पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं तथा अत्यधिक प्रकोप होने पर फलियाँ सिकुड़ जाती हैं एवं दाने छोटे रह जाते हैं।

फलीबेधक कीट (नीली तितली) :

पहचान एवं हानि की प्रकृति – पूर्ण विकसित सूँड़ी पीली हरी, पीली लाल अथवा हल्के रंग की होती है तथा इनके शरीर की निचली सतह छोटे छोटे बालों से ढकी होती है। प्रौढ़ तितली आसमानी नीले रंग की होती है। इसकी सूँड़ियाँ फलियों को छेद कर उनके दानों को नुकसान पहुँचाती हैं।

माहू (एफिस क्रेक्सीवोरा) :

पहचान एवं हानि की प्रकृति – यह एफिड गहरे कर्त्थई अथवा काले रंग की बिना पंख अथवा पंख वाली होती है। एक मादा 8–30 बच्चों को जन्म देती है तथा इनका जीवनकाल 10–12 दिन का होता है। इसके शिशु एवं प्रौढ़ पौधे के विभिन्न भागों विशेषकर फूलों एवं फलियों से रस चूसकर हानि करते हैं।

एकीकृत प्रबन्धन :

- बुवाई के लिए पीली पत्ती मोजैक सहिष्णु प्रजातियों जैसे पन्त मूँग-2, पंत मूँग-3, पीडीएम-54 (मोती), पीडीएम-84-139 (सम्राट), पीडीएम-11, एमएल-337, नरेन्द्र मूँग-1 का चयन करना चाहिए।
- फसल पर कीटों के प्रकोप का सप्ताह अन्तराल पर निरीक्षण करते रहना चाहिए।
- पीली पत्ती प्रकोपित पौधों को देखते ही सावधानीपूर्वक उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
- बालदार सूँड़ी के पतंगों को प्रकाश प्रपञ्च के द्वारा इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए।
- तम्बाकू की सूँड़ी के नियंत्रण हेतु 20–25 फेरोमोन ट्रेप/हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।
- तम्बाकू की सूँड़ी के अण्डों एवं झुन्ड में खा रही सूँड़ियों को इकट्ठा कर सप्ताह में दो बार नष्ट कर देना चाहिए।
- तम्बाकू की सूँड़ी की एन.पी.वी. 250 लार्वा समतुल्य प्रति हे. की दर से सप्ताह के अन्तराल पर दो तीन बार सायंकाल छिड़काव करना चाहिए।
- सफेद मक्खी के आर्थिक क्षति स्तर पहुँचने पर दैहिक रसायन जैसे डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1 ली. या इमिडाक्लोप्रिड 250 मिली./हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।
- अन्य फलीबेधकों से 5 प्रतिशत प्रकोपित फली पाये जाने पर बी.टी. 5 प्रतिशत डब्लू.पी. 1.5 किग्रा. इन्डाक्साकार्ब 14. 5 एससी 400 मिली., क्यूनालफास 25 ई.सी. 1.50 ली., फेनवेलरेट 20 ई.सी. 750 मिली., साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी. 750 मिली. या डेकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 450 मिली. का प्रति हे. की दर से 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
- बिहार हेयरी कैटरपिलर (बालदार सूँड़ी) के रासायनिक नियंत्रण हेतु फेन्थोएट 50 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर प्रति हे 0 500–600 लीटर पानी में घोलकर बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

रोग :

पीला चित्रवर्ण रोग :

पहचान : पत्तियों पर पीले सुनहरे चकत्ते पाये जाते हैं। उग्र अवस्था में सम्पूर्ण पत्ती पीली पड़ जाती है। यह रोग सफेद मक्खी से फैलता है।

उपचार : सफेद मक्खी को मारने के लिए निम्न में से किसी एक कीटनाशक का 2–3 छिड़काव करना चाहिए

1. डायमिथोएट (30 ई.सी.) 1 लीटर प्रति हेठो या
2. ऑक्सीडिमेटान—मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर प्रति हेक्टर।
3. रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें।
4. रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग किया जाय।

पत्तियों का धब्बा :

पहचान : पत्तियों पर गोलाई लिये हुए कोणीय धब्बे बनते हैं, जिसमें बीच का भाग हल्के राख के रंग का या हल्का या भूरा तथा किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है।

उपचार : इसकी रोकथाम के लिए 3 किग्रा. कापर आक्सीक्लोरोइड को 800 ली० पानी में घोलकर प्रति हेक्टर, 10 दिन के अन्तर पर 2–3 छिड़काव करना चाहिए। कार्बन्डाजिम का एक छिड़काव 500 ग्राम प्रति हेठो पर्याप्त दर से मात्र एक छिड़काव संस्तुत है।



8. उर्द की उन्नतशील खेती

उर्द की खेती सामान्यतः प्रदेश के सभी जनपदों में की जाती है लेकिन लखनऊ, अयोध्या, झांसी, चित्रकूट कानपुर एवं बरेली मण्डलों में इसकी खेती अधिक क्षेत्रफल में की जाती है।

- भूमि की तैयारी :** समुचित जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त है। खेत की प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा कल्टीवेटर्स या रोटावेटर से करके पाटा लगाना चाहिए।
- भूमि शोधन :** फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा.मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें। दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूण्डी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेरस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।
- बुवाई का समय :** शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की बुवाई जुलाई के तीसरे सप्ताह से अगस्त के प्रथम सप्ताह तक करनी चाहिए। शीघ्र पकने वाली प्रजातियों को जायद में भी बोया जाता है। टा–27 तथा टा–65 की बुवाई शुद्ध फसल के रूप में जुलाई के प्रथम पक्ष में तथा अरहर के साथ जून के द्वितीय पक्ष में करनी चाहिए। शेखर प्रजातियों की बुवाई 25 जुलाई से 30 अगस्त तक की जानी चाहिए। पश्चिमी भाग में हरे चारे के बाद भी बुवाई की जा सकती है।
- प्रजातियाँ एवं उपजः :**

क्र. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना वर्ष	पकने की अवधि (दिन)	बीज दर किग्रा. प्रति हे.	पंकित की दूरी सेमी.	औसत उपज कु./हे.	उपयुक्त क्षेत्र
1.	आजाद उर्द–1	1991	75–80	15	—	12–13	पीला चितेरी रोग अवरोधी, सम्पूर्ण उ.प्र.
2.	शेखर–1 आई.पी.यू.–91–1 (उत्तरा)	2000	75–80	15	30	12–15	जायद व खरीफ में देर से बुवाई के लिए उपयुक्त
3.	शेखर–2	2001	80–85	12–15	35	12–15	तदैव
4.	शेखर–3 (के.यू.–309)	2004	78–80	15	30	12–13	पीला मोजैक वायरस के प्रति अवरोधी
5.	पन्त यू–35*	—	70–75	15	30	10–12	सम्पूर्ण उ.प्र.
6.	नरेन्द्र उर्द–1*	—	70–80	15	30	12–15	खरीफ में बुवाई के लिए सम्पूर्ण उ.प्र.
7.	बल्लर्म उर्द	2015	75–80	15	30	10–11	सम्पूर्ण उ.प्र., पीला मोजैक
8.	पन्त यू–30	—	70–75	15	30	10–15	तदैव
9.	आजाद–3	2003	80–85	15	30	12–14	तदैव
10.	डब्लू.बी.यू.–108	—	80	15	30	12–14	तदैव
11.	आजाद उर्द–2 (हरा दाना)	—	75–80	15	30	12–13	सम्पूर्ण उ.प्र.
12.	पन्त उर्द–31	2005	70–75	15–20	—	12–19	मोजैक अवरोधी

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना वर्ष	पकने की अवधि (दिन)	बीज दर किग्रा. प्रति है.	पंक्ति की दूरी सेमी.	औसत उपज कु./हे.	उपयुक्त क्षेत्र
13.	आई.पी.यू—2—43	2008	70—75	15	30	9—11	पीला मोजैक अवरोधी
14.	आई.पी.यू 11—2	2019	80	12—15	—	5.52—7.63	पीला मोजैक, पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी
15.	आई.पी.यू 13—1	2019	72	12—15	—	10—12	काले दाने, एमवाईएमवी अवरोधी
16.	आई.पी. 12—1	2020	74—80	12—15	—	5—6	पीला मोजैक, पाउडरी मिल्ड्यू, सर्कार्स्पोरा लीफ स्पॉट, बैकटीरियल लीफ ब्लाइट अवरोधी
17.	पन्त उर्द	2020	85	15	—	10—11	पीला मोजैक, सर्कार्स्पोरा लीफ स्पॉट, पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी।
18.	पन्त उर्द—8	2020	85	15	—	10—11	पीला मोजैक, बैकटीरियल लीफ स्पॉट, सर्कार्स्पोरा लीफ स्पॉट, पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी।

* यह प्रजातियाँ पीला चित्रवर्ण (मोजैक) के लिए सहिष्णु हैं।

- बीज का उपचार :** बीज को 1 ग्राम कार्बन्डाजिम अथवा 2.00 ग्राम थीरम से प्रति किग्रा. की दर से शोधित करने के बाद उर्द के राइजोबियम कल्वर के एक पैकेट से 10 किग्रा. बीज का उपचार करना चाहिए। उपचार अरहर की खेती के अन्तर्गत दी गयी विधि के अनुसार करें।
- बीज की मात्रा :** विभिन्न प्रजातियों का 12—15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।
- बुवाई :** हल के पीछे कूँड़ में बुवाई करनी चाहिए। कूँड़ से कूँड़ की दूरी 30—45 सेमी. रखनी चाहिए तथा बुवाई के बाद तीसरे सप्ताह में घने पौधों को निकाल कर पौधे की दूरी 10 सेमी. कर देना चाहिए।
- उर्वरक :** 10 से 15 किग्रा. नत्रजन तथा 40 किग्रा. फास्फोरस तथा 20 किग्रा. सल्फर 200 किग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर की दर से कूँड़ों में डालना चाहिए। दाना बनते समय 2 प्रतिशत यूरिया घोल का छिड़काव करने से उपज में वृद्धि होती है।
- सिंचाई :** वर्षा के अभाव में विशेष रूप से फलियाँ बनते समय एक सिंचाई करनी चाहिए।
- निराई—गुड़ाई व खरपतवार नियन्त्रण :**

क्र.सं.	खरपतवारनाशी का नाम	मात्रा प्रति हे.	मात्रा प्रति एकड़
1.	फ्लूक्लोरेलिन 45 ई.सी. (बुवाई के पूर्व)	2.25 लीटर	900—1000 मिली.
2.	मेटोलाक्लोर 50 ई.सी. (बुवाई के दो दिनों में)	2.00 लीटर	800 मिली.
3.	कलोरीम्यूरान 25 ई.सी. (बुवाई के दो दिनों में) (घासकुल चौड़ी पत्ती एवं मेथी कुल के खरपतवार का प्रभावी नियन्त्रण)	30—40 मिली.	12—15 मिली.
4.	फिनॉकसाप्रोप—पी—इथाइल 9.3 प्रतिशत ई.सी.	800—1000 मिली.	325—400 मिली.
5.	विवैजैलोफोप—पी—टरफ्लूराइल 4.4 ई.सी. (बुवाई के 20—25 दिनों बाद) (केवल घास कुल के खरपतवारों का नियन्त्रण)	750—1000 मिली.	300—400 मिली.
6.	इमैजाथापर 10 ई.सी. पानी में मिलाकर बुआई के 10—20 दिनों बाद छिड़काव करें	750—1000 मिली.	500—600 मिली.

11. फसल सुरक्षा :

1. बिहार की बालदार सूँडी : पहचान एवं हानि की प्रकृति – प्रौढ़ कीट हल्के पीले

रंग का होता है तथा इसके ऊपरी तथा निचले पंखों पर काले रंग के धब्बे होते हैं। इसकी आँखें तथा श्रृंगिकाएं काले रंग की होती हैं। पूर्ण विकसित सूँडी 40–45 मिमी। लम्बी दोनों किनारों पर काले तथा बीच में गन्दे पीले रंग के शरीर वाली होती है। इनका पूरा शरीर घने बालों से ढका होता है। कीट की सूँडियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में पौधों की पत्तियों को खुरचकर खाती हैं। अधिक प्रकोप की दशा में पौधे के तने को छोड़कर सारी पत्तियाँ खा ली जाती हैं। सूँडियाँ बड़ी होने पर पूरे क्षेत्र में फैल कर फसल को हानि करती हैं।



2. लाल बालदार सूँडी : पहचान एवं हानि की प्रकृति – प्रौढ़ कीट काले धब्बेयुक्त

सफेद पंख वाला होता है इसका ऊपरी पंख का किनारा तथा पूरा उदर लाल होता है। सूँडी 25 मिमी। लम्बी लाल रंग की घने बालों वाली होती है। यह सूँडियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में पौधों की पत्तियों को खुरचकर खाती हैं। अधिक प्रकोप की दशा में इनके द्वारा पौधे के तने को छोड़कर सारी पत्तियाँ खा ली जाती हैं। सूँडियाँ बड़ी होने पर पूरे क्षेत्र में फैल कर फसल को हानि करती हैं।



3. फली बेधक कीट : आर्थिक क्षति स्तर – 5 से 6 पतंगे प्रति गन्धपास प्रति रात्रि लगातार तीन रात्रि तक या 5 प्रतिशत प्रकोपित फली।

पहचान एवं हानि की प्रकृति – प्रौढ़ पतंगा पीले बादामी रंग का होता है। अगली जोड़ी पंख पीले भूरे रंग के होते हैं तथा पंख के मध्य में एक काला निशान होता है। पिछले पंख कुछ चौड़े मटमैले सफेद से हल्के रंग के होते हैं तथा किनारे पर काली पट्टी होती है। सूँडियाँ हरे, पीले या भूरे रंग की होती हैं तथा पाश्व में दोनों तरफ मटमैले सफेद रंग की धारी पायी जाती है। इसकी गिडारें फलियों के अन्दर घुसकर दानों का खाती हैं। क्षतिग्रस्त फलियों में छिद्र दिखाई देते हैं।



4. सफेद मक्खी : पहचान एवं हानि की प्रकृति – ये कीट आकार में छोटे लगभग एक से डेढ़ मिमी। लम्बे पीले रंग के शरीर वाले होते हैं। इनका पूरा शरीर सफेद चूर्ण से ढका होता है इनके पंख सफेद होते हैं। शिशु तथा प्रौढ़ दोनों पत्तियों, कोमल टहनियों से रस चूसकर नुकसान पहुँचाते हैं। यह मक्खी उदर में पीला चित्रवर्ण रोग का विषाणु फैलाती है। अतिरिक्त अधिक रस चूसने के कारण यह मधुस्राव करती है जिस पर काले कवक का आक्रमण हो जाता है तथा प्रकाश संश्लेषण क्रिया बाधित होती है।



5. फली से रस चूसने वाला कीट (क्लैवीग्रेला जिबोसा) : पहचान एवं हानि की प्रकृति – प्रौढ़ बग लगभग दो सेन्टीमीटर लम्बा कुछ-कुछ हरे भूरे रंग का होता है। इसके शीर्ष पर एक शूल युक्त प्रवक्ष पृष्ठक पाया जाता है। उदर प्रोथ पर मजबूत कॉटे होते हैं। इसके शिशु एवं प्रौढ़ अरहर के तने, पत्तियों एवं पुष्टों एवं फलियों से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। प्रकोपित फलियों पर हल्के पीले रंग के धब्बे बन जाते हैं तथा अत्यधिक प्रकोप होने पर फलियों सिकुड़ जाती है एवं दाने छोटे रह जाते हैं।



6. फलीबेधक कीट (नीली तितली) : पहचान एवं हानि की प्रकृति – पूर्ण विकसित सूँडी पीली हरी, पीली लाल अथवा हल्के रंग की होती है तथा इनके शरीर की निचली सतह छोटे छोटे बालों से ढकी होती है। प्रौढ़ तितली आसमानी नीले रंग की होती है। इसकी सूँडियाँ फलियों को छेद कर उनके दानों को नुकसान पहुँचाती हैं।

7. माहू (एफिस क्रेक्सीवोरा) : पहचान एवं हानि की प्रकृति – यह एफिड गहरे कत्थई अथवा काले रंग की बिना पंख अथवा पंख वाली होती है। एक मादा 8–30 बच्चों को जन्म देती है तथा इनका जीवनकाल 10–12 दिन का होता है। इसके शिशु एवं प्रौढ़ पौधे के विभिन्न भागों विशेषकर फूलों एवं फलियों से रस चूसकर हानि करते हैं।

एकीकृत प्रबन्धन :

- ◆ बुवाई के लिए पीली पत्ती मोजैक सहिष्यु प्रजातियों जैसे पन्त उर्द-19, पंत उर्द-30, पीडीयू-1, पीडीयू-88-31, यूजी-218 या नरेन्द्र उर्द-1 का चयन करें।
- ◆ फसल पर कीटों के प्रकोप का सप्ताह अन्तराल पर निरीक्षण करते रहना चाहिए।
- ◆ पीली पत्ती प्रकोपित पौधों को देखते ही सावधानीपूर्वक उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ बालदार सूँडी के पतंगों को प्रकाशप्रपंच के द्वारा इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ तम्बाकू की सूँडी के नियंत्रण हेतु 20-25 फेरोमोन ट्रेप / हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।
- ◆ तम्बाकू की सूँडी के अण्डों एवं झुन्ड में खा रही सूँडियों को इकट्ठा कर सप्ताह में दो बार नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ तम्बाकू की सूँडी की एन.पी.वी. 250 लार्वा समतुल्य प्रति हे. की दर से सप्ताह के अन्तराल पर दो तीन बार सायंकाल छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ सफेद मक्खी के आर्थिक क्षति स्तर पहुँचने पर दैहिक रसायन जैसे डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1 ली. या इमिडाक्लोप्रिड 250 मिली./ हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ अन्य फलीबेघकों से 5 प्रतिशत प्रकोपित फली पाये जाने पर बी.टी. 5 प्रतिशत डब्लू.पी. 1.5 किग्रा. इन्डाक्साकार्ब 14.5 एससी 400 मिली., क्यूनालफास 25 ई.सी. 1.50 ली., फेनवेलरेट 20 ई.सी. 750 मिली., साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी. 750 मिली. या डेकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. 450 मिली. का प्रति हे. की दर से 500-600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।



रोग :

1. पीला चित्रवर्ण रोग (यलो मोजेक) :

पहचान : पत्तियों पर पीले सुनहरे चकत्ते पड़ जाते हैं। रोग की उग्र अवस्था में सम्पूर्ण पत्ती पीली पड़ जाती है। यह रोग सफेद मक्खियों द्वारा फैलता है।

उपचार : इसकी रोकथाम के लिए निम्न में से किसी एक कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए।

1. डाइमेथोएट 30 ई.सी. 1 लीटर प्रति हेक्टेयर या
2. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 100-125 मिली. प्रति हेक्टर।
3. रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग किया जाय।

2. उर्द का पत्र दाग रोग :

पहचान : पत्तियों पर गोलाई लिए हुए भूरे रंग के कोणीय धब्बे बनते हैं, जिसके बीच का भाग राख या हल्का भूरा तथा किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है।

उपचार : इसकी रोकथाम के लिए 3 किग्रा. कापर आक्सीक्लोराइड प्रति हेक्टेयर 10 दिन के अन्तर पर 2-3 छिड़काव करना चाहिए अथवा कार्बोन्डाजिम का एक छिड़काव 500 ग्राम प्रति हेतु का पर्याप्त होगा। (मूँग की तरह)

9. लोबिया की उन्नतशील खेती

लोबिया की खेती चारे व दाने के लिए की जाती है। प्रदेश के पश्चिमी जनपदों में यह बहुत लोकप्रिय है।

4. भूमि की तैयारी :

दोमट भूमि उपयुक्त होती है। खेत समतल तथा उचित जल निकास वाला होना चाहिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके दो जुताई देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करनी चाहिए।

2. भूमि शोधन :

फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें। दीमक, सफेद गिडार, सूत्र कृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु व्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

3. बुआई का समय :

लोबिया की बुआई वर्षा प्रारम्भ होने पर जुलाई में करें।

4. मुख्य प्रजातियां, बीज दर एवं उपज :

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का वर्ष	बीज दर (किग्रा. / हे.)	तैयार होने की अवधि (दिन)	उपज (कु. / हे.)
1.	टा-5269 (पूसा स्वानी)	1952	20	50–60	50–60 (फलियाँ)
2.	टा-2	1955	40	60–65	—
4.	यू.पी.सी.-4200	—	30	70–80	—
5.	रसियन जाइंट	—	—	—	—
6.	आई.जी.एफ.-450	—	—	—	—
7.	यू.पी.सी.-5287	—	—	—	—
8.	वी-240	1984	20–25	70	8–10 कु. / हे.
9.	आर-19	1993	20–25	60–65	10–12 कु. / हे.
10.	जी.सी.-3	1997	20–25	90–95	10–12 कु. / हे.
11.	आर-101	2001	20–25	60–65	9–10 कु. / हे.
12.	पन्त लोबिया-4	2015	20–25	60–65	14–18 कु. / हे.
13.	पन्त लोबिया-3	2016	20–25	65–70	14–18 कु. / हे.
14.	पन्त लोबिया-5	2017	20–25	65–70	16–20 कु. / हे.

5. बीजोपचार :

बुवाई के पूर्व बीज को 2 ग्राम थीरम से प्रति किग्रा. की दर से शोधित करने के बाद लोबिया को विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से अरहर की फसल के लिए दी गयी विधि के अनुसार उपचारित करके बोना चाहिए।

6. बुवाई :

दाना व हरी फलियों के लिए बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिए। दाने वाली प्रजाति लोबिया टा-2 की बुवाई पंक्तियों में 45—50 सेमी. तथा टी-5269 लोबिया की प्रजाति की बुवाई फलियों के लिए 50 सेमी. की दूरी पर करनी चाहिए। चारे तथा हरी खाद के लिए लोबिया की बुवाई छिटककर करनी चाहिए।

7. खाद :

नत्रजन 40—45 किग्रा. तथा फास्फोरस 20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के पहले प्रयोग करना चाहिए।

8. सिंचाई :

सूखे की अवस्था में एक या दो सिंचाई अवश्य करें।

9. निराई—गुड़ाई :

बुवाई के 20—25 दिन बाद एक निराई अवश्य करें।

10. फसल सुरक्षा :

1. माहू कीट :

यह कीट झुण्डों में पौधे पर चिपका रहता है तथा पत्तियों, फूलों एवं फलियों से रस चूसकर फसल हो हानि पहुँचाता है।

उपचार :

इसकी रोकथाम हेतु निम्न रसायन का छिड़काव करना चाहिए—

1. डाइमिथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 4 लीटर प्रति हेक्टर।

2. फली बेघक :

इनकी सूंडियां फली के अन्दर दाने को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं।

उपचार : इनकी रोकथाम हेतु निम्न रसायन का प्रयोग फसल में फूल आने पर करना चाहिए—

1. इण्डॉक्साकार्ब 14.5 प्रतिशत एस.सी. 330—400 मिली. प्रति हेक्टर।

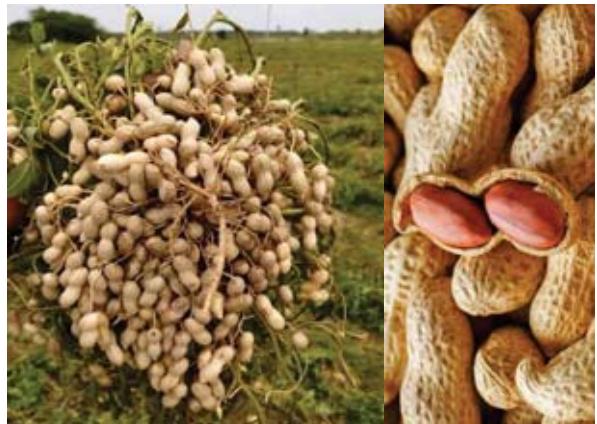
11. सूत्रकृमि : सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए ज्वार की मिश्रित खेती करें।



10. मूँगफली की उन्नतशील खेती

मूँगफली खरीफ की मुख्य तिलहनी फसल है। यह वायु और वर्षा द्वारा भूमि कटाव से बचाती है। मूँगफली के दाने में 10—12 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट व 48—50 प्रतिशत वसा पाई जाती है।

यह मुख्यतयः झांसी, हरदोई, सीतापुर, खीरी, उन्नाव, बहराइच, बरेली, बदायूं एटा, फरुखाबाद, मुरादाबाद, मैनपुरी एवं सहारनपुर जनपदों में अधिक क्षेत्रफल में उगाई जाती है। निम्न सघन पद्धतियां अपनाकर मूँगफली की उत्पादकता में पर्याप्त वृद्धि की जा सकती हैं—



1. संस्तुत प्रजातियां : निम्न प्रजातियां सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु संस्तुत की गयी हैं—

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिन में)	उपज (कु. / हे.)	सेलिंग प्रतिशत	विशेषता
1.	चित्रा (एम. ए-10)	125—130	25—30	75	फैलने वाली एक से दो मध्यम आकार, बीज कवच चित्र वर्ण फैलाने वाली प्रजाति है।
2.	कौशल (जी.201)	108—112 असिंचित दशा में	15—20	72	फलियों में 1—3 दाने
		118—120 सिंचित दशा में	20—25	65	गुच्छेदार मध्यम आकार के दाने
3.	प्रकाश (CSMG-884)	115—120	18—20	70	फैलने वाली
4.	अम्बर (CSDMG-84-1)	115—130	25—30	75	फैलने वाली दो दाने वाली दाना गुलाबी एवं सफेद चित्रवर्ण
5.	टी.जी.—34 ए (विशेष बुन्देलखण्ड)	105—110	20—25	72	गुच्छेदार मध्यम 1 से 2 दाने
6.	उत्कर्ष सी.एस.एम.जी.—9510	125—130	20—25	75	फैलने वाली 1 से 2 दाने
7.	दिव्या (सी.एस.एम.जी.—2003—19)	125—130	25—28	75	अर्ध फैलने वाली 1—2 दाने वाली
8.	जी.जे.जी.—31	115—120	30—35	65	फैलने वाली, दो दाने
9.	जी.जे.जी.—9	115—120	30—35	75	गुच्छेदार
10.	आई.सी.जी.वी.—93468 (अवतार)	85—95	15—20	—	पछेती लीफ स्पॉट एवं रस्ट सहिष्णु।

2. बीज दर, बुवाई का समय एवं दूरी पर बुवाई :

शीघ्र पकने वाली प्रजातियों की बुवाई बड नेक्रोसिस बीमारी से बचने के लिए जुलाई के द्वितीय पखवारे में करना उचित होगा। बुवाई का सही समय, बीज दर तथा दूरी निम्नानुसार है:

3. **संतुलित उर्वरकों का प्रयोग :** मूँगफली की अच्छी पैदावार लेने के लिए उर्वरकों का प्रयोग बहुत आवश्यक है। यह उचित होगा कि उर्वरकों का प्रयोग भूमि परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाय। यदि परीक्षण नहीं कराया गया है तो नत्रजन 20 किग्रा., फास्फोरस 60 किग्रा., पोटाश 45 किग्रा. (तत्व के रूप में) जिप्सम 250 किग्रा. एवं बोरेक्स 4 किग्रा., प्रति हे. की दर से प्रयोग किया जाय। फास्फेट का प्रयोग सिंगिल सुपर फास्फेट के रूप में किया जाय तो अच्छा रहता है यदि फास्फोरस की निर्धारित मात्रा सिंगिल सुपर फास्फेट के रूप में प्रयोग की जाय तो पृथक से जिप्सम के प्रयोग की आवश्यकता नहीं रहती है। नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश खादों की सम्पूर्ण मात्रा तथा जिप्सम की आधी मात्रा कूँड़ों में नाई अथवा चोरें द्वारा बुवाई के समय बीज से करीब 2–3 सेमी. गहरा डालना चाहिए। जिप्सम की शेष आधी मात्रा तथा बोरेक्स की सम्पूर्ण मात्रा फसल की 3 सप्ताह की अवस्था पर टाप इंसिंग के रूप में बिखेर कर प्रयोग करें तथा हल्की गुड़ाई करके 3–4 सेमी. गहराई तक मिट्टी में भली प्रकार मिलाएं। जीवाणु खाद जो बाजार में वृक्ष मित्र के नाम से जानी जाती है। जीवाणु खाद जो बाजार में उपलब्ध हो, 6 किग्रा. मात्रा प्रति हे. डालना अच्छा रहेगा क्योंकि इसके प्रयोग से फलियों के उत्पादन में वृद्धि के साथ साथ गुच्छेदार प्रजातियों में फलियाँ एक साथ पकते देखी गई हैं।
4. **बीज उपचार :** बोने से पूर्व बीज (गिरी) को थीरम 2.0 ग्राम और 1.0 ग्राम कार्बोन्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. के मिश्रण को दो ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधित कर लेना चाहिए अथवा थायोफिनेट मिथाइल 4.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधित करना चाहिए। ड्राइकोडर्मा 4 ग्राम ग्राम कार्बोक्रिसन प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। इसके पश्चात् 5–6 घन्टे बाद बोने से पहले बीज को मूँगफली के विशिष्ट राइजोबियम कल्वर से उपचारित करें। एक पैकेट 10 किग्रा. बीज के लिए पर्याप्त होता है। कल्वर को बीज में मिलाने के लिए आधा लीटर पानी में 50 ग्राम गुड़ घोल लें। फिर इस घोल में 250 ग्राम राइजोबियम कल्वर का पूरा पैकट मिलायें, इस मिश्रण को 10 किग्रा. बीज के ऊपर छिड़कर कर हल्के हाथ से मिलायें, जिससे बीज के ऊपर एक हल्की पर्त बन जाय। इस बीज को साथे में 2–3 घन्टे सुखाकर बुवाई प्रातः 10 बजे तक या शाम को 4 बजे के बाद करें। तेज धूप में कल्वर के जीवाणु के मरने की आशंका रहती है। ऐसे खेतों में जहाँ मूँगफली पहली बार या काफी समय बाद बोई जा रही हो, कल्वर का प्रयोग अवश्य करें।
5. **सिंचाई :** यदि वर्षा न हो और सिंचाई की सुविधा हो तो आवश्यकतानुसार दो सिंचाइयां खूंटियों (पेगिंग) तथा फली बनते समय देना चाहिए।
6. **निकाई—गुड़ाई :** बुवाई के 5 से 20 दिन के बाद पहली निकाई—गुड़ाई एवं बुवाई के 30 से 35 दिन के बाद दूसरी निकाई—गुड़ाई अवश्य करें। खूंटियां (पेगिंग) बनते समय निकाई—गुड़ाई न की जाय। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु पेन्डीमेथालीन 30 ई.सी. की 3.3 ली./हे. अथवा आक्सीफ्लोरफेन 23.5 ई.सी. की 600 मिली. मात्रा 700–800 ली. पानी में घोल बनाकर बुवाई के बाद एवं जमाव से पहले अर्थात बुवाई के 3–4 दिन बाद तक छिड़काव करना चाहिए। इस छिड़काव से मौसमी धास एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का जमाव ही नहीं होता है।
7. **खुदाई एवं भण्डारण :** यह देखा गया है कि कृषक बाजार में अच्छी कीमत लेने के उद्देश्य से तथा गेहूँ की बुवाई शीघ्र करने के उद्देश्य से मूँगफली की खुदाई फसल के पूर्ण पकने से पूर्व कर लेते हैं, जिससे दाने का विकास अच्छा नहीं होता दाना घटिया श्रेणी का होता है और उपज कम हो जाती है। अतः इसकी खुदाई तभी करें जब मूँगफली के छिलके के ऊपर नसें उभर आयें तथा भीतरी भाग कर्त्थर्ई रंग का हो जाय और मूँगफली का दाना गुलाबी हो जाय। खुदाई के बाद फलियों को खूब सूखाकर भण्डारण करें। यदि नमीयुक्त मूँगफली का भण्डारण किया जायेगा तो फलियां काले रंग की हो जायेंगी जो खाने एवं बीज हेतु सर्वथा अनुपयुक्त हो जाती है।

कीट :

1. मूँगफली की सफेद गिडार :

पहचान : इसकी गिडारें पौधों की जड़ें खाकर पूरे पौधे को सुखा देती हैं। गिडारें पीलापन लिए हुए सफेद रंग की होती हैं, जिनका सिर भूरा कथर्झ या लाल रंग का होता है, ये छूने पर मुड़कर गोल हो जाती है। इसका प्रौढ़ मूँगफली की फसल को हानि नहीं करता। यह प्रथम वर्षा के बाद आसपास के पेड़ों पर आकर प्रजनन करता है तथा पुनः 3–4 दिन बाद खेतों में जाकर अण्डे देता है। यदि प्रौढ़ को पेड़ों पर ही मार दिया जाय तो इनकी संख्या की वृद्धि में काफी कमी हो जायेंगी।

उपचार :

- ◆ मानसून के प्रारम्भ पर 2–3 दिन के अंदर पोषक पेड़ों जैसे नीम, गूलर आदि पर प्रौढ़ कीट को नष्ट करने के लिए मोनोक्रोटोफास 0.05 प्रतिशत या फेन्थोएट 0.03 प्रतिशत या क्लोरपाइरीफास 0.03 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ बुवाई के 3–4 घण्टे पूर्व क्लोरपायरीफास 20 ई.सी. या क्यूनालफास 25 ई.सी. 25 मिली. प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज को उपचारित करके बुवाई करें।
- ◆ खड़ी फसल में प्रकोप होने पर क्लोरपायरीफास या क्यूनालफास रसायन की 4 लीटर मात्रा प्रति हे. की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करें।
- ◆ फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग किया जाये।

2. दीमक :

पहचान : यह सूखे की स्थिति में जड़ों तथा फलियों को काटती हैं। जड़ कटने से पौधे सूख जाते हैं। फली के अन्दर गिरी के स्थान पर मिट्टी भर देती हैं।

उपचार : सफेद गिडार के लिए किये गये बीजोपचार एवं कीटनाशक का प्रयोग सिंचाई के पानी के साथ करने से दीमक का प्रकोप रोका जा सकता है।

हैयरी कैटरपीलर : जब फसल लगभग 40–45 दिन की हो जाती है तो पत्तियों की निचली सतह पर प्रजनन करके असंख्य संख्यायें तैयार होकर पूरे खेत में फैल जाते हैं। पत्तियों को छेदकर छलनी कर देते हैं, फलस्वरूप पत्तियां भोजन बनाने में अक्षम हो जाती हैं।

उपचार : पत्तियों को तोड़ कर मिट्टी के तेल में डुबो दें।

3. मूँगफली क्राउन राट :

पहचान : अंकुरित हो रही मूँगफली इस रोग से प्रभावित होती है। प्रभावित हिस्से पर काली फफूँदी उग जाती है जो स्पष्ट दिखायी देती है।

उपचार : इसके लिए बीज शोधन करना चाहिए।

4. डाईरुट राट या चारकोल राट :

पहचान : नमी की कमी तथा तापकम अधिक होने पर यह बीमारी जड़ों में लगती है। जड़े भूरी होने लगती हैं और पौधा सूख जाता है।

उपचार : बीज शोधन करें तथा खेत में नमी बनाये रखें। लम्बा फसल चक्र अपनायें।

5. बड़ नेक्रोसिस :

पहचान : शीर्ष कलियां सूख जाती हैं। बाढ़ रुक जाती है। बीमार पौधों में नई पत्तियां छोटी बनती हैं और गुच्छे में निकलती हैं। प्रायः अंत तक पौधा हरा बना रहता है, फूल-फल नहीं बनते।

उपचार : जून के चौथे सप्ताह से पूर्व बुवाई न की जाय। थ्रिप्स कीट जो रोग का वाहक है का नियंत्रण निम्न कीटनाशक दवा से करें। डाइमेथोएट 30 ई.सी. एक लीटर प्रति हेक्टर की दर से।

6. मूँगफली का टिक्का रोग (पत्रदाग) :

पहचान : पत्तियों पर हल्के भूरे रंग के गोल धब्बे बन जाते हैं। जिनके चारों तरफ निचली सतह पर पीले धेरे होते हैं। उग्र प्रकोप से तने तथा पुष्प शाखाओं पर भी धब्बे बन जाते हैं।

उपचार : खड़ी फसल पर ज़िंक मैंगनीज कार्बमेंट 2 किग्रा. या जिनेब 75 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 2.5 किग्रा. अथवा जीरम 27 प्रतिशत तरल के 3 लीटर अथवा जीरम 80 प्रतिशत के 2 किग्रा. के 2-3 छिड़काव 40 दिन के अन्तर पर करना चाहिए।

सूत्रकृमि :

1. सूत्रकृमि जानित बीमारियाँ रोकने के लिए हरी खाद गर्मी की गहरी जुताई या खलियों की खाद का उचित मात्रा में प्रयोग किया जाये।
2. नीम की खली 15-20 कुन्तल / हें. की दर से प्रयोग करें।

मुख्य बिन्दु :

- ◆ विभिन्न प्रजातियों के लिए निर्धारित बीज दर का ही प्रयोग करें एवं शोधित करके बोएं।
- ◆ समय से बुवाई करें एवं दूरी पर विशेष ध्यान दे।
- ◆ मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग संस्तुति के अनुसार अवश्य करें।
- ◆ विशिष्ट राइजोबियम कल्वर का प्रयोग अवश्य करें।
- ◆ खूटियां एवं फली बनते समय (पानी की कमी पर) सिंचाई अवश्य करें।
- ◆ फसल पूर्ण पकने पर ही खुदाई करें।
- ◆ कीट / रोगों का सामायिक एवं प्रभावी नियंत्रण अवश्य करें।
- ◆ 20 किग्रा. सल्फर का प्रयोग करें।



11. सोयाबीन की उन्नतशील खेती

सोयाबीन की खेती मैदानी क्षेत्रों में की जाती है। इसमें 40–45 प्रतिशत प्रोटीन तथा 20–22 प्रतिशत तक तेल की मात्रा उपलब्ध है। इसके प्रयोग से शरीर को प्रचुर मात्रा में प्रोटीन मिलती है। प्रदेश में बुन्देलखण्ड के सभी जनपदों एवं बदायूँ शाहजहांपुर, रामपुर, बरेली, मेरठ आदि में की जाती है।

- उन्नतशील प्रजातियाँ :** सोयाबीन की प्रजातियों का विवरण निम्नवत् है



क्र. सं.	प्रजाति	दाने का रंग आकार	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)	कीट/रोग अवरोधी	उपयुक्त क्षेत्र
1.	पी.के. 472	पीला, गोल, बड़ा	120–125	30–35	पीला चित्रवर्ण अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र. विशेषकर बुन्देलखण्ड क्षेत्र
2.	जे.एस. 71–5	पीला छोटा	100–105	25–28	पत्ती छेदक, कीट मध्यम अवरोधी	बुन्देलखण्ड क्षेत्र
3.	पी.एस. 564	पीला मध्यम	115–120	25–30	पीला चित्रवर्ण अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
4.	पी.के. 262	पीला, गोल बड़ा	120–125	28–30	पीला चित्रवर्ण तथा जीवाणु झुलसा	तराई क्षेत्र तथा भासर
5.	जे.एस. 2	—	98–105	25–30	झुलसा अवरोधी	बुन्देलखण्ड
6.	जे.एस. 93–5	—	102–108	25–30	जड़ गलन पत्ती धब्बा अवरोधी	बुन्देलखण्ड
7.	जे.एस. 72–44	—	105–110	20–28	मध्यम अवरोधी	बुन्देलखण्ड
8.	जे.एस. 75–46	—	105–110	25–30	झुलसा अवरोधी	बुन्देलखण्ड
9.	पूसा 20	—	110–115	30–32	अच्छी अंकुरण क्षमता	बुन्देलखण्ड
10.	पी.के. 416	पीला मध्यम	115–120	30–35	ब्लाइट से मध्यम अवरोधी पीला विषाणु व जीवाणु झाँका अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
11.	पी.एस. 1024	पीला गोल	115–120	30–35	पीला चित्रवर्ण रोग अवरोधी	तदैव
12.	पूसा–16	पीला मध्यम	110–115	25–35	पीला चित्रवर्ण मध्यम अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
13.	पी. एस. 1042	पीला, गोल, बड़ा	120–125	30–35	पीला चित्रवर्ण अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
14.	जे.एस. 335	पीला मध्यम	100–110	30–35	झुलसा अवरोधी	बुन्देलखण्ड हेतु
15.	एम.ए.यू.एस. 47		85–90	25–30	झुलसा अवरोधी	बुन्देलखण्ड
16.	एन.आर.सी. 37		100–105	25–30	झुलसा अवरोधी	बुन्देलखण्ड
17.	जे.एस. 20–34 मध्यम साइज		86–88	20–32	चारकोल रॉट अवरोधी, स्टेम फ्लाई मध्यम अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	दाने का रंग आकार	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)	कीट/रोग अवरोधी	उपयुक्त क्षेत्र
18.	जे.एस. 20-98	गोल मध्यम पीले बीज	95-101	20-24	वाई.एम.वी., चारकोल रॉट, सम्पूर्ण उ.प्र. राइजोकटोरिया एरियल ब्लाइट अवरोधी	
19.	पंत सोयाबीन - 26	-	115-120	14-20	वाई.एम.वी., एस.एम.वाई., बी.एल.वी. के प्रति उच्च अवरोधी	
20.	जवाहर सोयाबीन-20-116	-	97-101	23-24	वाई.एम.वी., चारकोल रॉट, एस.एम.वी., रस्ट, आर.ए.बी. स्टेम बोरर, स्टेम फ्लाई अवरोधी	

2. **बीज दर :** 75-80 किग्रा. बीज प्रति हे. का प्रयोग किया जाय। अंकुरण प्रतिशत 75-80 से कम नहीं होना चाहिए।

3. **बीज उपचार :** बोने से पूर्व प्रति किग्रा. बीज को 2 ग्राम थीरम एवं 1.0 ग्राम कार्बन्डाजिम 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण के मिश्रण से शोधित कर लेना चाहिए अथवा कार्बन्डाजिम 2.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधित करना चाहिए। बोने से पहले बीज को सोयाबीन के विशिष्ट राइजोबियम कल्वर से भी उपचारित करें। 200 ग्राम का एक पैकेट 10 किग्रा. बीज के लिए पर्याप्त होता है। एक पैकेट कल्वर को 10 किग्रा. बीज के ऊपर छिड़क कर हल्के हाथ से मिलायें जिससे बीज के ऊपर एक हल्की पर्त बन जाये। इस बीज की बुवाई तुरन्त करें। तेज धूप से कल्वर के जीवाणु के मरने की आशंका रहती है, ऐसे खेतों में जहाँ सोयाबीन पहली बार या काफी समय बाद बोई जा रही हो, कल्वर का प्रयोग अवश्य करें।

4. **बुवाई :** मैदानी क्षेत्रों में इसकी बुवाई का उपयुक्त समय 20 जून से 10 जुलाई तक है। बुवाई 45 सेमी. की दूरी पर लाइनों में करें। बीज से बीज की दूरी 3 से 5 सेमी. रखें। बीज को 3 से 4 सेमी. से अधिक गहरा नहीं बोना चाहिए।

5. **उर्वरकों का प्रयोग एवं भूमि शोधन :** उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जाय। यदि मृदा परीक्षण नहीं कराया गया है तो उन्नतशील प्रजातियों के लिए नत्रजन 20 किग्रा., फास्फोरस 80 किग्रा. तथा पोटाश 40 किग्रा. प्रति हे. की दर से प्रयोग करें। खाद की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई में हल के पीछे 6-7 सेमी. की गहराई पर डाली जाय। फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा.मात्रा प्रति हेक्टेयर 60-75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें। दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूण्डी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1 प्रतिशत डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60-75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए। बोने के 30 से 35 दिन बाद सोयाबीन का एक या दो पौध उखाड़कर देखा जाय कि जड़ों में ग्रन्थियां पड़ी हैं अथवा नहीं। यदि ग्रन्थियां न पड़ी हों तो 30 किग्रा. नत्रजन प्रति हे. की दर से फूल आने के एक सप्ताह पहले प्रयोग किया जाय। गोबर की खाद डालने से जड़ों में ग्रन्थियां अच्छी बनती हैं। 200 किग्रा. जिस्सम का प्रयोग आवश्यक है।

7. **खरपतवार नियन्त्रण :** खरपतवारों के नियन्त्रण हेतु निम्न रसायनों का प्रयोग करना चाहिए –

क्र.सं.	शाकनाशी का नाम	मात्रा प्रति हे.	अभियुक्ति
1.	फ्लूकलोरेलिन 45 ई.सी.	2.25 लीटर	
2.	मेटोलाक्लोर 50 ई.सी.	2.00 लीटर	बुवाई के दो दिनों में
3.	क्लोरीम्यूरान 25 ई.सी.	30 - 40 मिली.	बुवाई के दो दिनों में (घासकुल चौड़ी पत्ती एवं मेथी कुल के खरपतवार का प्रभावी नियन्त्रण)

क्र.सं.	शाकनाशी का नाम	मात्रा प्रति हे.	अभियुक्ति
4.	फिनॉक्साप्रोप—पी—इथाइल 9.3 प्रतिशत ई.सी.	1111 मिली. प्रति हे. 800-1000 मिली.	बुवाई के 20-25 दिनों बाद
5.	किवजैलोफोप—पी—टेरफलूराइल 4.4 ई.सी. (केवल धास कुल के खरपतवारों का नियन्त्रण)	750-1000 मिली.	बुवाई के 20-25 दिनों बाद
6.	इमेजाथापर 10 ई.सी. पानी में मिलाकर 10-20 दिनों बाद छिड़काव करें	750-1000 मिली.	

8. सिंचाई एवं जल निकास : सोयाबीन वर्षा आधारित फसल है। यदि वर्षा न हो तो फूल एवं फली आने पर सिंचाई करें। खेत में जल—निकास का प्रबन्ध करना चाहिए।

फसल सुरक्षा कीट :

1. फली बेधक कीट :

पहचान : इनकी सूँड़ी फलियों को खाकर नुकसान पहुँचाती हैं।

उपचार : इस कीट की रोकथाम के लिए निम्न कीटनाशकों में से किसी एक का छिड़काव करना चाहिए।

क्लोरपायरीफास (20% ई.सी.) 1.5 लीटर प्रति हे. या क्यूनालफॉस (25% ई.सी.) 1.5 लीटर प्रति हे.।

2. सेमीलूपर कीट :

पहचान : इसकी सूँड़ियाँ शीघ्र पकने वाली प्रजातियों में फूल निकलते समय उसकी कलियों को खा जाती हैं। प्रथम फूल को समाप्त होने पर दुबारा पुष्ट बनते हैं, जिनमें फलियाँ बनने पर उनमें दाने नहीं बनते।

उपचार : फसल में फूल निकलना शुरू हों तो क्यूनालफॉस 25% ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।

3. बिहार रोमिल सूँड़ी :

पहचान : प्रारम्भिक अवस्था में सूँड़िया एकत्र होकर पत्तियों की सतह पर रहकर हरित पदार्थ खुरचकर खाती है। बाद में पूरे खेत में बिखरकर पत्तियों को खाकर पौधों को नंगा कर देती हैं।

उपचार :

1. प्रारम्भिक अवस्था में गिडारें झुण्ड में पत्तियों पर रहती हैं। पत्तियां तोड़कर नष्ट कर दें।

2. क्यूनालफॉस 25% ई.सी. 1.5 लीटर का 500-600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. 2 से 3 बार आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

4. गर्डिल बिटिल (सोयाबीन) :

पहचान : वयस्क मादा तने अथवा टहनियों पर दो छल्ले बनाती हैं, जिसके बीच से पीले रंग के अण्डे देती हैं। अण्डे से निकली गिडार अन्दर—अन्दर खाती हैं। पौधा सूख जाता है।

उपचार :

1. ग्रीष्मकालीन जुताई करनी चाहिए।

2. सम्भावित क्षेत्रों में बुवाई के समय कार्बोफ्यूरान 3 सी.जी. 30 किग्रा. अथवा इथियान 50% ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हे. या प्रोफेनोफास 50 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर प्रति हे. 500 लीटर पानी में।

रोग:

सोयाबीन का पीला चित्रवर्ण रोग :

पहचान : यह बीमारी वाइरस द्वारा होती है, जिसे सफेद मकर्खी फैलाती हैं। प्रभावित पौधों की पत्ती पीली और चित्तीदार दिखाई देती हैं।

उपचार :

1. रोग रोधी प्रजातियां जैसे पी.के.-416, 472, पी.एस.-564, पी.के.-262, पी.के.-327, पी.के.-1024 को बोयें।
2. इसकी रोकथाम हेतु जमाव के बाद रोग के लक्षण दिखाई पड़ने पर प्रभावित पौधों को उखाड़कर जमीन में दबा दें निम्न में से किसी एक कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए :—
(क) आक्सीडिमेटान—मिथाइल — 50% ई.सी. 1 लीटर प्रति हेक्टेयर या
(ख) डाईमिथोएट (30% ई.सी.) 1 लीटर प्रति हे.।

सूत्रकृमि :

1. सूत्रकृमि जानित बीमारियाँ रोकने के लिए हरी खाद गर्मी की गहरी जुताई या खलियों की खाद का उचित मात्रा में प्रयोग किया जाये।
2. नीम की खली 15—20 कुन्तल / हे. की दर से प्रयोग करें।



12. तिल की उन्नतशील खेती

प्रदेश में तिल की खेती प्रमुखतया बुन्देलखण्ड की मुख्य रूप से रांकड़, पड़ुवा एवं अच्छे जल निकास वाली कांवर, मार भूमि में तथा मिर्जापुर, फतेहपुर, प्रयागराज, आगरा, मैनपुरी आदि जनपद में शुद्ध एवं मिलवां खेती के रूप में की जाती है। मैदानी क्षेत्रों में इसे ज्वार, बाजरा तथा अरहर के साथ बोते हैं। निम्न सघन पद्धतियां अपनाकर इसका उत्पादन बढ़ाया जा सकता है—

- खेत की तैयारी :** अच्छी पैदावार के लिए उत्तम जल निकास वाली भूमि की आवश्यकता होती है। एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व 2-3 जुताईयां कल्टीवेटर अथवा देशी हल से करना चाहिए। जुताई के समय 5 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर खेत में मिलाना चाहिए।
- भूमि शोधन :** फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोर्डर्मा 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा.मात्रा प्रति हेक्टेयर 60-75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूण्डी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60-75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।
- उन्नतशील प्रजातियाँ :**

प्रजाति	विशेषता	पकने की अवधि (दिनों में)	तेल प्रतिशत	उपज (कु. / हे.)	उपयुक्त क्षेत्र
टाइप-4	फलियाँ एकल, सन्मुखी बीज सफेद	90-100	40-42	6-7	मैदानी क्षेत्र
टाइप-12	फलियाँ एकल, सन्मुखी बीज सफेद	85-90	40-45	5-6	मध्य एवं पश्चिमी क्षेत्र
टाइप-13	फलियाँ एकल, सन्मुखी बीज सफेद	90-95	40-45	6-7	बुन्देलखण्ड क्षेत्र
टाइप-78	फलियाँ एकल, सन्मुखी	80-85	45-48	6-8	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
शेखर	फलियाँ एकल, सन्मुखी	80-85	45-48	6-8	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
प्रगति	फलियाँ एकल, सन्मुखी	80-85	45-48	7-9	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
तरुण	फलियाँ एकल, सन्मुखी	80-85	50-52	8-9	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
आर.टी. 351	बहुफली एवं सन्मुखी	80-85	50-52	9-10	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
आर.टी. 346	बहुफली एवं सन्मुखी	85-90	52	9-10	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
गुजरात-तिल-6	सफेद बीज, रुट रॉट, पाउडरी मिल्ड्यु अवरोधी	87	49.68	10.10	—

- बीज दर एवं शोधन :** एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 3-4 किग्रा. स्वच्छ एवं स्वस्थ बीज का प्रयोग करें। बीज जनित रोगों से बचाव हेतु 2 ग्राम थीरम एवं 1 ग्राम कार्बोन्डाजिम प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधन हेतु प्रयोग करें।
- बुआई का समय एवं विधि :** बुआई का उचित समय जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई का दूसरा पखवारा है। पश्चिमी उठोप्रो में इससे पूर्व बुआई करने से फाइलोडी रोग लगने का भय रहता है। बुआई हल के पीछे लाइनों में 30 से 45 सेमी. की दूरी पर करें। बीज को कम गहराई पर बोयें। बीज का आकार छोटा होने के कारण बीज को रेत, राख या सूखी हल्की बलुई मिट्टी में मिलाकर बोएं।
- संतुलित उर्वरकों का प्रयोग :** उर्वरकों का प्रयोग भूमि परीक्षण के आधार पर करें। यदि परीक्षण न कराया गया हो तो 30 किग्रा. नत्रजन 20 किग्रा. फास्फोरस तथा 20 किग्रा. गन्धक प्रति हे. की दर से प्रयोग करें। राकड़ तथा

भूँड़ भूमि में 20 किग्रा. पोटाश प्रति हे. का भी प्रयोग करें। नत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस व पोटाश तथा गंधक की पूरी मात्रा, बुवाई के समय बेसल ड्रेसिंग के रूप में तथा नत्रजन की शेष मात्रा निराई गुड़ाई के समय प्रयोग करें। फसल में पुष्पावस्था तथा फली बनते समय 2 प्रतिशत यूरिया का घोल बनाकर छिड़काव करने से पैदावार में आशातीत वृद्धि होगी।

7. **निराई—गुड़ाई :** प्रथम निराई गुड़ाई, बुवाई के 15–20 दिनों बाद दूसरी निराई 30–35 दिन बाद करें। निराई—गुड़ाई करते समय पौधों की थिनिंग (विरलीकरण) करके उनकी आपस की दूरी 10 से 12 सेमी. कर लें।
8. **सिंचाई :** जब पौधों में 50–60 प्रतिशत फली लग जाय और उस समय नमी की कमी हो तो एक सिंचाई करना आवश्यक है।
9. **कटाई—मङ्गाई :** फसल की कटाई उचित अवस्था पर करके बण्डल बनाकर खलिहान में सीधा खड़ा करके रखें। बण्डल सूख जाने पर पक्के फर्श या तिरपाल पर ही तिल की मङ्गाई करें। गोबर से लेप खलिहान में मङ्गाई न करें, इससे निर्यात की गुणवत्ता में कमी आ जाती है।
10. **फसल सुरक्षा :**

कीट :

1. **पत्ती व फल की सूण्डी :** इनकी सूँडियाँ कोमल पत्तियों तथा फलियों को खाती हैं तथा जाला बनाकर बाँध देती हैं।
2. **जैसिड :** पत्तियों का रस चूसते हैं तथा कीट के अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ सूख कर गिर जाती हैं।

रोकथाम : रोकथाम के लिए निम्न में से कोई एक कीटनाशी रसायन का छिड़काव करना चाहिए —

- | | | |
|--|---|--------------------------|
| (1) डाइमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1.0 ली./हे0 | — | 500 लीटर पानी में घोलकर। |
| (2) क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी. 1.25 ली./हे0 | — | 500 लीटर पानी में घोलकर। |
| (3) आक्सीडिमेटान—मिथाइल 50% ई.सी. 1 ली./हे. | — | 500 लीटर पानी में घोलकर। |

रोग :

1. **फाइलोडी —** यह रोग माइकोप्लाजमा द्वारा होता है। इस रोग में पौधों का पुष्प विन्यास पत्तियों के विकृत रूप में बदलकर गुच्छेदार हो जाता है। इस रोग का वाहक कीट फुदका है।

उपचार : 1. तिल की बुवाई समय से पहले न की जाये।

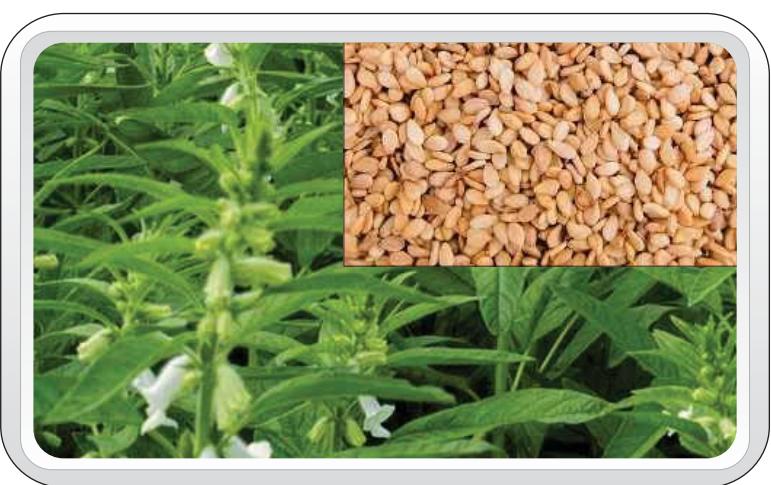
2. आक्सीडिमेटान—मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. 1 ली./हे. की दर से छिड़काव करना चाहिए।

2. **फाइटोथेरा झुलसा :** इस रोग में पौधों के कोमल भाग व पत्तियाँ झुलस जाती हैं।

उपचार : इसकी रोकथाम हेतु कॉपर आक्सीक्लोराइड 3.0 किग्रा. या मैंकोज़ेब 2.5 किग्रा. प्रति हे. की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए।

मुख्य बिन्दु :

- (1) बुवाई 10–20 जुलाई तक अवश्य करें।
- (2) पानी के निकास की समुचित व्यवस्था करें।
- (3) बुआई के 15–20 दिन बाद विरलीकरण अवश्य करें।
- (4) 20 किग्रा. गन्धक या 200 किग्रा. जिप्सम का प्रयोग करें।



13. तोरिया की उन्नतशील खेती

खेत की तैयारी :

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताई देशी हल से करके पाटा देकर मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए।

भूमि शोधन :

फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा.मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1 प्रतिशत डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ :

क्र.सं.	प्रजातियाँ	उत्पादन क्षमता (कु. / हें.)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र
1.	टा.-36 (पीली)	10–12	95–100	मध्य उत्तर प्रदेश
2.	टा.-9 (काली)	12–15	90–95	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
3.	भवानी (काली)	10–12	75–80	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
4.	पी.टी.-303 (काली)	15–18	90–95	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
5.	पी.टी.-30 (काली)	14–16	90–95	उ.प्र. का तराई क्षेत्र
6.	तपेश्वरी	14–15	90–91	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
7.	आजाद चेतना	12–14	90–95	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश

बीज दर : 4 किग्रा. बीज एक हेक्टर क्षेत्रफल की बुवाई के लिए पर्याप्त होता है।

बुवाई का समय :

तोरिया के बाद गेहूँ की फसल लेने के लिए इनकी बुवाई सितम्बर के प्रथम पखवारे में समय मिलते ही अवश्य कर लेनी चाहिए, परन्तु भवानी प्रजाति की बुवाई सितम्बर के दूसरे पखवारे में ही करें।

उर्वरक की मात्रा :

उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुति के आधार पर किया जाना सर्वोत्तम है। यदि मिट्टी परीक्षण सम्भव न हो पाये तो :

- असिंचित क्षेत्रों में 50 किग्रा. नत्रजन तथा 20 किग्रा. फास्फोरस प्रति हे. की दर से अन्तिम जुताई के समय प्रयोग करना चाहिए।
- सिंचित क्षेत्रों में 100 किग्रा. नत्रजन तथा 50 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टर देना चाहिए। फास्फेट का प्रयोग सिंगिल सुपर फास्फेट के रूप में अधिक लाभदायी होता है क्योंकि इससे 12 प्रतिशत गन्धक की भी उपलब्धता हो जाती है।

सिंगिल सुपर फास्फेट के न मिलने पर 2 कुन्तल जिप्सम प्रति हे. का प्रयोग करें। फास्फोरस की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा अन्तिम जुताई के समय नाई या चोंगे द्वारा बीज से 2–3 सेमी. नीचे प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई (बुवाई के 25 से 30 दिन बाद) टाप ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए। अधिकतम उपज के लिए 90 किग्रा. नत्रजन तक दिया जा सकता है।

बुवाई की विधि :

बुवाई लाइनों में करनी चाहिए। बुवाई के बाद बीज ढकने के लिए हल्का पाटा लगा देना चाहिए। बुवाई 30 सेमी. की दूरी पर 3 से 4 सेमी. की गहराई पर कतारों में करना चाहिए।

निराई—गुड़ाई :

बुवाई के 15 दिन के अन्दर घने पौधों को निकालकर पौधों की आपसी दूरी 10 से 15 सेमी. कर देनी चाहिए तथा खरपतवार नष्ट करने के लिए 35 दिन की अवधि पर एक निराई—गुड़ाई भी कर देनी चाहिए। खरपतवार नष्ट करने के लिए 3.3 लीटर प्रति हे. पेन्डीमेथलीन 30 प्रतिशत ई.सी. का प्रयोग बुवाई के 3 दिन के अंदर प्रयोग करें।

सिंचाई :

तोरिया फूल निकलने तथा दाना भरने की अवस्थाओं पर जल की कमी के प्रति विशेष संवेदनशील है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए इन दोनों अवस्थाओं पर सिंचाई करना आवश्यक है। यदि एक ही सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो वह फूल निकलने पर (बुवाई के 25–30 दिन बाद) करें।

फसल सुरक्षा :

बीज शोधन :

बीज जनित रोगों से सुरक्षा के लिए यथासम्भव संशोधित उपचारित एवं प्रमाणित बीज ही बोना चाहिए। यदि यह सम्भव न हो तो निम्नांकित विधि से बीजोपचार करके बुवाई करना चाहिए। बीज जनित रोगों से सुरक्षा के लिए 2.5 ग्राम थीरम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज को उपचारित करके बोयें—

खड़ी फसल पर कीट रोग उपचार :

अ— क्षेत्र :

1. अल्टरनेरिया झुलसा :

पहचान : इस रोग में पत्तियों तथा फलियों पर गहरे कल्थर्ड रंग के धब्बे बनते हैं, जिसमें गोल—गोल छल्ले केवल पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई देते हैं।

उपचार : झुलसा सफेद गेरुर्ड तथा तुलासिता रोग की रोकथाम हेतु निम्नलिखित में से किसी एक रसायन का छिड़काव प्रति हेक्टर 500–600 लीटर पानी में मिलाकर करें—

- ◆ मैकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा।
- ◆ जीरम 80 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा।
- ◆ जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2.5 किग्रा।
- ◆ जीरम 2 प्रतिशत ई.सी. के 3 लीटर।

2. सफेद गेरुई :

पहचान : इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफोले बनते हैं और बाद में पुष्प विन्यास विकृत होता है।

उपचार : इसकी रोकथाम भी उपयुक्त रसायनों से की जा सकती है।

नोट : 30 दिन की फसल पर एक अवरोधक छिड़काव करना लाभदायक होगा।

ब— कीट :

1. आरा मक्खी :

पहचान : इसकी गिडारें सरसों कुल की सभी फसलों को हानि पहुँचाती हैं, गिडारें काले रंग की होती है, जो पत्तियों को बहुत तेजी से किनारे से अथवा भिन्न आकार के छेद बनाती हुई खाती हैं, जिससे पत्तियां बिल्कुल छलनी हो जाती हैं।

उपचार : निम्नलिखित किसी एक कीटनाशक रसायन का प्रति हेक्टर की दर से प्रयोग करें—

- ◆ मैलाथियान 50 ई.सी. 1.5 लीटर।
- ◆ क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत धूल 20 किग्रा।

2. माँहूँ :

पहचान : यह छोटा, कोमल शरीर वाला, हरे मटमैले रंग का कीट है, जिसके झुण्ड पत्तियों, फूलों उठलों, फलियों आदि पर चिपके रहते हैं एवं रस चूसकर पौधे को कमजोर कर देते हैं।

उपचार : निम्नलिखित कीटनाशक रसायन की संस्तुत मात्रा प्रति हे. की दर से प्रयोग करें—

- ◆ क्राइसोपर्ला कार्निया के 50000 अण्डे प्रति हे. 10 से 15 दिन के अन्तराल पर दो बार प्रयोग करें।
- ◆ आक्सीडिमेटान मिथाइल 25 ई.सी. 1 लीटर या
- ◆ फेनीट्रोथियान 50 ई.सी. 1 लीटर या
- ◆ क्लोरपायरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. 0.75 लीटर या
- ◆ मोनोक्रोटोफास 36 प्रतिशत ई.सी. 0.75 लीटर
- ◆ कवीनॉलफास 25 ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हे.।

3. बालदार गिडार (भुड़ली) :

पहचान : इस भुड़ली के शरीर का रंग पीला अथवा नारंगी होता है परन्तु सिर पर पीछे का भाग काला होता है तथा शरीर पर घने काले बाल होते हैं।

उपचार : इसकी रोकथाम के लिए निम्नलिखित उपचार करें—

- (क) प्रथम अवस्था में गिडार झुण्ड में पाई जाती है। उस समय उन पत्तियों को तोड़कर एक बाल्टी मिट्टी के तेलयुक्त पानी में डाल दिया जाय, जिससे गिडार नष्ट हो जाये।

खरीफ फसलों की खेती

- (ख) विभिन्न अवस्थाओं की गिड़ारों की रोकथाम हेतु निम्नलिखित में से किसी एक कीटनाशक रसायन का प्रति हेक्टेयर बुरकाव / छिड़काव किया जाये—
- ◆ क्लोरपायरीफास 20 ई.सी. 1.25 लीटर।
 - ◆ क्वीनालफास 25 ई.सी. 1.25 लीटर।

कटाई—मङ्गाई :

जब 75 प्रतिशत फलियां सुनहरे रंग की हो जायें फसल को काटकर, सुखाकर व मङ्गाई करके बीज अलग करना चाहिए। देर करने से बीजों को झङ्गने की आशंका रहती है। बीज को खूब सुखाकर ही भण्डारण करना चाहिए। जैसे ही फलियां सुनहरी पीले रंग की पड़ने लगे फसल काट ली जाय। इसका कोई कुप्रभाव उपज व तेल पर नहीं पड़ेगा।

मुख्य बिन्दु :

1. बुवाई 15–20 दिन के भीतर विरलीकरण अवश्य करें।
2. पंक्तियों में समय से बुवाई सुनिश्चित करें।
3. 25–30 दिन की अवधि पर पहली सिंचाई करें।
4. आरा मक्खी एवं माहूं से बचाव अवश्य करें।



14. बाजरा की उन्नतशील खेती

उत्तर प्रदेश में क्षेत्र की दृष्टि से बाजरा का स्थान गेहूँ धान और मक्का के बाद आता है। कम वर्षा वाले स्थानों के लिए यह एक अच्छी फसल है। 40 से 50 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। बाजरा की खेती मुख्यतः आगरा, बरेली एवं कानपुर मण्डलों में होती है।

निम्न सघन पद्धतियाँ अपनाकर उत्पादकता में पर्याप्त बढ़ोत्तरी की जा सकती है –

1. प्रजातियों का चयन : अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु उन्नतशील प्रजातियों का शुद्ध बीज ही बोना चाहिए। बुवाई के समय एवं क्षेत्र अनुकूलता के अनुसार प्रजाति का चयन करें। विभिन्न प्रजातियों की विशेषताएं तथा उपज क्षमता निम्न तालिका में दर्शायी गयी है –

उन्नतशील प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिनों में)	ऊँचाई (सेमी.)	दाने की उपज (कु. / हे.)	सूखे चारे की उपज (कु. / हे.)	बाली के गुण
अ.	संकुल प्रजातियाँ :					
1.	आई.सी.एम.बी-155	80-100	200-250	18-24	70-80	लम्बी, मोटी
2.	डब्लू.सी.सी.-75 पी.सी.- 701	85-90	185-210	18-20	85-90	मध्यम, लम्बी, ठोस
3.	न.दे.एफ.बी.-3 (नरेन्द्र चारा बाजरा-3) नोटीफाइड जून 2011	100-110	220-230	18-22	100-125	लम्बी, मोटी, मध्यम
4.	आई.सी.टी.पी.-8203	70-75	70-95	16-23	60-65	लम्बी, ठोस
5.	राज-171	70-75	150-210	18-20	50-60	पतली / लम्बी
6.	धनशक्ति	75-80	–	20-22	–	–
ब.	संकर प्रजातियाँ					
1.	पूसा-322	75-80	150-210	25-30	40-50	मध्यम ठोस
2.	पूसा-23	80-85	180-210	17-23	40-50	मध्यम ठोस
3.	आई.सी.एम.एच.-451 कावेरी (के.एस.बी.)	85-90	175-180	20-23	50-60	मोटा ठोस
4.	86एम84	80-85	–	38-50	111.00	डाउनी मिल्ड्यू एवं ब्लास्ट अवरोधी

2. भूमि का चुनाव : बाजरा के लिए हल्की या दोमट बलुई मिट्टी उपयुक्त होती है। भूमि का जल निकास उत्तम होना आवश्यक है।

3. भूमि शोधन : फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60-75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60-75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

4. खेत की तैयारी : पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले इल से तथा अन्य 2—3 जुताई देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करके खेत तैयार कर लेना चाहिए।
5. बुवाई का समय तथा विधि : बाजरे की बुवाई जुलाई के मध्य से अगस्त के मध्य तक सम्पन्न कर लें। बुवाई 50 सेमी. की दूरी पर 4 सेमी. गहरे कँड़ में हल के पीछे करें।
6. बीज दर : 4—5 किग्रा. प्रति हें।
7. बीज का उपचार : यदि बीज उपचारित नहीं हैं तो बोने से पूर्व एक किग्रा. बीज को थीरम के 2.50 ग्राम से शोधित कर लेना चाहिए। अरगट के दानों को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोकर निकाला जा सकता है।
8. उर्वरकों का प्रयोग : मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करें। यदि मृदा परीक्षण के परिणाम उपलब्ध न हों तो संकर प्रजाति के लिए 80—100 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस एवं 40 किग्रा. पोटाश तथा देशी प्रजाति के लिए 40—50 किग्रा. नत्रजन, 25 किग्रा. फास्फोरस तथा 25 किग्रा. पोटाश प्रति है। प्रयोग करें। फास्फोरस पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई से पहली बेसल ड्रेसिंग और शेष नत्रजन की आधी मात्रा टॉपड्रेसिंग के रूप में जब पौधे 25—30 दिन के हो जाने पर देनी चाहिए।
9. छंटनी (थिनिंग) तथा निराई—गुड़ाई : बाजरा की खेती में निराई—गुड़ाई का अधिक महत्व है। निराई—गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही आक्सीजन का संचार होता है, जिससे वह दूर तक फैल कर भोज्य पदार्थ को एकत्र कर पौधों को देती है। पहली निराई जमाव के 15 दिन बाद कर देना चाहिए और दूसरी निराई 35—40 दिन बाद करनी चाहिए।

बाजरा में खरपतवारों को नष्ट करने के लिए —

- ◆ एट्राजीन 2 किया, प्रति हे. अथवा 800 ग्राम प्रति एकड़ मध्यम से भारी मृदाओं में तथा 1.25 किग्रा. प्रति हे. अथवा 500 ग्राम प्रति एकड़ हल्की मृदा में बुवाई के तुरन्त बाद 2 दिनों में 500 लीटर/हे. अथवा 200 लीटर/एकड़ पानी में मिलाकर स्प्रे करना चाहिए।
 - ◆ हार्डी खरपतवारों जैसे कि वनपटा (ब्रेचेरिया रेप्टान्स), रसभरी (कोमेलिया बैनोलेन्सिस) को नियन्त्रित करने हेतु बुवाई के दो दिनों के अन्दर एट्राजीन 600 ग्राम + पेण्डीमेथिलीन 30 ई.सी.1 लीटर प्रति एकड़ अच्छी तरह से मिलाकर 200 लीटर पानी के साथ प्रयोग करने पर आशातीत परिणाम आते हैं।
10. सिंचाई : खरीफ में फसल की बुवाई होने के कारण वर्षा का पानी ही उसके लिए पर्याप्त होता है। इसके अभाव में एक या दो सिंचाई फूल आने पर आवश्यकतानुसार करनी चाहिए।

11. फसल सुरक्षा

रोग :

1. बाजरा का अरगट :

पहचान : यह रोग केवल भुट्टों के कुछ दानों पर ही दिखाई देता है इसमें दाने के स्थान पर भूरे काले रंग के सींक के आकार की गांठे बन जाती है, जिन्हें स्केलरेशिया कहते हैं। संक्रमित फूलों में फफूँद विकसित होती है जिनमें बाद में मधु रस निकलता है। प्रभावित दाने मनुष्यों एवं जानवरों के लिए हानिप्रद होते हैं।

उपचार:

- ◆ खेत की गहरी जुताई करें।
- ◆ फसल चक्र सिद्धान्त का प्रयोग करें।
- ◆ फसल एवं खरपतवारों के अवशेषों को नष्ट करें।
- ◆ सिंचाई का समुचित प्रबन्ध करें।
- ◆ उन्नतशील / संस्तुत प्रजातियों की ही बुवाई करें।

- ◆ बीजशोधन हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.एस. 2.5 ग्राम अथवा कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 ग्राम अथवा मेटालैकिसल 35 प्रतिशत डब्लू.एस. की 6 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधित करके बोना चाहिए।
- ◆ अप्रमाणित बीजों को 20 प्रतिशत नमक के घोल से शोधित कर साफ पानी से 4—5 बार धोकर बुवाई के लिए प्रयोग करना चाहिए।
- ◆ निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हे. बुरकाव / 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए —
→ जिरम 80 प्रतिशत डब्लू.पी. 20 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2.0 किग्रा. अथवा मैकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा।

2. कण्ठुआ :

पहचान : कन्धुआ रोग से बीज आकार में बड़े गोल अण्डाकार हरे रंग के होते हैं, जिसमें काला चूर्ण भरा होता है।

उपचार :

- ◆ खेत की गहरी जुताई करें।
- ◆ फसल चक्र सिद्धान्त का प्रयोग करें।
- ◆ फसल एवं खरपतवारों के अवशेषों को नष्ट करें।
- ◆ सिंचाई का समुचित प्रबन्ध करें।
- ◆ उन्नतशील / संस्तुत प्रजातियों की ही बुबाई करें।
- ◆ रोग ग्रसित बालियों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ बीजशोधन हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.एस. 2.5 ग्राम अथवा कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2 ग्राम अथवा मेटालैकिसल 35 प्रतिशत डब्लू.एस. की 6 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।
- ◆ निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन का छिड़काव प्रति हे. बुरकाव / 500—600 लीटर पानी में घोलकर करना चाहिये :—
→ जिरम 80 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा. अथवा मैकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा।

3. हरित बाली रोग :

पहचान : इनमें बाजरा की बालियों के स्थान पर टेढ़ी—मेढ़ी हरी—हरी पत्तियों सी बन जाती हैं, जिससे पूर्ण बाली झाड़ू के समान दिखाई देती है। पौधे बैने रह जाते हैं।

उपचार :

- ◆ खेत की गहरी जुताई करें।
- ◆ फसलचक्र सिद्धान्त का प्रयोग करें।
- ◆ फसल एवं खरपतवारों के अवशेषों को नष्ट करें।
- ◆ सिंचाई का समुचित प्रबन्ध करें।
- ◆ उन्नतशील / संस्तुत प्रजातियों की ही बुबाई करें।
- ◆ रोग के लक्षण दिखाई देते ही कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा थायोफिनेट मिथाइल 70 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2 ग्राम मात्रा प्रति ली. पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ अत्यधिक प्रकोप की दशा में ग्रसित पौधों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।

कीट

1. दीमक

- ◆ खड़ी फसल में प्रकोप होने पर सिंचाई के पानी के साथ क्लोरपाइरिफास 20 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली0 प्रति हे. की दर से प्रयोग करें।

2. सूत्रकृमि :

- ◆ रसायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई से एक सप्ताह पूर्व खेत में 30–35 किग्रा. कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत सी.जी. प्रति. हे. फैलाकर मिला दे।

3. तना बेधक कीट :

- ◆ निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन का प्रति हे0 बुरकाव/छिड़काव 500 600 लीटर पानी में घोलकर करना चाहिए –
→ कार्बोफ्यूरान 3% सी.जी. 20 किग्रा. अथवा डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1 ली0 प्रति हे. अथवा क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी. 1.50 लीटर।

4. प्ररोह मक्खी :

- ◆ निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हे. बुरकाव/छिड़काव 500–600 लीटर पानी में घोलकर करना चाहिए –
→ कार्बोफ्यूरान 3% सी.जी. 20 किग्रा. अथवा डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1 ली. प्रति हे. अथवा क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी. 1.50 लीटर।

मुख्य बिन्दु :

- ◆ क्षेत्र की अनुकूलता के अनुसार संस्तुत प्रजाति का शुद्ध बीज ही प्रयोग करें।
- ◆ उपचारित बीज बोएं।
- ◆ मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करें।
- ◆ फूल आने पर वर्षा के अभाव में पानी अवश्य दे।
- ◆ कीट/बीमारियों का समय से नियंत्रण अवश्य करें।



15. ज्वार की उन्नतशील खेती

ज्वार की खेती मुख्यतयः प्रदेश के झांसी, हमीरपुर, जालौन, बांदा, फतेहपुर, प्रयागराज, फर्रुखाबाद, मथुरा एवं हरदोई जनपदों में होती है।

1. प्रजातियों का चयन : अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु उन्नतशील प्रजातियों का शुद्ध बीज ही बोना चाहिए। बुवाई के समय क्षेत्र अनुकूलता के अनुसार प्रजाति का चयन करें। विभिन्न क्षेत्रों के लिए संस्तुत प्रजातियों की विशेषताओं तथा उपज क्षमता तालिका में दर्शायी गयी हैं।

2. खेत की तैयारी : बलुई दोमट अथवा ऐसी भूमि जहाँ जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो, ज्वार की खेती के लिए उपयुक्त होती है। बुंदेलखण्ड क्षेत्र में ज्वार की खेती प्रायः मध्यम भारी एवं ढालू भूमि में की जाती है। मिट्टी पलटने वाले हल से पहली जुताई तथा अन्य दो—तीन जुताई देशी हल से करके खेत को भली भांति तैयार कर लेना चाहिए।

3. भूमि शोधन : फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60—75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुआई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

बुवाई :

- (अ) समय : ज्वार की बुवाई हेतु जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक का समय अधिक उपयुक्त है।
- (ब) बीज-दर : 1 हे. क्षेत्र की बुवाई के लिए 10-12 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है।
- (स) बुवाई : 7—8 किग्रा. प्रति हे.

उन्नतशील प्रजातियां :

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिन में)	ऊँचाई सेमी.	दानों की उपज (कु. / हे.)	सूखे चारे की उपज (कु. / हे.)	भुट्टे के गुण	उपयुक्त क्षेत्र
	संकुल प्रजातियां :						
1.	वर्षा	125—130	200—220	25—30	100—110	दो दिनिया, हल्का बादामी	बुंदेलखण्ड को छोड़कर समस्त उ.प्र.
2.	सी.एस.वी.—13	105—111	160—180	22—27	100—110	एक दिनिया चमकीला हल्का बादामी	समस्त उ.प्र.
3.	सी.एस.वी. 15	105—110	220—240	23—28	100—110	एक दिनिया चमकीला, हल्का बादामी	तदैव
4.	एस.पी.बी.—1388 (बुंदेला)	110—115	240—250	30—35	115—120	भुट्टा गठा हुआ एक दिनिया दाना, बड़ा, मोती के समान सफेद चमकीला	समस्त उ.प्र.

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिन में)	ऊँचाई सेमी.	दानों की उपज (कु. / है.)	सूखे चारे की उपज (कु. / है.)	भुट्टे के गुण	उपयुक्त क्षेत्र
5.	विजेता	100—110	240—250	30—35	115—120	तदैव	तदैव
6.	संकर प्रजातियाँ :						
7.	सी.एस.एच. 16	105—110	200	38—42	90—95	लम्बा, मध्यम बादामी एक दनिया	तदैव
8.	सी.एस. एच. 9	110—115	175—200	35—40	80—100	एक दनिया, चमकीला हल्का	तदैव
9.	सी.एस.एच. 14	100—105	180—200	35—40	80—100	तदैव	तदैव
10.	सी.एस.एच. 18	115—125	180—200	35—40	80—100	तदैव	तदैव
11.	सी.एस. एच. 13	115—125	160—180	35—40	80—100	तदैव	तदैव
12.	सी. एस. एच. 23	120—125	8180—200	40—45	75—120	तदैव	तदैव

(स) **बीजोपचार** : बोने से पूर्व एक किलोग्राम बीज को थीरम के 2.5 ग्राम से शोधित कर लेना चाहिए, जिससे अच्छा जमाव होता है एवं कंडुवा रोग नहीं लगता है। दीमक के प्रकोप से बचने हेतु 2.5 मिली. प्रति किलोग्राम बीज की दर से क्लोरपाइरीफास से शोधित करें।

(द) **पंक्तियों और पौधों की दूरी** : ज्वार की बुवाई 45 सेमी. की दूरी पर हल के पीछे करनी चाहिए। पौधे से पौधे की दूरी 15-20 सेमी. होनी चाहिए। देर से पकने वाली अरहर की दो पंक्तियों के बीच एक पंक्ति ज्वार का बोना उचित होगा।

4. उर्वरक : उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना श्रेयस्कर होगा। उत्तम उपज के लिए संकर प्रजातियों के लिए 80:40:20 किलोग्राम एवं अन्य प्रजातियों हेतु 40:20:20 किलोग्राम नत्रजन फास्फोरस तथा पोटाश प्रति है। प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत में बुवाई के समय कूड़ों में बीज के नीचे डाल देना चाहिए तथा नत्रजन का शेष 1/2 भाग बुवाई के लगभग 30-35 दिन बाद खड़ी फसल में प्रयोग करना चाहिए।

5. सिंचाई : फसल में बाली निकलते और दाना भरते समय यदि खेत में नमी कम हो तो सिंचाई अवश्य कर दी जाय अन्यथा इसका उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

6. निराई-गुडाई : ज्वार की खेती में निराई-गुडाई का अधिक महत्व है। निराई-गुडाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही आकसीजन का संचार होता है जिससे वह दूर तक फैल कर भोज्य पदार्थ को एकत्र कर पौधों को देती है। पहली निराई जमाव के 15 दिन बाद कर देना चाहिए और दूसरी निराई 35-40 दिन बाद करनी चाहिए।

ज्वार में खरपतवारों को नष्ट करने के लिए :

- 1) एट्राजीन 2 किग्रा. प्रति है. अथवा 800 ग्राम प्रति एकड़ मध्यम से भारी मृदाओं में तथा 1.25 किग्रा. प्रति है. अथवा 500 ग्राम प्रति एकड़ हल्की मृदाओं में बुवाई के तुरन्त 2 दिनों में 500 लीटर/ है. अथवा 200 लीटर/ एकड़ पानी में मिलाकर स्प्रे करना चाहिए। इस शाकनाशी के प्रयोग से एकवर्षीय घासकुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार बहुत ही प्रभावी रूप से नियमित हो जाते हैं। इस रसायन द्वारा विशेषरूप से पथरचटा (ट्राइएन्थीमा मोनोगाइना) भी नष्ट हो जाता है।
- 2) हार्डी खरपतवारों जैसे कि वन पट्टा (ब्रेचेरिया रेप्टान्स), रसभरी (कोमेलिया वैफलेन्सिस) को नियन्त्रित करने हेतु बुवाई के दो दिनों के अन्दर एट्राजीन 600 ग्राम + पेण्डीमेथिलीन 30 ई.सी.1 लीटर प्रति एकड़ अच्छी तरह से मिलाकर 200 लीटर पानी के साथ प्रयोग करने पर आशातीत परिणाम आते हैं।

7. फसल सुरक्षा:

कीट :

❖ प्ररोह मक्खी (शूट फ्लाई) :

पहचान : यह घरेलू मक्खी से छोटे आकार की होती है, जिसका शिशु (मैगेट जमाव के प्रारम्भ होते ही फसल को हानि पहुँचाती हैं।

उपचार : 1. क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हेक्टेकार करें।

❖ तना बेधक कीट :

पहचान : इस कीट की सूँडियाँ तने में छेद करके अन्दर ही अंदर खाती रहती हैं जिससे बीच का गोभ सूख जाता है।

उपचार : मक्का के तना बेधक कीट के लिए बताये गये उपायों को प्रयोग करें।

❖ ईयर हेड मिज :

पहचान : प्रौढ़ मिज लाल रंग की होती है और यह पुष्प पत्र पर अण्डे देती है। लाल मेगेट्स दानों के अन्दर रहकर उसका रस चूसती हैं, जिससे दाने सूख जाते हैं।

उपचार: 1. मैलाथियान 50 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर प्रति हेक्टेकार करें।

❖ माइट :

पहचान : यह बहुत ही छोटा अष्टपदीय होता है, जो पत्तियों की निचली सतह पर जाले बुनकर उन्हीं के अन्दर रहकर पत्तियों से रस चूसता है। ग्रसित पत्ती लाल रंग की हो जाती हैं तथा सूख जाती हैं।

उपचार : निम्न रसायनों में से किसी एक का छिड़काव करना चाहिए -

डाइमेथोएट (30 ई.सी.) 1 लीटर प्रति हेक्टेकार अथवा क्लोरपाइरीफास 25 ई.सी. 1.5-2.00 लीटर / हेक्टेकार।

❖ दीमक :

- ◆ खड़ी फसल में प्रकोप होने पर सिंचाई के पानी के साथ क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी.. 2.5 लीटर प्रति हेक्टेकार की दर से प्रयोग करें।

❖ सूत्रकृमि :

- ◆ रासायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई से एक सप्ताह पूर्व खेत में 10 किग्रा. ग्रेन्यूल कार्बोफ्यूरॉन प्रति हेक्टेकार मिला दें।

रोग-

1. भूरा फफूँद (ग्रे मोल्ड)

पहचान : प्रारम्भिक अवस्था में बीमारी सफेद रंग की फफूँदी बालियों एवं वृन्त पर दिखाई देती है। अन्ततः जो दाने बनते हैं वह भद्दे एवं उनका रंग हल्का गुलाबी भूरा या काला फफूँदी के अनुसार हो जाता है। रोग ग्रसित दाने हल्के या भुरभूरे हो जाते हैं ऐसे दानों का उपयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। यह बीमारी ज्वार की संकर प्रजाति अथवा शीघ्र पकने वाली प्रजातियों में प्रायः अधिक पाई जाती है।

- खेत की गहरी जुताई करें।
- फसल चक्र सिद्धान्त का प्रयोग करें।

खरीफ फसलों की खेती

- फसल एवं खरपतवारों के अवशेषों को नष्ट करें।
 - सिंचाई का समुचित प्रबन्ध करें।
 - उन्नतशील / संस्तुत प्रजातियों की ही बुवाई करें।
 - बीजशोधन हेतु थिरम 75 प्रतिशत डब्लूएस0 2.5 ग्राम अथवा कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू०पी० की 2.0 ग्राम अथवा मेटालैकिसल 35 प्रतिशत डब्लू०एस0 की 6.0 ग्राम प्रति किग्रा० बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए।
 - रासायनिक नियंत्रण हेतु मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा० प्रति हेठो की दर से 700-800 ली० पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
- उपचार :** मैंकोजेब 2.00 किलोग्राम / हेठो की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

सूत्रकृमि : रोकथाम हेतु गर्मी की गहरी जुताई आवश्यक है।

मुख्य बिन्दु :

- उन्नति शील / संस्तुत प्रजातियों की बुवाई समय से करायें।
- बीज शोधन अवश्य करें।
- उर्वरक का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करें।
- बाली निकलने एवं दाना बनते समय पानी आवश्यक है। अतः वर्षा के अभाव में सिंचाई करें।
- कीट एवं रोगों का समय से नियंत्रण करें।
- दो पंक्तियों के बीच में हल बैल चलित कल्टीवेटर / हो चलाकर खरपतवार नियंत्रण करें।



16. साँवा की उन्नतशील खेती

असिंचित क्षेत्रों में बोयी जाने वाली मोटे अनाजों में साँवां का महत्वपूर्ण स्थान है। यह भारत की एक प्राचीन फसल है।

यह सामान्यतया असिंचित क्षेत्र में बोयी जाने वाली सूखा प्रतिरोधी फसल है। इसमें पानी की आवश्यकता अन्य फसलों से कम है। हल्की नम व ऊष्ण जलवायु इसके लिए सर्वोत्तम है।

सामान्यतया साँवा का उपयोग चावल की तरह किया जाता है। उत्तर भारत में साँवा की "खीर" बड़े चाव से खायी जाती है। पशुओं के लिए इसका बहुत उपयोग है। इसका हरा चारा पशुओं को बहुत पसन्द है। इसमें चावल की तुलना में अधिक पोषक तत्व पाये जाते हैं और इसमें पायी जाने वाली प्रोटीन की पाचन योग्यता सबसे अधिक (40 प्रतिशत तक) है।

पोषक तत्व की मात्रा (प्रत्येक 100 ग्राम में)

फसल	प्रोटीन (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कूड़ फाइबर (ग्राम)	लौह तत्व	कैल्शियम (मि.ग्रा.)	फास्फोरस (मि.ग्रा.)
चावल	6.8	78.2	0.5	0.2	0.6	10.00	60.0
साँवा	11.6	74.3	5.8	14.7	4.7	14.0	121.0

मिट्टी : सामान्यतया यह फसल कम उपजाऊ वाली मिट्टी में बोयी जाती है। इसे आंशिक रूप से जलाक्रांत मिट्टी जैसे नदी के किनारे की निचली भूमि में भी उगाया जा सकता है। परन्तु इसके लिए बलुई दोमट व दोमट मिट्टी जिसमें पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व हो, सर्वाधिक उपयुक्त है।

खेत की तैयारी : मानसून के प्रारम्भ होने से पूर्व खेत की जुताई आवश्यक है, जिससे खेत में नभी की मात्रा संरक्षित हो सके। मानसून के प्रारम्भ होने के साथ ही मिट्टी पलटने वाले हल से पहली जुताई तथा दो—तीन जुताई हल से करके खेत को भली—भांति तैयार कर लेना अधिक पैदावार के लिए उपयुक्त होता है।

भूमि शोधन : फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2% डब्लू पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिर्डा, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटवर्म आदि कीटों से बचाव हेतु व्यूवेरिया बैसियाना बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

बुवाई का समय : साँवां की बुवाई का उत्तम समय 15 जून से 15 जुलाई तक है। मानसून के प्रारम्भ होने के साथ ही इसकी बुवाई कर देनी चाहिए। इसके बुवाई छिटकवां विधि से या कूड़ों में 3—4 सेमी. की गहराई में की जाती है। कुछ क्षेत्रों में इसकी रोपाई करते हैं। परन्तु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25 सेमी. रखते हैं लाइन में बुवाई लाभप्रद होती है। पानी के लगाव वाले स्थान पर मानसून के प्रारम्भ होते ही छिटकवां विधि से बुवाई कर देना चाहिए तथा बाढ़ आने के सम्भवना से पूर्व फसल काट लेना श्रेयस्कर होता है।

बीज दर : प्रति हेक्टेयर 8 से 10 किग्रा. गुणवत्तायुक्त बीज पर्याप्त होता है।

प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिवस में)	पौधे की लम्बाई (सेमी.)	बाली की लम्बाई (सेमी.)	पौधों का रंग	उपज (कुन्तल प्रति हे.)
1.	टी-46 उत्तर प्रदेश विशेष रूप से प्रचलित	—	—	—	—	10-12
2.	आई.पी.-149	80-90	145	26-28	हल्का भूरा रंग	12-13
3.	यू.पी.टी.-8	74-80	126-130	—	हल्का भूरा रंग	12
4.	आई.पी.एम-97	83-88	140-150	12-14	हल्का भूरा रंग	10
5.	आई.पी.एम-100	65-67	130-140	—	हल्का भूरा रंग	10-12
6.	आई.पी.एम-148	77-86	150-162	—	हल्का भूरा रंग	11-12
7.	आई.पी.एम-151	88-88	135-162	14-17	हल्का भूरा रंग	12-13

मदिरा-21, मदिरा-29 व चन्दन अन्य नई उन्नतशील प्रजातियाँ हैं। प्रदेश में शुद्ध अथवा कपास, अरहर व अन्य अल्प अवधि के दलहनी फसलों के साथ मिश्रण के रूप में बोयी जाती हैं।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग : जैविक खाद का उपयोग हमेशा लाभकारी होता है क्योंकि मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों को प्रदान करने के साथ-साथ जल धारण क्षमता को भी बढ़ाता है। 5 से 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से कम्पोस्ट खाद खेत में मानसून के बाद पहली जुताई के समय मिलाना लाभकारी होता है। नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की मात्रा 40:20:20 किग्रा। प्रति हेक्टेयर के अनुपात में प्रयोग करने से उत्पादन परिणाम बेहतर प्राप्त होता है। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने की स्थिति में नत्रजन की आधी मात्रा टॉपड्रेसिंग के रूप में बुवाई के 25-30 दिन बाद फसल में छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई : सामान्या साँवा की खेती में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु जब वर्षा लम्बे समय तक रुक गयी हो, तो पुष्प आने की स्थिति में एक सिंचाई आवश्यक हो जाती है। जल भराव की स्थिति में पानी के निकासी की व्यवस्था अवश्य करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : बुवाई के 30 से 35 दिन तक खेत खरपतवार रहित होना चाहिए। निराई-गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही पौधों की जड़ों में आक्सीजन का संचार होता है, जिससे वह दूर तक फैलकर भौज्य पदार्थ एकत्र कर पौधों की देती है। सामान्यतया दो निराई-गुड़ाई 15-15 दिवस के अन्तराल पर पर्याप्त है। पंक्तियों में बोएं गये पौधों की निराई-गुड़ाई हैण्ड-हो अथवा व्हील-हो से किया जा सकता है।

फसल सुरक्षा :

रोग :

1. **तुलासिता :** यह एक कवकजनित रोग है। इसके आक्रमण के प्रारम्भ में पत्तियों पर पीली धारियाँ उभरती हैं, जो बाद में सफेद हो जाती हैं और पत्तियाँ सूख जाती हैं। अधिक भयानक प्रकोप होने पर बालियाँ भूसीदार हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में यथासंभव रोग ग्रसित पौधे को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा ध्यान रखना चाहिए कि बीजोपचार के उपरान्त ही बोवाई की जाय जिससे कवक जनित रोगों से फसल सुरक्षा की जा सके।

रोकथाम : इसके रोकथाम के लिए मैंकोज़ेब 75 डब्लू.पी. को 2 किग्रा। प्रति हे. की दर से खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए।

2. **कण्डुवा :** यह एक कवकजनित रोग है जिसमें पूरी बाल एक काले चूर्ण जैसे पदार्थ से ढक जाती है। इसके बीजाणु एक सफेद झिल्ली से ढके रहते हैं। रोगग्रस्त पौधा अन्य पौधों से ऊँचा होता है।

रोकथाम :

1. बीजोपचार ही इसकी रोकथाम है। बुवाई से पूर्व थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा कार्बोण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. 2.5 ग्राम प्रति किग्रा। बीज की दर से बीज को उपचारित करने के उपरान्त बोने चाहिए।

2. रोग ग्रसित पुष्प गुच्छों का सावधानी पूर्वक तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
3. **रत्नआ / गेरुई** : यह फफूँदी जनित रोग है। पत्तियों पर लाइन में काले धब्बे दिखाई पड़ते हैं। इसके कारण उपज अत्याधिक प्रभावित होता है।
रोकथाम : रोग के रोकथाम हेतु मैंकोज़ेब 75 डब्लू.पी. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. के 2 किग्रा. प्रति हे. की दर से खड़ी फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

कीट :

दीमक व तना बेधक प्रमुख कीट हैं जो इसको प्रभावित करते हैं।

दीमक : दीमक की कीट के रोकथाम के हेतु निम्न उपाय करना चाहिए –

1. खेत में कच्चे गोबर का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
2. बुवाई के पूर्व दीमक के नियंत्रण हेतु क्लोरपायरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. की 3 मिली. प्रति किग्रा. की दर से बीज को शोधित करना चाहिए।
3. ब्यूबेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60–75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से दीमक सहित अन्य भूमिजनित कीटों का नियंत्रण हो जाता है।
4. खड़ी फसल में क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. 2.5 प्रति हे. की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।

तनाछेदक के प्रकोप पर उपचार :

1. कार्बोफ्यूरान 3 प्रतिशत ग्रेन्यूल 20 किग्रा. प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए अथवा क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 2 लीटर दर से छिड़काव करना चाहिए।

कटाई व मढ़ाई :

पकने की स्थिति में कटाई पौधे के जड़ से हँसिये की सहायता से की जानी चाहिए। इसका गद्दर बनाकर खेतों में एक सप्ताह के लिए सूखने हेतु रखने के उपरान्त मढ़ाई की जानी चाहिए।

उपजः दाना : 12–15 कुन्तल / हेक्टेयर।

भूसा : 20–25 कुन्तल / हेक्टेयर।

भण्डारण :

भण्डारण के पूर्व बीज को भली प्रकार से सुखा लेना चाहिए, ताकि उनमें नमी की मात्रा 10–12 प्रतिशत तक घट जाय। सुखाने के बाद बीज को थैलों में भरकर ऐसी जगह रखना चाहिए जहाँ वर्षा का पानी न जा सके तथा चूहों आदि का प्रकोप भी न हो।

मुख्य विन्दु :

- ◆ गर्मी की जुताई अवश्य करें।
- ◆ शोधित बीज का प्रयोग करें।
- ◆ जैविक खाद एवं उर्वरक का प्रयोग संस्तुति के अनुसार करें।
- ◆ पानी के निकासी की व्यवस्था करें।
- ◆ खरपतवार नियंत्रण पर ध्यान दें।
- ◆ फसल सुरक्षा पर विशेष ध्यान दें।



17. रागी (मङुवा) की उन्नतशील खेती

रागी की खेती मोटे अनाज के रूप में की जाती है। रागी मुख्य रूप से अफ्रीका और एशिया महाद्वीप में उगाई जाती है, जिसको मङुआ, अफ्रीकन रागी, फिंगर बाजरा और लाल बाजरा के नाम से भी जाना जाता है। इसके पौधे पूरे साल पैदावार देने में सक्षम होते हैं। इसके पौधे सामान्य तौर पर एक से डेढ़ मीटर तक की ऊँचाई के पाए जाते हैं। इसके दानों में खनिज पदार्थों की मात्रा बाकी अनाज फसलों से ज्यादा पाई जाती है। इसके दानों का प्रयोग खाने में कई तरह से किया जाता है। इसके दानों को पीसकर आटा बनाया जाता है, जिससे मोटी डबल रोटी, साधारण रोटी और डोसा बनाया जाता है। इसके दानों को उबालकर भी खाया जाता है। इसके अलावा इसका इस्तेमाल शराब बनाने में भी किया जाता है।



रागी की खेती के लिए शुष्क जलवायु की जरूरत होती है। भारत में ज्यादातर जगहों पर इसे खरीफ की फसल के रूप में उगाते हैं। इसके पौधों को बारिश की ज्यादा आवश्यकता नहीं होती। इसके पौधों को समुद्र तल से 2000 मीटर तक की ऊँचाई पर सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। भारत में इसकी खेती के लिए उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और दक्षिणी पूवटट राज्यों में की जाती है। इसकी खेती किसानों के लिए अधिक लाभ देने वाली मानी जाती है।

भूमि की तैयारी :

पूर्व फसल की कटाई के पश्चात् आवश्यकतानुसार ग्रीष्म ऋतु में एक या दो गहरी जुताई करें एवं खेत से फसलों एवं खरपतवार के अवशेष एकत्रिक करके नष्ट कर दें मानसून प्रारम्भ होते ही खेत की एक या दो जुताई करके पाटा लगाकर समतल करें।

बीजदर एवं बुवाई का समय :

बीज का चुनाव मृदा की किस्म के आधार पर करें। जहाँ तक संभव हो प्रमाणित बीज का प्रयोग करें। यदि किसान स्वयं का बीज उपयोग में लाता है तो बुवाई पूर्व बीज साफ करके फफूँदनाशक दवा (कार्बन्डाजिम/कार्बोकिसन) से उपचारित करके बोएं। रागी की सीधी बुवाई अथवा रोपा पद्धति से बुवाई की जाती है। सीधी बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई मध्य तक मानसून वर्षा होने पर की जाती है। छिंटकवा विधि या कतार में बुवाई की जाती है। कतार में बुवाई करने हेतु बीज दर 8 से 10 किग्रा। प्रति हेक्टेयर एवं छिंटकवा पद्धति से बुवाई करने पर बीज दर 12–15 किग्रा। प्रति हेक्टेयर रखते हैं।

कतार पद्धति में दो कतारों के बीच की दूरी 22.5 सेमी। एवं पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी। रखें। रोपाई के लिए नर्सरी में बीज जून के मध्य से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक डाल देना चाहिए। एक हेक्टेयर खेत में रोपाई के लिए बीज की मात्रा 4 से 5 किग्रा। लगती है एवं 25 से 30 दिन की पौध होने पर रोपाई करनी चाहिए। रोपाई के समय कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी क्रमशः 22.5 सेमी। व 10 सेमी। होनी चाहिए।

उन्नतशील किस्में :

रागी की विभिन्न अवधि वाली निम्न किस्मों को उत्तर प्रदेश के लिए अनुशंसित किया गया है—

जी.पी.यू.—45 :

यह रागी की जल्दी पकने वाली नयी किस्म है। इस किस्म के पौधे हरे होते हैं जिसमें मुड़ी हुई बालियाँ निकलती हैं। यह किस्म 104 से 109 दिन में पककर तैयार हो जाती है एवं इसकी उपज क्षमता 27 से 29 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है यह किस्म झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी है।

चिलिका (ओ.ई.बी.—10) :

इस देर से पकने वाली किस्म के पौधे ऊँचे, पत्तियाँ चैड़ी एवं हल्के हरे रंग की होती हैं। बालियों का अग्रभाग मुड़ा हुआ होता है प्रत्येक बाली में औसतन 6 से 8 अंगुलियाँ पायी जाती हैं। दांने बड़े तथा हल्के भूरे रंग के होते हैं। इस किस्म के पकने की अवधि 120 से 125 दिन व उपज क्षमता 26 से 27 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है। यह किस्म झुलसा रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी तथा तना छेदक कीट के लिए प्रतिरोधी है।

शुब्रा (ओ.यू.ए.टी. —2) :

इस किस्म के पौधे 80—90 सेमी. ऊँचे होते हैं जिसमें 7—8 सेमी. लम्बी 7—8 अंगुलियाँ प्रत्येक बाली में लगती हैं। इस किस्म की औसत उत्पादक क्षमता 21 से 22 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म सभी झुलसा के लिए मध्यम प्रतिरोधी तथा पर्णछाद झुलसा के लिए प्रतिरोधी है।

वी.एल.—149 :

इस किस्म के पौधों की गांठे रंगीन होती है। बालियाँ हल्की बैगनी रंग की होती है एवं उनका अग्रभाग अंदर की ओर मुड़ा हुआ होता है। इस किस्म के पकने की अवधि 98 से 102 दिन व औसत उपज क्षमता 20 से 25 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। यह किस्म झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी है।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग :

मुदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग सर्वोत्तम होता है। असिंचित खेती के लिए 40 किग्रा. नत्रजन व 40 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से अनुशंसित है। नत्रजन की आधी मात्रा व फास्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई पूर्व खेत में डाल दें तथा नत्रजन की शेष मात्रा पौध अंकुरण के 3 सप्ताह बाद प्रथम निराई के उपरांत समान रूप से डाले। गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद (100 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) का उपयोग अच्छी उपज के लिए लाभदायक पाया गया है। जैविक खाद एजोस्पाइरिलम ब्रेसीलेन्स एवं एस्परजिलस अवामूरी से बीजोपचार 25 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से लाभप्रद पाया गया है।

अन्तःस्स्य क्रियाएँ :

रागी की फसल को बुवाई के बाद प्रथम 45 दिन तक खरपतवारों से मुक्त रखना आवश्यक है अन्यथा उपज में भारी गिरावट आ जाती है। अतः हाथ से एक निराई करें अथवा बुवाई या रोपाई के 3 सप्ताह के अंदर 2.4—डी सोडियम साल्ट (80 प्रतिशत) की एक किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करने से चैड़ी पत्ती वाले खरपतवार नष्ट किये जा सकते हैं। बालियाँ निकलने से पूर्व एक और निराई करें।

फसल पद्धति :

रागी की 8 कतारों के बाद अरहर की दो कतार बोना लाभदायक पाया गया है।

पौध संरक्षण :

रोग—व्याधियाँ : फफूँदजनित झुलसा, भूरा धब्बा।

झुलसा :

रागी की फसल पर पौध अवस्था से लेकर बालियों में दाने बनने तक किसी भी अवस्था में फफूँदजनित झुलसा रोग का प्रकोप हो सकता है। संक्रमित पौधे की पत्तियों में भिन्न-भिन्न माप के आँख के समान या तर्कुरूप धब्बे बन जाते हैं, जो मध्य में धूसर व किनारों पर पीले-भूरे रंग के होते हैं। अनुकूल वातावरण में ये धब्बे आपस में मिल जाते हैं व पत्तियों को झुलसा देते हैं।

बालियों की ग्रीवा व अंगुलियों पर भी फफूँद का संक्रमण होता है। ग्रीवा का पूरा या आंशिक भाग काला पड़ जाता है, जिससे बालियाँ संक्रमित भाग से टूटकर लटक जाती हैं या गिर जाती हैं। अंगुलियां भी आंशिक रूप से या पूर्णरूप से संक्रमित होने पर सूख जाती हैं जिसके कारण उपज की गुणवत्ता व मात्रा प्रभावित होती है।

रोकथाम :

बुवाई पूर्व बीजों को फफूँदनाशक दवा मैंकोज़ेब, कार्बन्डाजिम या कार्बोकिसन या इनके मिश्रण से 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज दर से उपचारित करें।

खड़ी फसल पर लक्षण दिखायी पड़ने पर कार्बन्डाजिम या मैंकोज़ेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 10 से 12 दिन के बाद एक छिड़काव पुनः करें।

जैव रसायन स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स का पर्ण छिड़काव (0.2 प्रतिशत) भी झुलसा के संक्रमण को रोकता है।

रोग प्रतिरोधी किस्मों जैसे जी.पी.यू. 45, चिलिका, शुव्रा, भैरवी, वी.एल. 149 का चुनाव करें।

भूरा धब्बा रोग :

इस फफूँदजनित रोग का संक्रमण पौधे की सभी अवस्थाओं में हो सकता है। प्रारम्भ में पत्तियों पर छोटे-छोटे हल्के भूरे एवं अंडाकार धब्बे बनते हैं। बाद में इनका रंग गहरा भूरा हो जाता है। अनुकूल अवस्था में ये धब्बे आपस में मिलकर पत्तियों को समय से पूर्व सुखा देते हैं। बालियों एवं दानों पर संक्रमण होने पर दानों का उचित विकास नहीं हो पाता, दाने सिकुड़ जाते हैं, जिससे उपज में कमी आती है।

रोकथाम :

बुवाई पूर्व बीजों को फफूँदनाशक रसायन मैंकोज़ेब, कार्बन्डाजिम या कार्बोकिसन या इनके मिश्रण से 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज दर से उपचारित करें।

खड़ी फसल पर लक्षण दिखायी पड़ने पर कार्बन्डाजिम या मैंकोज़ेब 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। 10 से 12 दिन के बाद एक छिड़काव पुनः करें।

जैव रसायन स्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स का पर्ण छिड़काव (0.2 प्रतिशत) भी झुलसन के संक्रमण को रोकता है। रोगरोधी किस्मों जैसे भैरवी का बुवाई हेतु चयन करें।

कीट :

तना छेदक एवं बालियों की सूड़ी रागी की फसल के प्रमुख कीट है।

तना बेधक :

वयस्क कीट एक पतंगा होता है जबकि लार्वा तने को भेदकर अन्दर प्रवेश कर जाता है एवं फसल को नुकसान पहुँचाता है। कीट के प्रकोप से “डेड हर्ट” लक्षण पौधे पर दिखायी पड़ते हैं।

रोकथाम

1. कीटनाशक रसायन डाइमेथोएट 1 से 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें।
2. कीट प्रतिरोधक किस्म चिलिका को बुवाई हेतु चयन करें।

बालियों की सूझी :

इस कीट का प्रकोप बालियों में दाने बनने के समय होता है। भूरे रंग की रोयेंदार इल्लियां रागी की बंधी बालियों को नुकसान पहुँचाती है जिसके फलस्वरूप दाने कम व छोटे बनते हैं।

रोकथाम :

1. क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत डी.पी. या थायोडान डस्ट (4 प्रतिशत) का प्रयोग 24 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से करें।



18. कोदों की उन्नतशील खेती

असिंचित क्षेत्रों में बोएं जाने वाले मोटे अनाजों में कोदों का महत्वपूर्ण स्थान है। कोदों का पौधा सहिष्णु और सूखा सहने वाला होता है। उन भागों में भी, जहाँ पर खरीफ के मौसम में वर्षा नियमित रूप से नहीं होती, यह फसल आसानी से उगाई जा सकती है। इस फसल के लिए 40–50 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र उपयुक्त पाये गये हैं। प्रदेश में इसकी खेती जनपद सोनभद्र, ललितपुर, चित्रकूट, बहराइच, सीतापुर, खीरी व बाराबंकी में की जाती है।

इसके दाने कठोर बीज आवरण से ढके रहते हैं। इसको पकाने के लिए इस कठोर बीज आवरण को हटाना आवश्यक है। इसका अधपका व मोल्टेड अनाज जहरीला होता है। कोदों फसल आसानी से संरक्षित होता है और यह अकाल की स्थिति में भी पैदावार देने में सक्षम है। मधुमेह रोग से पीड़ित रोगियों के लिए कोदों, चावल के विकल्प के रूप में उपभोग करने की सिफारिश की जाती है। इसके भूसे की गुणवत्ता निम्न स्तर की होती है।

चावल की तुलना में कोदों में पाये जाने वाले पौष्टिक तत्वों का संयोजन निम्नानुसार है :

फसल	प्रोटीन (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	वसा (ग्राम)	क्रूड फाइबर (ग्राम)	लौह तत्व (मि.ग्रा.)	कैल्शियम (मि.ग्रा.)	फास्फोरस (मि.ग्रा.)
चावल	6.8	78.2	0.5	0.2	0.6	10.00	160.0
कोदों	8.3	65.9	1.4	9.0	2.6	27.0	188.0

मिट्टी : कोदों प्रायः सभी प्रकार की भूमि में उगाई जाती है। बजरीयुक्त पथरीली भूमि में भी प्रतिकूल परिस्थिति एवं खराब मिट्टी के बावजूद कोदों की फसल से अनाज व भूसा प्राप्त होता है। लेकिन यह रेतिली बलुई मिट्टी एवं अच्छी दोमट मिट्टी में अच्छी पैदावार देती है। पानी का निकास अच्छा होना चाहिए।

खेती की तैयारी : वर्षा प्रारम्भ होने से पूर्व खेत की जुताई आवश्यक है, जिससे खेत में नमी की मात्रा संरक्षित हो सके। वर्षा प्रारम्भ होने से पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल से पहली जुताई तथा दो-तीन जुताई हल से करके खेत को भली-भांति तैयार कर लेना चाहिए।

भूमि शोधन : फसल को भूमि जनित रोगों से बचाने के लिए ट्राइकोडर्मा 2% डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त आखिरी जुताई के समय खेतों में मिला दें दीमक, सफेद गिडार, सूत्रकृमि, जड़ की सूणडी, कटर्वर्म आदि कीटों से बचाव हेतु ब्यूवेरिया बैसियाना 1% डब्लू.पी. बायोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 60–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देना चाहिए।

बुवाई :

(क) **समय :** कोदों की बुवाई का उपयुक्त समय 15 जून से 15 जुलाई तक है। जब भी खेत में पर्याप्त नमी हो बुवाई कर देनी चाहिए। कोदों की बुवाई अधिकतर छिटकवां विधि से की जाती है, परन्तु इसकी पंक्तियों में की गयी बुवाई अधिक लाभकारी होगी।

इसमें पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40 से 50 सेमी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 8 से 10 सेमी. तथा गहराई लगभग 3 सेमी. होना चाहिए।

(ख) **बीज की दर :** 15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर।

उन्नत प्रजातियाँ :

प्रजाति	फसल की अवधि (दिवस में)	उत्पादकता (कु. / हे.)	प्रमुख विशेषता
जे.के-6	85–90	6–8	अगैती प्रजाति
जे.के-62	100–105	18–20	स्थानीय जर्मप्लाज्म से चयनित
जे.के-2	110–112	18–20	—
ए.पी.के.-1	100–102	18–20	पी.एस.सी.-5 से के.एम.वी.-20
(वन्धन-1)	100–105	17–20	पाली प्रजाति से चयनित
जी.पी.वी.के.-3	100–105	18–20	व्यापक रूप से प्रचलित

उपरोक्त के अतिरिक्त डिंडोरी 73, पाली कोयम्बटूर-2 तथा निवास-1 अन्य उन्नत किस्में हैं।

खाद एवं उर्वरक का प्रयोग : जैविक खाद का उपयोग हमेशा लाभकारी होता है क्योंकि यह मिट्टी में आवश्यक पोषक तत्वों को प्रदान करने के साथ-साथ पानी संरक्षण क्षमता को भी बढ़ाता है। 5 से 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से कम्पोस्ट खाद पहली जुताई के समय मिलाना लाभकारी होता है। 40:20:20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा खेत में बुवाई के समय कूड़ों में बीज के नीचे डाल देना चाहिए। नत्रजन का शेष आधा भाग बुवाई के लगभग 30–35 दिन बाद खड़ी फसल में प्रयोग करना चाहिए।

जल प्रबन्धन : कोदों की खेती प्रायः खरीफ में की जाती हैं जहाँ पानी की आवश्यकता नहीं पड़ती। फिर भी यदि पानी की सुविधा उपलब्ध हो तो एक या दो सिंचाई की जा सकती हैं। अत्याधिक वर्षा की स्थिति में पानी के निकासी का प्रबन्ध अति आवश्यक है।

खरपतवार नियंत्रण : पौधे की बढ़वार के शुरुआती स्थिति में खेत खरपतवार रहित होना चाहिए, मुख्यतयः बुवाई के बाद आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई 15 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए। निराई-गुड़ाई हैण्ड-हो अथवा हृवील-हो से की जा सकती है।

फसल सुरक्षा :

रोग :

1. **अरगट :** यह बीज जनित रोग है और फफूँद के कारण होती है। इस रोग का प्रकोप पौधों में फूल आने के समय होता है। इसमें फूलों से एक चिपचिपा, हल्के गुलाबी रंग का स्राव निकलता है जो बाद में सूखकर एक पपड़ी बना देता है। रोग ग्रसित अनाज का उपयोग मनुष्य एवं जानवर दोनों के लिए हानिकारक होता है।

रोकथाम :

- यदि बीज प्रमाणित नहीं हैं तो बोने से पहले 20 प्रतिशत नमक के घोल में बीज डुबोकर तुरन्त बीज (स्केलेरेशिया) को अलग कर देना चाहिए तथा शुद्ध पानी से 4–5 बार धोकर बीज का प्रयोग किया जाय। खेत में गर्मी की जुताई अवश्य करनी चाहिए।
- फसल में फूल आने से पूर्व निम्न कृषि रक्षा रसायनों में से किसी एक का छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करना चाहिए :
 - जिरम 80 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 2.00 किग्रा. प्रति हे.।
 - मैंकोज़ेब घुलनशील चूर्ण 2.0 किग्रा. प्रति हे.।
 - जिनेब 75 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 2 किग्रा. प्रति हे.।

2. **कण्डुवा:** इस रोग में बाली में काले चूर्ण जैसे कवक के बीजाणु भर जाते हैं। आरम्भ में बीजाणु एक हल्के पीले रंग की छिल्ली से ढके रहते हैं, जो आगे चलकर फट जाती है तथा बीजाणु बाहर निकलकर फैल जाते हैं।
रोकथाम : बुवाई से पूर्व बीजोपचार के उपरान्त ही बीज का प्रयोग बोने के लिए किया जाना चाहिए। बीजोपचार थीरम 75 प्रतिशत डी.सी./डब्लू.पी. अथवा कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर करना चाहिए।
3. **रतुआ / गेरुई :** यह फफूँदी जनित रोग है। प्रभावित पत्तियों पर भूरे रंग फफोले दिखाई पड़ते हैं। फलतः प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करता है, जिससे पैदावार प्रभावित होती है।
रोकथाम : रोग के रोकथाम हेतु मैंकोज़ेब 75 डब्लू.पी. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. के 2 किग्रा. प्रति हे. की दर से खड़ी फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

कीट :

साधारणतया दीमक, तना बेधक कीट कोदों को नुकसान पहुँचाते हैं।

रोकथाम : तनाबेधक के रोकथाम हेतु कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत जी.आर. 20 किग्रा./हे. की दर से करना चाहिए।

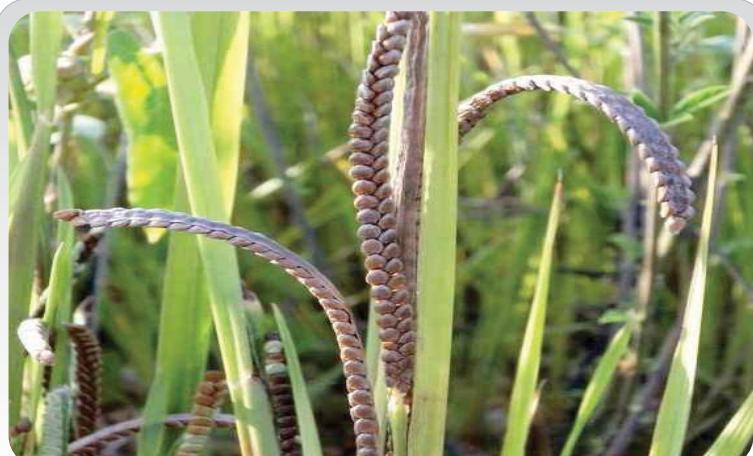
दीमक के रोकथाम हेतु ब्यूबेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से दीमक सहित अन्य भूमिजनित कीटों की रोकथाम हो जाती है। खड़ी फसल में दीमक कीट का प्रकोप देखे जाने पर क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. की 2.5 ली. प्रति हे. की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।

कटाई व मड़ाई : फसल कटाई के लिए माह सितम्बर व अक्टूबर में पक कर तैयार हो जाता है। फसल की कटाई जमीन से सटाकर करते हुए, बण्डल बनाकर एक सप्ताह सूखने के लिए छोड़ देते हैं फिर मड़ाई कर अनाज अलग कर लेते हैं।

उत्पादन : औसत उत्पादन—15—18 कुन्तल प्रति हेक्टेयर।

चारा : 30—40 कुन्तल प्रति हेक्टेयर।
 उचित भण्डारण के लिए नमी की मात्रा 10 से 12 प्रतिशत होनी चाहिए।

भण्डारण : कटाई तथा मड़ाई के बाद बीज को धूप में भली—भाँति सुखा लेना चाहिए। बीजों को नमी रहित स्थानों पर भण्डारित करना चाहिए।



19. चेना की उन्नतशील खेती

प्रदेश में छोटे एवं मोटे अनाजों में चेना (जेठी सांवा) की खेती केवल जायद में ही होती है। इसे हम जायद सांवा के रूप में भी जानते हैं। इसकी खेती साधारणतया आलू, सरसों, राई एवं गन्ना की फसल कटने के बाद की जाती है। यह फसल 65–70 दिन में पक कर तैयार हो जाती है तथा उन्नतशील विधि से खेती करने पर अच्छी पैदावार देने की क्षमता रखती है।

प्रजातियाँ :

प्रदेश के समस्त चेना उगाने वाले क्षेत्रों के लिए राज्य प्रजाति विमोचन समिति द्वारा “भावना” प्रजाति की संस्तुति की गयी है। यह प्रजाति 12–15 कुन्तल औसत उपज प्रति हेक्टेक्टर देती है। यह प्रजाति झुलसा बीमारी एवं तना छेदक कीट तथा तने की मक्खी के लिए अवरोधी पायी गयी है। यह प्रजाति पकने पर चिटकती नहीं है और न ही गिरती है। पोषक तत्वों के दृष्टिकोण से भी यह जाति महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें 11 प्रतिशत प्रोटीन की मात्रा पायी जाती है। इसके साथ ही वर्ष 2018 में अधिसूचित प्रजाति एम.डी.यू.-1 है, जिसकी उत्पादकता क्षमता 15–17 कुन्तल/हेक्टेक्टर है एवं 95–100 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।



भूमि की तैयारी :

खेत की तैयारी करने से पहले उपयुक्त भूमि का चुनाव अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके लिए अधिक जलधारण शक्ति वाली भिट्टी अच्छी रहती है। पानी के साधनों की उपलब्धता को विशेष रूप से ध्यान में रखना चाहिए। इस फसल के लिए दोमट, हल्की दोमट एवं मटियार जमीन सबसे अच्छी पायी गयी है। खेत की तैयारी के लिए एक पलेवा करना चाहिए और जैसे ही ओट आ जाये इसकी तैयारी कर बुवाई कर देनी चाहिए।

बीज की मात्रा :

5–8 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेक्टर के लिए पर्याप्त है। चूँकि बीज का छिलका कड़ा होता है इसलिए बोने से पूर्व बीज को रात में पानी में भिगोकर तथा छाये में सुखाकर बोना चाहिए, जिससे बीज का जमाव अच्छा हो सके।

बोने का उपयुक्त समय :

बोने का उपयुक्त समय 15 फरवरी से 15 मार्च तक पाया गया है। 15 मार्च के बाद फसल बोने पर अधिक पानी की आवश्यकता पड़ती है तथा तापक्रम बढ़ जाने के कारण उपज भी प्रभावित होती है।

बुवाई की विधि :

बीज बोने से पहले खेत में पर्याप्त नमी सुनिश्चित कर लेनी चाहिए अन्यथा जमाव पर बुरा असर पड़ता है। इसकी बुवाई करतारों में 23 सेमी. की दूरी पर की जाती है। बीज बोने के लिए 4–5 सेमी. कूँड़ों की गहराई पर्याप्त है। इससे अधिक गहरा बोने पर बीज जमाव नहीं होता है। बोने के 15 दिन बाद अधिक पौधों को निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 7–8 सेमी. कर देनी चाहिए।

उर्वरक :

40 किलोग्राम नत्रजन एवं 20 किलोग्राम फास्फोरस प्रति हेक्टेक्टर देने की संस्तुति है। शोध परीक्षणों में 60 किग्रा. नत्रजन की मात्रा देने पर फसल की उपज में काफी वृद्धि पायी गयी है। नत्रजन की आधी तथा फास्फोरस की पूरी मात्रा बोते समय कूँड़ में डालना चाहिए। नत्रजन की शेष बची आधी मात्रा बुवाई के 20–25 दिन बाद खड़ी फसल में देना चाहिए।

सिंचाई :

चेना की फसल में सिंचाई काफी महत्वपूर्ण है। सिंचाई की संख्या, मौसम तथा मिट्टी की किस्म पर निर्भर करती है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 6–8 सिंचाई की आवश्यकता पायी गयी है। ध्यान देने की बात यह है कि प्रत्येक सिंचाई हल्की होनी चाहिए। अगर फसल की बुवाई फरवरी माह में की जाती है तो 4–5 सिंचाई पर्याप्त होगी। पहली सिंचाई पौधों में 2–3 पत्तियां आने पर करते हैं। तापक्रम बढ़ने पर एक सप्ताह या इससे भी कम समय में सिंचाई करनी पड़ती है।

निराई–गुड़ाई :

पहली सिंचाई के बाद खरपतवार अवश्य निकाल देना चाहिए ताकि फसल की अच्छी बढ़वार हो सके एवं अधिक कल्ले निकल सके। हल्की गुड़ाई भी कल्ले निकलने में लाभदायी है। अगर आवश्यकता हो तो दूसरी निकाई भी 25–30 दिन के अन्तर पर कर देनी चाहिए।

बीमारिया एवं कीड़े :

यह फसल झुलसा रोग से प्रभावित होती है। इस रोग से बचने के लिए 2 किग्रा. मैंकोजेब 500–700 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। तना छेदक कीड़े एवं तने की मक्खी का प्रकोप फसल को काफी नुकसान पहुँचाता है। इनकी रोकथाम के लिए 1.250 लीटर विवनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. कीटनाशक दवा का प्रयोग लाभदायक पाया गया है।

कटाई एवं मङ्गाई :

चूँकि “भावना” प्रजाति पकने पर चिटकती नहीं है फिर भी जैसे ही फसल पक जाये कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई के लिए जैसे ही पौधे का रंग पीला, भूरा एवं दाना कड़ा चमकदार हो जाय, कर लेना चाहिए। फसल की कटाई यदि समय से नहीं की जाती है तो दाने जमीन पर गिरने लगते हैं। फलस्वरूप उपज में कमी आ जाती है। डन्डे से पीटने या बैलों को चलाकर दाना अलग किया जा सकता है।



20. कुट्टू की उन्नतशील खेती

कुट्टू का वैज्ञानिक नाम फैगोपायराम एस्कुलेंटम है। इसे बक व्हीट या स्यूडो सीरियल, सुपर फूड, ओगला, फाफड़, कुट्टू आदि के नाम से जाना जाता है। अल्प प्रयुक्त फसलों में कुट्टू (टाऊ) की पर्वतीय क्षेत्रों (जो समुद्र तल से 1800 मीटर ऊंचाई पर है) पर सफलतापूर्वक खेती की जाती है। यह ग्लूटेन फ्री आहार है, जिसकी वजह से सिलिएक रोगियों के लिए यह एक बेहतर विकल्प माना जाता है। यह फसल एक हरी खाद रूप में भी काम में आती है। इसका उपयोग उस भूमि में करते हैं, जो रबी मौसम में देरी से सूखती है और जहां पर लम्बे समय के बाद खेती करनी है। सरगुजा संभाग के मैनपाट क्षेत्र में यह तिब्बती शरणार्थियों की मुख्य फसल है। टाक को गेहूँ के साथ मिलाकर बिस्किट, नान सेवझया एवं चावल के साथ मिलाकर पापड़, फूलबड़ी आदि बनाये जाते हैं। रुस में इसकी खेती व्यापक पैमाने पर होती है। इसकी जंगली प्रजाति यूनान में भी पाई जाती है।

उत्पत्ति

इसका उत्पत्ति स्थान उत्तरी चीन एवं साइबेरिया है।

क्षेत्रफल

देश में कुट्टू की खेती का क्षेत्रफल आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। छत्तीसगढ़ के सरगुजा संभाग के अंतर्गत मैनपाट क्षेत्र में लगभग 4000 हैक्टर क्षेत्रफल में इसकी खेती की जाती है।



कुट्टू एक महत्वपूर्ण बहुदेशीय फसल है, जिसके तने का उपयोग सब्जी बनाने, फूल तथा हरी पत्तियों का उपयोग ग्लूकोसाइड के निष्कासन द्वारा दवा बनाने, फूल का प्रयोग उच्च गुणवत्ता वाले मधु पैदा करने तथा बीज का उपयोग नूडल, सूप, चाय, ग्लूटेन फ्री बीयर आदि बनाने में किया जाता है। इसमें पोषण तत्व की मात्रा धान, गेहूँ से भी अधिक होती है। इसके 100 ग्राम भाग में 12 ग्राम प्रोटीन, 7.4 ग्राम वसा, 72.9 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 114 मिग्रा. कैल्शियम, 13.2 मिग्रा. लौह एवं 282 मिग्रा. फार्स्फोरस होते हैं।

कुट्टू किस्में

क्र. सं.	कुट्टू की किस्म	विकसित करने का वर्ष / कहाँ से	उत्पादन क्षमता (कु. / हे.)	विषेषताएं	संस्कृत क्षेत्र
1.	हिमप्रिया	1991 (हिमाचल प्रदेश)	12.00	अधिक पैदावार और मध्यम अवधि	हिमाचल प्रदेश और उत्तराखण्ड
2.	हिमगिरी	2006 (हिमाचल प्रदेश)	11.00	जल्दी पकने वाली (81–95 दिन)	हिमाचल प्रदेश के सूखे क्षेत्र और जम्मू कश्मीर
3.	सांगलाबी 1	2006 (हिमाचल प्रदेश)	12.6	मध्यम अवधि (104–108 दिन), अधिक पैदावार	हिमाचल प्रदेश और उत्तराखण्ड
4.	भी एल 7	1994 (अल्मोड़ा)	12.00	जल्दी पकने वाली (81–95 दिन)	उत्तर भारत
5.	पीआर 'बी१'	रानीचौरी	12.00		रानीचौरी
6.	हिम फाफर	2021 (हिमाचल प्रदेश)	13.00	हिमाचल प्रदेश	
7.	शिमला 'बी१'	2006 (हिमाचल प्रदेश)	12.7		हिमाचल प्रदेश

बीज दर

बीज की मात्रा कुट्टू की किस्म पर निर्भर करती है। स्कूलेन्ट्स के लिए जहा 75–80 किग्रा. प्रति हैक्टर बीज की जरूरत पड़ेगी वहीं टाटारीकम प्रजाति के लिए 40–50 किग्रा. प्रति हैक्टर की मात्रा पर्याप्त होगी। बाद में हल पाटा चलाकर बीजों को ढक देते हैं। कुट्टू के बीजों को छिड़काव विधि से बोते हैं और बुआई के बाद हल पाटा चलाकर बीजों को ढक देते हैं।

बुआई के समय पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी. और पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. रखी जाती है। बीजों को छिड़कर बोते हैं।

बुआई का सही समय

कुट्टू रबी की फसल है। इसकी बुआई 15 सितंबर से 15 अक्टूबर तक कर सकते हैं।

खाद और उर्वरक का प्रयोग

कुट्टू की फसल में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश को 40:20:20 किग्रा. प्रति हैक्टर की दर से डालने से पैदावार अच्छी मिलती है। बुआई के समय ही फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा डालनी चाहिए। बाकी नाइट्रोजन को बालियां निकलते समय देना लाभदायक देखा गया है।

सिंचाई

जहां पर पानी सुनिश्चित हो, वहां पर हल्की भूमि में 5 से 6 सिंचाइयां आवश्यक होती हैं।

खरपतवार नियंत्रण

संकरी पत्ती के लिए 3.3 लीटर पेन्डीमेथिलीन का 800–1000 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के 30–35 दिनों बाद छिड़काव करना चाहिए।

कीट व्याधि

कुट्टू की फसल में कीटों और रोगों का कोई प्रकोप नहीं देखा गया है। इसीलिए इसकी खेती में किसानों पर कीटनाशक का बोझ नहीं पड़ता।

कुट्टू में प्रमुख पोषक तत्व

क्र.सं.	पोषक तत्व	मात्रा / 100 ग्राम
1.	कार्बोहाइड्रेट	65–75 ग्राम
2.	प्रोटीन	12–13 ग्राम
3.	वसा	6–7 ग्राम
4.	विटामिन 'बी'	7 मिग्रा.
5.	फॉस्फोरस	282 मिग्रा.
6.	मैग्नीशियम	231 मिग्रा.
7.	कैल्शियम	114 मिग्रा.
8.	आयरन	13.2 मिग्रा.

कुट्टू का महत्व

- ◆ वजन को कम करने में कारगर।
- ◆ **कैंसर के लिए:** कैंसर के जोखिम कम करने के लिए कुट्टू का इस्तेमाल फायदेमंद हो सकता है।
- ◆ **परागणकों, कीट नियंत्रण और मृदा निर्माण के लिए :** इसके फूल बहुत प्रकार के परागणकों और शिकारी कोटों को आकर्षित करते हैं।
- ◆ **मधुमेह की रोकथाम में मददगार:** कुट्टू में एंटीडायबिटिक गुण पाया जाता है, जो टाइप-2 मधुमेह के नियंत्रण में सहायक हो सकता है। इसलिए डायबिटीज के मरीजों के लिए कुट्टू का सेवन गुणकारी हो सकता है।
- ◆ **पित्त की पथरी को रोकने में लाभकारी:** कुट्टू में पाई जाने वाली प्रोटीन की मात्रा पित्त में मौजूद पथरी के गठन और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम कर सकती है। इसके प्रयोग से शरीर में बाइल एसिड का निर्माण होता है, जिस कारण पित्त की पथरी से छुटकारा मिल सकता है। यही वजह है कि कुट्टू का सेवन पित्त की पथरी के होने का जोखिम काफी हद तक कम कर सकता है।
- ◆ **रक्तचाप को करे नियंत्रित:** कुट्टू में मौजूद मैग्नीशियम रक्त वाहिकाओं को आराम पहुंचाकर रक्त प्रवाह में सुधार कर ब्लड प्रेशर को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- ◆ **हृदय स्वास्थ्य के लिए लाभकारी:** कुट्टू का सेवन शरीर के खराब कोलेस्ट्रॉल और सूजन को कम कर दिल के रोगों से बचाव करने में मददगार होता है।
- ◆ **मजबूत हड्डियों के लिए :** कुट्टू के आटे में मौजूद मैग्नीज हड्डियों को मजबूत बनाने के साथ-साथ शरीर में कैल्शियम के अवशोषण को बढ़ाने में मदद करता है। इसके साथ ही इससे ऑस्टियोपोरोसिस नामक हड्डियों में होने वाले रोग का जोखिम काफी हद तक कम हो सकता है।
- ◆ **अस्थमा के इलाज के लिए:** कुट्टू का सेवन बच्चों में अस्थमा के खतरे को 50 प्रतिशत तक कम कर सकता है।
- ◆ **त्वचा के लिए:** पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत होने के कारण त्वचा के लिए कुट्टू महत्वपूर्ण माना जा सकता है। कुट्टू में रुटीन (rutin) पाया जाता है, जो त्वचा को सूरज की पराबैंगनी किरणों से सुरक्षा प्रदान कर सकता है।

कटाई और पैदावार

कुट्टू की फसल एक साथ नहीं पकती। इसीलिए इसे 70–80 प्रतिशत पकने पर काट लिया जाता है। इसकी दूसरी वजह यह भी है कि कुट्टू की फसल में बीजों के झड़ने की समस्या ज्यादा होती है। कटाई के बाद फसल का गढ़र बनाकर, इसे सुखाने के बाद गहाई करनी चाहिए। कुट्टू की औसत पैदावार 11–13 किंवटल प्रति हैक्टर होती है।

कुट्टू के व्यंजन

कुट्टू की पूड़ी

उपवास के दौरान, कुट्टू के आटे की पूड़ी बनाई जाती है। कुट्टू के आटे के सेवन से शरीर में गमटट उत्पन्न होती है। इसलिए सदट्ट के मौसम में शरीर के लिए अच्छा होता है।



कुट्टू का डोसा

यह कुट्टू के साथ कोलोकेसिया का उपयोग करके बनाया जाता है।

कुट्टू का ढोकला

यह सांवा आटा के साथ कुट्टू के आटे को मिलाकर बनाया जाता है।



कुट्टू के वडे

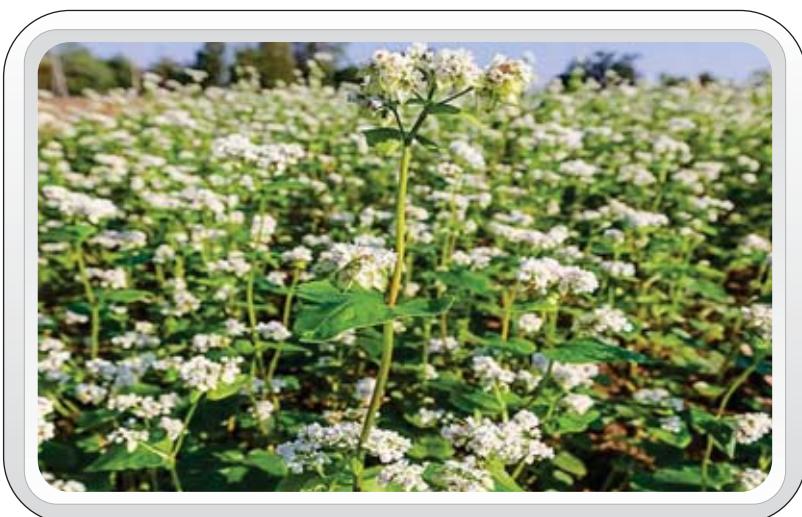
ये ग्लूटेन और अनाज मुक्त बड़े, डाइटिंग में मदद करते हैं।

कुट्टू खिचड़ी

ब्रत के दिनों के लिए सबसे अच्छा व्यंजन।

कुट्टू सलाद

यह डाइटिंग के लिए एक पौष्टिक भोजन है।



21. रामदाना की उन्नतशील खेती

रामदाना स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्धक खाद्यान्य होता है। छत्तीगढ़ राज्य के मैदानी और पर्वतीय क्षेत्रों में ठंड के दिनों में इसकी खेती होती है। कहा जाता है कि रामदाना पेन्ट्रोपिकल कास्मोपोलिटम नामक खरपतवार से उपजा है। इसे आम भाषा में अनार दाना, राम दाना, चुआ, राजरा और मारचू कहा जाता है। इसमें कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन और लाइसिन जैसे तत्वों के अलावा बीटा केरोटिन, लोहा और फोलिक एसिड प्रचुर मात्रा में होता है।

भूमि की तैयारी



रामदाना की उत्तम खेती के लिए जीवांशयुक्त बलुई दोमट मिट्टी सही होती है, जिसका पीएचमान 6 से 7.5 होना चाहिए। बुवाई से पहले खेत को जुताई करके खेत को भुरभुरा और खरपतवार रहित बना लेना चाहिए।

जलवायु

इसके लिए ठंडी मौसम सर्वोत्तम माना जाता है। हालांकि इसे सूखे में मौसम में भी लगाया जा सकता है लेकिन ज्यादा पानी देने या हवा चलने में इसकी फसल गिर जाती है।

बुवाई का समय

इसकी बुवाई मैदानी भागों में अक्टूबर और नवंबर महीने में उचित होती है।

रामदाना की उन्नत किस्में

सुवर्णा : इस किस्म की खेती ओडिशा, गुजरात और कर्नाटक राज्य के लिए उपयुक्त है। यह 140 से 150 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। इससे प्रति हेक्टेयर 14 से 16 किंविटल का उत्पादन हो जाता है।



जीए-2 : यह गुजरात राज्य के लिए उपयुक्त है। इसका पौधा 150 दिनों में पककर तैयार हो जाता है। इससे प्रति हेक्टेयर 14 से 15 किंवटल की पैदावार होती है।

बीजीए 2 : यह किस्म 140 से 145 दिन में पककर तैयार हो जाती है। यह तमिलनाडु, ओडिशा, कर्नाटक राज्य के लिए उपयुक्त है। इससे प्रति हेक्टेयर 14 किंवटल का उत्पादन होता है।

आरएमए 7 : यह भी उन्नत किस्म है और ओडिशा, गुजरात और झारखण्ड राज्य के लिए उपयुक्त है। इससे प्रतिहेक्टेयर 145 से 150 किंवटल की पैदावार होती है।

छत्तीगढ़ रामदाना 1 : यह छत्तीसगढ़ राज्य के लिए उपयुक्त है। 140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। प्रति हेक्टेयर 14 किंवटल की पैदावार होती है।

बीजदर

इसका बीज महीन और हल्का होता है। कतारों में लगाने पर प्रति हेक्टेयर 2 किलो बीज की जरूरत पड़ती है। वहीं छिटकवां विधि से ब्रुवाई की जाती है तो 3 किलो बीज प्रति हेक्टेयर के हिसाब से लेना चाहिए। कतार से कतार की दूरी 30 सेंटीमीटर, पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंटीमीटर और बीज की गहराई सेंटीमीटर रखना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

रामदाना की अच्छी पैदावार के लिए खेत तैयार करते समय 10 से 12 टन गोबर की पकी खाद मिलाएं। इसके अलावा प्रति हेक्टेयर के लिए नाइट्रोजन 55–60 किलो, सुपर फास्फेट 35–40 किलो और पोटाश 20–25 किलो की मात्रा में लें।

कीट एवं रोग

इसमें बग, कैटर पिल्लर और तना घुन जैसे कीट फसल को नुकसान पहुंचाते हैं। इसके झुलसा रोग, विषाणु समेत अन्य कीटों का प्रकोप रहता है। अनुशंसित उर्वरकों एवं बायोपेरिट्साइड्स का प्रयोग करके इन कीट रोग से निजात पा सकते हैं।

कब करें कटाई

इसकी फसल 140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। जब फसल पीली पड़ जाए तब इसकी कटाई कर लेना चाहिए। इसके बाद फसल को तिरपाल पर अच्छी तरह सुखा लें और फिर कुटकर छंटाई कर लें।



22. कुटकी की उन्नतशील खेती

कुटकी या लिटिल बाजरा (पैनिकम सुमैट्रेंस), जिसे छोटे बाजरा के रूप में भी जाना जाता है, एक प्रकार का बाजरा है जो भारत का मूल है और अपने उच्च पोषण मूल्य और सूखा सहिष्णुता के लिए जाना जाता है। यह भोजन और चारे के लिए उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण फसल है। यह भारत के कई हिस्सों में एक मुख्य भोजन है और इसे दुनिया के सबसे पुराने खेती वाले अनाजों में से एक माना जाता है।

भारत में, इसकी खेती ज्यादातर मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और आंध्र प्रदेश के आदिवासी इलाकों तक ही सीमित है। यह अद्भुत बाजरा है जो सभी आयु वर्ग के लोगों के लिए उपयुक्त है। यह कब्ज को रोकने में मदद करता है और पेट से संबंधित सभी समस्याओं को ठीक करता है। थोड़ा सा बाजरा कोलेस्ट्रॉल से भरपूर होता है, इसके सेवन से शरीर में अच्छे कोलेस्ट्रॉल की मात्रा बढ़ती है, बढ़ते बच्चों के लिए उपयुक्त और शरीर को मजबूत बनाता है। इसका जटिल कार्बोहाइड्रेट धीरे-धीरे पचता है जो मधुमेह रोगियों के लिए बहुत मददगार होता है। छोटे बाजरे में प्रति 100 ग्राम अनाज में 8.7 ग्राम प्रोटीन, 75.7 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 5.3 ग्राम वसा और 1.7 ग्राम खनिज और 9.3 मिलीग्राम आयरन होता है। इसका उच्च फाइबर शरीर में वसा के जमाव को कम करने में मदद करता है। अन्य पोषक तत्वों के साथ फिनोल, टैनिन और फाइटेट जैसे न्यूट्रास्यूटिकल घटक प्रदान करने में छोटे बाजरा की महत्वपूर्ण भूमिका है।



कुटकी बाजरा की राज्यवार किस्में :

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि	पकने की अवधि (दिन)	औसत पैदावार कु./हे.	क्षेत्र	विशिष्टियाँ
1.	बी.एल.-6	2016	90–95	12–14	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश	जँची एवं जिंक व कैल्शियम युक्त भूमि हेतु संस्तुत।
2.	डी.एच.एल.एम.-36-3	2016	95–100	14–16	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश	देर से पकने वाली प्रजाति।
3.	ओ.एल.एम.-208	2009	100–105	12–15	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश	तना बेधक कीट हेतु मध्यम अवरोधी।
4.	ओ.एल.एम.-217	2009	105–110	15–16	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश	रतुआ एवं कण्डुवा अवरोधी, किन्तु शीथ ब्लाइट हेतु मध्यम अवरोधी।

बुवाई का समय :

खरीफ – मानसून की शुरुआत के साथ जुलाई का पहला पचवाड़ा

पौधे की दूरी :

25–30 सेमी (पंक्ति से पंक्ति), 8 – 10 सेमी (पौधे से पौधे)। बीज को 2–3 सेंटीमीटर की गहराई में बोना चाहिए।

बीज दर :

पंक्ति बुवाई के लिए : 8–10 किग्रा / हेक्टेयर

प्रसारण के लिए : 12–15 किग्रा / हेक्टेयर

जलवायु :

कुटकी या छोटा बाजरा सूखे के साथ-साथ जल भराव सहनशील होता है। इसलिए यह वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त फसल है। इसकी खेती 2000 मीटर की ऊँचाई तक पहाड़ी क्षेत्रों तक ही सीमित है। यह 10 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान पर इसकी खेती नहीं की जा सकती है।

खेत की तैयारी :

कुटकी (लिटिल मिलेट) बोने से पहले खेत की अच्छी जुताई करके, खेत को समतल करके और लगभग 8 इंच की गहराई तक जुताई करके भूमि तैयार करना चाहिए।

खाद और उर्वरक :

बुवाई से लगभग एक महीने पहले कम्पोस्ट या गोबर की खाद 5–10 टन / हेक्टेयर की दर से डालें। आमतौर पर एक अच्छी फसल प्राप्त करने के लिए 40 किग्रा नाइट्रोजन, 20 किग्रा फॉस्फोरस और 20 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की सिफारिश की जाती है। मृदा परीक्षण आधारित उर्वरकों के प्रयोग की संस्तुति की जाती है। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा और आधी नाइट्रोजन बुवाई के समय और आधी नाइट्रोजन पहली सिंचाई के समय डालें।

निराई और गुड़ाई :

लाइन में बोई गई फसल में दो अंतर जुताई और एक हाथ से निराई की सिफारिश की जाती है। जब फसल 30 दिन की हो जाए तो टाइन-हैरो का उपयोग करके इंटरकल्वरल ऑपरेशन की भी सिफारिश की जाती है। बिखरी हुई फसल में पहली निराई-गुड़ाई अंकुर निकलने के 15–20 दिन बाद और दूसरी निराई-गुड़ाई पहली निराई के 15–20 दिन बाद करने की संस्तुति की जाती है।

सिंचाई :

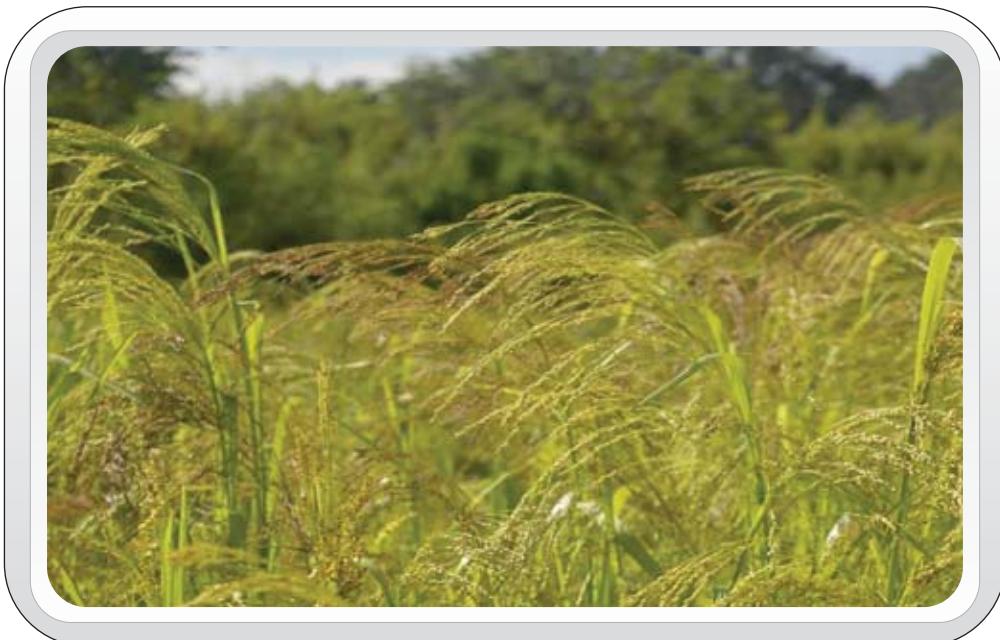
खरीफ मौसम की फसल को न्यूनतम सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह ज्यादातर वर्षा आधारित फसल के रूप में उगाया जाता है। हालांकि, यदि सूखा मौसम अधिक समय तक रहता है तो 1–2 सिंचाइयां देनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल को मिट्टी के प्रकार और जलवायु परिस्थितियों के आधार पर 2–5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

फसल की कटाई :

बुवाई के 65–75 दिनों में फसल कटाई के लिए तैयार हो जाती है।

पैदावार :

कुटकी की अच्छी देखरेख और मौसम अनुकूलता के आधार पर अनाज 12–15 कुन्तल प्रति हेक्टेयर उपज एवं 20–25 कुन्तल भूसा प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो सकता है।



23. गन्ना की उन्नतशील खेती

हमारे देश में गन्ना एक प्रमुख नकदी फसल है जिसकी खेती प्रति वर्ष लगभग 62.00 लाख हेक्टेयर भू-क्षेत्र में की जाती है। इस देश में गन्ने की औसत उपज 82.00 टन प्रति हेक्टेयर है, जो उत्पादन क्षमता से काफी कम है। उत्तर प्रदेश में 28.53 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल (वर्ष 2022–23) में गन्ने की खेती की जाती है जिसकी औसत उपज 82.31 टन प्रति हेक्टेयर (वर्ष 2022–23) है।

उपोष्ण क्षेत्र में अधिकांशतः गन्ने की खेती चिकनी जलोढ़ भूमि में की जाती है जिसमें पानी रोकने की पर्याप्त क्षमता होती है इन क्षेत्रों में गन्ने की खेती मौसम के अनुकूल दशाओं जैसे — गर्म व सूखा तथा नम और ठण्डी में की जाती है। गन्ने की वृद्धि के लिए अनुकूल समय केवल जुलाई से अक्टूबर तक रहता है। बलुई दोमट भूमि में गन्ने की खेती सामान्यतः की जाती है जिसकी मृदा नमी 12–15 प्रतिशत हो।



उत्तर प्रदेश के विभिन्न जनपदों हेतु स्वीकृत गन्ना प्रजातियाँ

क्र.सं.	नाम क्षेत्र	जनपद	शीघ्र पकने वाली किस्में	मध्य देरी से पकने वाली किस्में
1. सभी क्षेत्र	सभी क्षेत्र	प्रदेश के समस्त गन्ना उत्पादक जनपद	को.शा. 8436, को.शा. 88230, को.शा. 95255, को.शा. 96268, को.से. 03234, यू.पी. 09453 (यू.पी. 051285), को.से. 98231, को.शा. 08272, को.से. 95422, को. 0238, को. 0118, को. 98014, को.शा. 13231, को.शा. 13235, को.लख. 14201	को.शा. 767, को.शा. 8432, को.शा. 97264, को.शा. 96275, को.शा. 97261, को.शा. 98259, को.शा. 99259, को.से. 01434, यू.पी. 01097, को.शा. 08279, को.शा. 08276, को.शा. 12232, को.से. 11453, को. 05211, को.शा. 09232, को.से. 13452, को.शा. 14233, को.पी.के. 05191
2. पश्चिमी क्षेत्र	मेरठ सहारनपुर	मेरठ, गाजियाबाद, हापुड़, बुलन्दशहर, बागपत। सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, शामली	सभी क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किस्मों के साथ—साथ को.जा. 64, को.शा. 64, को.शा. 03251, को.लख. 9709, को. 0237, को. 05009, को.लख. 11203	सभी क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किस्मों के साथ—साथ को.शा. 94257, को.शा. 96269, यू.पी. 39, को.पन्त. 84212, को.शा. 07250, को.ह. 119, को.पन्त 97222, को.जे. 20193, को. 0124, को.ह. 128, को.लख. 09204, को.लख. 11206, को. 09022, को. 12029
3. मध्य क्षेत्र	लखनऊ बरेली मुरादाबाद	लखनऊ, लखीमपुर, सीतापुर, हरदोई, रायबरेली, कानपुर, कानपुर-देहात, फस्त्याबाद, उन्नाव। बरेली, पीलीभीत, शाहजहाँपुर, बदायूँ अलीगढ़, एटा, मथुरा। मुरादाबाद, सम्बल, अमरोहा, रामपुर तथा बिजनौर।	सभी क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किस्मों के साथ—साथ को.जा. 64, को.से. 01235, को.लख. 9709, को. 0237, को. 05009, को.लख. 11203	सभी क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किस्मों के साथ—साथ को.शा. 94257, को.शा. 96269, यू.पी. 39, को.पन्त. 84212, को.ह. 119, को.पन्त 97222, को.जे. 20193, को. 0124, को.ह. 128, को.लख. 09204, को.लख. 11206, को. 09022, को. 12029

क्र.सं.	नाम क्षेत्र	जनपद	शीघ्र पकने वाली किस्में	मध्यदेर से पकने वाली किस्में
4. पूर्वी क्षेत्र	देवरिया, गोरखपुर, देवीपाटन, अयोध्या	देवरिया, कुशीनगर, आजमगढ़, मऊ, बलिया। गोरखपुर, महराजगंज, बस्ती, सिद्धार्थनगर, सन्तकबीरनगर। गोणडा, बलरामपुर, श्रावस्ती, बहराइच। अयोध्या, वाराणसी, भदोही, जौनपुर, गाजीपुर, बाराबंकी, अम्बेडकरनगर, सुन्तानपुर, अमेठी, प्रयागराज, मिर्जापुर आदि	सभी क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किस्मों के साथ—साथ को.से. 01235, को. 87263, को. 87268, को. 89029, को.लख. 94184, को. 0232, को.से. 01421, को.लख. 12207।	सभी क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किस्मों के साथ—साथ को.से. 96436, को. 0233, को.से. 08452, को.लख. 12209।
5. सभी जलप्लावित क्षेत्रों के लिए स्वीकृत प्रजातियाँ			—	यू.पी. 9530 एवं को.से. 96436, को.शा. 10239 (जल प्लावित एवं ऊसर)

प्रमुख प्रजातियों की पहचान एवं विशेषताएं

क्र. सं.	प्रजाति	उपज (मी.टन प्रति है.)	रस में शर्करा का प्रतिशत	गन्ने में शर्करा का प्रतिशत	विशेषताएं
	शीघ्र पकने वाली प्रजातियाँ :				
1.	को.शा. 8436	64–78	नवम्बर (15.65) जनवरी (17.80) मार्च (19.47)	13.05 (10 माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, हल्का पीला, कड़ा एवं बीच में बारीक छिद्र। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य एवं अच्छी उपज के साथ गन्ना गिरता नहीं है। काना, कंडुआ एवं विवर्ण एवं उकठा रोगरोधी। अंकुर तथा तना बेधक का प्रकोप मध्यम एवं चोटी बेधक का प्रकोप अधिक पाया जाता है।
2.	को.शा. 88230	71–75	नवम्बर (15.96) जनवरी (18.25) मार्च (19.67)	13.34 (10 माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम एवं ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ना तथा उपज अच्छी होती है। पेड़ी अच्छी, रेशे की मात्रा कम एवं पत्तियाँ स्वतः छूट जाती हैं एवं देर से बुवाई के लिए उपयुक्त। काना एवं उकठा रोगों के प्रति मध्यम रोगग्राही, कंडुआ के प्रति रोग रोधी तथा विवर्ण के प्रति मध्यम रोग रोधी है। अंकुर बेधक का प्रकोप कम तथा तना एवं चोटी बेधक का प्रकोप अधिक पाया गया।

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	उपज (मी.टन प्रति है.)	रस में शर्करा का प्रतिशत	गन्ने में शर्करा का प्रतिशत	विशेषताएं
3.	को.शा. 95255 रचना	85—102	नवम्बर (16.25) जनवरी (18.66) मार्च (18.86)	13.30 (10 माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम कड़ा एवं ठोस। जमाव, व्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज में अच्छी। तेजी से बढ़ने वाली तथा अच्छी पेड़ी और गन्ना गिरता नहीं है। यह प्रजाति काना एवं कंडुआ रोग के प्रति मध्यम रोगरोधी एवं उकठा के प्रति रोगरोधी से मध्यम रोग ग्राही पायी गयी।
4.	को.शा 95436 कुशी	75—80	नवम्बर (16.58), दिसम्बर (17.29)	13.00 (10 माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, हल्का पीला एवं ठोस है। जमाव, व्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज में अच्छा। तेजी से बढ़ने वाली तथा अच्छी पेड़ी और गन्ना गिरता नहीं है। काना, रोग से मध्यम रोगरोधी। कंडुआ उकठा एवं विवर्ण रोगों से मध्यम रोगरोधी।
5.	को.शा. 96268 मिठास	81—99	नवम्बर (16.65), दिसम्बर (17.42) जनवरी (17.75)	13.64 (10 माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मुलायम एवं ठोस। जमाव, व्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज में उत्तम। तेजी से बढ़ने वाली तथा अच्छी पेड़ी और गन्ना गिरता नहीं है। काना, कंडुआ रोग के प्रति मध्यम रोगरोधी। आकुर बेधक, तना बेधक व चोटी बेधक का प्रकोप मध्यम।
6.	को.शा. 98231 मिठास	76—90	नवम्बर तथा जनवरी में क्रमशः 15.78 व 16.92	13.17 (10 माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम एवं ठोस। जमाव, व्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज में उत्तम। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है। काना कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोगरोधी।
7.	को.से. 00235	83—85	नवम्बर (17.75), जनवरी (18.22) मार्च (19.02)	नवम्बर (12.60), दिसम्बर (13.80), जनवरी (13.92), फरवरी (14.02)	गन्ना सीधा, मध्यम पतला, मध्यम कड़ा एवं ठोस। जमाव, व्यांत, मिल योग्य गन्ने एवं उपज उत्तम। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है। काना कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोगरोधी।
8.	को.से. 01235 राप्ती	83—88	नवम्बर (17.81), जनवरी (18.41) मार्च (19.22)	नवम्बर (12.65), दिसम्बर (13.90), जनवरी (13.95), फरवरी (13.23)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम एवं ठोस। जमाव, व्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज उत्तम। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है। काना कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोगरोधी।

क्र. सं.	प्रजाति	उपज (मी.टन प्रति है.)	रस में शर्करा का प्रतिशत	गन्ने में शर्करा का प्रतिशत	विशेषताएं
मध्य एवं देर से पकने वाली प्रजातियाँ					
9.	को.शा. 8432	66—88	नवम्बर (15.51), जनवरी (16.12) मार्च (18.88)	13.30 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम कड़ा एवं ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य तथा उपज में अच्छी। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है। काना, कंडुआ, उकठा रोगों में मध्यम रोगरोधी तथा विवर्ण से मध्यम रोग ग्राही। आंकुर बेधक तथा तना बेधक का प्रकोप कम एवं चोटी बेधक का प्रकोप मध्यम पाया गया।
10.	को.शा. 94257	84—101	नवम्बर (13.44), जनवरी (15.64) मार्च (17.51)	12.80 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा लम्बा, हल्का पीला, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम एवं ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य अच्छी उपज, पेड़ी उत्तम। कम रेशा। काना, कंडुआ, उकठा तथा विवर्ण रोगों से मध्यम रोग रोधी। अंकुर एवं चोटी बेधक का प्रकोप कम तथा तना बेधक का प्रकोप अधिक।
11.	को.से. 92423 राजभोग	80—118	नवम्बर (13.15), जनवरी (15.75) मार्च (18.18)	13.10 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, हल्का पीला हरा तथा बीच में बारीक छिद्र उपस्थित। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज उत्तम। पेड़ी व्यवहार उत्तम। गन्ने में फूलने की प्रवृत्ति। काना रोग से मध्यम रोग रोधी। कंडुआ रोग से रोगरोधी। विवर्ण से मध्यम रोग ग्राही।
12.	को.पन्त. 84212	64—69	जनवरी (15.64) मार्च (17.51)	12.95 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, ठोस तथा हरा सफेद परन्तु खुला हुआ भाग हरा पीला, कहीं—कहीं बैंगनी धब्बे। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज मध्यम। पेड़ी मध्यम। बढ़ने पर गिरने की प्रवृत्ति। काना रोग से मध्यम रोग ग्राही।
13.	को.शा. 97264 चपला	89—104	नवम्बर (14.31), जनवरी (15.99) मार्च (18.52)	13.20 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम तथा ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज उत्तम। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है एवं अच्छी बढ़वार वाली होता है। काना, कण्डुआ, उकठा रोगों के प्रति मध्यम रोग रोधी।
14.	को.से. 95422 रसभरी	86—95	नवम्बर (15.72), जनवरी (17.19) मार्च (17.65)	13.74 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम तथा ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने एवं उपज में अच्छी। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है। काना रोग के प्रति मध्यम रोग रोधी।

खरीफ फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	उपज (भी.टन प्रति है.)	रस में शर्करा का प्रतिशत	गन्ने में शर्करा का प्रतिशत	विशेषताएं
मध्य एवं देर से पकने वाली प्रजातियाँ					
15.	को.शा. 96275 स्पीटी	89–98	नवम्बर (15.11), जनवरी (16.67) मार्च (18.26)	जनवरी (12.98) एवं मार्च (14.30)	गन्ना सीधा, मध्यम पतला, मुलायम लम्बा एवं ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ना तथा उपज में अच्छी। अच्छी पेड़ी के साथ ही साथ गन्ना गिरता भी नहीं है। पोरी कुछ लम्बी होने के कारण 2 आँख के टुकड़े बुवाई के समय प्रयोग करना लाभप्रद। काना, कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोग रोधी।
16.	को.शा. 97261	98–109	नवम्बर (14.28), जनवरी (17.16) एवं मार्च (17.60)	जनवरी (12.90) मार्च (13.46)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम कड़ा, ठोस एवं न गिरने वाला। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ना एवं उपज उत्तम। पेड़ी उत्तम। काना, कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोग रोधी।
17.	यू.पी. 0097 हृदय	92–100	नवम्बर (15.00), जनवरी (17.22) एवं मार्च (18.80)	जनवरी (12.80) मार्च (14.47)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मुलायम, लम्बा एवं ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य तथा गन्ने उपज उत्तम। पेड़ी भी उत्तम। गन्ने का वजन एवं लम्बाई अधिक होने के कारण गन्ना बंधाई की आवश्यकता होती है। काना, कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोग रोधी।
18.	को.शा. 96269 शाहजहाँ	90–93	नवम्बर (14.78), जनवरी (16.49) एवं मार्च (17.53)	जनवरी (11.72), फरवरी (12.74) एवं मार्च (13.72)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मध्यम मुलायम एवं ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज अच्छी। पेड़ी भी अच्छी। काना, कण्डुआ, उकठा एवं विवर्ण रोगों के प्रति मध्यम रोग रोधी।
19.	को.शा. 99259	96–99	—	(पोल : केन) नवम्बर (11.42), जनवरी (12.62) एवं मार्च (14.49)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, मुलायम तथा ठोस। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज उत्तम। पेड़ी भी उत्तम। गन्ना गिरने की प्रवृत्ति। बंधाई करना एवं मिट्टी चढ़ाना लाभप्रद। काना, कण्डुआ, उकठा तथा विवर्ण के प्रति रोग रोधी। अंकुर बेधक, चोटी बेधक का प्रकोप कम एवं तना बेधक का प्रकोप मध्यम।
जलप्लावित क्षेत्रों हेतु					
20.	यू.पी. 9530	65–78	जनवरी (14.03) एवं मार्च (16.68)	12.75 प्रतिशत (बाराह माह की अवस्था में)	गन्ना सीधा, मध्यम मोटा, लम्बा, हल्का पीला हरा एवं कड़ा। गन्ने में पिथ उपरिथित। जमाव, ब्यांत, मिल योग्य गन्ने तथा उपज में अच्छी। पेड़ी अच्छी। गन्ना गिरता नहीं। काना, कण्डुआ तथा विवर्ण रोगों से मध्यम रोग रोधी।

वैज्ञानिक ढंग से गन्ने की खेती

बुवाई का उपयुक्त समय :

शरदकाल	—	मध्य सितम्बर से अक्टूबर ।
बसंतकाल	—	मध्य जनवरी से फरवरी ।
	—	फरवरी से मार्च ।
	—	मध्य फरवरी से मध्य अप्रैल ।

प्रदेश में स्वीकृत प्रमुख प्रजातियाँ :

1. शीघ्र पकने वाली :

को.शा. 8436, 88230, 95255, 96268, को.से. 95436, 98231, 00235, 01235 एवं को. जे.64 ।

2. मध्य—देर से पकने वाली :

को.शा. 767, 8432, 88216, 91230, 92263, 94257, 96275, 96269, 97261, 97264, 99259, को.से. 92423, 95422, 95427, 96436, यू.पी. 22, 39, 9530, 0097, को. पन्त. 84212 ।

3. देर से बुवाई हेतु:

को.शा. 767, 88230, 94257, 95255, को.से. 92423 एवं यू.पी.39 ।

4. सीमित कृषि साधन हेतु:

को.शा. 767, 88216, 94257, 95255 ।

5. सीमित सिंचाई हेतु :

को.शा. 767, 88216, 96275, को.से. 92423 एवं यू.पी. 39 ।

6. क्षारीय भूमि हेतु :

को.शा. 767, 92263 ।

7. जलप्लावन हेतु :

यू.पी. 9530 एवं को.से. 96436 ।

बीज गन्ना चुनाव व मात्रा :

शुद्ध. रोग व कीट मुक्त, प्रचुर मात्रा में खाद व पानी प्राप्त खेत (पौधशाला) से बीज का चुनाव करें। गन्ने के ऊपरी 1/3 भाग का जमाव अपेक्षाकृत अच्छा होता है। गन्ने की मोटाई के अनुसार 50—60 कुन्तल (लगभग 37.5 हजार तीन—तीन आँख के या 56.00 हजार दो—दो आँख के पैड़े प्रति हेक्टेयर) बीज की आवश्यकता पड़ती है। देर से बुवाई करने पर उपरोक्त का डेढ़ गुना बीज की आवश्यकता होती है।

बीज उपचार :

परायुक्त रसायन जैसे एरीटान 6% या एगलाल 3% की क्रमशः 280 ग्राम या 560 ग्राम अथवा बाविस्टन की 112 ग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर को 112 लीटर पानी में घोल बनाकर गन्ने के पैड़ों को डुबोकर उपचारित करना चाहिए।

भूमि उपचार :

दीमक एवं आंकुर बेधक नियंत्रण हेतु क्लोरोपाइरीफास गामा बी.एच.सी. 20 प्रतिशत ई.सी. घोल 1.5 लीटर पानी में घोलकर अथवा फोरेट 10 जी या दीमक नियंत्रण हेतु फेनवलरेट 0.4% धूल 25 किग्रा./हे. पैड़ों पर बुरककर ढकाई करना चाहिए।

पंक्ति से पंक्ति की दूरी :

शारद कालीन बुवाई	— 90 सेमी.
बसंत कालीन बुवाई	— 90 सेमी.
देर से बुवाई	— 60 सेमी

पैड़े से पैड़े की दूरी : प्रति 20 सेमी. की दूरी में दो आँख का एक पैड़ा डालना चाहिए।

खाद की मात्रा :

नत्रजन	— 150—180 किग्रा./हे.
फास्फोरस	— 60—80 किग्रा./हे.
पोटाश	— 20—40 किग्रा./हे.
जिंक सल्फेट	— 25 किग्रा./हे.

प्रयोग समय :

नत्रजन उर्वरक की कुल मात्रा का 1/3 भाग तथा 60 से 80 किग्रा. फास्फोरस एवं 20—40 किग्रा. पोटाश तत्व रूप में प्रति हे. की दर से बताई में पूर्व कूड़ों में डालना चाहिए। नत्रजन की शेष दो—तिहाई मात्रों दो समान हिस्सों में जून से पूर्व (व्यातकाल) प्रयोग करना चाहिए। जिंक सल्फेट खेत तैयारी के समय या प्रथम सिंचाई के बाद ओट आने पर पौधों के पास देकर गुड़ाई करना चाहिए।

सिंचाई :

प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र में 4—5 मध्य क्षेत्र में 5—6 तथा पश्चिमी क्षेत्र में 7—8 सिंचाई (दो सिंचाई वर्षा उपरान्त) करना लाभप्रद पाया गया है।



गुड़ाई :

गन्ने के पौधों की जड़ों को नमी व वायु उपलब्ध कराने तथा खरपतवार नियंत्रण के दृष्टिकोण से ग्रीष्मकाल में प्रत्येक सिंचाई के बाद एक गुड़ाई करसी / फावड़ा / कल्टीवेटर से करना लाभदायक रहता है।

मिट्टी चढ़ाना :

गन्ने की जड़ों पर जून माह के अन्त में हल्की मिट्टी तथा जुलाई में अन्तिम रूप से पर्याप्त मिट्टी चढ़ानी चाहिए।



गन्ने की बंधाई :

पहली बंधाई लगभग 150 सेमी. की ऊँचाई पर जुलाई के अन्त में दूसरी बंधाई पहली बंधाई के लगभग 50 सेमी. ऊपर अगस्त में तत्पश्चात आवश्यकतानुसार दो पंक्तियों के तीन थानों की एक साथ बंधाई (कैंची बंधाई) अगस्त—सितम्बर में करनी चाहिए।

कटाई :

फसल की आयु, परिपक्वता, गन्ना प्रजाति तथा बुवाई के समय के आधार पर नवम्बर से अप्रैल पर कटाई करनी चाहिए।

गन्ना की पेड़ी

प्रजातियों का चयन :

क्षेत्र के लिए संस्तुत प्रजातियों में से ही चुनाव करें।

फसल का चुनाव :

बावग गन्ने की अच्छी, शुद्ध, रोग व कीट रहित फसल ही पेड़ी के लिए अच्छी होती है।

बावक फसल की कटाई एवं कर्षण क्रियाएं :

संस्तुति अनुसार फरवरी से मार्च तक भूमि की सतह से बावक फसल की कटाई करना, ठूठों की तेज धारा वाले औजार से छंटाई करना, सूखी पत्तियां जलाना या समान रूप से बिछाना, सिंचाई कर मेड़े गिराना तथा देशी हल या कल्टीवेटर से गुड़ाई करना चाहिए।

नत्रजन :

180 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की आधी मात्रा बावक की कटाई उपरान्त सिंचाई के बाद तथा शेष नत्रजन व्यांत आरम्भ होने के लाइनों में देना चाहिए। मई—जून में 5 प्रतिशत यूरिया के घोल में 1.0 ली./हे. क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. कीटनाशक मिलाकर दो बार छिड़काव करना लाभप्रद है।

गन्ना के साथ अन्तःफसलें

अन्तःफसलों का चुनाव :

गन्ना के साथ अन्तः खेती के लिए कम समय में पकने वाली उनहीं फसलों का चुनाव करना चाहिए जो क्षेत्र की जलवायु मिट्टी एवं कृषि निवेशों की उपलब्धता तथा स्थानीय मांगों के अनुकूल हो, जिनमें वृद्धि प्रतिस्पर्धा न हो तथा जिसकी छाया से गन्ना फसल पर विपरीत प्रभाव न पड़ता हो।

प्रमुख अन्तःफसलें :

- क) शरद कालीन — मटर (फली), आलू लाही, राई, प्याज, मसूर, धनिया, लहसुन, मूली, गोभी, शलजम आदि।
- ख) बसन्तकालीन — उरद, मूँग, भिण्डी तथा लोबिया (चारे व हरी खाद के लिये)।

गन्ना की खेती में ध्यान रखने योग्य महत्वपूर्ण बातें :

1. अन्तःफसलों के लिए अलग से संस्तुति अनुसार उर्वरकों की समय से पूर्ति करनी चाहिए।
2. अन्तःफसल काटने के बाद शीघ्रातिशीघ्र गन्ने में सिंचाई व नत्रजन की टापड़ेसिंग करके गुड़ाई की जानी चाहिए।
3. रिक्त स्थानों में पहले से अंकुरित गन्ने के पैड़ों से गैप फिलिंग करनी चाहिए।
4. जल ठहराव की अवस्था में अविलम्ब जल निकास का प्रबन्ध करना चाहिए।
5. नमी का संरक्षण व खरपतवार नियंत्रण हेतु जमाव पूरा होने के पश्चात रोग/कीटमुक्त गन्ने की पत्तियों की 10 सेमी. मोटी तह पंक्तियों के बीच में बिछानी चाहिए।
6. सीमित सिंचाई साधन की स्थिति में एकान्तर नालियों में सिंचाई करना लाभकारी पाया गया है।
7. चोटीबेधक कीट के नियंत्रण हेतु अप्रैल—मई माह में कीट ग्रसित पौधों को खेत से निकालते रहें तथा जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक खेत में पर्याप्त नमी होने की दशा में 30 किग्रा./हे. की दर से कार्बोफ्यूरान 3 जी गन्ने की लाइनों में डालें।
8. जलप्लावित क्षेत्रों में यूरिया का 5 से 10 प्रतिशत पर्णीय छिड़काव लाभदायक पाया गया है।
9. वर्षाकाल में 20 दिन तक वर्षा न होने पर सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

गन्ना के प्रमुख नाशीकीटों की पहचान एवं रोकथाम के उपाय

1. दीमक :

यह कीट बुवाई से कटाई तक फसल की किसी भी अवस्था में लग सकता है। दीमक पैड़ों के कटे सिरों, पैड़ों की आंखों, किल्लों की जड़ से तथा गन्ने को भी जड़ से काट देता है एवं कटे स्थान पर मिट्टी भर देता है।

रोकथाम :

बोते समय गन्ने के पैड़ों के ऊपर निम्न कीटनाशकों में से किसी भी एक का प्रयोग कर ढक देना चाहिए :

1. बुवाई से पूर्व खेत की गहरी जुताई करना चाहिए।
2. खेत में कच्चे गोबर का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
3. फसलों के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
4. नीम की खली 10 कुन्तल प्रति हे. की दर से बुवाई से पूर्व मिलाने से खेत में दीमक के प्रकोप में कमी आती है।
5. ब्यूवेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60—75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी की छींट देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से दीमक का नियंत्रण हो जाता है।
6. कूड़ों में फेनवलरेट 0.4 प्रतिशत धूल 25 किग्रा. की दर से बुरकाव करना चाहिए।
7. खड़ी फसल में प्रकोप की स्थिति में निम्नलिखित कीटनाशकों में से किसी एक का सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।
8. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 350 मिली. अथवा क्लोरपाइरिफास 20 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली. प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।

इसके अतिरिक्त प्रभावित खेत में समुचित सिंचाई करके भी दीमक के प्रकोप को कम किया जा सकता है।

2. अंकुर बेधक :

यह गन्ने के किल्लों को प्रभावित करने वाला प्रमुख कीट है तथा इस कीट का प्रकोप गर्भी के महीनों (मार्च से जून तक) में अधिक होता है।

पौधों की पहचान :

1. सूखी गोभ (मृतसार) का पाया जाना।
2. सूखी गोभ को खींचने पर आसानी से निकल आना।
3. प्रभावित गोभ में सिरके जैसी बदबू आना।

रोकथाम :

1. सिंचाई की समुचित व्यवस्था।
2. बुवाई के समय निम्न कीटनाशकों में से किसी एक का प्रयोग किया जाना —
 - ◆ क्लोरपायरीफास 20% घोल 1.5 ली./हे. को 800—1000 लीटर पानी में घोल बनाकर हजारे द्वारा पैड़ों के ऊपर छिड़काव।

- ◆ कार्बोफ्यूरॉन 30% सी.जी. 20–25 किग्रा./हे. की दर से बुवाई के समय कूँड़ों में पैड़ो के ऊपर डालकर ढकाई कर देना।
- ◆ जमाव के पश्चात गन्ने की दो पंक्तियों के बीच 100 कुं. सूखी पत्ती/हे. की दर से बिछाना।

नोट : उपरोक्त कीटनाशकों का प्रयोग बुवाई के समय करने से दीमक का नियंत्रण होता है। अतः दीमक नियंत्रण हेतु अलग से कीटनाशक के प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती है।

3. चोटी बेधक :

यह कीट मार्च से सितम्बर तक लगता है तथा गन्ने में लगने वाले सभी कीटों में प्रमुख है। उत्तरी भारत में इस कीट द्वार सबसे अधिक क्षति होती है।

प्रभावित पौधे की पहचान :

1. मृतसार पाया जाना।
2. गोभ के किनारे किसी पत्ती के मध्य सिरा पर लाधारी का पाया जाना।
3. गोभ के किनारे के पत्तियों पर गोल—गोल छेद का पाया जाना।
4. झाड़ीनुमा सिरा (बन्धी टाप) का पाया जाना।

रोकथाम :

1. मार्च से मई तक अण्ड समूहों को एकत्रित कर नष्ट करना।
2. मार्च से मई तक प्रभावित पौधों को पतली खुरपी से लारवा/प्यूपा सहित काटकर निकालना तथा चारे में प्रयोग करना या उसे नष्ट करना।
3. मार्च से जुलाई तक पन्द्रह दिन के अन्तराल पर ट्राइको कार्ड का प्रत्यारोपण करना।
4. जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत दानेदार 30 किग्रा. प्रति हे. की दर से पौधों की जड़ों के पास समुचित नमी की दशा में प्रयोग करना चाहिए।

4. तना बेधक :

यह कीट गन्ने के तनों में छेद कर उसके अन्दर प्रवेश कर जाता है तथा पोरी के अन्दर गूदा खा जाता है जिसके कारण उपज एव। चीनी के परते में कमी आ जाती है। गन्ना फाड़ने पर लाल दिखाई देता है तथा उसमे कीट द्वारा उत्सर्जित पदार्थ भी दिखाई देते हैं। जगह—जगह पोरियों में छिद्र भी दिखाई देते हैं।

रोकथाम :

1. रोग से प्रभावित खेत में कटाई पश्चात उसमें पत्तियों एवं ठूँठों को पूरी तरह जलाकर नष्ट कर देना चाहिए तथा खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए।
2. गन्ने की सूखी पत्तियों को काट कर अलग कर देना चाहिए।
3. एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन के अन्तर्गत ट्राइकोग्रामा कीलोनिस के 10 कार्ड प्रति हे. की दर से 15 दिन के अन्तराल पर सायंकाल प्रयोग करना चाहिए। अथवा
4. रसायनिक नियंत्रण हेतु निम्नलिखित कीटनाशकों में से किसी एक का प्रयोग करना चाहिए।

5. मोनोक्रोटोफास 36 प्रतिशत एस.एल.2 ली. प्रति हे. 800—1000 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
अथवा

6. क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. 1.5 ली./हे. 800—1000 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। अथवा

7. कार्बोफ्यूरान 3 प्रतिशत सी.जी. 30 किग्रा./हे. की दर से बुरकाव करना चाहिए।

5. गुरदासपुर बेधक :

इस कीट का प्रकोप जुलाई से अक्टूबर तक होता है। सूण्डी ऊपर से दूसरी या तीसरी पोरी में प्रवेश कर अन्दर ही अन्दर स्प्रिंग की तरह घुमावदार काटना आरम्भ कर देती है। गन्ने अन्दर से खोखले हो जाते हैं तथा तेज हवा के झटके से टूटकर अलग हो जाते हैं।

रोकथाम :

1. ग्रसित पौधों को जुलाई से अक्टूबर तक कीट की ग्रीगेरियस अवस्था में काटकर नष्ट कर देना चाहिए।

2. कटाई के बाद ठंडों को खेत से निकालकर जला देना चाहिए।

3. ट्राईकोग्रामा कीलोनिस परजीवी 50000/हे. की दर से प्रत्यारोपण करने से कीट के प्रकोप में कमी पायी जाती है।

6. काला चिकटा :

वयस्क कीट काले रंग के होते हैं तथा यह कीट गर्मी के मौसम में (अप्रैल से जून तक) गन्ने की पेड़ी पर अधिक सक्रिय रहता है। प्रकोपित फसल दूर से पीली दिखाई पड़ती है। छिड़काव करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि कीटनाशक का घोल गोभ में पड़े।

रोकथाम

गर्मियों में प्रकोपित फसल पर निम्न कीटनाशकों में से किसी एक को 625 ली. पानी में घोलकर एक या दो छिड़काव करना चाहिए—

1. क्लोरपाइरीफास 1.5 ली./हे. 800—1000 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। अथवा

2. कवीनालफास 1.5 ली./हे. 800—1000 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

7. पायरिला :

यह कीट हल्के भूरे रंग का 10—12 मिमी. लम्बा होता है। इसका सिरा लम्बा व चौंचनुमा होता है। इसके शिशु तथा वयस्क गन्ने की पत्ती से रस चूस कर क्षति पहुँचाते हैं।

रोकथाम :

1. अण्ड समूहों को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए।

2. फसल वातावरण में पायरिला कीट के परजीवी एपीरिकेनिया मेलोनोल्यूका को संरक्षण प्रदान करना चाहिए। परजीवी कीट की पर्याप्त उपस्थित में कीट की स्वतः रोकथाम हो जाती है।

3. रसायनिक नियंत्रण हेतु निम्नलिखित कीटनाशकों में से किसी एक का प्रयोग करना चाहिए।

◆ गन्ने की सूखी पत्तियों को काटकर अलग कर देना चाहिए।

◆ क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी.2 ली. प्रति हे. 800—1000 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
अथवा

4. क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. 1.5 ली./हे. 800—1000 ली. पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
5. नाइट्रोजन का अधिक उपयोग नहीं करना चाहिए।
6. खेत में समुचित जल प्रबन्ध करना चाहिए।
7. एकीकृत नाशीजीव प्रबन्धन के अन्तर्गत ट्राइकोग्रामा कीलोनिस के 10 कार्ड प्रति हे. 15 दिन के अन्तराल पर सायंकाल में प्रयोग करना चाहिए।

नोट : इसके परजीवी इपिरिकेनिया मिलैनोल्यूका (निम्फ एवं वयस्क) तथा अण्ड परजीवी ट्रेटास्टीक्स पायरिली यदि पाइरिला प्रभावित खेत में दिखाई दें तो किसी भी कीटनाशक का प्रयोग नहीं करना चाहिए। ऐसी स्थिति में परजीवीकरण को बढ़ाने के लिए सिंचाई का समुचित प्रबन्ध करना चाहिए तथा इपिरिकेनिया मिलैनोल्यूका के कक्षून को भी प्रत्यारोपित करना चाहिए।

8. शाल्क कीट :

यह कीट गन्ने की पोरियों से रस चूसने वाला एक हानिकारक कीट है। इसके शिशु हल्के पीले रंग के होते हैं जो थोड़े समय में गन्ने की पोरियों पर चिपक जाते हैं। गतिहीन सदस्यों का रंग पहले राख की तरह भूरा होता है जो धीरे-धीरे काला हो जाता है। मछली के शाल्क की तरह ये कीट गन्ने की पोरियों पर चिपके रहते हैं।

रोकथाम :

1. गन्ने की कटाई के पश्चात खेत में सूखी पत्तियों को बिछाकर जला देना चाहिए।
2. प्रभावित क्षेत्रों से अप्रभावित क्षेत्रों में बीज किसी दशा में वितरित नहीं करना चाहिए।
3. जहाँ तक सम्भव हो, ग्रसित खेतों की पेड़ी नली जाय।
4. अत्याधिक ग्रसित फसल का अगोला काटकर सभी गन्नों को जला देना चाहिए तथा 24 घण्टे के अन्दर मिल को भेज देना चाहिए।
5. ग्रसित क्षेत्रों में बुवाई से पूर्व सभी गन्ने के टुकड़ों को 0.1% मैलाथियान के घोल में कपड़ा डुबोकर रगड़ने के पश्चात बोना चाहिए।

9. ग्रासहापर :

इसके निम्फ तथा वयस्क गन्ने की पत्तियों को जून से सितम्बर तक काट कर हानि पहुँचाते हैं।

रोकथाम :

1. मई के महीने में मेड़ों की छटाई तथा घास-फूस की सफाई।
2. फेनवलरेट 0.4% धूल 25 किग्रा./हे. का बुरकाव करना चाहिए।

प्रेसमड (मैली) आधारित जैविक खाद का उत्पादन एवं उपयोगिता :

रासायनिक उर्वरकों के निरन्तर प्रयोग से भूमि की दशा एवं उर्वरा शक्ति में ह्रास होने के कारण कार्बनिक खादों का प्रयोग करना अब नितान्त आवश्यक है। कार्बनिक खादों के प्रयोग से भूमि की भौतिक दशा, जल धारण क्षमता एवं वायु संचरण में पर्याप्त सुधार होता है, जिससे मृदा का उर्वरा स्तर अधिक समय तक सुरक्षित रहता है। आधुनिक युग में कृषि का यंत्रीकरण होने के कारण ग्रामीण अंचलों में भी गोबर की खाद का अभाव है। अतः इसके विकल्प के रूप में मैली जोकि चीनी मिलों से सस्ते दर पर उपलब्ध हो जाती है तथा गोबर की खाद की तुलना में अधिक पोषक तत्वों से युक्त होती है तथा भूमि में जीवांश कार्बन में वृद्धि होती है।

मैली का प्रयोग खेत में सीधे नहीं करना चाहिए क्योंकि यह अम्लीय होती है तथा इसमें पोषक तत्व उपलब्ध अवश्य में नहीं होते, साथ ही दीमक के प्रकोप की भी संभावना अधिक रहती है। अतः इसे खेत में प्रयोग करने से पूर्व वैज्ञानिक विधियों द्वारा विघटित कर लेना चाहिए। मैली से उपयुक्त खाद बनाने हेतु निम्न दो विधियां विकसित की गई हैं:

1. जीवाणु कल्वर (टीके) के प्रयोग द्वारा।
2. वर्मी कल्वर विधि (केचुए द्वारा)।

1. जीवाणु कल्वर (टीके) के प्रयोग द्वारा।

इसके अन्तर्गत दो विधियाँ आती हैं—

अ) गड्ढा विधि :

1. 1.0 मीटर गहरा \times 1.5 से 2 मीटर चौड़ा \times 10 से 15 मीटर लम्बा (आवश्यकतानुसार) गड्ढा बनाना चाहिए।
2. इस गड्ढे में कार्बनिक पदार्थों जैसे — गन्ने की सूखी पत्तियां, बगास, कूड़ा—करकट, घरेलू कचरा इत्यादि की 15 सेमी. मोटी तह बिछा देना चाहिए।
3. 500 लीटर पानी + 100 किग्रा. गोबर तथा 1.0 किग्रा. जीवाणु कल्वर का घोल प्रति टन की दर से छिड़क देना चाहिए।
4. इस तह के ऊपर मैली (प्रेस मड़) की 15 सेमी. मोटी तह बिछाकर 80 किग्रा. यूरिया 10.00 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट प्रति टन की दर डाल देना चाहिए।
5. तीन से चार परतों के पश्चात् गड्ढा भर जाने पर सबसे ऊपर गोबर, मिट्टी व मैली के मिश्रण से गड्ढे को ढक देना चाहिए। गड्ढे की लम्बाई में वायु संचरण हेतु एक तरफ से एक फुट खाली स्थान छोड़ देना चाहिए।
6. उक्त पदार्थों की प्रथम व द्वितीय पलटाई 15 दिन के अन्तराल पर तथा तीसरी पलटाई 1 माह के अन्तराल पर कर देना चाहिए। इस प्रकार लगभग 90 – 120 दिन में उपयुक्त कम्पोस्ट तैयार हो जाती है।

ब) ढेर विधि :

इस विधि के अन्तर्गत उपरोक्तानुसार विभिन्न कार्बनिक पदार्थों की तीन से चार तहे लगाकर 1.0 मीटर ऊँचा, 1.5 मीटर चौड़ा तथा आवश्यकतानुसार 10 से 15 मीटर लम्बा ढेर लगाना चाहिए।

उक्त ढेर पर समुचित नमी बनाये रखने हेतु पानी का छिड़काव तथा उपरोक्तानुसार समय—समय पर ढेर की पलटाई करना चाहिए।

गन्ना की फसल में जैव उर्वरकों का प्रयोग एवं उनका महत्व :

गन्ना कृषि में उन्नतशील जातियों के समावेश तथा सघन खेती के फलस्वरूप फसलों के पोषण हेतु पर्याप्त मात्रा में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जिसकी आपूर्ति कृषक केवल रासायनिक उर्वरकों के द्वारा करते हैं। रासायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग से मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुण कुप्रभावित होते हैं। साथ ही रासायनिक उर्वरकों की निरन्तर बढ़ती हुई कीमत के कारण फसलों की मांग के अनुरूप पोषक तत्वों का प्रयोग कृषक नहीं कर पाते हैं, जिससे फसलों की उपज भी प्रभावित होती है। अतः जैव उर्वरक जो रासायनिक उर्वरकों की तुलना में सस्ते एवं उपयोगी होते हैं, का प्रयोग आधुनिक परिवेश में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

नत्रजन की पूर्ति करने वाले जैव उर्वरक (नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणु)

1. एजोटोबैक्टर
2. एजोस्पीरिलम
3. एसीटोबैक्टर

वायुमण्डल में लगभग 78 प्रतिशत नत्रजन उपलब्ध है परन्तु अनुपलब्ध अवस्था में होने के कारण यह पौधों द्वारा सीधे ग्रहण नहीं की जा सकती। नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणुओं द्वारा वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन नाइट्रोट के रूप में परिवर्तित कर मृदा में स्थिर कर दी जाती है जिसे पौधे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं।

फास्फेट साल्यूविलाइजिंग जीवाणु (पी.एस.बी.) :

फास्फोरस की जितनी मात्रा फसल को दी जाती है उसका प्रथम वर्ष में मात्र 10 से 15 प्रतिशत ही पौधे उपयोग कर पाते हैं। द्वितीय वर्ष में भी केवल 8–10 प्रतिशत ही उपयोग हो पाता है। शेष मृदा में स्थिर हो जाती है। फास्फेट साल्यूविलाइजिंग जीवाणुओं द्वारा अनुपलब्ध फास्फोरस को विलेय कर उपलब्ध अवस्था में परिवर्तित कर दिया जाता है जिसे पौधे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार इसके प्रयोग से 20 से 25 प्रतिशत फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ जाती है। प्रमुख फास्फोरस घोलक जीवाणु निम्नवत् हैं –

- | | |
|----------------------|-------------------------|
| 1. बैसिलस मैगाटीरियम | 2. स्यूडोमोनास स्ट्रेटा |
| 3. बैसिलस पालीमिक्सा | 4. एसपरजिलस एवामोरी |

जैव उर्वरकों की प्रयोग विधि :

गन्ना :

गन्ना बुवाई के 45 दिन के बाद जैव उर्वरक नत्रजन स्थिरीकरण/फास्फेट साल्यूविलाइजिंग को 5.0 किग्रा./हे. की दर से 100 किग्रा. गोबर या कम्पोस्ट खाद के साथ मिलाकर गन्ने की पंक्तियों में बिखेर कर हल्की गुड़ाई कर देनी चाहिए। जैव उर्वरकों का प्रयोग करते समय खेत में नमी का होना अति आवश्यक होता है।

सावधानियाँ :

- जैव उर्वरक को सूर्य के प्रकाश से दूर सूखे/ठंडे स्थान में रखना चाहिए।
- जैव उर्वरक को संस्तुत मात्रा के अनुसार अन्तिम वैधता तिथि से पूर्व प्रयोग कर लेना चाहिए।
- जैव उर्वरकों को रासायनिक खाद तथा कीटनाशक रसायनों के साथ प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- उपचारित बीज को तत्काल बो देना चाहिए।

लाभ :

- उपज में 10 से 15 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।
- नत्रजन एवं फास्फोरस की लगभग 20–25 प्रतिशत तक बचत हो जाती है।
- भूमि के उर्वरास्तर एवं उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।
- इसके प्रयोग से पौधों में रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है।
- भूमि में उपस्थित मृदा जीवाणुओं की संख्या व सक्रियता में वृद्धि होती है।
- मृदा एवं पर्यावरण प्रदूषित नहीं होते हैं।

गन्ना के प्रमुख रोग एवं उनकी रोकथाम के उपाय :

उ.प्र. में गन्ने की विभिन्न जातियों की उत्पादकता के ह्वास के कारणों में गन्ने में लगने वाले प्रमुख रोगों को महत्व है। प्रमुख रोगों का विवरण एवं उनकी रोकथाम के उपाय निम्नवत् हैं :

रोग का नाम	रोग का कारक	लगने का समय	प्रमुख लक्षण
काना रोग	कोलीटोट्राइकम फलकेटम	जुलाई से फसल के अंत तक	प्रारम्भिक अवस्था में अगोले की तीसरी तथा चौथी पत्ती किनारे से सूखना प्रारम्भ कर देती है साथ ही पत्ती के बीच की मोटी नस में लाल या भूरे रंग के धब्बे पड़ने लगते हैं। बाद में धीरे-धीरे पूरा अगोला सूख जाता है। और कभी कभी टूटकर गिर जाता है। गॉठों के पास गहरे लाल अथवा भूरे रंग की धारियों पड़ जाती है। गन्ने के बीच से चीरने पर गूदा मटमैला लाल दिखाई पड़ता है जिससे मोटाई के बल सफेद धब्बे होते हैं। सूँघने पर सिरके जैसे गंध आती है। जैसे-जैसे गन्ना सूखने लगता है वैसे वैसे गन्ने की बीजाणुओं के समूह बन जाते हैं। गन्ने के पिथ में सफेद अथवा भूरी रंग की फफूँदी भी विकसित हो जाती है।
कण्डुआ रोग	अस्टिलागो सिटेमिनी	अप्रैल-मई अक्टूबर नवम्बर एवं फरवरी	रोगी थानों के गन्ने पतले तथा पोरियाँ लम्बी हो जाती हैं। अगोले की पत्तियाँ छोटी, पतली व नुकीली हो जाती हैं जिसका अगोले से लगाव एक समान दूरी पर इस प्रकार हो जाता है कि अगोला पंखीनुमा लगता है। अगोले के सिरे से काले रंग का कोड़ा जोकि एक सफेद पतली झिल्ली से ढाका रहता है निकल आता है जिसकी लम्बाई कुछ सेमी. से लेकर लगभग एक मीटर तक हो सकती है। गन्ने की सभी आंखे अपरिपक्व अवस्था में ही जमने लगती है जिनमें से भी कोड़ा निकल आता है।
उकठा रोग	सिफैलोस्पेरियम सैकेराई ऐक्रिमोनियम एवं फ्यूजेरियम मोनीलिफार्मि	अक्टूबर से फसल के अन्त तक	प्रभावित थान के गन्नों के अगोले शुरू में पीले पड़ने लगते हैं तथा धीरे-धीरे पूरा अगोला सूख जाता है और नीचे की ओर मुड़ जाता है। गन्ना की पोरियों का रंग हल्का पीला हो जाता है तथा अन्दर से खोखला हो जाता है। गन्ना बहुत हल्का हो जाता है। गन्ने के अन्दर गूदा समाप्त हो जाता है तथा रंग भूरा हो जाता है। गन्ने के खोखले भाग में किसी प्रकार की फफूँदी नहीं पायी जाती है।
अगोले का सड़न	फ्यूजेरियम मोनीलिफार्मि	जुलाई से सितम्बर	अगोले के ऊपर की नई पत्तियाँ प्रारम्भ में हल्की पीली, सफेद पड़ जाती हैं जो बाद में सड़ जाती है तथा नीचे गिर जाती है। यह रोग वर्षा काल में अत्यधिक लगता है। इससे गन्ने की बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

रोग का नाम	रोग का कारक	लगने का समय	प्रमुख लक्षण
पर्ण दाह रोग (लीफ स्काल्ड)	जैन्थोमोनास एल्बिलिनियेन्स	स्पष्ट लक्षण अकटूबर से फसल के अन्त तक	प्रारम्भिक अवस्था में अगोले की पत्तियों पर दूधिया रंग की सफेद धारियां मिडरिब से पत्ती के सिरे तक बन जाती हैं। बाद में ये पत्तियां सूख जाती हैं और कड़ी हो जाती हैं। गन्ने की आंखें नीचे से ऊपर की ओर अंकुरित हो जाती हैं जो बाद में सूख जाती हैं। गन्ने को चीरे पर गूदे में गहरे लाल अथवा भूरे रंग की समान्तर धारियां पड़ जाती हैं जो गांठों पर और घनी होती हैं।
पत्ती की लालधारी	सीडोमोनास रूबिलिनियेन्स	जून से सितम्बर	गन्ने की पत्तियों पर लाल अथवा लाल भूरे रंग की समानान्तर धारियाँ निचली सतह पर पड़ जाती हैं जिनमें से शाकाणु की उजिंग प्रातः तड़के अथवा वर्षा पश्चात निचली सतह पर पाया जाता है। कभी-कभी धारियां इतनी अधिक हो जाती हैं कि पूरी लाल दिखने लगती है। पत्तियों को क्लोरोफिल समाप्त हो जाता है। इस रोग से फसल के बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
विवर्ण रोग	फाइटोप्लाज्मा	जून से फसल के अन्त तक	वर्षा काल में इस रोग के लक्षण अधिक स्पष्ट होते हैं। प्राथमिक संक्रमण में नये किल्लों की पत्तियों दूधिया सफेद रंग की निकलती हैं। इन किल्लों में अचानक व्यांत बहुत अधिक बढ़ जाती है। व्यांत बहुत पतले होते हैं। इस प्रकार एक झाड़ीनुमा थान बन जाता है जो कि बाद में सूख जाता है। ऐसे थानों में गन्ना बहुत कम बन पाता है तथा छोटा होता है। गन्ने की पोरियों भी छोटी होती हैं। गन्ने की सभी आंखें अपरिपक्व अवस्था में ही अंकुरित हो जाती हैं तथा उसमें से भी सफेद पत्तियाँ निकलती हैं जो गन्ने के समानान्तर चिपकी रहती हैं। बाद में पूरा गन्ना सूख जाता है। वर्षा समाप्त होते ही इस रोग के लक्षण अदृश्य हो जाते हैं जिससे स्वस्थ गन्ने के धोखे में रोगी गन्ना भी बीज के रूप में प्रयोग हो जाता है।

रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण :

गन्ने की खेती वानस्पतिक सम्बद्धन द्वारा की जाती है, जिससे अधिकांश रोग बीज गन्ने के द्वारा ही अगली फसल में फैलते हैं। अतः रोगों की रोकथाम में मुख्यतः साफ सुधरी खेती का विशेष महत्व है, जो निम्नलिखित है :-

1. रोग रोधी प्रजातियों की खेती :

यह सबसे विश्वसनीय एवं सरल उपाय है क्योंकि रोग ग्राही प्रजातियाँ रोगों के बीजाणुओं को पनपने तथा फैलने में सहायता करती हैं।

2. बीज गन्ने का चयन :

बोने के लिए बीज गन्ने का चयन स्वस्थ एवं रोग रहित प्लाटों से करना चाहिए ताकि अगली फसल को रोग मुक्त रखा जा सके।

3. रोग उन्मूलन :

रोगी थान का समूल उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए ताकि स्वरथ गन्नों में दुबारा संक्रमण न हो।

4. पेड़ी न रखना :

रोग ग्रसित फसलों की पेड़ी कदापि नहीं रखनी चाहिए क्योंकि इससे रोगों के बीजाणु तेजी से फैलते हैं, जिससे रोगों का संक्रमण अधिक क्षेत्र में फैल सकता है।

5. फसल चक्र अपनाना :

प्रभावित खेत में कम से कम एक वर्ष तक गन्ना नहीं बोना चाहिए ताकि उस खेत में रोगों के बीजाणु स्वतः समाप्त हो जाए।

6. जल निकास की व्यवस्था :

पौधशालाओं के लिए खेत का चयन में समुचित जल निकास की व्यवस्था सुनिश्चित कर लेना चाहिए ताकि वर्षा ऋतु में फसल में पानी का जमाव न हो क्योंकि इससे रोगों के फैलने में सहायता मिलती है।

7. प्रभावित खेत की सफाई :

रोग से प्रभावित खेत में कटाई पश्चात उसमें पत्तियों एवं ठूँठे को पूरी तरह जलाकर नष्ट कर देना चाहिए तथा खेत की गहरी जुताई कर देना चाहिए।

8. ताप शोधन :

बीज गन्ने की पैड़ों को बोने से पूर्व गर्म जल संयंत्र में 50° सेंट्री. तापक्रम पर दो घण्टे तक उपचारित कर लेने से कण्डुआ रोग तथा विवर्ण रोग का नियंत्रण किया जा सकता है। साथ ही इससे गन्ने का जमाव पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

9. रासायनिक उपचार :

- ◆ लाल सड़न या काना रोग से बचाने के लिए गन्ना बीज के टुकड़ों को 45° सेंट्री. पर 1 घण्टे तक गर्म पानी में डुबोएं तथा बाद में थायोफिनेट मिथाइल + स्यूडोमोनास के साथ बीज शोधन करें।
- ◆ गन्ने को कण्डुआ रोग एवं उकठा रोग से बचाने के लिए पूर्व की भाँति गर्म पानी से शोधन करें तत्पश्चात् कार्बैण्डाजिम 1 ग्राम / लीटर पानी में 10 मिनट तक डुबायें।



24. गेहूँ की उन्नतशील खेती

कृषि जलवायु क्षेत्रवार गेहूँ की संस्तुत प्रजातियाँ :

1. भावर एवं तराई क्षेत्र :

जनपद - सहारनपुर, मुजफ्फर नगर, बिजनौर, मुरादाबाद, रामपुर, बरेली, शाहजहाँपुर, पीलीभीत, लखीमपुर खीरी, बहराइच एवं श्रावस्ती का उत्तरी भाग।

बुवाई का समय : अ: अक्टूबर का द्वितीय पखवाड़ा।

असिंचित दशा : एच.यू.डब्लू-533, के. 8027 के.-9351 एच.डी.-2888

बुवाई का समय : ब. नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा (भावर भूमि के लिए)।

असिंचित दशा : के.-8027, के. 8962, के.-9465, के. 9351

सिंचित दशा : यू.पी.-2338, डब्लू.एच.-542, पी.बी.डब्लू.-343, यू.पी.-2382, एच.डी.-2687, के.-9107, पी.बी.डब्लू.-590, के.-9006, डी.बी.डब्लू.-17, पी.बी.डब्लू.-550, के-307 (शताब्दी)

बुवाई का समय : स. विलम्ब से बुवाई 25 दिसम्बर तक।

सिंचित दशा : राज-3765, पी.बी.डब्लू.-373, के.-9162, यू.पी.-2425

एन.डब्लू-1076, नैना (के.-9533), डी.बी.डब्लू.-14 डी.बी.डब्लू.-16, के.-9423, पी.बी.डब्लू.-590,

2. पश्चिमी मैदानी क्षेत्र :

जनपद - सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बागपत, गाजियाबाद, गौतमबुद्धनगर, बुलन्दशहर।

बुवाई का समय : अ. अक्टूबर का द्वितीय पखवाड़ा से नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा।

असिंचित दशा : के.-8027 (मगहर), एच.यू.डब्लू.एस.-533

बुवाई का समय : ब. नवम्बर का द्वितीय पखवाड़ा।

असिंचित दशा : पी.बी.डब्लू.-175, के. 8027, के.-8962, के.-9465, के. -9351, डब्लू.एच.-147

सिंचित दशा : यू.पी.-2338, डब्लू.एच.-542, पी.बी.डब्लू.-343, यू.पी.-2382, एच.डी.-2687, के.-9107, पी.बी.डब्लू.-502, के.-9006, डी.बी.डब्लू.-17, पी.बी.डब्लू.-550, के -307 (शताब्दी), एच.डी.-2967

बुवाई का समय : स. विलम्ब से बुवाई 25 दिसम्बर तक।

सिंचित दशा : राज-3765, यू.पी.-2338, पी.बी.डब्लू.-373, के.-8020, यू.पी.-2425, एन.डब्लू-1076, के-9423, के.-7903, नैना (के-9533), डी.बी.डब्लू.-16

3. मध्य पश्चिमी मैदानी क्षेत्र :

जनपद - बिजनौर, ज्योतिबाफूलेनगर, मुरादाबाद, रामपुर, बरेली, बदायूँ, पीलीभीत।

बुवाई का समय-असिंचित दशा, सिंचित दशा-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र के अनुसार।

4. दक्षिणी-पश्चिमी अर्धशुष्क क्षेत्र :

जनपद - अलीगढ़, हाथरस, मथुरा, आगरा, फिरोजाबाद, मैनपुरी, एटा।

बुवाई का समय : अ. अक्टूबर का द्वितीय पखवाड़ा।

असिंचित दशा : के.-8027, एच.यू.डब्लू-533, के.-9351

बुवाई का समय : ब. नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा।

असिंचित दशा : के.-8027, के.-8962, के.-9465, के.-9351, के.-9644

बुवाई का समय: स. समय से बुवाई 25 नवम्बर तक।

सिंचित दशा : पी.बी.डब्लू.-343, यू.पी.-2338, के.-9006, के.-9107, के.-307, एच.डी.-2687, यू.पी.-2382, पी.डी.डब्लू.-233, पी.डी.डब्लू.-215, डब्लू.एच.-896, एच.आई.-8381, पी.बी.डब्लू.-502।

बुवाई का समय: द. विलम्ब से बुवाई 25 दिसम्बर तक।

मालवीय-234, यू.पी.-2338, राज-3077, राज-3765, पी.बी.डब्लू.-373, यू.पी.-2425, के.-9162, के.-7903, के.-9533, एन. डब्लू-1076, डी.बी.डब्लू-16।

ऊसर क्षेत्र हेतु : के.आर.एल. 1-4, के.-8434, के.आर.एल.-19, एन.डब्लू.-1067, के.आर.एल.-210, के.आर.एल.-213।

5. मध्य मैदानी क्षेत्र :

जनपद - शाहजहांपुर, फरुखाबाद, कन्नौज, इटावा, औरैया, कानपुर नगर, कानपुर देहात, फतेहपुर, कौशाम्बी, प्रयागराज, लखनऊ, उन्नाव, रायबरेली, सीतापुर, खीरी, हरदोई।

बुवाई का समय: अ. अक्टूबर के द्वितीय पखवाड़ा से नवम्बर के प्रथम पखवाड़ा तक।

असिंचित दशा : के.-8962, के.-9465, मालवीय-533, के.-9351, एच.डी.-2888

बुवाई का समय: ब. नवम्बर के प्रथम सप्ताह से 25 नवम्बर तक।

सिंचित दशा : पी.बी.डब्लू.-343, यू.पी.-2338, डब्लू.एच.-542, के.-9107, के.-9006
(समय से) एच.पी-1731, एन.डब्लू-1012, यू.पी.-2382, एच.यू.डब्लू.-468,
पी.बी.डब्लू.-443, एच.डी. 2733, एच.डी. 2888, के.-307 (शताब्दी)

बुवाई का समय: स. विलम्ब से बुवाई 25 दिसम्बर तक।

सिंचित दशा : मालवीय-234, के.-7903, यू.पी.2338, के.-9162, के.-9533, एच.डी.-2643, एच.पी.-1744,
एन.डब्लू.-1014, यू.पी.-2425, एन.डब्लू.-2036, डी.बी.डब्लू.-14 पी.बी.डब्लू.-524 एन.
डब्लू-1076, एच.यू.डब्लू.-510, के.-9423

खादर भूमि के लिये: द. नवम्बर का द्वितीय पखवाड़ा।

के.-8962, के.-9465, एच.डी.आर.-77, के.-9351

ऊसर क्षेत्र हेतु : के.आर.एल. 1-4, के.आर.एल.-19, के.-8434

(सिंचित दशा व समय से बुवाई) एन.डब्लू-1067, के.आर.एल.-210 एवं के.आर.एल.-213

6. बुन्देलखण्ड क्षेत्र :

जनपद - झांसी, जालौन, हमीरपुर, महोबा, ललितपुर, बांदा, चित्रकूट।

बुवाई का समय: अ. अक्टूबर का द्वितीय पखवाड़ा।

असिंचित दशा : सी.-306, सुजाता के.-8962, के.-9465, के.-9351, एच.डब्लू.-2004, आरनेज (9-30-1), लोक-1
एच.डी.-2888

बुवाई का समय: ब. समय से बुवाई (1 नवम्बर से 25 नवम्बर तक)

सिंचित दशा : डी.एल.-803-3, राज-1555, एच.आई.-8381, एच.आई.-8498, के.-9107, यू.पी.-2338,
डब्लू.एच.-147, जी.डब्लू.-273, जी.डब्लू.-322, पी.बी.डब्लू.-343, एच.डी.-2733

बुवाई का समय: स. विलम्ब से बुवाई (25 दिसम्बर तक)

एच.आई.-784, मालवीय-234, एच.पी.-1633, डी.एल.-788-2, यू.पी.-2425, के.-9162, के.-9533,
जी.डब्लू.-173, के.-7903, के.-9423, एच.यू.डब्लू.-510

7. उत्तरी-पूर्वी मैदानी क्षेत्र :

जनपद - बहराइच, श्रावस्ती, बलरामपुर, गोणडा, सिद्धार्थनगर, बस्ती, संतकबीरनगर, महराजगंज, गोरखपुर,
कुशीनगर एवं देवरिया।

बुवाई का समय: अ. अक्टूबर का द्वितीय पखवाड़ा से नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा।

असिंचित दशा : के.-8962, के.-9465, के.-9351, एच.डी.आर.-77, एच.यू.डब्लू.-533, एच.डी.-2888

बुवाई का समय: ब. समय से बुवाई (नवम्बर का प्रथम पखवाड़ा से द्वितीय पखवाड़ा तक)

सिंचित दशा : के.-9107, एच.पी.-1731, के.-9006, एन.डब्लू.-1012, यू.पी.-2382, एच.पी.-1761, एच.यू.डब्लू.-468,
एच.डी.-2733, एच.डी.2824, पी.बी.डब्लू.-343, पी.बी.डब्लू.-443, यू.पी.-2338, के.-0307, पी.बी.डब्लू.
-502, सी.बी.डब्लू.-38, राज 4120, डी.बी.डब्लू.-39, एन.डब्लू.-5054, एच.डी.-2967।

बुवाई का समय: स. विलम्ब से बुवाई (25 दिसम्बर तक)

सिंचित दशा : डी.बी.डब्लू.-14, मालवीय-234, एच.पी.-1633, एच.पी.-1744, एन.डब्लू.-1014 एन.डब्लू.-2036, एच.
डी.-2643, यू.पी.-2425, के.-9162, पी.बी.डब्लू.-373, एन.डब्लू.-1076, एच.डब्लू.-2045, के.-9423,
के.-7903 पी.बी.डब्लू.-524, एच.आई.-1563, एन.डब्लू.-5054

ऊसरीली भूमि : के.आर.एल.1-4, के.आर.एल.-19, राज 3077, लोक 1, के.-8434, एन.डब्लू.-1076

सिंचित दशा एन.डब्लू.-1067, के.आर.एल.-210, एवं 213.

8. पूर्वी-मैदानी क्षेत्र :

जनपद - बाराबंकी, अयोध्या, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, जौनपुर, अम्बेडकरनगर, आजमगढ़, भदोही, वाराणसी,
चन्दौली, गाजीपुर, मऊ, बलिया।

बुवाई का समय : सिंचित एवं असिंचित दशा उत्तरी-पूर्वी मैदानी क्षेत्र के अनुसार।

9. विन्ध्य क्षेत्र :

जनपद - प्रयागराज, मिर्जापुर, सोनभद्र।

बुवाई का समय: अ. नवम्बर का प्रथम पखवारा।

असिंचित दशा : के.-8962, के.-9465, के.-9351, एच.यू.डब्लू.-533, एच.डी.-2888

बुवाई का समय: ब. नवम्बर माह।

सिंचित दशा : यू.पी.2338, डब्लू.एच.-542, के.-9006, एच.पी.-1731, एन.डब्लू.-1012, यू.पी.-2382 के.-9107,
एच.यू.डब्लू.-468, पी.बी.डब्लू.-343, के.-307

बुवाई का समय: स. नवम्बर के द्वितीय पखवाड़ा से दिसम्बर का प्रथम पखवाड़ा तक

सिंचित दशा : यू.पी.-2338, एच.पी.-1731, मालवीय-468, पी.बी.डब्लू.-373, मालवीय-234, एच.डी.-2643,
एच.पी.-1744, एन.डब्लू.-1014, यू.पी.-2425, के.-9423, एन.डब्लू.-2036, एन.डब्लू.-1076, एच.यू.
डब्लू.-510, के.-307

ऊसरीली भूमि के लिये: के.आर.एल-19, लोक-1, एन.डब्लू.-1067, एन.डब्लू.-1076, के.आर.एल.-210, एवं 213।

गेहूँ की प्रजातियों के प्रमुख गुण / विशेषताएं

क्र.सं.	प्रजाति	नोटिफिकेशन की तिथि / वर्ष	उत्पादकता (कु. / हे.)	पकने की अवधि (दिन)	पौधे की ऊँचाई (सेमी.)	रोगों से अवरोधिता
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.
असिंचित दशा :						
1.	मगहर (के.-8027)	31.07.89	30—35	140—145	105—110	कण्डुवा एवं झुलसा अवरोधी
2.	एच.डी.आर.—77	15.05.90	25—35	105—115	90—95	
3.	इन्द्रा (के.-8962)	01.01.96	25—35	90—110	110—120	
4.	गोमती (के.-9465)	15.05.98	28—35	90—110	90—100	
5.	के.-9644	2000	35—40	105—110	95—110	
6.	मंदाकिनी (के.-9351)	2004	30—35	115—120	95—110	
7.	एच.डी.—2888	2005	30—35	120—125	100—110	रतुआ अवरोधी
8.	एम.पी.—3173 (जे.डब्लू.—3173)	2009	25.7	128	—	रस्ट के प्रति उच्च अवरोधी। लाजिंग सहिष्णु।
9.	राज—4120	2009	47.0	119	—	स्टेम रस्ट अवरोधी, चपाती बनाने योग्य।
10.	एम.पी.—3288 (जे.डब्लू.3288)	2011	23.2	121	—	नान—लाजिंग प्रजाति, लीफ एवं ब्लैक रस्ट अवरोधी।
11.	डब्लू.एच.1080	2011	30.8	151	—	लीफ रस्ट, लीफ ब्लाइट एवं फ्लैक स्मट अवरोधी चपाती योग्य।
12.	के.-402 (माही)	2013	43.1	120—125	—	ताप सहिष्णु।
13.	एन.डब्लू. 4018 (नरेन्द्र गेहूँ 4018)	2014	18.3	123	—	सामान्य अवस्था में सभी रस्ट के लिए अवरोधी।
14.	डब्लू.एच. 1142	2015	48.1	150—156	—	पीला एवं भूरा रस्ट तथा सूखा एवं लाजिंग के प्रति सहिष्णु।
15.	डी.बी.डब्लू. 110	2015	39.0	110—134	—	भूरा एवं ब्लैक रस्ट तथा करनाल बन्ट अवरोधी।
16.	पूसा व्हीट 1612 (एच.डी.1612)	2018	37.6	125	—	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी तथा ताप सहिष्णु।
17.	के. 1317	2018	30.1	125	—	भूरा रस्ट एवं लीफ ब्लाइट के प्रति अवरोधी तथा उच्च गुण वाली चपाती हेतु।
18.	ए.ए.आई.डब्लू.—10	2018	45—50	120—125	—	लीफ रस्ट, लीफ ब्लाइट एवं लाजिंग एवं सैटरिंग के प्रति अवरोधी, उच्च तापमान सहिष्णु।
19.	एच.यू.बी.—669	2018	25—30	130	—	सभी रस्ट एवं लीफ रस्ट अवरोधी।
20.	पूसा व्हीट 3237 (एच.डी.3237)	2019	48.4	145	—	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी एवं अच्छी चपाती क्वालिटी।

क्र.सं.	प्रजाति	नोटिफिकेशन की तिथि / वर्ष	उत्पादकता (कु. / हे.)	पकने की अवधि (दिन)	पौधे की ऊँचाई (सेमी.)	रोगों से अवरोधिता
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.
सिंचित दशा (समय से बुवाई के लिए) :						
1.	डी.एल.-784-3 (वैशाली)	17.08.93	45-50	130-135	85-90	
2.	एच.पी.-1731 (राजलक्ष्मी)	04.05.95	55-60	130-140	85-96	
3.	देवा (के.-9107)	01.01.96	45-50	130-135	105-110	रतुआ झुलसा एवं करनॉल बंट के लिए अवरोधी।
4.	पी.बी.डब्लू-343	1997	60-65	125-140	90-95	
5.	एच.पी.-1761	09.09.97	45-50	135-140	90-95	
6.	नरेन्द्र गेहूँ-1012	15.05.98	50-55	135-140	85-95	
7.	उजियार (के.-9006)	15.05.98	50-55	130-135	105-110	
8.	एच.यू.डब्लू-510	1998	50-55	115-120	-	
9.	एच.यू.डब्लू-468	09.06.99	55-60	130-140	85-95	चपाती हेतु उच्च गुणवत्ता
10.	यू.पी.-2382	06.04.99	60-65	135-140	95-100	
11.	पी.बी.डब्लू-443	2000	50-55	125-135	90-95	
12.	एच.डी.-2824	2003	55-60	125-135	90-100	
13.	पी.बी.डब्लू-502	2004	45-60	126-134	80-90	-
14.	के.-0307	06.02.07	55-60	125-100	85-95	
15.	डी.बी.डब्लू-17	2007	60-65	125-135	95-100	रतुआ अवरोधी।
16.	सी.बी.डब्लू-38	2009	44.4	112-129	80-105	ताप सहिष्णु, चपाती एवं ब्रेड योग्य। आयरन एवं जिंक की अधिकता।
17.	डी.बी.डब्लू-39	2010	44.6	121-125	80-105	लीफ एवं स्ट्रिप रस्ट तथा लीफ ब्लाइट अवरोधी। बिस्किट एवं चपाती बनाने योग्य।
18.	डी.पी.डब्लू 621-50 (पीबीडब्लू 621 एवं डीबीडब्लू-50)	2011		144	-	पीला एवं लीफ रस्ट अवरोधी।
19.	डब्लू एच.डी.-943	2011	48.0	144	-	डयूरम प्रजाति, पीला रस्ट अवरोधी, उच्च प्रोटीन। पास्ता बनाने योग्य।
20.	पी.बी.डब्लू-644	2012	31.4	137-167	-	स्ट्रिप एवं लीफ रस्ट तथा लीफ ब्लाइट
21.	एच.डी.-3043	2012	42.80	143	85-90	लीफ एवं स्ट्रिप रस्ट अवरोधी, चपाती बनाने योग्य।
22.	के. 402	2013	55-60	120-125	85-88	रतुआ, झुलसा अवरोधी।
23.	एम.पी. 3336 (जे.डब्लू. 3336)	2013	44.7	107	-	ब्लैक एवं लीफ रस्ट सहिष्णु ब्रेड बनाने योग्य।
24.	डब्लू 1105	2013	51.5	142	-	पीला रस्ट, लीफ ब्लाइट एवं पाउडरी मिलड्यू अवरोधी तथा ताप सहिष्णु।

रबी फसलों की खेती

क्र.सं.	प्रजाति	नोटिफिकेशन की तिथि/वर्ष	उत्पादकता (कु. / हे.)	पकने की अवधि (दिन)	पौधे की ऊँचाई (सेमी.)	रोगों से अवरोधिता
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.
25.	एच.आई 8713 (पूसा मंगल)	2013	52.3	122	—	ड्यूरम, क्षेत्रीय रोग अवरोधी।
26.	एच.डी. 2967	2014	50.4	143	90-95	रस्ट अवरोधी।
27.	एन.डब्लू-5054	30.07.2014	55-60	122-124	100-105	रस्ट एवं झुलसा अवरोधी।
28.	डी.बी.डब्लू-90 [5.0.244(ई)]	2014	42.80	121	76-105	स्ट्रिप एवं लीफ रस्ट अवरोधी तथा ताप सहिष्णु।
29.	एन.डब्लू. 5054	2014	47.0	130	—	भूरा रस्ट एवं फोलर ब्लाइट अवरोधी।
30.	एच.डी. 3086 (पूसा गौतमी)	2014	54.6	143	—	पीले एवं भूरा रस्ट अवरोधी, चपाती हेतु उच्च गुणवत्ता।
31.	के.-607 (समता)	2014	42.4	120-125	85-88	रतुआ एवं झुलसा अवरोधी।
32.	के.-1006	2015	47.0	120-125	88-90	रतुआ एवं झुलसा अवरोधी।
33.	एच.आई. 8737 (पूसा अनमोल)	2015	53.4	125	—	काला एवं भूरा रस्ट तथा करनाल बन्ट अवरोधी।
34.	डी.बी.डब्लू. 107	2015	41.3	94-130	—	भूरा रस्ट अवरोधी तथा ताप सहिष्णु।
35.	पी.बी.डब्लू-660	2016	35.3	134-172	—	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी, चपाती हेतु उच्च गुणवत्ता।
36.	आर.ए.आई.-4238	2016	45.5	114	—	चपाती हेतु उच्च गुणवत्ता।
37.	यू.पी.-2784	2016	44.2	120-130	—	पीला, भूरा रस्ट अवरोधी तथा लीफ ब्लाइट मध्यम अवरोधी।
38.	एच.आई. 8759 (पूसा तेजस)	2017	56.9	117	—	उच्च प्रोटीन, जिंक एवं आयरन, पारस्ता बनाने वाली प्रजाति। बॉयो-फोर्टीफाइड प्रजाति- प्रोटीन 12.5 प्रतिशत, आयरन 41.1 पी.पी.एम., जिंक 42.8 पी.पी.एम.।
39.	एच.डी. 3171	2017	28	130-140	—	काला, पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी, उच्च जिंक एवं आयरन (बॉयो-फोर्टीफाइड प्रजाति- जिंक 47.1 पी.पी.एम.)
40.	पी.बी.डब्लू-1 जेड.एन.	2017	51.7	141	90-100	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी, उच्च (एच.पी.बी.डब्लू-01) जिंक एवं आयरन (बॉयो-फोर्टीफाइड प्रजाति- आयरन 40 पी.पी.एम., जिंक 40.6 पी.पी.एम.)।
41.	डब्लू.बी.-02	2017	51.6	120-125	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी, उच्च जिंक एवं आयरन (बॉयो- फोर्टीफाइड प्रजाति- जिंक 42 पी.पी.एम., आयरन 40 पी.पी.एम.)।
42.	पी.बी.डब्लू-723 (उन्नत पी.बी.डब्लू.-343)	2017	49.2	126-134	80-90	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी।
43.	के.आर.ए.ल. 283	2018	20.9	128-133	—	लीफ ब्लाइट, करनाल बन्ट एवं हिल बन्ट के प्रति अवरोधी।

गेहूँ की उन्नत खेती

क्र.सं.	प्रजाति	नोटिफिकेशन की तिथि/वर्ष	उत्पादकता (कु. / हे.)	पकने की अवधि (दिन)	पौधे की ऊँचाई (सेमी.)	रोगों से अवरोधिता
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.
44.	पूसा गेहूँ-1612 (एच.आई.-1612)	2018	35-40	120-125	-	पीला एवं रस्ट अवरोधी।
45.	डी.बी.डब्लू-187 (करण वन्दना)	2019	48.8	120	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी, बॉयोफोर्टीफाईड प्रजाति-आयरन 43.1 पी.पी.एम.।
46.	पूसा यशस्वी (एच.डी.-3226)	2019	57.5	142	-	स्ट्रिप, लीफ एवं करनाल बन्ट तथा ब्लैक रस्ट, पाउडरी मिलड्यू फ्लैग स्मट एवं फुटराट के प्रति उच्च अवरोधी।
47.	पूसा व्हीट 3237 (एच.डी.3237)	2019	48.4	145	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी।
48.	करण नरेन्द्र (डी.बी.डब्लू-222)	2020	61.30	143	-	स्ट्रिप लीफ रस्ट अवरोधी।
49.	पूसा गेहूँ-3249 (एच.डी.-3249)	2020	48-50	120-125	-	लीफ ब्लाइट एवं भूरा रस्ट अवरोधी उच्च जिंक-42.5 पी.पी.एम.।
50.	डी.बी.डब्लू-303	2021	70-80	143-174	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी (बायोफोर्टीफाइड प्रोटीन-12.10 प्रतिशत)
51.	डी.बी.डब्लू-332 (करण आदित्य)	2021	70-80	156	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी (प्रोटीन 12.2%)

सिंचित दशा (विलम्ब से बुवाई हेतु)

1.	एच.बी.डब्लू-234	14-05-88	35-45	110-120	85-90	
2.	सोनाली एच.पी.-1633	04-11-92	35-40	115-120	115-120	
3.	एच.डी.-2643 (गंगा)	19-06-97	35-45	120-130	85-95	
4.	पी.बी.डब्लू-373	1997	35-45	120-135	85-90	
5.	एच.पी.-1744	09-09-97	35-45	120-130	85-95	
6.	नरेन्द्र गेहूँ-1014	15-05-98	35-45	110-115	85-100	रतुआ एवं झुलसा अवरोधी।
7.	यू.पी.2425	06-05-99	40-45	120-125	90-95	
8.	के.-7903	2001	30-40	85-100	85-90	
9.	नरेन्द्र गेहूँ-2036	2002	40-45	110-115	80-85	रतुआ अवरोधी।
10.	डी.बी.डब्लू-14	2002	40-45	108-128	70-95	
11.	एच.डब्लू-2045	2002	40-45	115-120	95-100	रतुआ झुलसा अवरोधी।
12.	नरेन्द्र गेहूँ-1076	2002	40-45	110-115	80-90	तदैव।
13.	के.-9162	2005	40-45	110-115	90-95	
14.	के.-9533	2005	40-45	105-110	85-90	
15.	के.-9423	2005	35-45	85-100	85-90	
16.	डी.बी.डब्लू-16	2006	40-45	120-125	85-90	
17.	पूसा गेहूँ-111 (एच.डी.-2932)	2008	42.0	109	-	ब्लैक एवं भूरा रस्ट अवरोधी, उच्च आयरन जिंक। चपाती हेतु उच्च गुणवत्ता।
18.	एच.पी. - 1203	2009	41.2	110	-	रोग अवरोधी एवं उच्च प्रोटीन।
19.	पी.बी.डब्लू-590	2009	42.2	121	-	ताप सहिष्णु, लीफ रस्ट अवरोधी, उच्च प्रोटीन, चपाती हेतु उच्च गुणवत्ता।

रबी फसलों की खेती

क्र.सं.	प्रजाति	नोटिफिकेशन की तिथि / वर्ष	उत्पादकता (कु. / है.)	पकने की अवधि (दिन)	पौधे की ऊँचाई (सेमी.)	रोगों से अवरोधिता
1.	2.	3.	4.	5.	6.	7.
20.	एच.आई.-1563	2011	37.6	110-115	85-90	लीफ रस्ट एवं लीफ ब्लाइट अवरोधी, चपाती, ब्रेड एवं बिस्किट योग्य प्रजाति, आयरन जिंक एवं कॉपर की अधिकता।
21.	एच.डी.-2985 (पूसा बसंत)	2011	35-40	105-110		पार्टीकल टाइप रोग अवरोधी।
22.	एच.डी.-2985 (पूसा बसन्त)	2011	37.7	105-110	-	लीफ रस्ट एवं फॉलियर ब्लाइट अवरोधी, बिस्किट एवं चपाती योग्य।
23.	एच.डी.-3059 (पूसा पछेती)	2013	39.5	157	93	रस्ट अवरोधी, ताप सहिष्णु, उच्च प्रोटीन तथा ब्रेड, बिस्किट, चपाती योग्य।
24.	पी.बी.डब्लू-71	2013	40-45	100-110	-	ताप अवरोधी।
25.	ए.ए.आई.डब्लू-06	2014	35-40	110-115	105-110	लीफ रस्ट अवरोधी।
26.	डी.बी.डब्लू 71	2014	42.7	119	-	क्षेत्रीय रोगों के प्रति अवरोधी एवं ताप सहिष्णु उच्च प्रोटीन।
27.	डी.बी.डब्लू 88	2014	54.2	143	-	पीला, भूरा रस्ट अवरोधी।
28.	एच.डी. 3118 (पूसा वत्सला)	2015	41.7	109-120	-	पीला एवं भूरा रस्ट के प्रति उच्च अवरोधी।
29.	डब्लू.एच. 1124	2015	42.7	123	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी एवं ताप सहिष्णु।
30.	डी.बी.डब्लू-173	2018	47.2	122	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी तथा ताप सहिष्णु, प्रोटीन एवं आयरन में अधिकता। (बॉयो-फोर्टीफाइड प्रजाति- प्रोटीन 12.5 प्रतिशत, आयरन 40.7 पी.पी.एम.)।
31.	ए.ए.आई.डब्लू-9	2018	40-45	110-115	-	लीफ रस्ट, लीफ ब्लाइट एवं लाजिंग एवं सैटिरिंग के प्रति अवरोधी। उच्च तापमान सहिष्णु।
32.	पी.बी.डब्लू-752	2019	49.7	120	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी (बॉयो-फोर्टीफाइड प्रजाति-प्रोटीन 12.4%)।
33.	पी.बी.डब्लू-757	2019	36.7	104	-	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी (बॉयो-फोर्टीफाइड प्रजाति-जिंक 42.3 पी.पी.एम.)।
ऊसरीली भूमि के लिए						
1.	के.आर.एल.-1-4	15-05-90	30-45	130-145	90-100	
2.	के.आर.एल.-19	2000	40-45	130-145	90-100	
3.	के.-8434 (प्रसाद)	2001	45-50	135-140	90-95	
4.	एन.डब्लू.-1067	25.8.2005	45-50	125-130	90-95	रतुआ अवरोधी।
5.	के.आर.एल.-213	2011	32.5	117-125	60-72	रतुआ अवरोधी (रस्ट)
6.	के.आर.एल.-210	2012	33-45	112-125	65-70	रतुआ अवरोधी।
7.	डब्लू-1142	2015	48.1	150-156	-	पीला एवं भूरा रस्ट तथा सूखा एसवं लाजिंग के प्रति सहिष्णु।
8.	एच.यू.डब्लू-669 (मालवीय 669)	2018	24.1	132	-	सभी रस्ट एवं लीफ ब्लाइट के लिए अवरोधी।
9.	के.आर.एल.-283	2018	20-30	128-143	-	लीफ ब्लाइट, करनाल बंट एवं हिल बंट के प्रति अवरोधी।
10.	डी.बी.डब्लू-252 (करण श्रेया)	2020	35-40	127	-	रस्ट एवं ब्लास्ट अवरोधी

उत्तर प्रदेश हेतु संस्तुत नवीन प्रजातियाँ

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचित का वर्ष	उत्पादकता (कु. / हे.)	पकने की अवधि (दिन)	संस्तुत क्षेत्र	बुवाई की दशा	विशिष्ट गुण
1.	डी.बी.डब्लू.-303 (करन वैश्वनवी)	2021	80	143-175	उत्तर पश्चिम मैदानी क्षेत्र (बुंदूलखण्ड के अतिरिक्त)	अगेती बुवाई, सिंचाई दशा हेतु	रस्ट अवरोधी।
2.	डी.बी.डब्लू.-222 (करन नरेन्द्र)	2020	61.3	143	पश्चिम मैदानी क्षेत्र (बुंदूलखण्ड के अतिरिक्त)	समय से बुवाई, सिंचाई दशा हेतु	स्ट्रीप एवं लीफ रस्ट अवरोधी
3.	डी.बी.डब्लू.-187 (करन वन्दना)	2019	48.8	120	उत्तर पूर्व मैदानी क्षेत्र	समय से बुवाई, सिंचाई दशा हेतु	पलीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी।
4.	पूसा यशस्वी (एच.डी.-3226)	2019	57.5	142	उत्तर पश्चिम मैदानी क्षेत्र (बुंदूलखण्ड के अतिरिक्त)	समय से बुवाई, सिंचाई दशा हेतु	स्ट्रीप लीफ, करनाल बन्ट तथा ब्लैक रस्ट, पाउडरी मिल्ड्यु, फ्लैग स्मट एवं फुटरॉट के प्रति उच्च अवरोधी।
5.	पूसा गेहूँ-3237 (एच.डी.-3237)	2019	48.4	145	उत्तर पश्चिम मैदानी क्षेत्र (बुंदूलखण्ड के अतिरिक्त)	समय से बुवाई, कम सिंचाई दशा हेतु	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी एवं अच्छी चपाती वाली।
6.	पूसा गेहूँ-3249 (एच.डी.-3249)	2020	48.8	122	पूर्वी उत्तर प्रदेश	समय से बुवाई, सिंचाई दशा हेतु	ब्लास्ट उच्च अवरोधी तथा लीफ एवं ब्राउन रस्ट अवरोधी।
7.	राज-4238	2016	45.5	114	मध्यम क्षेत्र	समय से बुवाई, सिंचाई दशा हेतु	अच्छी चपाती वाली।
8.	डी.बी.डब्लू.-173	2018	47.2	122	उत्तर पश्चिम मैदानी क्षेत्र	विलम्ब से बुवाई सिंचित दशा में	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी तथा ताप सहिष्णु।
9.	एच.डी.-3086 (पूसा गौतम)	2014	54.6	143	उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	समय से बुवाई सिंचित दशा में।	पीला एवं भूरा रस्ट अवरोधी।

गेहूँ की अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है :—

- खेत की तैयारी हेतु कल्टीवेटर से प्रथम जुताई करें फिर रोटावेटर / हैरो का प्रयोग करें।
- जीवांश खादों का प्रयोग अवश्य किया जाये।
- यथा सम्भव आधी पोषक तत्व की मात्रा जीवांश खादों से दी जाये।
- प्रजाति का चयन क्षेत्रीय अनुकूलता एवं समय विशेष के अनुसार किया जाये।
- शुद्ध एवं प्रमाणित बीज की बुवाई बीज शोधन के बाद की जाये।
- संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर सही समय पर उचित विधि से किया जाये।
- क्रान्तिक अवस्थाओं (ताजमूल अवस्था एवं पुष्पावस्था) पर सिंचाई समय से उचित विधि एवं मात्रा में की जाये।
- गेहूँसा (फैलेरिस माइनर) एवं जंगली जई के प्रकोप होने पर उसका नियंत्रण समय से किया जाये।
- अन्य क्रियाएं संस्तुति के आधार पर समय से पूरी कर ली जाये।

10. तीसरे वर्ष के उपरान्त बीज अवश्य बदल दिये जाये।
11. जीरो टिलेज एवं रेजड बेड विधि का प्रयोग किया जाये।
12. कीड़े एवं बीमारी से बचाव हेतु विशेष ध्यान दिया जाये।

सघन विधियाँ :

सिंचित बुवाई की दशा में :

प्रदेश में कुल गेहूँ का लगभग 97 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है किन्तु थोड़े क्षेत्र में आश्वस्त अथवा सुनिश्चित सिंचाई उपलब्ध है। अतः सिंचाई तथा उर्वरक के सीमित साधनों से हम किस प्रकार गेहूँ की उपज बढ़ा सकते हैं, इसे भली प्रकार समझकर उन्नतशील प्रजातियों का चयन कर उसका उपयोग करना चाहिए।

खेत की तैयारी :

गेहूँ की बुवाई अधिकतर धान के बाद की जाती है। अतः गेहूँ की बुवाई में बहुधा देर हो जाती है। हमें पहले से यह निश्चित कर लेना होगा कि खरीफ में धान की कौन सी प्रजाति का चयन करें और रबी में उसके बाद गेहूँ की कौन सी प्रजाति बोयें। गेहूँ की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए धान की समय से रोपाई आवश्यक है, जिससे गेहूँ के लिए खेत अकटूबर माह में खाली हो जाये। दूसरी बात ध्यान देने योग्य यह है कि धान में पडलिंग या लेवा के कारण भूमि कठोर हो जाती है। भारी भूमि में पहले मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई के बाद डिस्क हैरो से दो बार जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बनाकर ही गेहूँ की बुवाई करना उचित होगा। डिस्क हैरो के प्रयोग से धान के ठूंठ छोटे-छोटे टुकड़ों में कट जाते हैं। इन्हे शीघ्र सड़ाने हेतु 15–20 किग्रा नत्रजन (यूरिया के रूप में) प्रति है। खेत को तैयार करते समय पहली जुताई पर अवश्य दे देना चाहिए। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा एक ही जुताई में खेत पूर्ण रूप से तैयार हो जाता है।

बुवाई :

गेहूँ की बुवाई समय से एवं पर्याप्त नमी पर करना चाहिए। देर से पकने वाली प्रजातियों की बुवाई समय से अवश्य कर देना चाहिए अन्यथा उपज में कमी हो जाती है। जैसे—जैसे बुवाई में विलम्ब होता जाता है, गेहूँ की पैदावार में गिरावट की दर बढ़ती चली जाती है। दिसम्बर से बुवाई करने पर गेहूँ की पैदावार 3 से 4 कु./हे. एवं जनवरी में बुवाई करने पर 4 से 5 कु./हे. प्रति सप्ताह की दर से घटती है। गेहूँ की बुवाई सीड़िल से करने पर उर्वरक एवं बीज की बचत की जा सकती है।

बीज दर एवं बीज शोधन :

लाइन में बुवाई करने पर सामान्य दशा में 100 किग्रा. तथा मोटा दाना 125 किग्रा. प्रति है। तथा छिटकवाँ बुवाई की दशा में सामान्य दाना 125 किग्रा., मोटा—दाना 150 किग्रा. प्रति है। की दर से प्रयोग करना चाहिए। बुवाई से पहले जमाव प्रतिशत अवश्य देख ले। राजकीय अनुसंधान केन्द्रों पर यह सुविधा निःशुल्क उपलब्ध है। यदि बीज अंकुरण क्षमता कम हो तो उसी के अनुसार बीज दर बढ़ा ले तथा यदि बीज प्रमाणित न हो तो उसका शोधन अवश्य करें। बीजों का कार्बोकिसन /थीरम, एजोटौबैक्टर व पी.एस.बी. से उपचारित कर बुवाई करें। सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों में रेजड बेड विधि से बुवाई करने पर सामान्य दशा में 75 किग्रा. तथा मोटा दाना 100 किग्रा. प्रति है। की दर से प्रयोग करें।

पंकितियों की दूरी : सामान्य दशा में 18 सेमी. से 20 सेमी. एवं गहराई 5 सेमी.।

विलम्ब से बुवाई की दशा में : 15 सेमी. से 18 सेमी. तथा गहराई 4 सेमी.।

विधि : बुवाई हल के पीछे कूंडों में या फर्टीसीडिल द्वारा भूमि की उचित नमी पर करें। पलेवा करके ही बोना श्रेयस्कर होता है। यह ध्यान रहे कि कल्ले निकलने के बाद प्रति वर्गमीटर 400 से 500 बालीयुक्त पौधे अवश्य हों अन्यथा इसका उपज पर कुप्रभाव पड़ेगा। विलम्ब से बचने के लिए पन्तनगर जीरोट्रिल बीज व खाद डिल से बुवाई करें। ट्रैक्टर चालित रोटो टिल डिल द्वारा बुवाई अधिक लाभदायक है। बुन्देलखण्ड (मार व कावर मृदा) में बिना जुताई के बुवाई कर दिया जाय ताकि जमाव सही हो।

गेहूँ की मेंड पर बुवाई :

इस तकनीकी द्वारा गेहूँ की बुवाई के लिए खेत पारम्परिक तरीके से तैयार किया जाता है और फिर मेंड बनाकर गेहूँ की बुवाई की जाती है। इस पद्धति में एक विशेष प्रकार की मशीन (बेड प्लान्टर) का प्रयोग नाली बनाने एवं बुवाई के

लिए किया जाता है। मेडों के बीच की नालियों से सिचाई की जाती है तथा बरसात में जल निकासी का काम भी इन्हीं नालियों से होता है एक मेड पर 2 या 3 कतारों में गेहूँ की बुवाई होती है। इस विधि से गेहूँ की बुवाई कर किसान बीज खाद एवं पानी की बचत करते हुए अच्छी पैदावार ले सकते हैं। इस विधि में हम गेहूँ की फसल को गन्ने की फसल के साथ अन्तःफसल के रूप में ले सकते हैं। इस विधि से बुवाई के लिए मिट्टी का भुखुरा होना आवश्यक है तथा अच्छे जमाव के लिए पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इस तकनीक की विशेषताएं एवं लाभ इस प्रकार हैं—

1. इस पद्धति में लगभग 25 प्रतिशत बीज की बचत की जा सकती है अर्थात् 30–32 किग्रा. बीज एकड़ के लिए प्रर्याप्त है।
2. यह मशीन 70 सेन्टीमीटर की मेड बनाती है जिस पर 2 या 3 पंक्तियों में बुवाई की जाती है। अच्छे अंकुरण के लिए बीज की गहराई 4 से 5 सेन्टीमीटर होनी चाहिए।
3. मेड उत्तर-दक्षिण दिशा में होनी चाहिए ताकि हर एक पौधे को सूर्य का प्रकाश बराबर मिल सके।
4. इस पद्धति से बोएं गये गेहूँ में 25 से 40 प्रतिशत पानी की बचत होती है। यदि खेत में पर्याप्त नमी नहीं हो तो पहली सिंचाई बुवाई के 5 दिन के अन्दर कर देनी चाहिए।
5. इस पद्धति में लगभग 25 प्रतिशत नत्रजन भी बचती है अतः 120 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस तथा 40 किग्रा. पोटाश प्रति है. पर्याप्त होता है।

मेड पर बुवाई द्वारा फसल विविधीकरण :—

गेहूँ के तुरन्त बाद पुरानी मेंडो को पुनः प्रयोग करके खरीफ फसल में मूँग, मक्का, सोयाबीन, अरहर, कपास आदि की फसलें उगाई जा सकती हैं। इस विधि से दलहन एवं तिलहन की 15 से 20 प्रतिशत अधिक पैदावार मिलती है।

उर्वरकों का प्रयोग :

क— मात्रा :

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उचित होता है। बौने गेहूँ की अच्छी उपज के लिए मक्का, धान, ज्वार, बाजरा की खरीफ फसलों के बाद भूमि में 150:60:40 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से तथा विलम्ब से 80:40:30 क्रमशः नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। बुन्देलखण्ड क्षेत्र में सामान्य दशा में 120:60:40 किग्रा. नत्रजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश एवं 30 किग्रा. गंधक प्रति है. की दर से प्रयोग लाभकारी पाया गया है। जिन क्षेत्रों में डी.ए.पी. का प्रयोग लगातार किया जा रहा है उनमें 30 किग्रा. गंधक का प्रयोग लाभदायक रहेगा। यदि खरीफ में खेत परती रहा हो या दलहनी फसलें बोई गई हों तो नत्रजन की मात्रा 20 किग्रा. प्रति है. तक कम प्रयोग करें। अच्छी उपज के लिए 60 कुन्तल प्रति है. गोबर की खाद का प्रयोग करें। यह भूमि की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने में मदद करती है।

लगातार धान—गेहूँ फसल चक्र वाले क्षेत्रों में कुछ वर्षों बाद गेहूँ की पैदावार में कमी आने लगती है। अतः ऐसे क्षेत्रों में गेहूँ की फसल कटने के बाद तथा धान की रोपाई के बीच हरी खाद का प्रयोग करें अथवा धान की फसल में 10–12 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद का प्रयोग करें। अब भूमि में ज़िंक की कमी प्रायः देखने में आ रही है। गेहूँ की बुवाई के 20–30 दिन के मध्य में पहली सिंचाई के आस-पास पौधों में ज़िंक की कमी के लक्षण प्रकट होते हैं, जो निम्न हैं :

1. प्रभावित पौधे स्वस्थ पौधों की तुलना में बौने रह जाते हैं।
2. तीन चार पत्ती नीचे से पत्तियों के आधार पर पीलापन शुरू होकर ऊपर की तरफ बढ़ता है।
3. आगे चलकर पत्तियों पर कत्थई रंग के धब्बे दिखते हैं।

खड़ी फसल में यदि ज़िंक की कमी के लक्षण दिखाई दें तो 5 किग्रा. ज़िंक सल्फेट तथा 16 किग्रा. यूरिया को 800 लीटर पानी में घोलकर प्रति है. की दर से छिड़काव करें। यदि यूरिया की टापड़ेसिंग की जा चुकी है तो यूरिया के स्थान पर 2.5 किग्रा.बुझे हुए चूने के पानी में ज़िंक सल्फेट घोलकर छिड़काव करें (2.5 किग्रा. बुझे हुए चूने को 10 लीटर पानी में सांयकाल डाल दें तथा दूसरे दिन प्रातः काल इस पानी को निथार कर प्रयोग करें और चूना फेंक दें)। ध्यान रखें कि ज़िंक सल्फेट के साथ यूरिया अथवा बुझे हुए चूने के पानी को मिलाना अनिवार्य है। धान के खेत में यदि ज़िंक सल्फेट का प्रयोग बेसल ड्रेसिंग के रूप में न किया गया हो और कमी हाने की आशंका हो तो 20–25 किग्रा. / है. ज़िंक सल्फेट की टाप ड्रेसिंग करें।

ख— समय व विधि :

उर्वरकीय क्षमता बढ़ाने के लिए उनका प्रयोग विभिन्न प्रकार की भूमियों में निम्न प्रकार से किया जाये :—

1. दोमट या मटियार, कावर तथा मार :

- नत्रजन की आधी, फॉस्फेट व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के 2–3 सेमी. नीचे दी जाये नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई के 24 घण्टे पहले या ओट आने पर दें।
- बलुई दोमट, राकड़ व पडवा बलुई जमीन में नत्रजन की 1/3 मात्रा, फॉस्फेट तथा पोटाश की पूरी मात्रा को बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के नीचे देना चाहिए। शेष नत्रजन की आधी मात्रा पहली सिंचाई (20–25 दिन) के बाद (क्राउन रूट अवस्था) तथा बची हुई मात्रा दूसरी सिंचाई के बाद देना चाहिए। ऐसी मृदाओं में टाप ड्रेसिंग सिंचाई के बाद करना अधिक लाभप्रद होता है जहाँ कवल 40 किग्रा। नत्रजन तथा दो सिंचाई देने में सक्षम हो, वह भारी दोमट भूमि में सारी नत्रजन बुवाई के समय प्लेसमेंट कर दें। किन्तु जहाँ हल्की दोमट भूमि हो वहाँ नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय (प्लेसमेंट) कूँड़ों में प्रयोग करें और शेष पहली सिंचाई पर टाप ड्रेसिंग करें।

सिंचाई :

क— आश्वस्त सिंचाई की दशा में :

- सामान्यतः बौने गेहूँ में अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए हल्की भूमि में सिंचाइयाँ निम्न अवस्थाओं में करनी चाहिए। इन अवस्थाओं पर जल की कमी का उपज पर भारी कुप्रभाव पड़ता है, परन्तु सिंचाई हल्की करें—

पहली सिंचाई	:	क्राउन रूट-बुवाई के 20–25 दिन बाद (ताजमूल अवस्था)
दूसरी सिंचाई	:	बुवाई के 40–45 दिन पर (कल्ले निकलते समय)
तीसरी सिंचाई	:	बुवाई के 60–65 दिन पर (दीर्घ सन्धि अथवा गांठे बनते समय)
चौथी सिंचाई	:	बुवाई के 80–85 दिन पर (पुष्पावस्था)
पाँचवीं सिंचाई	:	बुवाई के 100–105 दिन पर (दुग्धावस्था)
छठी सिंचाई	:	बुवाई के 115–120 दिन पर (दाना भरते समय)
- दोमट या भारी दोमट भूमि में निम्न चार सिंचाइयाँ करके भी अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है परन्तु प्रत्येक सिंचाई कुछ गहरी (8 सेमी) करें—
 - ◆ पहली सिंचाई बौने के 20–25 दिन बाद।
 - ◆ दूसरी सिंचाई पहली के 30 दिन बाद।
 - ◆ तीसरी सिंचाई दूसरी के 30 दिन बाद।
 - ◆ चौथी सिंचाई तीसरी के 20–25 दिन बाद

ख— सीमित सिंचाई साधन की दशा में :

यदि तीन सिंचाइयों की सुविधा ही उपलब्ध हो तो ताजमूल अवस्था, बाली निकलने के पूर्व तथा दुग्धावस्था पर करें।

यदि दो सिंचाइयाँ ही उपलब्ध हों तो ताजमूल तथा पुष्पावस्था पर करें।

यदि एक ही सिंचाई उपलब्ध हो तो ताजमूल अवस्था पर करें।

गेहूँ की सिंचाई में निम्नलिखित 3 बातों पर ध्यान दें—

- ◆ बुवाई से पहले खेत भली—भौति समतल करें तथा किसी एक दिशा में हल्का ढाल दें, जिससे जल का पूरे खेत में एक साथ वितरण हो सके।
- ◆ बुवाई के बाद खेत को मृदा तथा सिंचाई के साधन के अनुसार आवश्यक माप की क्यारियो अथवा पटिटयों में बांट दें इससे जल के एक साथ वितरण में सहायता मिलती है।
- ◆ हल्की भूमि में आश्वस्त सिंचाई सुविधा होने पर सिंचाई हल्की (लगभग 6 सेमी. जल) तथा दोमट व भारी भूमि में तथा सिंचाई साधन की दशा में सिंचाई कुछ गहरी (प्रति सिंचाई लगभग 8 सेमी. जल) करें।

नोट: ऊसर भूमि में पहली सिंचाई बुवाई के 28–30 दिन बाद तथा शेष सिंचाइयाँ हल्की एवं जल्दी—जल्दी करनी चाहिए, जिससे मिट्टी सूखने न पाये।

ग— सिंचित तथा विलम्ब से बुवाई की दशा में :

गेहूँ की बुवाई अगहनी धान तोरिया, आलू, गन्ना की पेड़ी एवं शीघ्र पकने वाली अरहर के बाद की जाती है किन्तु कृषि अनुसंधान की विकसित निम्न तकनीक द्वारा इन क्षेत्रों की भी उपज बहुत कुछ बढ़ाई जा सकती है—

- ◆ पिछेती बुवाई के लिए क्षेत्रीय अनकूलतानुसार प्रजातियों का चयन करें, जिनका वर्णन पहले किया जा चुका है।
- ◆ विलम्ब की दशा में बुवाई जीरों टिलेज मशीन से करें।
- ◆ बीज दर 125 किग्रा. प्रति हेक्टेयर एवं संतुलित मात्र में उर्वरक (80:40:30) अवश्य प्रयोग करें।
- ◆ बीज को रात भर पानी में भिगोकर 24 घन्टे रखकर जमाव करके उचित मृदा नमी पर बोयें।
- ◆ पिछेती गेहूँ में सामान्य की अपेक्षा जल्दी—जल्दी सिंचाइयों की आवश्यकता होती है पहली सिंचाई जमाव के 15–20 दिन बाद करके टापड़ेसिंग करें। बाद की सिंचाई 15–20 दिन के अन्तराल पर करें। बाली निकलने से दुग्धावस्था तक फसल को जल पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध रहे। इस अवधि में जल की कमी का उपज पर विशेष कुप्रभाव पड़ता है। सिंचाई हल्की करें। अन्य शस्य क्रियाएं सिंचित गेहूँ की भाँति अपनायें।

असिंचित अथवा बारानी दशा में गेहूँ की खेती :

प्रदेश में गेहूँ का लगभग 3 प्रतिशत क्षेत्र असिंचित है जिसकी औसत उपज बहुत कम है। इसी क्षेत्र की औसत उपज प्रदेश की औसत उपज को कम कर देती है। परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि बारानी दशा में गेहूँ की अपेक्षा राई, जौ तथा चना की खेती अधिक लाभकारी है, ऐसी दशा में गेहूँ की बुवाई अक्टूबर माह में उचित नमी पर करें। लेकिन यदि अक्टूबर या नवम्बर में पर्याप्त वर्षा हो गयी हो तो गेहूँ की बारानी खेती निम्नवत् विशेष तकनीक अपनाकर की जा सकती है।

खेत की तैयारी तथा नमी का संरक्षण :

मानसून की अन्तिम वर्षा का यथोचित जल संरक्षण करके खेत की तैयारी करें। असिंचित क्षेत्रों में अधिक जुताई की आवश्यकता नहीं है, अन्यथा नमी उड़ने का भय रहता है, ऐसे क्षेत्रों में सायंकाल जुताई करके दूसरे दिन प्रातः काल पाटा लगाने से नमी का समुचित संरक्षण किया जा सकता है।

समय से बुवाई :

संस्तुत प्रजातियों की बुवाई अक्टूबर के द्वितीय पखवाड़ा से नवम्बर के प्रथम पखवाड़ा तक भूमि की उपयुक्त नमी पर करें।

बीज दर एवं पंक्तियों की दूरी :

बीज का प्रयोग 100 किग्रा. प्रति हे. की दर से करें और बीज को कूँड़ों में 23 सेमी. की दूरी पर बोएं जिससे बीज के ऊपर 4–5 सेमी. से अधिक मिट्टी न हो।

उर्वरक की मात्रा एवं प्रयोग विधि :

बारानी गेहूँ की खेती के लिए 40 किग्रा. नत्रजन, 30 किग्रा. फॉस्फेट तथा 30 किग्रा. पोटाश प्रति हे. की दर से प्रयोग करें। उर्वरक की यह सम्पूर्ण मात्रा बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के 2–3 सेमी. नीचे नाई अथवा चोगे अथवा फर्टीड्रिल द्वारा डालना चाहिए। बाली निकलने से पूर्व वर्षा हो जाने पर 15–20 किग्रा./हे. नत्रजन का प्रयोग लाभप्रद होगा यदि वर्षा न हो तो 2 प्रतिशत यूरिया का पर्णीय छिड़काव किया जाये।

गेहूँ में फसल सुरक्षा प्रबन्धन :

(क) प्रमुख खरपतवार :

1. सकरी पत्ती : गेहूँसा (फैलेरिस माइनर) एवं जंगली जई।
2. चौड़ी पत्ती : बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी, जंगली गाजर, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

1. गेहूँसा (फैलेरिस माइनर) एवं जंगली जई एवं के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. बुवाई के 20–25 दिन के बाद पलैटफैन नाजिल से छिड़काव करना चाहिए। सल्फोसल्फ्यूरॉन हेतु पानी की मात्रा 300 लीटर से अधिक नहीं होनी चाहिए—

- क— आइसोप्रोट्यूरॉन 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 1.25 किग्रा. प्रति हे0 ।
 ख— सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 प्रतिशत डब्लू.जी. की 33 ग्राम (2.5 यूनिट) प्रति हे0
 ग— फिनोक्साप्राप—पी इथाइल 10 प्रतिशत ई.सी. की 1 लीटर प्रति हे0 ।
 घ— क्लोडीनाफॉप प्रोपैरजिल 15 प्रतिशत डब्लू.पी. की 400 ग्राम प्रति हे0 ।
2. चौड़ी पत्ती के खरपतवार बथुआ, सेंजी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी, जंगली गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को 500—600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे0 बुवाई के 25—30 दिन के बाद फ्लैटफैन नाजिल से छिड़काव करना चाहिए —
- क— 2—4 डी सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत की 625 ग्राम प्रति हे0 ।
 ख— 2—4 डी मिथाइल एमाइन सॉल्ट 58 प्रतिशत एस.एल. की 1.25 लीटर प्रति हे0 ।
 ग— कार्फन्ट्राजॉन इथाइल 40 प्रतिशत डी.एफ. की 50 ग्राम प्रति हे0 ।
 घ— मेटसल्फ्यूरॉन मिथाइल 20 प्रतिशत डब्लू.पी. की 20 ग्राम प्रति हे0 ।
3. सकरी एवं चौड़ी पत्ती दोनों प्रकार के खरपतवारों के एक साथ नियंत्रण हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को 300 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर फ्लैटफैन नाजिल से छिड़काव करना चाहिए मैट्रीब्यूजिन हेतु पानी की मात्रा 500—600 लीटर प्रति हे0 होनी चाहिए —
- क— पेण्डीमेथलीन 30 प्रतिशत ई.सी. की 3.30 लीटर प्रति हे0 बुवाई के 3 दिन के अन्दर ।
 ख— सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 33 ग्राम (2.5 यूनिट) प्रति हे0 बुवाई के 20—25 दिन के बाद ।
 ग— मैट्रीब्यूजिन 70 प्रतिशत डब्लू.पी. की 250 ग्राम प्रति हे0 बुवाई के 20—25 दिन के बाद ।
 घ— सल्फोसल्फ्यूरॉन 75 प्रतिशत + मेट सल्फोसल्फ्यूरॉन मिथाइल 5 प्रतिशत डब्लू.जी. 40 ग्राम (2.50 यूनिट) मात्रा बुवाई के 20 से 25 दिन बाद ।
4. गेहूँ की फसल में खरपतवार नियंत्रण हेतु क्लोडिनोफाप 15 प्रतिशत डब्लू.पी. + मेटसल्फ्यूरान 1 प्रतिशत डब्लू.पी. की 400 ग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 12.5 मिली. सर्फेंट 375 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए ।
- (ख) **प्रमुख कीट :**
- दीमक :** यह एक सामाजिक कीट है तथा कालोनी बनाकर रहते हैं। एक कालोनी में लगभग 90 प्रतिशत श्रमिक, 2—3 प्रतिशत सैनिक, एक रानी व एक राजा होते हैं। श्रमिक पीलापन लिए हुए सफेद रंग के पंखहीन होते हैं। जो फसलों को क्षति पहुँचाते हैं।
 - गुजिया वीविल :** यह कीट भूरे मटमैले रंग का होता है जो सूखी जमीन में ढेले एवं दरारों में रहता है। यह कीट उग रहे पौधों को जमीन की सतह से काटकर हानि पहुँचाता है।
 - माहूँ :** हरे रंग के शिशु एवं प्रौढ़ माहूँ पत्तियों एवं हरी बालियों से रस चूस कर हानि पहुँचाते हैं। माहूँ मधुस्राव करते हैं जिसपर काली फफूँद उग आती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न होती है।
- नियंत्रण के उपाय :**
- बुवाई से पूर्व दीमक के नियंत्रण हेतु क्लोरपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. अथवा थायोमेथाक्साम 30 प्रतिशत एफ.एस. की 3 मिली. मात्रा प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज को शोधित करना चाहिए।
 - ब्यूवेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत बॉयोपेस्टीसाइड की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60—70 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छिंटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से दीमक सहित भूमि जनित कीटों का नियंत्रण हो जाता है।
 - खड़ी फसल में दीमक / गुजिया के नियंत्रण हेतु क्लोरपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली. प्रति हे. की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।

4. माहूँ कीट के नियंत्रण हेतु डाइमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. अथवा ऑक्सीडेमेटान-मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.0 ली. मात्रा अथवा थायोमेथाक्साम 25 प्रतिशत डब्लू.जी. 50 ग्राम प्रति हेठो 750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। एजाडिरेक्टन (नीम का तेल) 0.15 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

(ग) प्रमुख रोग :

1. **गेरुई रोग (काली भूरी एवं पीली) :** गेरुई काली, भूरे एवं पीले रंग की होती है। गेरुई की फफूँदी के फफोले पत्तियों पर पड़ जाते हैं, जो बाद में बिखर कर अन्य पत्तियों को प्रभावित करते हैं। काली गेरुई तना तथा पत्तियों दानों को प्रभावित करती है।
2. **करनाल बन्ट :** रोगी दाने आंशिक रूप से काले चूर्ण में बदल जाते हैं।
3. **अनावृत कण्डुआ :** इस रोग में बालियों के दानों के स्थान पर काला चूर्ण बन जाता है जो सफेद झिल्ली द्वारा ढका रहता है। बाद में झिल्ली फट जाती है और फफूँदी के असंख्य बीजाणु हवा में फैल जाते हैं, जो स्वस्थ बालियों में फूल आते समय उनका संक्रमण करते हैं।
4. **पत्ती धब्बा रोग :** इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पीले व भूरापन लिए हुए अण्डाकार धब्बे नीचे की पत्तियों पर दिखाई देते हैं। बाद में इन धब्बों का किनारा कत्थर्ई रंग का तथा बीच में हल्के भूरे रंग के हो जाते हैं।
5. **सेहूँ रोग :** यह रोग सूत्रकृमि द्वारा होता है इस रोग में प्रभावित पौधों की पत्तियों मुड़कर सिकुड़ जाती है। प्रभावित पौधे बौने रह जाते हैं तथा उनमें स्वस्थ पौधे की अपेक्षा अधिक शाखायें निकलती हैं। रोग ग्रस्त बालियाँ छोटी एवं फैली हुई होती हैं और इसमें दाने की जगह भूरे अथवा काले रंग की गाँठें बन जाती हैं, जिसमें सूत्रकृमि रहते हैं।

नियंत्रण के उपाय :

1. बीज उपचार :

- ◆ अनावृत कण्डुआ एवं करनाल बन्ट के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.एस. की 2.5 ग्राम अथवा कार्बन्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 ग्राम अथवा कार्बाक्सिन 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 ग्राम अथवा टेबूकोनाजोल 2 प्रतिशत डी.एस. की 1.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज शोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- ◆ अनावृत कण्डुआ एवं अन्य बीज जनित रोगों के साथ-साथ प्रारम्भिक भूमि जनित रोगों के नियंत्रण हेतु कार्बाक्सिन 37.5 प्रतिशत+थीरम 37.5 प्रतिशत डी.एस./डब्लू.एस. की 3.0 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- ◆ गेहूँ रोग के नियंत्रण हेतु बीज को कुछ समय के लिए 2.0 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोएं (200 ग्राम नमक को 10 लीटर पानी घोलकर) जिससे गेहूँ रोग ग्रसित बीज हल्का होने के कारण तैरने लगता है। ऐसे सेहूँ ग्रसित बीजों को निकालकर नष्ट कर दें नमक के घोल में डुबोएं गये बीजों को बाद में साफ पानी से 2-3 बार धोकर सुखा लेने के पश्चात बोने के काम में लाना चाहिए।

2. भूमि उपचार :

1. भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेरस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60-75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से अनावृत कण्डुआ, करनाल बन्ट आदि रोगों के प्रबन्धन में सहायता मिलती है।
2. सूत्रकृमि के नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरान 3 जी 10 से 15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकाव करना चाहिए।

3. पर्णीय उपचार :

1. गेरुई एवं पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु थायोफिनेट मिथाइल 70 प्रतिशत डब्लू.पी. की 700 ग्राम अथवा जिरम 80 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा मैकोजेब 75 डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. प्रति हे. 750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

2. गेरुई के नियंत्रण हेतु प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई.सी. की 500 मिली. प्रति हेक्टेयर 750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
3. करनाल बन्ट के नियंत्रण हेतु प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई.सी., 500 मिली. प्रति हे. 750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(घ). चूहे :

खेत का चूहा (फील्ड रैट) मुलायम बालों वाला खेत का चूहा (साप्ट फर्ड फील्ड रैट) एवं खेत का चूहा (फील्ड माउस)।

नियंत्रण के उपाय :

1. गेहूँ की फसल को चूहे बहुत अधिक क्षति पहुँचाते हैं। चूहे की निगरानी एवं ज़िंक फॉस्फाइड 80 प्रतिशत से नियंत्रण का साप्ताहिक कार्यक्रम निम्न प्रकार सामूहिक रूप से किया जाय तो अधिक सफलता मिलती है :

पहला दिन – खेत की निगरानी करें तथा जितने चूहे के बिल हो उसे बन्द करते हुए पहचान हेतु लकड़ी के डन्डे गाड़ दें।

दूसरा दिन – खेत में जाकर बिल की निगरानी करें। जो बिल बन्द हो वहाँ से गड़े हुए डन्डे हटा दें जहाँ पर बिल खुल गये हो वहाँ पर डन्डे गड़े रहने दें। खुले बिल में एक भाग सरसों का तेल एवं 48 भाग भुने हुए दाने का बिना जहर का बना हुआ चारा बिल में रखें।

तीसरा दिन – बिल की पुनः निगरानी करें तथा बिना जहर का बना हुआ चारा पुनः बिल में रखें।

चौथा दिन – ज़िंक फॉस्फाइड 80 प्रतिशत की 1.0 ग्राम मात्रा में 1.0 ग्राम सरसों का तेल एवं 48 ग्राम भुने हुए दाने में बनाये गये जहरीले चारे का प्रयोग करना चाहिए।

पाँचवा दिन – बिल की निगरानी करें तथा मरे हुए चूहों को जमीन में खोद कर दबा दें।

छठा दिन – बिल को पुनः बन्द कर दें तथा अगले दिन यदि बिल खुल जाये तो इस साप्ताहिक कार्यक्रम में पुनः अपनायें।

2. ब्रोमोडियोलोन 0.005 प्रतिशत के बने बनाये चारे की 10 ग्राम मात्रा प्रत्येक ज़िन्दा बिल में रखना चाहिए। इस दवा से चूहा 3-4 बार खाने के बाद मरता है।

विशेष बिन्दु : अनाज को धातु की बनी बखारियों अथवा कोठिलों या कमरे में जैसी सुविधा हो भण्डारण कर लें। वैसे भण्डारण के लिए धातु की बनी बखारी बहुत ही उपयुक्त है। भण्डारण के पूर्व कोठिलों तथा कमरे को साफ कर लें। और दीवार तथा फर्श पर मैलाथियान 50 प्रतिशत के घोल (1 : 100) को 3 लीटर प्रति 100 वर्गमीटर की दर से छिड़कें। बखारी के ढक्कन पर पालीथीन लगाकर मिट्टी का लेप कर दें जिससे वायुरोधी हो जाये।

मुख्य बिन्दु परिस्थिति अनुसार व प्रजातिवार :

- ◆ समय से बुवाई करें।
- ◆ क्षेत्र विशेष के लिए संस्तुत प्रजाति का चयन करके शुद्ध एवं प्रमाणित शोधित बीज का ही प्रयोग करें।
- ◆ मृदा परीक्षण के आधार पर संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग किया जाय। बोते समय उचित मात्रा में उर्वरक का प्रयोग अवश्य करें।
- ◆ सिंचन क्षमता का भरपूर उपयोग करते हुए संस्तुति अनुसार सिंचाइयाँ करें।
- ◆ यदि पूर्व फसल में या बुवाई के समय ज़िंक प्रयोग न किया गया हो तो ज़िंक सल्फेट का प्रयोग खड़ी फसल में संस्तुति के अनुसार किया जाय।
- ◆ खरपतवारों के नियंत्रण हेतु रसायनों को संस्तुति के अनुसार सामयिक प्रयोग करें।
- ◆ नियमित कीट/रोग सर्वेक्षण करके रोगों एवं कीड़ों पर समय से नियन्त्रण किया जाये।

एकीकृत प्रबन्धन :

- ◆ पूर्व में बोई गयी फसलों के अवशेषों को एकत्र कर कम्पोस्ट बना देना चाहिए।
- ◆ संभव हो सके तो दिमकौलों को खोदकर रानी दीमक को मार दें।

- ◆ दीमक प्रकोपित क्षेत्रों में नीम की खली 10 कु./हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।
- ◆ दीमक प्रकोपित खेतों में सदैव अच्छी तरह से गोबर की खाद का ही प्रयोग करें।
- ◆ दीमक ग्रसित क्षेत्रों में क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. 4 मिली. प्रति किग्रा. की दर से बीज शोधन के उपरान्त ही बुवाई करें।
- ◆ समय से बुवाई करने से माहूँ, सैनिक कीट आदि का प्रयोग कम हो जाता है।
- ◆ मृदा परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों का प्रयोग करें। अधिक नत्रजनित खादों के प्रयोग से माहूँ एवं सैनिक कीट के प्रकोप बढ़ने की सम्भावना रहती है।
- ◆ कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण करें।
- ◆ खड़ी फसल में दीमक का प्रकोप होने पर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. 2–3 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से सिंचाई के पानी के साथ अथवा बालू में मिला कर प्रयोग करें।
- ◆ ब्यूवेरिया बैसियाना की 2 किग्रा. मात्रा को 20 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर 10 दिनों तक छाये में ढक कर रख दें तथा बुवाई करते समय कूड़ में इसे डालकर बुवाई करें।

प्रदेश में जीरो टिलेज द्वारा गेहूँ की खेती की उन्नत विधियाँ :

प्रदेश के धान गेहूँ फसल चक्र में विशेषतौर पर जहाँ गेहूँ की बुवाई में विलम्ब हो जाता है, गेहूँ की खेती जीरो टिलेज विधि द्वारा करना लाभकारी पाया गया है। इस विधि में गेहूँ की बुवाई बिना खेत की तैयारी किये एक विशेष मशीन (जीरो टिलेज मशीन) द्वारा की जाती है।

विधि : जीरो टिलेज विधि से बुवाई करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :

1. बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। यदि आवश्यक हो तो धान काटने के एक सप्ताह पहले सिंचाई कर देनी चाहिए। धान काटने के तुरन्त बाद बुवाई करनी चाहिए।
2. बीज दर 125 किग्रा. प्रति हे. रखनी चाहिए।
3. दानेदार उर्वरक (एन.पी.के.) का प्रयोग करना चाहिए।
4. पहली सिंचाई, बुवाई के 15 दिन बाद करनी चाहिए।
5. खरपतवारों के नियंत्रण हेतु तृणनाशी रसायनों का प्रयोग करना चाहिए।
6. भूमि समतल होना चाहिए।

लाभ : इस विधि में निम्न लाभ पाए गए है :

1. गेहूँ की खेती में लागत की कमी (लगभग 2000 रुपये प्रति हे.)।
2. गेहूँ की बुवाई 7–10 दिन जल्द होने से उपज में वृद्धि।
3. पौधों की उचित संख्या तथा उर्वरक का श्रेष्ठ प्रयोग सम्भव हो पाता है।
4. पहली सिंचाई में पानी न लगने के कारण फसल बढ़वार में रुकावट की समस्या नहीं रहती है।
5. गेहूँ के मुख्य खरपतवार, गेहूँसा के प्रकोप में कमी हो जाती है।
6. निचली भूमि नहर के किनारे की भूमि एवं ईट भट्ठे की जमीन में इस मशीन से समय से बुवाई की जा सकती है।

नोट : गेहूँ फसल कटाई के पश्चात फसल अवशेष को न जलाया जाये।



25. काला गेहूँ की उन्नतशील खेती

काले गेहूँ की खेती करने का तरीका, उपज, बीज दर, साधारण गेहूँ और काले गेहूँ में अन्तर, काले गेहूँ की बुवाई समय से एवं पर्याप्त नमी पर करना चाहिए। देर से बुवाई करने पर उपज में कमी होती है। जैसे—जैसे बुवाई में विलम्ब होता जाता है, गेहूँ की पैदावार में गिरावट की दर बढ़ती चली जाती है। दिसम्बर में बुवाई करने पर गेहूँ की पैदावार 3 से 4 कु0/ हे0 एवं जनवरी में बुवाई करने पर 4 से 5 कु0/ हे0 प्रति सप्ताह की दर से घटती है। गेहूँ की बुवाई सीड़िल से करने पर उर्वरक एवं बीज की बचत की जा सकती है। काले गेहूँ की उत्पादन सामान्य गेहूँ की तरह ही होता है। इसकी उपज 10—12 विंटल/बीघा होता है। सामान्य गेहूँ का भी औसत उपज एक बीघा में 10—12 विंटल होता है।



काले गेहूँ की खेती :

बीज दर एवं बीज शोधन :

पंक्तियों में बुवाई करने पर सामान्य दशा में 100 किग्रा0 तथा मोटा दाना 125 किग्रा0 प्रति है, तथा छिटकाव बुवाई की दशा में सामान्य दाना 125 किग्रा0 मोटा—दाना 150 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से प्रयोग करना चाहिए। बुवाई से पहले जमाव प्रतिशत अवश्य देख लें। राजकीय अनुसंधान केन्द्रों पर यह सुविधा निःशुल्क उपलब्ध है। यदि बीज अंकुरण क्षमता कम हो तो उसी के अनुसार बीज दर बढ़ा ले तथा यदि बीज प्रमाणित न हो तो उसका शोधन अवश्य करें। बीजों का कार्बाकिसन, एजेटौवैक्टर व पी.एस.वी. से उपचारित कर बुवाई करें। सीमित सिंचाई वाले क्षेत्रों में रेज्ड वेड विधि से बुवाई करने पर सामान्य दशा में 75 किग्रा0 तथा मोटा दाना 100 किग्रा0 प्रति हे0 की दर से प्रयोग करें।

उर्वरक व सिंचाई :

खेत की तैयारी के समय जिंक व यूरिया खेत में डालें तथा डीएपी खाद को डिल से दें। बोते समय 50 किलो डीएपी, 45 किलो यूरिया, 20 किलो म्यूरेट पोटाश तथा 10 किलो जिंक सल्फेट प्रति एकड़ दें। पहली सिंचाई के समय 60 किलो यूरिया दें। पहली सिंचाई तीन हफ्ते बाद करें। इसके बाद कल्ले निकलते समय, गांठें बनते समय, बालियां निकलने से पहले, दूधिया दशा में और दाना पकते समय सिंचाई करें।

साधारण गेहूँ और काले गेहूँ में अन्तर :

काले गेहूँ दिखने में काले तथा बैंगनी होते हैं, पर इसके गुण साधारण गेहूँ से ज्यादा होते हैं। एन्थोसाइनीन पिगमेंट की मात्रा ज्यादा होने के कारण ये गेहूँ काले होते हैं। साधारण गेहूँ में एन्थोसाइनीन की मात्रा 5 से 15 पीपीएम होती है जबकि काले गेहूँ में इसकी मात्रा 40 से 140 पीपीएम होती है।

काले गेहूँ के औषधीय गुण :

एन्थोसाइनीन एक नेचुरल एंटी ऑक्सीडेंट व एंटीबायोटिक है, जो हार्ट अटैक, कैंसर, शुगर, मानसिक तनाव, घुटनों का दर्द, एनीमिया जैसे रोगों में काफी कारगर सिद्ध होता है। काले गेहूँ रंग व स्वाद में सामान्य गेहूँ से थोड़ा अलग होते हैं, लेकिन बेहद पौष्टिक होते हैं।

26. जौ की उन्नतशील खेती

सिंचाई एवं उर्वरक के सीमित साधन एवं असिंचित दशा में जौ की खेती गेहूँ की अपेक्षा अधिक लाभप्रद है। सिंचित, असिंचित, विलम्ब से तथा ऊसरीली भूमि में जौ की खेती से अच्छा उत्पादन प्राप्त करने हेतु निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखना होगा :—

खेत की तैयारी :

देशी हल या डिस्क हैरो/रोटावेटर से 2—3 जुताई करके खेत तैयार कर लेना चाहिए।

बोने का समय :

असिंचित : सभी क्षेत्रों में 20 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक।

सिंचित समय : 25 नवम्बर तक।

विलम्ब से : दिसम्बर के दूसरे पखवारे तक।

जौ की उन्नतशील प्रजातियाँ :

कं.सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना की तिथि/वर्ष	उत्पादकता (कु. / हेक्टेयर)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष विवरण
1.	छिल्कायुक्त छ: धारीय प्रजातियाँ मैदानी क्षेत्र				
1.	आर.एस.—6	20.02.1970 —	25—30 सिंचित 20—22 असिंचित	120—125 110—115	सिंचित, असिंचित तथा विलम्ब से बुवाई हेतु कण्डुआ तथा स्ट्राइप आंशिक अवरोधी। बुन्देलखण्ड क्षेत्र हेतु।
2.	ज्योति (क.572/10)	08.10.1974	25—28	120—125 (विलम्ब से)	सिंचित दशा विलम्ब से बुवाई हेतु कण्डुवा एवं स्ट्राइप रस्ट अवरोधी। मैदानी क्षेत्र हेतु उपयुक्त।
3.	आजाद (के—125)	14.01.1982	28—32	110—115	असिंचित दशा तथा ऊसरीली भूमि, चारा तथा दाना के लिये उपयुक्त कण्डुआ एवं स्ट्राइप रस्ट अवरोधी, मैदानी क्षेत्र हेतु।
4.	के—141	29.05.1982	30—32	120—125	असिंचित दशा चारा एवं दाना के लिये उपयुक्त नीलाभ कण्डुआ एवं स्ट्राइप अवरोधी। मैदानी क्षेत्र हेतु।
5.	लखन (के.226)	24.07.1985	30—32	125—130	असिंचित दशा के लिए उपयुक्त नीलाभ कण्डुआ एवं स्ट्राइप अवरोधी। मैदानी क्षेत्र हेतु।
6.	मंजुला (के.329)	01.05.1997	28—30	110—115	पछेती बुवाई हेतु नीलाभ कण्डुआ अवरोधी। उ.प्र. का समस्त मैदानी क्षेत्र हेतु।
7.	हरितमा (के—560)	15.05.1998	30—35	110—115	असिंचित दशा के लिये उपयुक्त समस्त रोगों के लिए अवरोधी समस्त उत्तर प्रदेश हेतु।

रबी फसलों की खेती

क्र.सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना की तिथि / वर्ष	उत्पादकता (कु. / हेक्टेयर)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष विवरण
8.	आर.डी.-2552	03.04.2000	30-40	120-125	लवणीय भूमियों के लिये उपयुक्त
9.	प्रीती (के-409)	02.02.2001	40-42	105-112	सिंचित दशा हेतु जौ की प्रमुख बीमारियों के प्रति अवरोधी। समस्त उत्तर प्रदेश हेतु।
10.	नरेन्द्र जौ-1 92 (एन.डी.बी.-209)	92 (ई.) 2.2.01	25-30 सिंचित	110-115	समस्याग्रस्त ऊसर भूमि के लिए उपयुक्त जौ की प्रमुख बीमारियों के लिए अवरोधी।
11.	नरेन्द्र जौ-2 (एन.डी.बी.-940)	92 (ई.) 2.2.01	40-45 सिंचित समय से	110-115	सिंचित समय से बुवाई के हेतु जौ की प्रमुख बीमारियों के लिए अवरोधी।
12.	के. 603	02.02.2001	30-35	115-122	असिंचित दशा के लिये उपयुक्त समस्त रोगों के लिये अवरोधी।
13.	नरेन्द्र जौ-3 (एन.डी.बी.-1020)	937 (ई) 4.9.02	25-30	110-115	समस्याग्रस्त ऊसर भूमि के लिये उपयुक्त कण्डुआ के लिये अवरोधी।
14.	एन.डी.बी.-1173	एस.ओ. 12 (ई.) 4.2.05	35-45	115-120	सिंचित, असिंचित, समस्याग्रस्त एवं ऊसर क्षेत्रों हेतु उपयुक्त।
15.	जागृति (के-287)	-	42-45	125-130	सिंचित दशा में कण्डुआ एवं स्ट्राइप अवरोधी। उ. प्र. का मैदानी क्षेत्र हेतु।
16.	डी.डब्लू.आर.बी.-73	2011	38.70	110-118	लीफ रस्ट अवरोधी।
17.	डी.डब्लू.आर.बी.-62	2011	40-42	116	-
18.	डी.डब्लू.आर.बी.-92	2013	49.8	131	माल्ट के लिए।
19.	डी.डब्लू.आर.बी.-91	2013	45.00	115	माल्ट के लिए।
20.	आर.डी.-2786	2013	49.76	125	पीला रस्ट के प्रति उच्च स्तर अवरोधी।
21.	बी.एच.-946	2014	51.9	125-130	-
22.	महामना -113	2014	43.20	116.121	-
23.	बी.एच.-946	2014	51.96	130	फीड के लिए।
24.	एन.डी.बी. 1445 (नरेन्द्र जौ-7)	2014	30-35	125-128	सम्पूर्ण उ0प्र0 एवं ऊसर भूमि के लिए
25.	बी.एच.-959	2015	49.90	109	-
26.	डी.डब्लू.आर.बी.-101	2015	49.20	132	पीला रस्ट अवरोधी एवं माल्ट के लिए।
27.	आर.डी.-2794	2016	29.90	118-124	लवण अवरोधी एवं फीड के लिए।
28.	आर.डी.-2849	2016	50.90	131	स्ट्रिप रस्ट अवरोधी एवं माल्ट के लिए।
29.	डी.डब्लू.आर.बी.-123	2017	49.30	130	पीला, भूरा अवरोधी। माल्ट के लिए।
30.	डी.डब्लू.आर.बी.-137	2018	42.49	113-115	पीला रस्ट अवरोधी।
31.	के.-1055 (प्रखर)	2018	42-47	132	पीला, भूरा एवं काला रस्ट अवरोधी।

क्र.सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना की तिथि/वर्ष	उत्पादकता (कु. / हेक्टेयर)	पकने की अवधि (दिनों में)	विशेष विवरण
32.	आर.डी.-2907	2018	35.54	124	पीला रस्ट, लवण अवरोधी।
33.	आर.डी.-2899	2018	36	115	पीला रस्ट अवरोधी।
34.	प्रखर (के.-1055)	2018	40-42	135	पीला, भूरा एवं काला रस्ट अवरोधी।
35.	आर.डी.-2907	2018	35-40	124	पीला रस्ट, लवण अवरोधी।
2.	छिलका रहित प्रजातियाँ मैदानी क्षेत्र				
1.	(के-1149) गीतांजली	01.05.1997	25-27	95-100	असिंचित दशा हेतु, गेरुई, कण्डुआ, स्ट्राइप, नेट ब्लाच अवरोधी समस्त उ. प्र. हेतु
2.	नरेन्द्र जौ 5 (एन.डी.बी. 943) (उपासना)	17-18 / 2008 एस.ओ. (चतुर्थ) 20.1.2009	35-45	115-100	सिंचित समय से बुवाई हेतु, पर्णीय झुलसा धारीदार रोग, गेरुई, नेट ब्लाच अवरोधी एवं समस्याग्रस्त मृदा में संतोषजनक एवं अच्छी उपज।
4.	डी.डब्लू.आर.बी.-73	25.03.2011	38.70	110-118	लीफ रस्ट अवरोधी।
3.	डी.डब्लू.आर.यू.बी.-64	16.03.2012	40-42	116	-
3.	माल्ट हेतु प्रजातियाँ				
1.	रेखा (बी.सी.यू.73) (दो धारीय)	01.05.1997	40-42	120-125	सिंचित पूर्ण रोग अवरोधी। समस्त उ. प्र. हेतु।
2.	प्रगति (के. 508)- छ: धारीय	15.05.1998	35-40	105-110	स्ट्राइप, कण्डुआ, पीली गेरुई अवरोधी।
3.	ऋतम्भरा(के.551) (छ: धारीय)	15.05.1998	40-45	120-125	सिंचित दशा में माल्ट व बीयर के लिए उपयुक्त। गेरुई, कण्डुआ एवं हेलमेन्थीस्पोरियम बीमारियों के लिए अवरोधी। समस्त उ. प्र. हेतु।
4.	डी.डब्लू.आर-28 (दो धारीय)	-	40-45	130-135	सिंचित क्षेत्रों हेतु।
5.	डी.एल.-88 (छ: धारीय)	15.05.1998	40-42	120-125	सिंचित पछेती बुवाई हेतु। समस्त उ. प्र. हेतु।
6.	डी.डब्लू.आर.बी.-123 (दो धारीय)	2017	45-50	125-130	रतुआ अवरोधी।
7.	डी.डब्लू.आर.बी.-101	28.01.2018	45-50	128-130	पीला रस्ट अवरोधी।
8.	डी.डब्लू.आर.बी.-137	2018	40-45	113-115	पीला रस्ट अवरोधी।
4.	ऊसरीली / साल्ट ग्रसित भूमि के लिए नरेन्द्र जौ				
1.	1445 (एन.बी.डी.-1445)	24.01.2014	35	125-128	सभी रस्ट के लिए मध्यम अवरोधी।
2.	के0बी0-1425 (आजाद जौ-33)	2021	30-35	120-130	पीला एवं ब्राउन रस्ट एवं लीफ ब्लाइट अवरोधी।

बीज की मात्रा :	सिंचित / असिंचित	:	100 किग्रा. प्रति हे.
	पछेती बुवाई	:	125 किग्रा. प्रति हे.

बुवाई की विधि :

बीज हल के पीछे कूँड़ों में 23 सेमी. की दूरी पर 5-6 सेमी. गहरा बोएं। असिंचित दशा में बुवाई 6-8 सेमी. गहराई में करें, जिससे जमाव के लिए पर्याप्त नमी मिल सके।

उर्वरक : उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना ही उचित है।

अ- असिंचित दशा में :

प्रति हेक्टेयर 40 किग्रा. नत्रजन, 20 किग्रा. फॉस्फेट तथा 20 किग्रा. पोटाश को बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के नीचे डालें।

ब- सिंचित समय से बुवाई की दशा में :

प्रति हेक्टेयर 30 किग्रा. नत्रजन तथा 30 किग्रा. फॉस्फेट व 20 किग्रा. पोटाश बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के नीचे डाले तथा बाद में 30 किग्रा. नत्रजन पहली सिंचाई पर टापड़ेसिंग करें। हल्की भूमि में 20-30 किग्रा./हे. की दर से गंधक का प्रयोग करना चाहिए। अच्छी उपज के लिए 40 कुन्तल प्रति हे. की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए। माल्ट प्रजातियों हेतु 25 प्रतिशत अतिरिक्त नत्रजन का प्रयोग करें।

स- ऊसर तथा विलम्ब से बुवाई की दशा में :

प्रति हे. 30 किग्रा. नत्रजन तथा 20 किग्रा. फॉस्फेट बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के नीचे डाले और बाद में 30 किग्रा. नत्रजन टापड़ेसिंग के रूप में पहली सिंचाई के बाद प्रयोग करें। ऊसर भूमि में 20-25 किग्रा. प्रति हे. जिंक सल्फेट का प्रयोग करें।

सिंचाई :

दो सिंचाई : पहली कल्ले फूटते समय बुवाई के 30-35 दिनों बाद व दूसरी दुग्धावस्था में करें। यदि एक ही सिंचाई उपलब्ध हो तो कल्ले फूटते समय करें। माल्ट हेतु जौ की खेती में एक अतिरिक्त सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। ऊसर भूमि में तीन सिंचाई पहल कल्ले निकलते समय दूसरी गाँठ बनते समय तथा तीसरी दाना पड़ते समय करें।

फसल सुरक्षा :

(क) प्रमुख कीट:

- ◆ दीमक - गेहूँ की तरह
- ◆ गुजिया वीविल - गेहूँ की तरह
- ◆ माहूँ - गेहूँ की तरह

नियंत्रण के उपाय :

- बुवाई से पूर्व दीमक के नियंत्रण हेतु क्लोरपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. की 3 मिली. अथवा थायोमेथाक्साम 30 प्रतिशत एफ.एस. 3 मिली. प्रति किग्रा. बीज के दर से बीज को शोधित करना चाहिए।
- ब्यूवेरिया बैसियाना 1.15 प्रतिशत बॉयोपेर्स्टीसाइड की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60-75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से दीमक सहित भूमि जनित कीटों का नियंत्रण हो जाता है।
- खड़ी फसल में दीमक / गुजिया के नियंत्रण हेतु क्लोरपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली. प्रति हे. की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।
- माहूँ कीट के नियंत्रण हेतु डाइमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. अथवा आक्सीडेमेटान-मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. के 1.0 ली. प्रति हेक्टेयर अथवा थायोमेथाक्साम 25 प्रतिशत डब्लू.जी. 500 ग्राम. 750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव

करना चाहिए। एजाडिरेक्टन (नीम का तेल) 0.15 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली. प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

(ख) प्रमुख रोग :

1. **आवृत कण्डुआ :** इस रोग में बालियों के दानों के स्थान पर काला चूर्ण बन जाता है जो मजबूत झिल्ली द्वारा ढका रहता है और मड़ाई के समय फूट कर स्वस्थ बीजों से चिपक जाते हैं।
2. **पत्ती का धारीदार रोग :** इस रोग में पत्ती की नसों में पीली धारियाँ बन जाती हैं, जो बाद में गहरे भूरे रंग में बदल जाती हैं, जिसपर फफूँदी के असंख्य बीजाणु (स्पोर) बनते हैं।
3. **पत्ती का धब्बेदार रोग :** पत्तियों पर अण्डाकार भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं।
4. **अनावृत कण्डुआ :** गेहूँ की तरह।
5. **गेरुई रोग :** गेहूँ की तरह।

नियंत्रण के उपाय :

1. बीज उपचार :

- ◆ आवृत कण्डुआ, अनावृत कण्डुआ पत्ती का धारीदार रोग एवं पत्ती का धब्बेदार रोगों के नियंत्रण हेतु कार्बॉण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2 ग्राम अथवा कार्बाक्सिन 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- ◆ अनावृत कण्डुआ एवं अन्य बीज जनित रोगों के साथ-साथ प्रारम्भिक भूमि जनित रोगों के नियंत्रण हेतु कार्बाक्सिन 37.5 प्रतिशत + थीरम 37.5 प्रतिशत डी.एस./ डब्लू.एस. की 3.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।

2. भूमि उपचार :

- ◆ भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60-75 किग्रा. सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8-10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से अनावृत कण्डुआ, आवृत्त कण्डुआ आदि रोगों के प्रबन्धन में सहायक होता है।

3. पर्णीय उपचार :

- ◆ गेरुई एवं पत्ती धब्बा रोग एवं पत्ती धारी रोग के नियंत्रण हेतु जिरम 80 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा मैंकोजेब 75 डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. प्रति हे. 750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ गेरुई के नियंत्रण हेतु प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई.सी. की 500 मिली. प्रति हे. पानी 750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

(ग) प्रमुख खरपतवार :

- ◆ सकरी पत्ती - गेहूँसा (फैलेरिस माइनर) एवं जंगली जई।
- ◆ चौड़ी पत्ती - बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी-मटरी, अकरा, जंगली-गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

1. गेहूँसा (फैलेरिस माइनर) एवं जंगली जई के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को 500-600 ली. पानी में घोलकर प्रति हे. बुवाई के 20-25 दिन के बाद फ्लैटफैन

नाजिल से छिड़काव करना चाहिए। सल्फो सल्फ्यूरान हेतु पानी की मात्रा 300 लीटर होनी चाहिए-

- ◆ आइसोप्रोट्यूरान 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 1.25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर।
- ◆ सल्फोसल्फ्यूरान 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 33 ग्राम (2.5 यूनिट) प्रति हेक्टेयर।
- ◆ फिनोक्साप्राप-पी-इथाइल 10 प्रतिशत ई.सी. की 1.0 ली. प्रति हेक्टेयर।
- ◆ क्लोडिनाफाप प्रोपैरजिल 15 प्रतिशत डब्लू.पी. की 400 ग्राम प्रति हेक्टेयर।

2. चौड़ी पत्ती के खरपतवार बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी-मटरी, अकरा-अकरी, जंगली-गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत मात्रा को 500-600 ली. पानी में घोलकर प्रति हे. बुवाई के 25-30 दिन के बाद फ्लैटफैन नाजिल से छिड़काव करना चाहिए-
 - ◆ 2.4 डी सोडियम साल्ट 80 प्रतिशत का 625 ग्राम प्रति हेक्टेयर।
 - ◆ 2.4 डी डाई मिथाइल एमाइन साल्ट 58 प्रतिशत एस.एल. की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर।
 - ◆ कारफेन्ट्राजॉन इथाइल 40 प्रतिशत डी.एफ. की 50 ग्राम प्रति हेक्टेयर।
 - ◆ मेटसल्फ्यूरान मिथाइल 20 प्रतिशत डब्लू.पी. की 20 ग्राम प्रति हेक्टेयर।
3. सकरी एवं चौड़ी पत्ती दोनों प्रकार के खरपतवारों के एक साथ नियंत्रण हेतु निम्नलिखित खरपतवारनाशी रसायनों में से किसी एक रसायन की संस्तुत को 500-600 ली. पानी में घोलकर प्रति हे. फ्लैटफैन नाजिल से छिड़काव करना चाहिए-
 - ◆ सल्फोसल्फ्यूरान 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 33 ग्राम (2.5 यूनिट) प्रति हेक्टेयर बुवाई के 20-25 दिन के बाद।
 - ◆ मैट्रीब्यूजिन 70 प्रतिशत डब्लू.पी. की 250 ग्राम प्रति हेक्टेयर बुवाई के 20-25 दिन के बाद।

(घ) चूहे :

खेत का चूहा (फील्ड रैट), मुलायम बालों वाला खेत का चूहा (साफ्ट फर्ड फील्ड रैट) एवं खेत का चूहा (फील्ड माउस)।

नियंत्रण के उपाय : गेहूँ की तरह करें।

कटाई तथा भण्डारण :

कटाई का कार्य सुबह या शाम के समय करें। बालियों के पक जाने पर फसल को तुरन्त काट ले और मढ़ाई करके भण्डारण करें। भण्डारण विधि का वर्णन गेहूँ की खेती के अन्तर्गत किया जा चुका है।

मुख्य बिन्दु :

1. परिस्थिति अनुसार उपयुक्त प्रजातियों का चयन कर शुद्ध एवं प्रमाणित बीज बोयें।
2. मृदा परीक्षण के आधार पर संस्तुति अनुसार उर्वरकों का संतुलित प्रयोग करें।
3. खरपतवारों के नियंत्रण हेतु संस्तुत रसायनों का समय से प्रयोग किया जाये।
4. रोग एवं कीटों की रोकथाम हेतु गेहूँ में संस्तुति अनुसार रसायनों का प्रयोग किया जाय।
5. उपलब्धता अनुसार सिंचाई कल्ले बनते/निकलते समय एवं दुर्धावस्था में करें।



27. रबी-मक्का की उन्नतशील खेती

रबी मक्का की खेती उत्तर/पूर्वी मैदानी क्षेत्रों में की जाती है। प्रदेश के अन्य सिंचित भागों में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

संस्तुत सघन पद्धतियाँ :

क्रं. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना का वर्ष	दानों का रंग एवं आकार	जीरा निकलने की अवधि (दिनों में)	पकने की अवधि (दिनों में)	उत्पादन क्षमता कु./हे.
संकर मक्का						
1.	डक्कन-105	1991	नारंगी, अर्द्धचपटा	85-90	150-160	70-80
2.	त्रिशूलता	1991	नारंगी, अर्द्धचपटा	85-90	150-160	70-80
3.	के.एच.-5981	1997	पीला, अर्धचपटा	85-90	155-160	70-80
4.	के.एच.-5991	1997	पीला, अर्धचपटा	85-90	155-160	70-80
5.	एक्स-1382 (3054)	1998	पीला, अर्धचपटा	85-90	155-160	70-80
6.	बुलन्द	2005	पीला, गोल	85-90	150-155	70-80
7.	शक्तिमान-1	2001	सफेद, चमकदार	85-90	150-155	70-80
8.	सीडटेक-2324	2001	पीला, अर्धचपटा	85-90	155-160	70-80
9.	एच.क्यू.पी.एम.-1	2005	पीला, चपटा	85-90	150-160	70-80
10.	पीएमएच-3	2008	नारंगी, गोल	85-90	150-160	70-80
11.	एल.जी.-32.81 (युवराज गोल्ड)	2013	पीला, गोल	75-80	120-130	70-80
संकुल मक्का						
1.	धंवल	1988	सफेद अर्द्धचपटा	75-80	145-150	50-60
2.	शक्ति-1	1997	पीला, अर्द्धचपटा	75-80	130-135	40-45
3.	शरदमणि	2008	नारंगी पीला	82-87	125-130	45-50
4.	शियाट्स मक्का-3	2016	सफेद अर्द्धचपटा	90-95	140-145	35-40
लावा हेतु						
5.	वी.एल. अम्बर-पॉपकार्न	1982	नारंगी, गोल	75-80	135-140	30-35
6.	अम्बर-पॉपकार्न	1988	नारंगी, गोल	75-80	135-140	30-35
7.	पर्ल-पॉपकार्न	1996	नारंगी, गोल	75-80	135-140	30-35
हरे भुट्टे हेतु मीठी मक्का (स्वीट कार्न)						
8.	माधुरी स्वीट कार्न	1990	पीला, चपटा	80-85	120-125	भुट्टा तैयार
9.	प्रिया स्वीट कार्न	2002	पीला, चपटा	80-85	120-125	भुट्टा तैयार
चारा हेतु मक्का						
10.	अफ्रीकन टॉल	1982	-	-	350-400	कु0 हरा चारा
11.	जे.-1006	1992	-	-	300-350	कु0 हरा चारा

नोट : बीज उत्पादन हेतु मक्का की खेती के समय यह ध्यान रखा जाये कि 400 मीटर के आस-पास मक्का की अन्य प्रजातियाँ न लगाई जाये।

बुवाई का समय :

रबी मक्का की उपयुक्त बुवाई का समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक का है।

बीज दर व बुवाई की विधि :

रबी मक्का हेतु 20–22 किग्रा. बीज प्रति हेक्टर का प्रयोग करें जिससे लगभग 85–90 हजार पौधे प्रति हेक्टर प्राप्त हो सकें। बुवाई के पूर्व बीज शोधन अवश्य करें, पंक्ति से पंक्ति की दूरी 60 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20–25 सेमी. रखें।

सिंचाई :

रबी मक्का में 4–5 सिंचाई करनी पड़ती है। प्रथम सिंचाई बुवाई के 25–30 दिन, दूसरी 55–60 दिन तीसरी 75–80 दिन, चौथी 110–115 दिन तथा पांचवीं 120–125 दिन बाद करनी चाहिए। अगर आवश्यकता हो तो अतिरिक्त सिंचाई खेत की नमी के अनुसार करना उपयुक्त होगा।

अन्तः फसलें :

दालों की कम समय में तैयार होने वाली प्रजातियाँ मटर (सब्जी वाली) राजमा, वाकला, टमाटर, अगेती आलू गाजर, चुकन्दर तथा प्याज, मक्का की कतारों के बीच बो कर सफलतापूर्वक अन्तः फसल के रूप में ली जा सकती हैं।

कटाई :

भुट्टे को ढकने वाली 75 प्रतिशत पत्तियाँ पीली पड़ जाने पर भुट्टों को तोड़कर सुखाकर दाने अलग कर लेना चाहिए।

दाना निकालना :

बाली को सुखाकर मानव चालित अथवा पावर चालित मेज सेलर से दाना निकालना चाहिए। इससे 40–50 प्रतिशत लागत कम होती है।

नोट : शेष क्रियाएं खरीफ मक्का के अनुसार करें।



28. शिशु मक्का (बेबी कार्न) की खेती

यह मक्का के पौधे का वह अनिषेचित भुट्टा है जो सिल्क आने के 2–3 दिन के अन्दर तोड़कर उपयोग में लाया जाता है। शिशु मक्का का उपयोग सलाद, सूप, सब्जी, अचार एवं कैण्डी, पकौड़ा, कोफता, टिक्की, बर्फी लड्डू, हलवा, खीर इत्यादि के रूप में होता है।

शिशु मक्का एक स्वादिष्ट व पौष्टिक आहार है तथा पत्ती में लिपटी होने के कारण कीटनाशक दवाईयों के प्रभाव में मुक्त होता है। शिशु मक्का में फॉस्फोरस भरपूर मात्रा में उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त इसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, कैल्शियम, लोहा व मिटामिन भी उपलब्ध है। कोलेस्ट्राल रहित एवं रेशों के अधिकता के कारण यह एक निम्न कैलोरी युक्त आहार है जो भदय रोगियों के लिए काफी लाभदायक है।

उत्पादक तकनीक : काफी मात्रा में पौधों की संख्या, नाइट्रोजन की अधिक मात्रा एवं शीघ्र कटाई को छोड़कर शिशु मक्का की सभी सर्स्य क्रियायें मक्का के समान हैं।

भूमि का चुनाव : शिशु मक्का की खेती के लिए पर्याप्त जीवांश युक्त दोमट मिट्टी अच्छी होती है।

खेत की तैयारी : पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा शेष दो—तीन जुताई देशी हल / रोटावेटर या कल्टीवेटर द्वारा करके पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी के साथ—साथ खेत पलेवा करके तैयार करना चाहिए।

किस्मों का चयन : शिशु मक्का की खेती के लिए कम समय में पकने वाली, मध्यम ऊँचाई की एकल क्रॉस संकर किस्में सबसे अधिक उपयुक्त होती हैं जो निम्नलिखित हैं—

क्र. सं.	किस्म का नाम	रिलीज होने का वर्ष	गुल्ली का रंग	जीरा निकलने की अवधि (दिनों में)	उत्पादन क्षमता कु0 / हेठो	
					छिलका सहित	छिलका रहित
1.	बी.एल .-42	1988	सफेद गुल्ली	70–75	42–45	17–20
2.	प्रकाश	1997	सफेद गुल्ली	70–75	45–50	16–18
3.	एच .एम .-4	2005	क्रीमिश सफेद गुल्ली	80–85	45–50	15–20
4.	आजाद कमल (संकुल)	2008	क्रीमिश सफेद गुल्ली	70–75	42–45	15–20

कम समय में पकने वाली एकल क्रॉस संकर किस्में, जिसमें सिल्क आने की अवधि 70–75 दिन रबी में और 45–50 दिन खरीफ मौसम में है। सिल्क जीरा निकलने के 3 दिन के अन्दर तुड़ाई कर लेनी चाहिए अन्यथा गुणवत्ता खराब हो जाती है।

बुवाई का समय : उत्तर भारत में शिशु मक्का फरवरी से नवम्बर के मध्य कभी भी बोया जा सकता है।

बुवाई की विधि : बुवाई मेड़ों के दक्षिणी भाग में करनी चाहिए तथा मेड़ से मेड़ एवं पौधे से पौधे की दूरी 60 सेमी कृ15 सेमी रखनी चाहिए।

बीज दर : संकर किस्मों के टेस्ट भार के अनुसार प्रति हेक्टेयर 22–25 किग्रा. बीज दर उपयुक्त होती है।



उर्वरक की मात्रा : अच्छी उपज के लिए 8–10 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की सड़ी हुई खाद एवं 150:60:60:25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा जिंक सल्फेट का प्रयोग आवश्यक है। खरीफ में नाइट्रोजन को तीन भाग करके खेत में डालना चाहिए। पूरा फॉस्फोरस, पूरा पोटाश, पूरा जिंक सल्फेट एवं 1/3 भाग नाइट्रोजन बुवाई के समय एवं 1/3 भाग बुवाई के 25 दिन के बाद तथा शेष 1/3 भाग नाइट्रोजन 40 दिन बाद डालना चाहिए। रबी में नाइट्रोजन चार भाग में करके डालना चाहिए। 1/4 भाग नाइट्रोजन बुवाई के समय, 1/4 भाग 60–80 दिन के उपरान्त तथा शेष नाइट्रोजन 80–110 दिन के बाद डालना चाहिए। बसंतकालीन शिशु मक्का में 1/4 भाग नाइट्रोजन बुवाई के समय 1/4 भाग नाइट्रोजन बुवाई के 25 दिन के बाद, 1/4 भाग 40–45 दिन के बाद तथा शेष 1/4 भाग नाइट्रोजन 60–65 दिन उपरान्त डालना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : पहली निराई—गुड़ाई बुवाई के 15–20 दिन बाद तथा दूसरी 30–35 दिन बाद अवश्य करनी चाहिए जिससे जड़ों में हवा का संचार होता है और दूर तक फैलकर भोज्य पदार्थ एकत्र करके पौधों को देती है। एट्राजीन 50 प्रतिशत डब्लू.पी. 1.5 किग्रा। प्रति हेक्टेयर को 500–600 लीटर पानी में घोलकर बीज के अंकुरण के पूर्व खेत में छिड़काव करने से खरपतवार नहीं जमते और फसल तेजी से बढ़ती है।

सिंचाई : मौसम और फसल के अनुसार 2–3 सिंचाई की जरूरत होती है। पहली सिंचाई 20 दिन, दूसरी फसल के घुटने के ऊँचाई के समय व तीसरी फूल (झण्डे) आने के पहले करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा : शिशु मक्का में किसी तरह की बीमारी या कीट नहीं लगता क्योंकि इसकी बाली पत्तियों में लिपटी रहने के कारण घातक कीट व बीमारी से मुक्त होता है।

झण्डों को तोड़ना (डिटैसलिंग) : झंडा बाहर दिखाई देते ही इसे निकाल देना चाहिए।

तुड़ाई : शिशु मक्का की गुल्ली को 3–4 सेमी, सिल्क (जीरा) आने पर तोड़ लेना चाहिए। गुल्ली तुड़ाई के समय ऊपर की पत्तियों को नहीं हटाना चाहिए। पत्तियों को हटाने से ये जल्दी खराब हो जाती है। खरीफ में प्रतिदिन एवं रबी में एक दो दिन छोड़कर गुल्ली की तुड़ाई करनी चाहिए। एकल क्रास संकर मक्का में 3–4 तुड़ाई जरूरी है।

उपज : इस तरह खेती करने से शिशु मक्का की छिलका रहित उपज 15–20 कुंतल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। इसके अलावा 200–250 कुंतल प्रति हेक्टेयर हरा चारा भी मिल जाता है।

कटाई उपरान्त प्रबन्धन : शिशु मक्का का छिलका तोड़ाई के दिन उतारकर प्लास्टिक की टोकरी, थैले या कैंटेनर में रखकर तुरन्त मण्डी में पहुँचा देना चाहिए।

अन्तःफसल : खरीफ में हरी फली तथा चारा हेतु लोबिया, उर्द, मूँग तथा रबी में शिशु मक्का के साथ आलू, मटर, राजमा, मेथी, धनिया, गोभी, शलजम, मूली, गाजर इत्यादि अन्तः फसल के रूप में लिया जाता है। अन्तःफसल से जो उपज प्राप्त होती है वह अतिरिक्त लाभ होता है।

आर्थिक लाभ : शिशु मक्का की एक फसल से एक हेक्टेयर में रु. 40000 से 50000 तक की शुद्ध आय और वर्ष में 3–4 फसलें उगाई जा सकती हैं। इस तरह कम समय में अधिक लाभ प्राप्त हो सकता है।

उत्तर प्रदेश के गाजियाबाद, बुलन्दशहर, मेरठ, लखनऊ, कानपुर, वाराणसी इत्यादि बड़े शहरों में शिशु मक्का की खेती की जा रही है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में शिशु मक्का की काफी सम्भावनायें हैं तथा जो किसान शहरों के नजदीक रहते हैं वह शिशु मक्का की खेती से काफी लाभ उठा सकते हैं।



29. चना की उन्नतशील खेती

दलहनी फसलों में चना का प्रमुख स्थान है। अधिक पैदावार प्राप्त करने हेतु निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है :

भूमि :

चने के लिए दोमट या भारी दोमट, मार एवं पड़ुआ भूमि जहाँ पानी के निकास का उचित प्रबन्ध हो, उपयुक्त होती है।

भूमि की तैयारी :

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से 6 इंच गहरी व दो जुताई देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर खेत को तैयार कर लेना चाहिए।

संस्तुत प्रजातियाँ : चने की प्रजातियों का विवरण :

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादन क्षमता (कु. / हें.)	पकने की अवधि	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषताएं
अ.	देशी प्रजातियाँ : समय से बुवाई					
1.	राघे	1968	25–30	140–150	बुन्देलखण्ड हेतु	दाना बड़ा।
2.	के.–850	1978	25–30	145–150	सम्पूर्ण मैदानी क्षेत्र	दाना बड़ा, उकठा ग्रसित।
3.	पूसा–256	1985	25–30	135–140	सम्पूर्ण उ.प्र.	पौधे की ऊँचाई मध्यम, पत्ती चौड़ी, दाने का रंग भूरा एवं एस्कोकाइटा ब्लाइट बीमारियों के प्रति सहिष्णु।
4.	अवरोधी	1987	25–30	145–150	सम्पूर्ण उ.प्र.	पौधे मध्यम ऊँचाई (सेमी इरेक्ट) भूरे रंग के दाने व उकठा अवरोधी।
5.	के.डब्लू. आर.–108	1996	25–30	130–135	सम्पूर्ण उ.प्र.	दाने का रंग भूरा, पौधे मध्यम ऊँचाई, उकठा अवरोधी।
6.	डब्लू.सी.जी.–1	1996	25–30	135–145	सम्पूर्ण उ.प्र.	दाना बड़ा, उकठा अवरोधी।
7.	के.जी.डी.–1168 (आलोक) 1997	25–30	150–155		सम्पूर्ण उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
8.	डी.सी.पी. 92–3	1998	20–22	140–145	सम्पूर्ण उ.प्र.	उकठा अवरोधी, छोटा पीला दाना।
9.	डब्लू.सी.जी.–2	1999	20–25	130–135	पश्चिमी उ.प्र.	छोटे दाने वाली उकठा प्रतिरोधी।
10.	गुजरात चना–4	2000	20–25	120–130	पश्चिमी उ.प्र.	पौधा मध्यम बड़ा उकठा अवरोधी सिंचित एवं असिंचित दशा के लिये उपयुक्त।
11.	जे.जी.–16	2000	20–22	135–140	बुन्देलखण्ड हेतु	उकठा अवरोधी बुन्देलखण्ड हेतु।
12.	आधार (आर.एस.जी.–963)	2005	19–20	125–130	पश्चिमी उ.प्र.	उकठा, अवरोधी।
13.	जी.एन.जी.–1581 (गंगोर)	2008	22–28	127–177	—	लॉजिंग अवरोधी, उकठा अवरोधी।
14.	जाकी–9218	2008	18–20	93–125	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	हल्का पीला एवं क्रीम रंगा का बड़ा दाना विल्ट, रुट रॉट एवं कालर रॉट अवरोधी।
15.	जे.जी.–14	2009	20–25	110–115	—	उकठा, सूख गलन, फली बेधक अवरोधी।
16	जी.एन.जी.–1958	2013	26–30	140–145	—	उकठा, जड़ सड़न, ग्रीवा गलन अवरोधी।

रबी फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादन क्षमता (कु. / हे.)	पकने की अवधि	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषताएं
17.	सी.एस.जे. 515 (अमन)	2016	24	135	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	छोटा भूरा दाना, सूखा जड़ सड़न, विल्ट, कालर रॉट मध्यम अवरोधी, एस्कोचाइटा ब्लाइट एवं बी.जी.एम. सहिष्णु।
18.	जी.एन.जी. 2144 (तीज)	2016	22.8	133	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	देशी प्रजाति, मध्यम आकार एवं पर्यूजेरियम विल्ट सहिष्णु।
19.	जी.एन.जी. 2171	2017	20.14	163	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	देशी प्रजाति, पीला दाना, पर्यूजेरियम विल्ट (मीरा) सहिष्णु।
20.	पन्त ग्राम 5	2017	20—22	125—130	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	भूरा दाना, पर्यूजेरियम विल्ट सहिष्णु।
21.	बी.जी.—3043	2018	20—22	135—140	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	देशी प्रजाति, मध्यम आकार।
22.	आई.पी.सी.—2004—98	2020	20—22	130—135	सम्पूर्ण उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
23.	आई.पी.सी.—2004—1	2020	18—20	135—140	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	उकठा अवरोधी।
24.	आई.पी.सी.—2011—112 (केशव)	2020	20—22	135—140	उ.प्र. प० मध्य क्षेत्र	उकठा अवरोधी व मध्यम आकार का दाना।
25.	आई.पी.सी. 2007—28 (अटल)	2021	20—22	115—125	पूर्वी उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
26.	आई.पी.सी. 2010—134 (शिवा)	2021	22—24	125—135	उ.प्र., पश्चिमी बुन्देलखण्ड	उकठा अवरोधी।
27.	आई.पी.सी. कै. 2013—163 (माधव)	2021	22—24	125—135	पश्चिमी उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
28.	आई.पी.सी.एल. 4—14 (आई.पी.सी.एम.ए.एस.—1)	2021	18—20	130—135	पश्चिमी उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
29.	आई.पी.सी.एम.बी. 19—3 (समृद्धि)	2021	20—22	110—115	उ.प्र. (बुन्देलखण्ड)	
30.	आई.पी.सी. 2010—142 (कुबेर)	2022	20—22	130—140	पश्चिमी एवं पूर्वी उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
31.	आई.पी.सी.कै. 2009—145 (कन्दन)	2022	18—20	130—135	पश्चिमी उ.प्र.	उकठा अवरोधी।
ब. देर से बुवाई :						
1.	उदय	1992	20—25	130—140	सम्पूर्ण उ.प्र.	दाने का रंग भूरा, मध्यम ऊँचाई। उकठा सहिष्णु।
2.	पूसा—372	1993	25—30	130—140	सम्पूर्ण उ.प्र.	उकठा, ब्लाइट एवं जड़ गलन। उकठा के प्रति सहिष्णु।
3.	पन्त जी.—186	1996	20—25	120—130	सम्पूर्ण उ.प्र.	पौधे मध्यम ऊँचाई, उकठा सहिष्णु
4.	जे.जी.—14	2009	20—25	113	बुन्देलखण्ड क्षेत्र	विल्ट, झाई रूट रॉट एवं पॉड बोरर मध्यम अवरोधी।
5.	राज विजय चना—203 (आर.वी.जी.—203)	2012	19	100	बुन्देलखण्ड क्षेत्र	विल्ट एवं झाई रूट रॉट अवरोधी।
6.	राज विजय चना—202 (आर.वी.जी.—202)	2015	20	102	बुन्देलखण्ड के लिए	झाई रूट राट एवं कालर राट मध्यम अवरोधी।
7.	जी.एन.जी. 2207(अवध)	2018	20—22	135—140	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	—

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादन क्षमता (कु./हे.)	पकने की अवधि	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषताएं
8.	आई.पी.सी.-2006-77	2019	20-25	115-120	बुन्देलखण्ड के लिए	उकठा रोग रोधी, दाना मध्यम आकार का।
9.	आई.पी.सी.-2005-62	2020	20-22	120	सम्पूर्ण उ.प्र.	उकठा अवरोधी, अधिक प्रोटीन।
स.	काबुली :					
1.	पूसा-1003	1999	20-22	135-145	पूर्वी उ.प्र.	दाना मध्यम बड़ा उकठा सहिष्णु।
2.	चमत्कार (वी.जी.-1053)	2000	15-16	135-145	पश्चिमी उ.प्र.	बड़ा दाना।
3.	एच.के.-94-134	2005	25-30	140-145	सम्पूर्ण उ.प्र.	दाना बड़ा उकठा, सहिष्णु।
4.	जे.जी.के.-1	-	17-18	110-115	बुन्देलखण्ड क्षेत्र, उ.प्र.	बड़ा दाना, उकठा सहिष्णु।
5.	शुभ्रा (आई.पी.सी.के.2002-29)	2009	18-20	125	बुन्देलखण्ड के लिए	उकठा अवरोधी।
6.	उज्जवल (आई.पी.सी.के-2004-29)	2009	18-20	125	बुन्देलखण्ड के लिए	उकठा अवरोधी।

बीज दर :

छोटे दाने का 75-80 किग्रा. प्रति हे. तथा बड़े दाने की प्रजाति का 90-100 किग्रा./हेक्टर।

बीज शोधन :

बीज जनित रोग से बचाव के लिए थीरम 2.5 ग्राम या 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा अथवा थीरम 2.5 ग्राम + कार्बन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज को बोने से पूर्व शोधित करना चाहिए। बीजशोधन कल्वर द्वारा उपचारित करने के पूर्व करना चाहिए।

बीजोपचार :

राइजोबियम कल्वर से बीजोपचार :

अलग—अलग दलहनी फसलों का अलग—अलग राइजोबियम कल्वर होता है चने हेतु राइजोबियम साइसेरी कल्वर का प्रयोग होता है। एक पैकेट 200 ग्राम कल्वर 10 किग्रा. बीज उपचार के लिए पर्याप्त होता है। बाल्टी में 10 किग्रा. बीज डालकर अच्छी प्रकार मिला दिया जाता है ताकि सभी बीजों पर कल्वर लग जाये। इस प्रकार राइजोबियम कल्वर से लेपित हुए बीजों को कुछ देर बाद छाया में सुखा लेना चाहिए। पी.एस.बी. कल्वर का प्रयोग अवश्य करें।

सावधानी :

राइजोबियम कल्वर से बीज को उपचारित करने के बाद धूप में नहीं सुखाना चाहिए ओर जहाँ तक सम्भव हो सके, बीज उपचार दोपहर के बाद करना चाहिए ताकि बीज शाम को ही अथवा दूसरे दिन प्रातः बोया जा सके।

बुवाई :

असिंचित दशा में चने की बुवाई अक्टूबर के द्वितीय अथवा तृतीय सप्ताह तक अवश्य कर देनी चाहिए। सिंचित दशा में बुवाई नवम्बर के द्वितीय सप्ताह तक तथा पछेती बुवाई दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है। बुवाई हल के पीछे कूँड़ों में 6-8 सेमी. की गहराई पर करनी चाहिए। कूँड से कूँड की दूरी असिंचित तथा पछेती दशा में बुवाई में 30 सेमी. तथा सिंचित एवं काबर या मार भूमि में 45 सेमी. रखनी चाहिए।

उर्वरक :

सभी प्रजातियों के लिए 20 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस, 20 किग्रा. पोटाश एवं 20 किग्रा. गन्धक का प्रयोग प्रति हेक्टेयर की दर से कूँडों में करना चाहिए। संस्तुति के आधार पर उर्वरक का प्रयोग अधिक लाभकारी पाया गया है। असिंचित अथवा देर से बुवाई की दशा में 2 प्रतिशत यूरिया के घोल का फूल आने के समय छिड़काव करें।

सिंचाई :

प्रथम सिंचाई आवश्यकतानुसार बुवाई के 45–60 दिन बाद (फूल आने के पहले) तथा दूसरी फलियों में दाना बनते समय की जानी चाहिए। यदि जाड़े की वर्षा हो जाये तो दूसरी सिंचाई की आवश्यकता नहीं होगी। फूल आते समय सिंचाई न करें अन्यथा लाभ के बजाए हानि हो जाती है।

फसल सुरक्षा :

(क) प्रमुख कीट :

1. कटुआ कीट :

इस कीट की भूरे रंग की सूँड़ियाँ रात में निकल कर नये पौधों को जमीन की सतह से काट कर गिरा देती है।

2. अर्द्धकुण्डलीकार कीट (सेमीलूपर) :

इस कीट की सूँड़ियाँ हरे रंग की होती हैं जो लूप बनाकर चलती हैं। सूँड़ियाँ पत्तियों, कोमल टहानियों, कलियों, फूलों एवं फलियों को खाकर क्षति पहुँचाती हैं।

3. फली बेधक कीट :

इस कीट की सूँड़ियाँ हरे अथवा भूरे रंग की होती हैं। सामान्यतयः पीठ पर लम्बी धारी तथा किनारे दोनों तरफ पतली लम्बी धारियाँ पायी जाती हैं। नवजात सूँड़ियाँ प्रारम्भ में कोमल पत्तियों को खुरच कर खाती हैं तथा बाद में बड़ी होने पर फलियों में छेद बनाकर सिंर को अन्दर कर दानों को खाती रहती है। एक सूँड़ी अपने जीवन काल में 30–40 फलियों को प्रभावित कर सकती है। तीव्र प्रकोप की दशा में फलियाँ खोखली हो जाती हैं तथा उत्पादन बुरी तरह से प्रभावित होता है।

आर्थिक क्षति स्तर :

क्र.सं.	कीट का नाम	फसल की अवस्था	आर्थिक क्षति स्तर
1.	कटुआ कीट	वानस्पतिक अवस्था	एक सूँड़ी प्रति पौधा
2.	अर्द्धकुण्डलीकार कीट	फूल एवं फलियाँ बनते समय	2 सूँड़ी प्रति 10 पौधे
3.	फलीबेधक कीट	फूल एवं फलियाँ बनते समय	2 छोटी अथवा 1 बड़ी सूँड़ी प्रति 10 पौधा अथवा 4–5 नर पतंग प्रति गंधपाश लगातार 2–3 दिन तक मिलने पर

नियंत्रण के उपाय :

- गर्मी में (मई—जून) गहरी जुताई करनी चाहिए।
- समय से बुवाई करनी चाहिए।
- खेत में जगह—जगह सूखी धास के छोटे—छोटे ढेर को रख देने से दिन में कटुआ कीट की सूँड़ियाँ छिप जाती हैं जिसे प्रातः काल इकट्ठा कर नष्ट कर देना चाहिए।
- चने के साथ अलसी, सरसों, धनियों की सहफसली खेती करने से फली बेधक कीट से होने वाली क्षति कम हो जाती है।
- खेत के चारों ओर गेंदे के फूल को ट्रैप क्राप के रूप में प्रयोग करना चाहिए।
- एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में 50–60 बर्ड पर्चर लगाना चाहिए, जिस पर चिड़ियाँ बैठकर सूँड़ियों को खा सकें।
- फसल की निगरानी करते रहना चाहिए। फूल एवं फलियाँ बनते समय फली बेधक कीट के लिए 5 गंधपाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में लगाना चाहिए।

8. यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए—
 - ❖ कटुआ कीट के नियंत्रण हेतु क्लोरपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. की 2.5 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर बुवाई से पूर्व मिट्टी में मिलाना चाहिए।
 - ❖ फलीबेधक कीट के नियंत्रण हेतु एन.पी.वी. (एच) 250 एल. ई. प्रति हेक्टेयर 250—300 लीटर पानी में घोलकर सांयकाल छिड़काव करें।
 - ❖ फलीबेधक कीट एवं अर्द्धकुण्डलीकार कीट के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित जैविक/रसायनिक कीटनाशकों में से किसी एक रसायन का बुरकाव अथवा 500—600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए—
 - ◆ बेसिलस थूरिन्जिएन्सिस (बी.टी) की कर्स्टकी प्रजाति 1.0 किग्रा।
 - ◆ एजाडिरैविटन 0.03 प्रतिशत डब्लू.एस.पी. 2.5—3.00 किग्रा।
 - ◆ एन.पी.वी. आफ हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा 2 प्रतिशत ए.एस. 250—300 मिली।

खेत की निगरानी करते रहें। आवश्यकतानुसार ही दूसरा बुरकाव/छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें। एक कीटनाशी को दो बार प्रयोग न करें।

(ख) प्रमुख रोग :

1. **जड़ सङ्घन :** बुवाई के 15—20 दिन बाद पौधा सूखने लगता है। पौधे को उखाड़ कर देखने पर तने पर रुई के समान फफूँदी लिपटी हुए दिखाई देती है। इसे अगेती जड़ सङ्घन कहते हैं। इस रोग का प्रकोप अकट्टबर से नवम्बर तक होता है। पछेती जड़ सङ्घन में पौधे का तना काला होकर सङ्घ जाता है तथा तोड़ने पर आसानी से टूट जाता है। इस रोग का प्रकोप फरवरी एवं मार्च में अधिक होता है।
2. **उकठा :** इस रोग में पौधे धीरे—धीरे मुरझाकर सूख जाते हैं। पौधे को उखाड़ कर देखने पर उसकी मुख्य जड़ एवं उसकी शाखायें सही सलामत होती हैं। छिलका भूरा रंग का हो जाता है तथा जड़ को चीर कर देखें तो उसके अन्दर भूरे रंग की धारियाँ दिखाई देती हैं। उकठा का प्रकोप पौधे के किसी भी अवस्था में हो सकता है।
3. **एस्कोकाइटा पत्ती धब्बा रोग :** इस रोग में पत्तियों एवं फलियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। अनुकूल परिस्थिति में धब्बे आपस में मिल जाते हैं, जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है।

प्रबन्धन के उपाय :

1. शास्य क्रियाएं :

1. गर्मियों में मिट्टी पलट हल से जुताई करने से मृदा जनित रोगों के नियंत्रण में सहायता मिलती है।
2. जिस खेत में प्रायः उकठा लगता हो तो यथा सम्भव उस खेत में 3—4 वर्ष तक चने की फसल नहीं लेनी चाहिए।
3. अगेती जड़ सङ्घन से बचाव हेतु नवम्बर के द्वितीय सप्ताह में बुवाई करनी चाहिए।
4. उकठा से बचाव हेतु अवरोधी प्रजाति की बुवाई करना चाहिए।

2. बीज उपचार :

बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत+कार्बन्डाजिम 50 प्रतिशत (2:1) 3.0 ग्राम अथवा ट्राइकोडर्मा 4.0 ग्राम प्रति किग्रा। बीज की दर से शोधित कर बुवाई करना चाहिए।

3. भूमि उपचार :

भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा प्रति हे. 60—75 किग्रा। सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से चना के बीज/भूमि जनित रोगों का नियंत्रण हो जाता है।

4. पर्णीय उपचार :

एस्कोकाइटा पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु मैकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा कापर आकसीक्लोराइड 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 3.0 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

ग— प्रमुख खरपतवार :

बथुआ, सेन्जी, कृष्णानील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी, जंगली गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

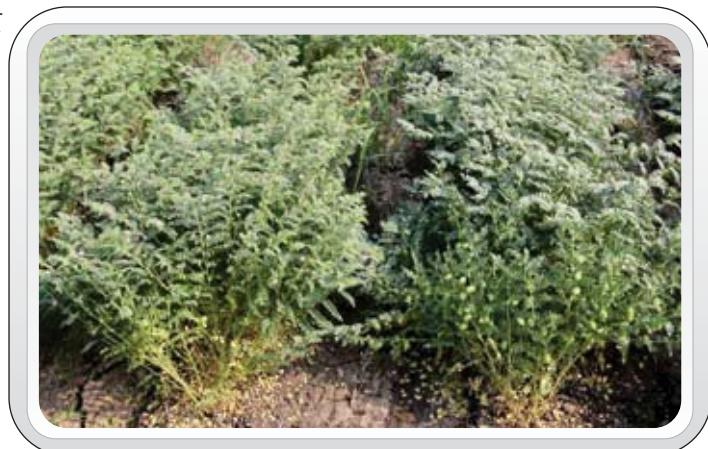
1. खरपतवारनाशी रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने हेतु फ्लूक्लोरैलीन 45 प्रतिशत इ.सी. की 2.2 ली. मात्रा प्रति हेक्टेयर 800—1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरन्त पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए अथवा पेण्डीमेथलीन 30 प्रतिशत इ.सी. की 3.30 लीटर प्रति हेक्टेयर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैटफैन नाजिल से बुवाई के 2—3 दिन के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें। क्यूज़ालोफोप—इथाइल 5 प्रतिशत इ.सी. की 1.0 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर 500 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई के 20—30 दिनों बाद करने पर सकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं। अतः बुवाई से 2—3 दिनों के अन्दर पेण्डीमेथलीन एवं 20—30 दिनों बाद क्यूज़ालोफोप—इथाइल का प्रयोग कर सभी प्रकार के खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं।
2. यदि खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग न किया गया हो तो खुरपी से निराई कर खरपतवारों का नियंत्रण करना चाहिए।

कटाई तथा भण्डारण :

जब फलियाँ पक जायें तो कटाई कर मङ्डाई कर लेना चाहिए। चूंकि दालों में ढोरा अधिक लगता है और इसका भण्डारण दालों को भलीभांति सुखने के बाद करना चाहिए। भण्डारण में कीटों से सुरक्षा हेतु एल्यूमिनियम फॉस्फाइड 10 ग्राम प्रति मै. टन की दर से प्रयोग करें।

मुख्य बिन्दु :

1. क्षेत्रीय अनुकूलतानुसार प्रजाति का चयन कर प्रमाणित एवं शुद्ध बीज का प्रयोग करें।
2. बेसल ड्रेसिंग में फॉस्फोरस धारी उर्वरकों का कूँड़ों में संस्तुति अनुसार अवश्य प्रयोग करें।
3. रोगों एवं फलीछेदक कीड़ों की सामयिक जानकारी कर उनका उचित नियंत्रण/उपचार किया जाय।
4. पाइराइट/जिप्सम/सिंगिल सुपर फॉस्फेट के रूप में सल्फर की प्रतिपूर्ति करें।
5. बीज शोधन अवश्य करें।
6. चने में फूल आते समय सिंचाई न करें।
7. देर से बुवाई हेतु शीघ्र पकने वाली प्रजाति का प्रयोग करें।
8. काबुली चने में 2 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव करें।
9. कीट एवं रोग का समय से नियंत्रण करें।
10. चने की बुवाई उत्तर—दक्षिण की दिशा में करें।
11. असिंचित दशा में 2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव फूल आते समय करना लाभप्रद है।



30. मटर की उन्नतशील खेती

भूमि : मटर हेतु दोमट तथा हल्की दोमट भूमि अधिक उपयुक्त है।

भूमि की तैयारी : प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2—3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए।

संस्तुत प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादकता (कु0 / हेठो)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषताएं
1.	मालवीय मटर 15	1999	22—25	120—125	सम्पूर्ण उ.प्र.	मध्यम बौने पौधे, सफेद दाने बुकनी एवं रतआ अवरोधी।
2.	पूसा प्रभात (डी.डी.आर.—23)	2000	15—18	100—105	पूर्वी उ.प्र.	बुकनी रोग अवरोधी।
3.	आदर्श (आईपीएफ 99—15)	2000	23—25	130—135	बुन्देलखण्ड	लम्बी, सफेद दाने, बुकनी अवरोधी।
4.	विकास (आईपीएफडी 99—13)	2005	22—25	100—105	तदैव	बौनी, सफेद दाने, बुकनी, अवरोधी।
5.	जय (के.पी.एम.आर. 522)	2001	32—35	125—130	पश्चिमी उ.प्र.	बौनी, सफेद दाने, बुकनी, अवरोधी।
6.	प्रकाश	2006	28—32	110—115	बुन्देलखण्ड	बौनी, सफेद दाने, बुकनी, रोगरोधी।
7.	हरियाल	2007	26—30	120—125	पश्चिमी उ.प्र.	बौनी, हरे गोल दाने, सफेद दाने बुकनी अवरोधी।
8.	आई.पी.एफ.डी. 10—12	2014	25—30	106—109	मध्य क्षेत्र	पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी, बौनी प्रजाति, हरा दाना।
9.	पन्त पी—42	2008	24—25	106—109	पश्चिमी उ.प्र.	
10.	अमन (आईपीएफ)	2009	22	120—130	पश्चिमी उ.प्र.	लम्बा कद, सफेद दाने, बुकनी, अवरोधी।
11.	दंतीवाड़ा फील्ड पी—1	2011	17—20	120—125	उ.पू. मैदानी क्षेत्र	बुकनी अवरोधी।
12.	आई.पी.एफ.डी. 6—3	2016	19—20	110—115	उ.प्र.	पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी एवं रस्ट मध्यम अवरोधी।
13.	केन्द्रीय क्षेत्र मटर आई.पी.एफ.डी. 11—5	2016	19—20	105—110	बुन्देलखण्ड	बौनी प्रजाति।
14.	केन्द्रीय क्षेत्र मटर	2016	22—25	110	बुन्देलखण्ड	पाउडरी मिल्ड्यू एवं पॉड बोरर अवरोधी तथा आई.पी.एफ.डी. 12—2 एफिड एवं लीफ माइनर मध्यम अवरोधी, बौनी प्रजाति।
15.	पन्त पी—250	2017	23—24	120—125	पश्चिमी उ.प्र.	बुकनी रोग अवरोधी।
16.	आई.पी. फ.डी. 12—2	2017	22—25	110	उ.प्र. (बुन्देलखण्ड)	एफिडस, लीफ माइनर, पीएम, पॉड बोरर, एमआर अवरोधी।

रबी फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादकता (कु. ० / हे. ०)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषताएं
17.	आई.पी.एफ.डी.-2014-2	2018	22-23	105-110	बुन्देलखण्ड	पॉड बोरर, एफिड, लीफ माइनर एवं नीमेटोड मध्यम अवरोधी बौनी प्रजाति।
16.	आई.पी.एफ.डी.-9-2	2018	15-20	120-125	उ.प्र.	बुकनी रोग अवरोधी।
18.	आई.पी.एफ.-4-9	2010	15-18	125-130	उ.प्र.	लम्बा कद, सफेद बुकनी रोग एवं रतुआ अवरोधी।
19.	एच.एफ.पी. 529	2012	22-25	120-125	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी एवं रस्ट सहिष्णु बौनी प्रजाति।
20.	हरीत (आई.पी.एफ.-16-13)	2020	17-20	140-145	उ.प्र.	पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी।
21.	आई.पी.एफ.-16-13	2019	18-19	115-120	उ.प्र. मैदानी क्षेत्र	लम्बा कद, हरा दाना, पाउडरी मिल्ड्यू एवं रस्ट अवरोधी।
22.	आई.पी.एफ.डी-12-8	2020	16-17	115-125	उ.प्र.	पाउडरी मिल्ड्यू एवं रस्ट अवरोधी।
23.	आई.पी.एफ.डी.-13-2	2020	17-18	115-120	उ.प्र.	पाउडरी मिल्ड्यू एवं डाउनी मिल्ड्यू अवरोधी व रतुआ रोग के प्रति सहिष्णु।
16.	आई.पी.एफ.डी.-16-3	2021	15-20	120-125	उ.प्र.	पाउडरी मिल्ड्यू एवं रस्ट अवरोधी।

बीज की मात्रा :

80-100 किग्रा./हेक्टर लम्बे पौधे की प्रजातियों हेतु तथा बौनी प्रजातियों के लिए 125 किग्रा. प्रति हेक्टर।

बीजोपचार :

मटर हेतु राइजोबियम लेग्यूमिनोसेरम कल्चर का प्रयोग होता है। एक पैकेट (200 ग्राम) राइजोबियम कल्चर से 10 किग्रा. बीज को उपचारित करके बोना चाहिए। पी.एस.बी. कल्चर का अवश्य प्रयोग करें।

बुवाई :

अक्टूबर के मध्य से नवम्बर के मध्य तक बुवाई हल के पीछे 20 सेमी (बौनी) व 30 सेमी. (लम्बी प्रजाति) की दूरी पर करनी चाहिए। जीरो टिल ड्रिल द्वारा मटर की बुवाई की जा सकती है।

बीज शोधन :

बीज जनित रोग से बचाव के लिए थीरम 2.5 ग्राम या 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा अथवा थीरम 2.5 ग्राम + कार्बोन्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज को बोने से पूर्व शोधित करना चाहिए। बीजशोधन कल्चर द्वारा उपचारित करने के पूर्व करना चाहिए।

उर्वरक :

नत्रजन	फॉर्स्फोरस	पोटाश	गन्धक	मॉलिब्डेनम	गोबर की खाद
20 किग्रा./हे.	60 किग्रा./हे.	40 किग्रा./हे.	20 किग्रा./हे.	1 किग्रा.	60 कु./हे.

बौनी प्रजातियों के लिए 20 किग्रा. नत्रजन बुवाई के समय अतिरिक्त दिया जाये।

सिंचाई :

जाडे में वर्षा न हो तो फूल आने के समय एक सिंचाई करना चाहिए। दाना भरते समय दूसरी सिंचाई लाभप्रद होती है। स्प्रिंकलर (बौछारी) सिंचाई बुन्देलखण्ड के लिए लाभकारी होगी।

प्रमुख खरपतवार :

बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी, जंगली गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

- खरपतवारनाशी रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने हेतु फ्लूक्लोरैलीन 45 प्रतिशत इ.सी. की 2.2 ली. मात्रा प्रति हेक्टेयर 800—1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरन्त पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए अथवा पेण्डीमेथलीन 30 प्रतिशत इ.सी. की 3.30 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैटफैन नाज़िल से बुवाई के 2—3 दिन के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें। क्यूज़ालोफोप—इथाइल 5 प्रतिशत इ.सी. की 2.0 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर 500 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई के 20—30 दिनों बाद करने पर सकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं। अतः बुवाई से 2—3 दिनों के अन्दर पेण्डीमेथलीन एवं 20—30 दिनों बाद क्यूज़ालोफोप—इथाइल का प्रयोग कर सभी प्रकार के खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं।
- यदि खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग न किया गया हो तो खुरपी से निराई कर खरपतवारों का नियंत्रण करना चाहिए।

फसल सुरक्षा :

(क) प्रमुख कीट :

- तने की मक्खी** : इस कीट की मैगट तने के अन्दर रहकर खाती है, जिससे तना फूल जाता है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पीला होकर सूख जाता है।
- अर्द्धकुण्डलीकार कीट (सेमीलूपर)** : इस कीट की सूडियाँ हरे रंग की होती हैं जो लूप बनाकर चलती हैं। सूडियाँ पत्तियों, कोमल टहनियों, कलियों, फूलों एवं फलियों को खाकर क्षति पहुँचाती हैं।
- पत्ती सुरंगक कीट** : इस कीट की सूँड़ी पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को खाती है। जिसके फलस्वरूप पत्तियों में अनियमित आकार की सफेद रंग की रेखायें बन जाती हैं।
- फली बेधक कीट** : इस कीट की सूडियाँ चपटी एवं हरे रंग की होती हैं, जो फलियों में छेद बनाकर अन्दर घुस जाती है तथा अन्दर ही अन्दर दानों को खाती रहती है। तीव्र प्रकोप की दशा में फलियाँ खोखली हो जाती हैं तथा उत्पादन में गिरावट आ जाती है।

आर्थिक क्षति स्तर :

क्र.सं.	कीट का नाम	फसल की अवस्था	आर्थिक क्षति स्तर
1.	तने की मक्खी	फसल उगने के एक से डेढ़ महीने के अन्दर	5 प्रतिशत प्रभावित पौधे
2.	अर्द्धकुण्डलीकार कीट	फूल एवं फलियाँ बनते समय	2 सूँड़ी प्रति 10 पौधे
3.	फली बेधक कीट	फलियाँ आने पर	5 प्रतिशत प्रभावित पौधे

प्रबन्धन के उपाय :

- समय से बुवाई करनी चाहिए क्योंकि अगेती बोई गयी फसल में तने की मक्खी तथा देर से बोयी गई फसल में फली बेधक कीट के प्रकोप की सम्भावना बढ़ जाती है।
- यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए—
 - तने की मक्खी एवं पत्ती सुरंगक कीट के नियंत्रण हेतु बुवाई से पूर्व कार्बोफ्यूरान 3 सी.जी. 15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बुवाई से पूर्व मिट्टी में मिलाना चाहिए। खड़ी फसल में कीट नियंत्रण हेतु नियंत्रण हेतु डाईमेथोएट

30 प्रतिशत ई.सी. अथवा आक्सीडेमेटान—मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। एजाडिरेक्टिन (नीम का तेल) 0.15 प्रतिशत ई.सी. 10, 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

2. फली बेधक कीट एवं अर्द्धकुण्डलीकार कीट के नियंत्रण हेतु निम्नलिखित जैविक / रसायनिक कीटनाशकों में से किसी एक रसायन का बुरकाव अथवा 500—600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए

- ◆ बैसिलस थूरिन्जिएन्सिस (बी.टी.) की कर्स्टकी प्रजाति 1.0 किग्रा।
- ◆ एजाडिरैक्टिन 0.03 प्रतिशत डब्लू.एस.पी. 2.5—3.00 किग्रा।
- ◆ एन.पी.वी. (एच) 2 प्रतिशत ए.एस।

खेत की निगरानी करते रहे। आवश्यकतानुसार ही दूसरा बुरकाव / छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें। एक कीटनाशी को दूसरी बार न दोहराये।

(ख) प्रमुख रोग :

- 1) अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग : इस रोग में पत्तियों पर छल्ले के समान गोल धब्बे दिखाई देते हैं। अनुकूल परिस्थिति में धब्बे आपस में मिल जाते हैं, जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है।
- 2) बुकनी रोग : इस रोग में पत्तियों, तनों एवं फलियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देते हैं, जिससे बाद में पत्तियाँ सूख कर गिर जाती हैं।
- 3) मृदु रोमिल आसिता : इस रोग में पुरानी पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे—छोटे धब्बे तथा पत्तियों की निचली सतह पर इन धब्बों की नीचे सफेद रोयेदार फफूदी उग आती है। धीरे—धीरे पूरी पत्ती पीली होकर सूख जाती है। इसी प्रकार फलियों के ऊपर भी धब्बे बनते हैं तथा उसी धब्बे के नीचे फलियों के अन्दर रुई के समान फफूद उग आती है, जिससे फलियों में दाने नहीं बनते हैं।

रतुआ रोग :

इस रोग के प्रथम लक्षण पत्तियों के निचली सतह पर दिखाई देते हैं, जो कि पीले से भूरे रंग के होते हैं। रोग की उग्र अवस्था में तना एवं शाखाओं पर काले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

नियंत्रण के उपाय :

1) शस्य क्रियाएँ :

- ◆ गर्मियों में मिट्टी पलट हल से जुताई करने से भूमि जनित रोगों के नियंत्रण में सहायता मिलती है।
- ◆ जिस खेत में प्रायः उकठा लगता हो तो यथा सम्भव उस खेत में 3—4 वर्ष तक मटर की फसल नहीं लेनी चाहिए।
- ◆ उकठा से बचाव हेतु अवरोधी प्रजातियों की बुवाई करना चाहिए।
- ◆ बुकनी रोग से बचाव हेतु प्रतिरोधी प्रजाति रचना, पंत मटर—5, मालवीय मटर—2 आदि बुवाई हेतु प्रयोग करना चाहिए।

2) बीज उपचार :

बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत+कार्बोन्डाजिम 50 प्रतिशत (2:1) 3.0 ग्राम, अथवा ट्राईकोडर्मा 4.0 ग्राम प्रति किग्रा। बीज की दर से शोधित कर बुवाई करना चाहिए।

3) भूमि उपचार :

भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर 60—75 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छीटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से मटर के बीज / भूमि जनित रोगों का नियंत्रण हो जाता है।

4) पर्णीय उपचार :

- ◆ अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा एवं तुलासिता रोग के नियंत्रण हेतु मैंकोज़ेब 75 डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. कापर आक्सीक्लोराइड 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 3.0 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 500—600 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ बुकनी रोग के नियंत्रण हेतु घुलनशील गंधक 80 प्रतिशत 2 किग्रा. प्रति हेक्टेयर 500—600 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई तथा भण्डारण :

फसल पूर्ण पकने पर कटाई की जाय। साफ सुधरे खलियान में इसकी मड़ाई करके दाना निकालें। भण्डारण कीटों से रक्षा हेतु अल्यूमिनियम फॉस्फाइड 10 ग्राम पाउच प्रति मै. टन की दर से प्रयोग में लायें।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ क्षेत्रीय अनुकूलतानुसार प्रजाति का चयन कर प्रमाणित बीज का प्रयोग करें।
- ◆ समय से ही बुवाई करें।
- ◆ फॉस्फोरस एवं गंधक हेतु सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करें।
- ◆ अतिशीघ्र पकने वाली मटर की प्रजातियों की अधिक उपज हेतु पौधों की संख्या 6.6 लाख (15×10 से.मी.) प्रति हेक्टेयर सुनिश्चित करें।



31. मसूर की उन्नतशील खेती

भूमि : दोमट से भारी भूमि इसकी खेती के लिए अधिक उपयुक्त है। धान के बाद खाली खेतों में मसूर विशेषकर बोयी जाती है।

भूमि की तैयारी : पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2—3 जुताई कल्टीवेटर से करके पाटा लगाना चाहिए।

संस्तुत प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादकता (कु0 / हेठो)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषतायें
1.	के.—75	1986	14—16	120—125	सम्पूर्ण उ.प्र.	पौधे मध्यम, दाने बड़े।
2.	पन्त मसूर—4	1993	18—20	135—140	मैदानी क्षेत्र	दाने छोटे, रतुवा अवरोधी।
3.	एल—4076	1993	18—20	135—140	सम्पूर्ण उ.प्र.	पौधे गहरे हरे रंग के, कम फैलने वाले, बड़ादाना।
4.	डी.पी.एल.—15	1995	18—20	130—135	मैदानी क्षेत्र	दाना मध्यम बड़ा, रतुआ सहिष्णु।
5.	पूसा वैभव	1996	16—18	135—140	मैदानी क्षेत्र	पौधे गहरे हरे रंग के, कम फैलने वाले, छोटा दाना।
6.	नरेन्द्र मसूर—1	1997	20—22	135—140	सम्पूर्ण उ.प्र.	रतुआ अवरोधी, मध्यम दाना।
7.	डी.पी.एल.—62	1997	18—20	130—135	सम्पूर्ण उ.प्र.	दाना बड़ा।
8.	पन्त मसूर—5	1999	18—20	130—135	सम्पूर्ण उ.प्र.	बड़ा दाना, रतुवा अवरोधी।
9.	आई.पी.एल.—81	2000	18—20	120—125	बुन्देलखण्ड	मध्यम दाना, रतुवा रोग सहिष्णु।
10.	शेखर—3	2004	15—18	125—135	सम्पूर्ण उ.प्र.	रतुआ अवरोधी एवं उकठा अवरोधी।
11.	शेखर—2	2004	16—18	110—115	सम्पूर्ण उ.प्र.	रतुआ अवरोधी एवं उकठा अवरोधी।
12.	एच.यू.एल.—57 (मालवीय विश्वनाथ)	2005	18—22	125—135	सम्पूर्ण उ.प्र.	छोटा दाना तथा रतुआ अवरोधी।
13.	के.एल.एस.—218	2005	18—20	125—130	पूर्वी उ.प्र.	छोटा दाना तथा रतुआ अवरोधी।
14.	आई.पी.एल.—406	2007	15—18	125—130	पश्चिमी उ.प्र.	बड़ा दाना तथा रतुआ अवरोधी।
15.	पन्त —8 (पन्त एल 063)	2010	15—16	130—135	सम्पूर्ण उ.प्र.	विल्ट एवं रस्ट अवरोधी।
16.	पन्त —6 (पी एल 02)	2010	16—18	125—145	सम्पूर्ण उ.प्र.	विल्ट एवं रस्ट अवरोधी।
17.	पन्त —7 (पी एल 024)	2010	16—18	125—145	सम्पूर्ण उ.प्र.	विल्ट एवं रस्ट अवरोधी।
18.	आई.पी.एल.—316	2013	18—20	102—112	उ.प्र. (बुन्देलखण्ड क्षेत्र)	विल्ट एवं रस्ट अवरोधी।
19.	आई.पी.एल.—526	2015	10—15	105—112	सम्पूर्ण उ.प्र.	विल्ट एवं रस्ट अवरोधी।
20.	के.एल.बी. 2008—4 (कराती)	2015	18—20	115—120	सम्पूर्ण उ.प्र.	विल्ट अवरोधी, बड़ा दाना।
21.	के.एल.एस. 09—3 (कृष)	2015	18—20	105—110	सम्पूर्ण उ.प्र.	विल्ट एवं रस्ट अवरोधी, छोटा दाना।

क्र. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना का वर्ष	उत्पादकता (कु0 / हे0)	पकने की अवधि (दिन)	उपयुक्त क्षेत्र	विशेषताएँ
22.	एल. 4717 (पूसा अगेती मसूर)	2016	12–13	96–106	मध्य क्षेत्र	एस्कोचाइटा ब्लाइट एवं विल्ट अवरोधी, (बॉयोफोर्टिफाइड प्रजाति—आयरन 65 पी. पी.एम.), रेनफेड क्षेत्र के लिए एवं मध्यम दाना।
23.	आई.पी.एल.—526	2016	10–12	101–110	सम्पूर्ण उ.प्र.	रस्ट एवं विल्ट सहिष्णु, मध्यम बड़ा दाना।
24.	आज.वी.एल. 11–6	2017	11–12	107–113	मध्य क्षेत्र	विल्ट सहिष्णु, बड़ा दाना।
25.	पन्त मसूर—9	2017	15–16	120–130	सम्पूर्ण उ.प्र.	रेनफेड, इस्कोचाइटा, रस्ट, विल्ट अवरोधी
26.	आई.पी.एल.—220	2018	14–15	119–122	उ.पूर्वी उ.प्र.	रस्ट एवं प्यूजेरियम विल्ट अवरोधी, बड़ा दाना (बॉयो—फोर्टिफाइड प्रजाति—आयरन 73 पी.पी.एम. एवं जिंक 51 पी.पी.एम.)।
27.	आर.के.एल. 14–20 (कोटा मसूर 2)	2018	12–15	97–104	मध्य क्षेत्र	सूखा एवं उच्च ताप सहिष्णु।
28.	एल. 4727	2018	11–15	92–128	मध्य क्षेत्र	विल्ट मध्यम अवरोधी रेनफेड क्षेत्र के लिए।
29.	आर.के.एल. 607–1	2018	10–14	98–107	मध्य क्षेत्र	सूखा एवं उच्च ताप सहिष्णु।
30.	के.एल.बी. 345 (शेखर 4)	2018	18–20	111	उत्तर प्रदेश	रस्ट एवं विल्ट अवरोधी, बड़ा दाना।
31.	के.एल.एस. 1322 (शेखर 5)	2018	16–20	105–115	उत्तर प्रदेश	रस्ट एवं विल्ट अवरोधी, छोटा दाना।
32.	आई.पी.एल.—315	2019	12–18	124–129	मध्य क्षेत्र	रस्ट एवं विल्ट सहिष्णु, बड़ा दाना।
33.	आई.पी.एल.—321	2019	14–18	123–138	सम्पूर्ण उ.प्र.	रस्ट एवं विल्ट अवरोधी तथा पॉड बोरर एवं एफिड सहिष्णु।
34.	कोटा मसूर—3 (आर.के.एल.—605–03)	2020	18–20	105	—	रेनफेड हेतु, पॉड बोरर एवं एफिड सहिष्णु।
35.	आई.पी.एल.—225	2020	12–14	120–125	उत्तर प्रदेश	रस्ट एवं विल्ट सहिष्णु, छोटा दाना।
36.	आई.पी.एल.—329	2020	12–14	120–125	उत्तर प्रदेश	रस्ट एवं विल्ट सहिष्णु, छोटा दाना।
37.	आई.पी.एल.—230	2021	13–14	110–115	उत्तर प्रदेश	शीघ्र पकने वाली, रस्ट एवं विल्ट सहिष्णु, छोटा दाना।

बुवाई का समय :

समय से बुवाई अक्टूबर के मध्य से नवम्बर के मध्य तक तथा विलम्ब की दशा में दिसम्बर से प्रथम सप्ताह तक इसकी बुवाई करना उपयुक्त है। धान की कटाई के बाद जीरो टिल सीड ड्रिल द्वारा मसूर की बुवाई अधिक लाभप्रद है।

बीज दर :

समय से बुवाई हेतु 30–40 किग्रा. तथा पिछेती एवं उतेरा बुवाई के लिए 40–50 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है।

बीजोपचार :

10 किग्रा. बीज को मसूर के एक पैकेट 200 ग्राम राइजोबियम लेग्यूमिनोसेरम कल्वर से उपचारित करके बोना चाहिए। विशेषकर उन खेतों में जिनमें पहले मसूर न बोई गयी हो। बीजोपचार एवं रासायनिक उपचार के बाद ही राइजोबियम कल्वर से बीजोपचार किया जाय। पी० एस० बी० का अवश्य प्रयोग करें।

उर्वरक :

समान्य बुवाई में 20 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस, 20 किग्रा. पोटाश तथा 20 किग्रा. गंधक/हे. प्रयोग करें। उत्तेरा विधि से बुवाई के लिए 20 किग्रा. नत्रजन धान की कटाई के बाद टापड़ेसिंग करें तथा फॉस्फोरस 30 किग्रा. को दो बार फूल आने तथा फलिया बनते समय पर्णीय छिड़काव करें।

सिंचाई :

एक सिंचाई फूल आने के पूर्व तथा एक बाद में करनी चाहिए। फूल लगाने की अवस्था में सिंचाई न करें। धान के खेतों में बोई गई मसूर की फसल में यदि वर्षा न हो तो एक सिंचाई फली बनने के समय करनी चाहिए।

प्रमुख खरपतवार :

बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी, जंगली गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

- खरपतवारनाशी रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने हेतु फ्लूक्लोरैलीन 45 प्रतिशत ई.सी. की 2.2 ली. मात्रा प्रति हेक्टेयर 800—1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरन्त पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए अथवा पेण्डीमेथलीन 30 प्रतिशत ई.सी. की 3.30 लीटर प्रति हेक्टेयर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैटफैन नाजिल से बुवाई के 2—3 दिन के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें। क्यूज़ालोफोप—इथाइल 5 प्रतिशत ई.सी. की 2.0 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर 500 लीटर पानी में घोल बनाकर बुवाई के 20—30 दिनों बाद करने पर सकरी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं। अतः बुवाई से 2—3 दिनों के अन्दर पेण्डीमेथलीन एवं 20—30 दिनों बाद क्यूज़ालोफोप—इथाइल का प्रयोग कर सभी प्रकार के खरपतवारों को नियंत्रित कर सकते हैं।
- यदि खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग न किया गया हो तो खुरपी से निराई कर खरपतवारों का नियंत्रण करना चाहिए।

फसल सुरक्षा :

(क) प्रमुख कीट :

1) माहूँ कीट :

इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों, तनों एवं फलियों का रस चूस कर कमज़ोर कर देते हैं। माहूँ मधुस्राव करते हैं, जिसपर काली फफूँद उग आती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न होती है।

2) अर्द्धकुण्डलीकार कीट (सेमीलूपर) :

इस कीट की सूडियाँ हरे रंग की होती हैं जो लूप बनाकर चलती हैं। सूडियाँ पत्तियों, कोमल टहनियों, कलियों, फूलों एवं फलियों को खाकर क्षति पहुँचाती हैं।

3) फली बेधक कीट :

इस कीट की सूडियाँ फलियों में छेद बनाकर अन्दर घुस जाती हैं तथा अन्दर ही अन्दर दानों को खाती रहती हैं। तीव्र प्रकोप की दशा में फलियाँ खोखली हो जाती हैं तथा उत्पादन में गिरावट आ जाती है।

आर्थिक क्षति स्तर :

क्र.सं.	कीट का नाम	फसल की अवस्था	आर्थिक क्षति स्तर
1.	माहूँ कीट	वानस्पतिक एवं फली अवस्था	5 प्रतिशत प्रभावित पौधे
2.	अर्द्धकुण्डलीकार कीट	फूल एवं फलियाँ बनते समय	2 सूँड़ी प्रति 10 पौधे
3.	फली बेधक कीट	फलियाँ बनते समय	5 प्रतिशत प्रभावित पौधे

नियंत्रण के उपाय :

- समय से बुवाई करनी चाहिए।
- यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशों का प्रयोग करना चाहिए।
 - माहूँ कीट खड़ी फसल में कीट नियंत्रण हेतु डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. अथवा आक्सीडेमेटान—मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। एजाडिरेविटन (नीम का तेल) 0.15 प्रतिशत ई.सी., 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।
 - फली बेधक कीट एवं अर्द्धकुण्डलीकार कीट की नियंत्रण हेतु बैसिलस थूरिन्जिएन्सिस (बी.टी.) की कर्स्टकी प्रजाति 1.0 किग्रा. का बुरकाव अथवा 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए।

खेत की निगरानी करते रहें। आवश्यकतानुसार ही दूसरा बुरकाव/छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर करें एक कीटनाशी को लगातार दो बार प्रयोग न करें।

(ख) प्रमुख रोग :

- जड़ सड़न :**
बुवाई के 15–20 दिन बाद पौधा सूखने लगता है। पौधे को उखाड़ कर देखने पर तने पर रुई के समान फफूँद लिपटी हुए दिखाई देती है।
- उकठा :**
इस रोग में पौधा धीरे-धीरे मुरझाकर सूख जाता है। छिलका भूरे रंग का हो जाता है तथा जड़ को चीर कर देखे तो उसके अन्दर भूरे रंग की धारियाँ दिखाई देती हैं। उकठा का प्रकोप पौधे की किसी भी अवस्था में हो सकता है।
- गेरुई/रतुआ रोग :**
इस रोग में पत्तियों तथा तने पर नारंगी रंग के फफोले बनते हैं, जिससे पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती हैं।

नियंत्रण के उपाय :

- शस्य क्रियाएं :**
 - गर्मियों में मिट्टी पलट हल से जुताई करने से भूमि जनित रोगों के नियंत्रण में सहायता मिलती है।
 - जिस खेत में प्रायः उकठा लगता हो तो यथा सम्भव उस खेत में 3–4 वर्ष तक मसूर की फसल नहीं लेनी चाहिए।
 - उकठा से बचाव हेतु नई प्रतिरोधी प्रजातियों की बुवाई करना चाहिए।

2) बीज उचार :

बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत+कार्बन्डाजिम 50 प्रतिशत (2:1) 3.0 ग्राम, अथवा ट्राइकोडर्मा 4.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधित कर बुवाई करना चाहिए।

3) भूमि उपचार :

भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हेठो 60—75 किग्रा. सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छोंटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से मसूर के बीज / भूमि जनित रोगों का नियंत्रण हो जाता है।

4) पर्णीय उपचार :

गोरुई रोग के नियंत्रण हेतु मैंकोज़ेब 75 डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा प्रोपीकोनाजोल 25 प्रतिशत ई.सी. की 500 मिली० मात्रा प्रति हेक्टेयर 500—600 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई तथा भण्डारण :

फसल पूर्ण पकने पर कटाई करें। मड़ाई के पश्चात् अन्न को भण्डारण में कीटों से सुरक्षा के लिए अल्यूमिनियम फास्फाइड 10 ग्राम पाउच प्रति मैट्रिक टन की दर से प्रयोग में लायें।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ क्षेत्र विशेष हेतु संस्तुत प्रजाति के प्रमाणित बीज की बुवाई समय से करें।
- ◆ बीज शोधन अवश्य करें।
- ◆ फॉस्फोरस एवं गन्धक हेतु सिंगिल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग करें।
- ◆ बीज की मात्रा / हे. दाने के आकार एवं बुवाई के समय को ध्यान में रखते हुए निर्धारित करं।
- ◆ रोग का नियंत्रण समय से करें।
- ◆ अंकुरित बीज को धान की कटाई से 15 दिन पूर्व बुवाई करने पर उपज में 30 प्रतिशत तक वृद्धि सम्भव है।



32. राई-सरसों की उन्नतशील खेती

राई / सरसों का रबी तिलहनी फसलों में प्रमुख स्थान है। प्रदेश में अनेक प्रयासों के बाद भी राई के क्षेत्रफल में विशेष वृद्धि नहीं हो पा रही है। इसका प्रमुख कारण है कि सिंचित क्षमता में वृद्धि के कारण अन्य महत्वपूर्ण फसलों के क्षेत्रफल का बढ़ना। इसकी खेती सीमित सिंचाई की दशा में अधिक लाभदायक होती है। उन्नत विधियाँ अपनाने से उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है।

खेत की तैयारी :

खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके बाद पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए। यदि खेत में नमी कम हो तो पलेवा करके तैयार करना चाहिए। ट्रैक्टर चालित रोटावेटर द्वारा एक ही बार में अच्छी तैयारी हो जाती है।

उन्नतशील प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजातियाँ	नोटोफिकेशन वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	उत्पादन क्षमता (कु. / हे.)	विशेष विवरण
1.	वरुणा (टी 59)	1975	125–130	20–25	सम्पूर्ण मैदानी क्षेत्र हेतु।
2.	रोहिणी	1985	130–135	22–28	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
3.	नरेन्द्र राई (एन.डी.आर.–8501)	1990	125–130	25–30	सम्पूर्ण उ. प्र. हेतु।
4.	नरेन्द्र अगेती राई–4	1999	95–100	15–20	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
5.	उर्वशी	1999	125–130	22–25	शीघ्र बुवाई हेतु।
6.	बसंती (पीली)	2000	130–135	25–28	—
7.	माया	2002	130–135	25–28	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
8.	नरेन्द्र स्वर्णा राई–8 (पीली)	2004	130–135	22–25	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
9.	पूसा सरसों–21 (एल.ई.एस–1–27)	2007	133–142	18.6–21.10	इरर्यूसिक एसिड की मात्रा बहुत कम
10.	पूसा सरसों–24 (एल.ई.टी.–18)	2008	140	20.25	इरर्यूसिक एसिड की मात्रा बहुत कम।
11.	पूसा सरसों–28 (पी.एम.–28)	2012	105–110	18–22	सम्पूर्ण उ. प्र. हेतु।
12.	पूसा सरसों–29 (एल.ई.टी.–36)	2013	131–155	19.27–25.68	इरर्यूसिक एसिड की मात्रा बहुत कम।
13.	पूसा सरसों–30 (पी.एम.–30)	2013	130–137	18–20	सम्पूर्ण उ.प्र.।
14.	आर. एच–749	2013	146–148	26–28	सम्पूर्ण उ.प्र.।
15.	पूसा डबल जीरो–31	2016	142	23.3	बायो फोर्टिफाइड प्रजाति (इरर्यूसिक एसिड 2 प्रतिशत से कम एवं ग्लूकोसाइनोलेट्स 30 पी.पी.एम. से कम।
16.	सी.एस.–58 (सी.एस. 11001–2–2–3)	2017	138	20.9	ऊसर क्षेत्रों में
17.	सी. एस. 60	2018	125–129	20–22	ऊसर क्षेत्रों में

रबी फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजातियाँ	नोटीफिकेशन वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	उत्पादन क्षमता (कु. / हे.)	विशेष विवरण
18.	पूसा सरसों-32 (एल.ई.एस.-54)	2021	142–147	25–28	इरुसिक एसिड की मात्रा बहुत कम
19.	आजाद महक (के.एम.आर. (ई) 15–02)	2021	120–125	24–25	समय से बुबाई, सिंचित दशा एवं सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश हेतु
20.	सुरेखा (के.एम.आर. 16–02)	2021	125–130	25–28	समय से बुबाई, सिंचित दशा एवं सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश हेतु
असिंचित क्षेत्रों के लिए					
1.	वरुणा (टा. 59)	1975	120–125	15–20	सम्पूर्ण मैदानी क्षेत्र हेतु।
2.	वैभव	1985	125–130	15–20	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश हेतु
3.	पीताम्बरी (आर.वाई. एस. के. 05–02)	2009	110–115	14.17–17.65	बड़ा दाना
4.	एन.आज.सी.एच.बी.–101	2009	105–135	13.82–14.91	—
5.	पन्त पीली सरसों 1	2010	107–113	12–15	—
6.	पूसा सरसों-27	2011	108–138	14.37–16.59	इरुसिक एसिड की मात्रा बहुत कम
7.	गिरिराज (डीआरएमआरयू 31)	2013	137–153	22.46–27.57	तेल की मात्रा अधिक
8.	आर.जी. एन.–298	2015	143	21.7	तेल की मात्रा अधिक
विलम्ब से बुबाई के लिए					
1.	वरदान	1985	120–125	18–20	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
2.	आशीर्वाद	2005	130–135	20–22	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
क्षारीय / लवणीय भूमि हेतु					
1.	सी.एस.–52	1987	135–145	16–20	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
2.	नरेन्द्र राई	1990	—	—	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
3.	सी.एस.–54	2003	135–145	18–22	सम्पूर्ण उ.प्र. हेतु।
4.	सी.एस.–58	2017	138	20.9	ऊसर क्षेत्र हेतु।
संकर प्रजातियाँ :					
1.	कोरल 432 (पी.ए.सी. 432)	2010	121–132	18.31–25.81	सफेद रस्ट एवं डाउनी मिल्ड्यू सहिष्णु
2.	अलबेली 1	2015	140–145	21.3	—
3.	जे.के. सम्रद्धि गोल्ड (जे.के.एम.एस.–2)	2016	125–130	20–30	सफेद रस्ट एवं डाउनी मिल्ड्यू सहिष्णु
4.	जे.के. पुखराज (जे.के. वाई.एस.–2)	2016	115–120	15–20	सफेद रस्ट एवं डाउनी मिल्ड्यू सहिष्णु
5.	बेयर सरसों 6460	2016	130–135	28–30	तेल की मात्रा अधिक।

बीज दर: सिंचित क्षेत्रों में 5–6 किग्रा./हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।

बीज शोधन :

बीज जनित रोगों से सुरक्षा हेतु 2.5 ग्राम थीरम प्रति किग्रा. की दर से बीज को उपचारित करके बोएं। मैटालेक्सिल 35 प्रतिशत डब्लू.एस. 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज शोधन करने से सफेद गेरुई एवं तुलासिता रोग की प्रारम्भिक अवस्था में रोकथाम हो जाती है।

बुवाई का समय एवं विधि :

राई बोने का उपयुक्त समय बुन्देलखण्ड एवं आगरा मंडल में सितम्बर का अंतिम सप्ताह तथा शेष क्षेत्रों में अक्टूबर का प्रथम पखवारा है। बुवाई देशी हल के पीछे उथले (4–5 सेन्टीमीटर गहरे) कूँड़ों में 45 सेन्टीमीटर की दूरी पर करना चाहिए। बुवाई के बाद बीज ढ़कने के लिए हल्का पाटा लगा देना चाहिए। असिंचित दशा में बुवाई का उपयुक्त समय सितम्बर का द्वितीय पखवारा है। विलम्ब से बुवाई करने पर माहूँ का प्रकोप एवं अन्य कीटों एवं बीमारियों की सम्भावना अधिक रहती है।

उर्वरक की मात्रा :

उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर किया जायें सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन 120 किग्रा. फॉस्फेट 60 किग्रा. एवं पोटाश 60 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करने से अच्छी उपज प्राप्त होती है। फॉर्स्फोरस का प्रयोग सिंगिल सुपर फॉस्फेट के रूप में अधिक लाभदायक होता है। क्योंकि इससे सल्फर की उपलब्धता भी हो जाती है। यदि सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग न किया जाए तो गंधक की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए 40 किग्रा. प्रति हे. की दर से गंधक का प्रयोग करना चाहिए तथा असिंचित क्षेत्रों में उपयुक्त उर्वरकों की आधी मात्रा बेसल ड्रेसिंग के रूप में प्रयोग की जाये। यदि डी.ए.पी. का प्रयोग किया जाता है तो इसके साथ बुवाई के समय 200 किग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना फसल के लिए लाभदायक होता है तथा अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 60 कुन्तल प्रति हे. की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करना चाहिए।

सिंचित क्षेत्रों में नत्रजन की आधी मात्रा व फॉस्फेट एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूँड़ों में बीज के 2–3 सेमी. नीचे नाई या चोरों से दिया जाय। नत्रजन की शेष मात्रा पहली सिंचाई (बुवाई के 25–30 दिन बाद) के बाद टापड़ेसिंग में डाली जाय।

खरपतवार नियंत्रण एवं विरलीकरण :

बुवाई के 15–20 दिन के अन्दर घने पौधों को निकालकर उनकी आपसी दूरी 15 सेमी. कर देना आवश्यक है। खरपतवार नष्ट करने के लिए एक निराई-गुड़ाई, सिंचाई के पहले और दूसरी पहली सिंचाई के बाद करनी चाहिए रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने पर बुवाई से पूर्व पलूक्लोरैलिन 45 ई.सी. की 2.2 लीटर प्रति 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर भली-भाँति हैरो चलाकर मिट्टी में मिला देना चाहिए या पैन्डीमेथलीन 30 ई.सी. 3.3 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के दो तीन दिन के अन्दर 800–1000 लीटर पानी में घोलकर समान रूप से छिड़काव करें।

सिंचाई :

फूल आने के समय तथा दाना भरने की अवस्थाओं में नमी की कमी के प्रति राई की फसल विशेष संवेदनशील होती है। अतः अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए सिंचाई करें यदि उर्वरक का प्रयोग संस्तुत मात्रा में (120 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फेट तथा 60 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर) किया गया हो तथा मिट्टी हल्की हो तो अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए 2 सिंचाई क्रमशः पहली बुवाई के 30–35 दिन बाद तथा दूसरी वर्षा न होने पर 55–65 दिन बाद करें।

फसल सुरक्षा :

(क) प्रमुख कीट :

- आरा मक्खी :** इस कीट की सूडियाँ काले रलेटी रंग की होती हैं जो पत्तियों को किनारों से अथवा पत्तियों में छेद कर तेजी से खाती है, तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहीन हो जाता है।
- चित्रित बग :** इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ चमकीले काले, नारंगी एवं लाल रंग के चक्कते युक्त होते हैं। शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों, शाखाओं, तनों, फूलों एवं फलियों का रस चूसते हैं, जिससे प्रभावित पत्तियाँ किनारों से सूख कर गिर जाती हैं प्रभावित फलियों में दाने कम बनते हैं।

3. **बालदार सूँडी** : सूण्डी काले एवं नार |गी रंग की होती है तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। सूड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में रह कर पत्तियों को खाती है तथा बाद में पूरे खेत में फैल कर पत्तियों खाती है। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहीन हो जाता है।
4. **माहूँ** : इस कीट की शिशु एवं प्रौढ़ पीलापन लिए हुए हरे रंग के होते हैं। जो पौधों के कोमल तनों, पत्तियों, फूलों एवं नये फलियों के रस चूसकर कमज़ोर कर देते हैं। माहूँ मधुसाव करते हैं, जिसपर काली फफूँद उग आती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न होती है।
5. **पत्ती सुरंगक कीट** : इस कीट की सूँडी पत्तियों में सुरंग बनाकर हरे भाग को खाती है जिसके फलस्वरूप पत्तियों में अनियमित आकार की सफेद रंग की रेखायें बन जाती हैं।

आर्थिक क्षति स्तर :

क्र.सं.	कीट का नाम	फसल की अवस्था	आर्थिक क्षति स्तर
1.	आरा मक्खी	वानस्पतिक अवस्था	एक सूँडी प्रति पौधा
2.	पत्ती सुरंगक कीट	वानस्पतिक अवस्था	2 से 5 सूँडी प्रति पौधा
3.	बालदार सूँडी	वानस्पतिक अवस्था	10–15 प्रतिशत प्रकोपित पत्तियाँ
4.	माहूँ	वानस्पतिक अवस्था से फूल व फली आने तक	30–50 माहूँ प्रति 10 सेमी. मध्य ऊपरी शाखा पर या 30 प्रतिशत माहूँ से ग्रसित पौधे।

नियंत्रण के उपाय :

1. गर्मी में गहरी जुताई करनी चाहिए।
2. संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।
3. आरा मक्खी की सूड़ियों को प्रातः काल इकट्ठा कर नष्ट कर देना चाहिए।
4. प्रारम्भिक अवस्था में झुण्ड में पायी जाने वाली बालदार सूड़ियाँ पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
5. प्रारम्भिक अवस्था में माहूँ से प्रभावित फूलों, फलियों एवं शाखाओं को तोड़कर माहूँ सहित नष्ट कर देना चाहिए।
6. यदि कीट को प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर (ETL) पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए –
 - ◆ आरा मक्खी एवं बालदार सूँडी के नियंत्रण के लिए मैलाथियान 5 प्रतिशत डी.पी की 20–25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बुरकाव अथवा मैलाथियान 50 प्रतिशत ई.सी. की 1.50 लीटर अथवा क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।
 - ◆ माहूँ चित्रित बग, एवं पत्ती सुरंगक कीट के नियंत्रण हेतु डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. अथवा आक्सीडेमेटान–मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. अथवा क्लोरपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. की 1.0 लीटर अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 प्रतिशत एस.एल. की 500 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। एजाडिरेक्टन (नीम का तेल) 0.15 प्रतिशत ई.सी. 2.5 ली प्रति हेक्टेयर की दर से भी प्रयोग किया जा सकता है।

(ख) प्रमुख रोग :

1. **अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा :** इस रोग में पत्तियों तथा फलियों पर गहरे कत्थई रंग के धब्बे बनते हैं, जो गोल छल्ले के रूप में पत्तियाँ पर स्पष्ट दिखाई देते हैं। तीव्र प्रकोप की दशा में धब्बे आपस में मिल जाते हैं, जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है।
2. **सफेद गोरुई :** इस रोग में पत्तियों की निचली सतह पर सफेद फफोले बनते हैं, जिससे पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती हैं। फूल आने की अवस्था में पुष्पक्रम विकृत हो जाता है, जिससे कोई भी फली नहीं बनती है।

3 तुलासिता :

इस रोग में पुरानी पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे-छोटे धब्बे तथा पत्तियों निचली सतह पर इन धब्बों के नीचे सफेद रोयेदार फफूँदी उग आती है। धीरे-धीरे पूरी पत्ती पीली होकर सूख जाती है।

नियंत्रण के उपाय :

1. बीज उपचार :

- ◆ सफेद गेरुई एवं तुलासिता रोग के नियंत्रण हेतु मेटालैकिसल 35 प्रतिशत डब्लू.एस. की 2.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- ◆ अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.एस. की 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।

2. भूमि उपचार :

- ◆ भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हे. 60—75 किग्रा. सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8—10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से राई/सरसों के बीज/भूमि जनित आदि रोगों के प्रबन्धन में सहायक होता है।

3. पर्णीय उपचार :

- ◆ अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा, सफेद गेरुई एवं तुलासिता रोग के नियंत्रण हेतु मैकोजेब 75 डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा जिरम 80 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. अथवा कापर आक्सीक्लोराइड 50 प्रतिशत डब्लू.पी. की 3.0 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 600—750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

(ग) प्रमुख खरपतवार :

बथुआ, सेन्जी, कृष्णानील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी जंगली गाजर, गजरी, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

- ◆ खरपतवारनाशी रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण करने हेतु फ्लूक्लोरैलीन 45 प्रतिशत ई.सी. की 2.2 ली. मात्रा प्रति हेक्टेयर 800—1000 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के तुरन्त पहले मिट्टी में मिलाना चाहिए अथवा पेण्डीमेथलीन 30 प्रतिशत ई.सी. की 3.30 लीटर प्रति हेक्टेयर उपरोक्तानुसार पानी में घोलकर फ्लैटफैन नाजिल से बुवाई के 2—3 दिन के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें।
- ◆ यदि खरपतवारनाशी रसायन का प्रयोग न किया गया हो तो खुरपी से निराई कर खरपतवारों का नियंत्रण करना चाहिए।

कटाई—मङ्गाई :

जब 75 प्रतिशत फलियाँ सुनहरे रंग की हो जायें, फसल को काट कर सुखाकर व मङ्गाई करके बीज अलग करना चाहिए। देर करने से बीजों के झड़ने की आशंका रहती है। बीज को खूब सुखाकर ही भण्डारण करना चाहिए।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ विरलीकरण किया जाय।
- ◆ सल्फर का प्रयोग किया जाय।
- ◆ आई.पी.एम. पद्धति (कीट प्रबन्धन) अपनाया जाय।



33. अलसी की उन्नतशील खेती

खेत की तैयारी :

इसकी खेती मटियार व चिकनी दोमट भूमि में सफलता पूर्वक की जाती है। खरीफ की फसलें काटने के बाद एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद कल्टीवेटर अथवा देशी हल से दो जुताई करके खेत अच्छी तरह समतल कर लेना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ :

क्र. सं.	प्रजाति	विमोचन वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)		तेल का प्रतिशत	विशेष विवरण
				सिंचित	असिंचित		
(क)	बीज उद्देशीय						
1.	गरिमा	1985	125—130	20—25	—	42—43	गोरुई/रतुआ अवरोधी तथा उकठा सहनशील मैदानी क्षेत्रों हेतु।
2.	श्वेता	1985	130—135	15—18	10—15	43—44	—
3.	शुभ्रा	1985	130—135	20—22	10—12	43—45	समस्त उ. प्र. हेतु गोरुई/रतुआ अवरोधी उकठा व कलिका मक्खी अवरोधी।
4.	लक्ष्मी—27	1987	115—120	15—18	10—15	43—45	बुदेलखण्ड हेतु संस्तुत/गोरुई/रतुआ अवरोधी।
5.	पद्मिनी	1999	120—125	15—18	12—15	43—45	बुदेलखण्ड हेतु संस्तुत फफूदी रोग अवरोधी।
6.	शेखर	2001	135—140	20—25	14—16	43—43	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपयुक्त।
7.	शारदा	2006	105—110	16—18	—	43—45	सफेद बुकनी अवरोधी।
8.	मऊ आजाद	2008	120—125	16—18	—	43—45	झुलसा अवरोधी।
9.	जे.एल.एस. 95	2018	125—130	12.50—14.50			
10.	यूटेरा अलसी (आर.एल.सी.—153)	2019	125—135	12.50—15.00		—	
11.	रजनी (एल.सी.के.1009)	2019	133	15.28			अल्टरनेरिया ब्लाइट एवं रस्ट अवरोधी।
12.	उमा (एलके 1101)	2017	123	8.68	पौधे की ऊँचाई	—	अल्टरनेरिया ब्लाइट एवं विल्ट के प्रति मध्यम अवरोधी, बड़फलाई कीट के लिए सहिष्णु।

क्र. सं.	प्रजाति	विमोचन वर्ष	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)		तेल का प्रतिशत	विशेष विवरण
				सिंचित	असिंचित		
13.	इंटु (एलसीसी 1108)	2017	137	9.55	पौधे की ऊँचाई सेमी. 76	—	अल्टरनेरिया ब्लाइट पाउडरी मिल्ड्यू एवं रस्ट के प्रति अवरोधी।
14.	उत्तरा अलसी-2	2019	125-135	12-15	—	—	—
15.	राजन (एल.सी.के.-1009)	2019	133	15-16	—	36-39	अल्टरनेरिया ब्लाइट एवं रस्ट अवरोधी।
16.	कोटा अलसी-6 (आर.एल.-13165)	2020	130-135	11.77	—	35	पाउडरी मिल्ड्यू रस्ट अवरोधी।
(ख)	द्विउद्देशीय						
1.	गौरव	1987	135-150	18-20	रेशा 12-14	42-43	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपयुक्त।
2.	शिखा	1997	135-150	20-22	रेशा 13-15	42-41	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपयुक्त।
3.	रशिम	1999	135-140	20-24	रेशा 14-15	41-42	मैदानी क्षेत्रों हेतु उपयुक्त।
4.	पार्वती	2001	140-145	20-22	रेशा 13-14	41-42	बुन्देलखण्ड हेतु संस्तुत उकठा, गोरुई/रतुआ व फफूंदी चूर्ण रोग अवरोधी।
5.	रुचि	2011	132-135	22-25	रेशा 15-16	40-42	समस्त उ.प्र. हेतु संस्तुत उकठा, गोरुई/रतुआ व फफूंदी चूर्ण रोग अवरोधी।

बुवाई का समय : अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर का प्रथम सप्ताह।

बीज दर :

बहुउद्देशीय प्रजातियों के लिए 30 कि.ग्रा./हे. तथा द्विउद्देशीय (रेशा एवं दाना) प्रजातियों के लिए 50 कि.ग्रा./हे.।

बुवाई की दूरी :

बहुउद्देशीय प्रजातियों के लिए 25 सेमी. कूँड़ से कूँड़ तथा द्विउद्देशीय प्रजातियों के लिए 20 सेमी. कूँड़ से कूँड़।

बीज शोधन :

अलसी की फसल में झुलसा तथा उकठा आदि का संक्रमण प्रारम्भ में बीज या भूमि अथवा दोनों से होता है, जिनसे बचाव हेतु बीज को 2.5 ग्राम थीरम या 2 ग्राम कार्बन्डाजिम से प्रति किंग्रा. बीज की दर से उपचार करके बोना चाहिए।

उर्वरकों की मात्रा :

असिंचित क्षेत्र के लिए अच्छी उपज प्राप्ति हेतु नत्रजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश की दर से तथा सिंचित क्षेत्रों में 100 कि.ग्रा. नत्रजन 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग

करें। असिंचित दशा में नत्रजन व फॉर्सफोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा तथा सिंचित दशा में नत्रजन की आधी मात्रा व फॉर्सफोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय चोरों द्वारा 2–3 सेमी. नीचे प्रयोग करें सिंचित दशा में नत्रजन की शेष आधी मात्रा टॉप ड्रेसिंग के रूप में प्रथम सिंचाई के बाद प्रयोग करें। फॉर्सफोरस के लिए सुपर फॉर्सफेट का प्रयोग अधिक लाभप्रद है।

सिंचाई :

यह फसल प्रायः असिंचित रूप में बोई जाती है, परन्तु जहाँ सिंचाई का साधन उपलब्ध है वहाँ दो सिंचाई पहली फूल आने पर तथा दूसरी दाना बनते समय करने से उपज में बढ़ोत्तरी होती है।

फसल सुरक्षा :

(क) प्रमुख कीट :

1. गालमिज :

इस कीट का मैगट फसल की खिलती कलियों के अन्दर पुंकेसर को खाकर नुकसान पहुँचाता है, जिससे फलियों में दाने नहीं बनते हैं।

2. बालदार सूँड़ी :

सूँड़ी काले रंग की होती है तथा पूरा शरीर बालों से ढका रहता है। सूँड़ियाँ प्रारम्भ में झुण्ड में रह कर पत्तियों को खाती हैं तथा बाद में पूरे खेत में फैल कर पत्तियों को खाती हैं। तीव्र प्रकोप की दशा में पूरा पौधा पत्ती विहीन हो जाता है।

आर्थिक क्षति स्तर : फलियां बनते समय 5 प्रतिशत प्रकोपित कलियों के समय फसल उपचार की विधि अपनानी चाहिए।

नियंत्रण के उपाय :

1. गर्मी में गहरी जुताई करना चाहिए।

2. संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।

3. गालमिज के नियंत्रण हेतु अवरोधी प्रजातियाँ जैसे नीलम, गरिमा, श्वेता की बुवाई करनी चाहिए।

4. अकट्टूबर के तीसरे सप्ताह तक बुवाई करने से गालमिज का प्रकोप कम होता है।

5. चना, राई/सरसों एवं कुसुम के साथ सहफसली खेती करने से गालमिज का प्रकोप कम हो जाता है।

6. यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर पार कर गया हो तो निम्नलिखित कीटनाशों का प्रयोग करना चाहिए—

- ◆ गालमिज के नियंत्रण हेतु ऑक्सीडेमेटान-मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.00 लीटर अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 प्रतिशत एस.एल. की 750 मिली. 600–750 लीटर पानी में घोलकर प्रति है. छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ बालदार सूँड़ी के नियंत्रण के लिए मैलाथियान 5 प्रतिशत डी.पी. की 20–25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बुरकाव अथवा मैलाथियान 50 प्रतिशत ई.सी. की 1.50 लीटर अथवा क्यूनालफॉस 25 प्रतिशत ई.सी. की 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से 600–750 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

(ख) प्रमुख रोग :

1. उकठा :

रोगग्रस्त पौधों की पत्तियाँ नीचे से ऊपर की ओर पीली पड़ने लगती हैं तथा बाद में पूरा पौधा सूख जाता है।

2. अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा :

इस रोग में पत्तियों के ऊपरी सतह पर गहरे कत्थई रंग के धब्बे बनते हैं, जो गोल छल्ले के रूप में पत्तियों पर स्पष्ट दिखाई दते हैं। तीव्र प्रकोप की दशा में धब्बे आपस में मिल जाते हैं, जिससे पूरी पत्ती झुलस जाती है। यह रोग तने, शाखाओं एवं फलियों को भी प्रभावित करता है। तीव्र प्रकोप की दशा में फलियाँ काली होकर मर जाती हैं।

3. गेरुई :

इस रोग में पत्तियों, पुष्क्रम तथा तने पर नारंगी रंग के फफोले बनते हैं, जिससे पत्तियाँ पीली होकर सूखने लगती हैं।

4. बुकनी रोग :

इस रोग में पत्तियों पर सफेद चूर्ण दिखाई देते हैं, जिससे बाद में पत्तियाँ सूख जाती हैं।

नियंत्रण के उपाय :

1. बीज उपचार :

- ◆ उकठा रोग के नियंत्रण हेतु ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत / ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 4.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।
- ◆ अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग के नियंत्रण हेतु थीरम 75 प्रतिशत डब्लू.एस. 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजशोधन कर बुवाई करना चाहिए।

2. भूमि उपचार :

- ◆ भूमि जनित एवं बीज जनित रोगों के नियंत्रण हेतु बॉयोपेस्टीसाइड ट्राइकोडर्मा विरिडी 1 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा ट्राइकोडर्मा हरजिएनम 2 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.5 किग्रा. प्रति हे.60–75 किग्रा. सड़ी हुए गोबर की खाद में मिलाकर हल्के पानी का छींटा देकर 8–10 दिन तक छाया में रखने के उपरान्त बुवाई के पूर्व आखिरी जुताई पर भूमि में मिला देने से अलसी के बीज / भूमि जनित रोगों के प्रबन्धन में सहायक होता है।

3. पर्णीय उपचार :

- ◆ अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा एवं गेरुई रोग के नियंत्रण हेतु मैंकोज़ेब 75 डब्लू.पी. की 2.0 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर 600–750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।
- ◆ बुकनी रोग के नियंत्रण हेतु घुलनशील गंधक 80 प्रतिशत डब्लू.पी. की 2.50 किग्रा. प्रति हेक्टेयर 600–750 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

(ग) प्रमुख खरपतवार :

बथुआ, सेन्जी, कृष्णनील, हिरनखुरी, चटरी—मटरी, अकरा—अकरी, जंगली गाजर, गाजर, प्याजी, खरतुआ, सत्यानाशी आदि।

नियंत्रण के उपाय :

- ◆ खरपतवार नियंत्रण हेतु पेणडीमेथलीन 30 प्रतिशत ई.सी. की 3.30 लीटर प्रति हेक्टेयर 800—1000 लीटर पानी में घोलकर पलैटफैन नाजिल से ब्रुवाई के 2—3 दिन के अन्दर समान रूप से छिड़काव करें।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ संस्तुत प्रजातियों के प्रमाणित बीज प्रयोग करें।
- ◆ संतुलित मात्रा में उर्वरक प्रयोग करें।
- ◆ सिंचाई उपलब्ध होने पर फूल आने के समय कम से कम एक सिंचाई अवश्य करें।
- ◆ गालमिज के नियंत्रण के लिए कली बनते समय ही किसी कीटनाशक का छिड़काव कर दिया जाये।



34. कुसुम की उन्नतशील खेती

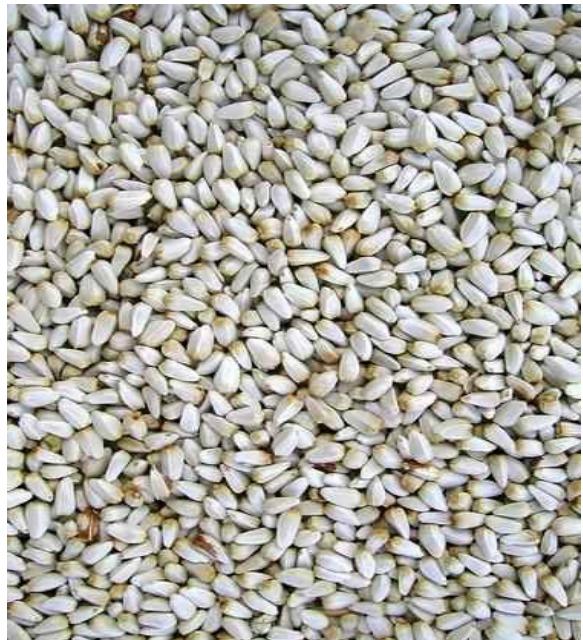
कुसुम की खेती सीमित सिंचाई की दशा में अधिक लाभदायक होती है। मुख्यतः इसकी खेती बुंदेलखण्ड में की जाती है। अन्य तिलहनी फसलों की अपेक्षा पूर्वी मैदानी क्षेत्र के किसान कुसुम की खेती कम करते हैं।

खेत की तैयारी :

खेत की अच्छी तैयारी करके इसकी बुवाई की जाये। अच्छे जमाव के लिए बुवाई पर्याप्त नमी वाले खेतों में ही करें।

उन्नतशील प्रजातियाँ :

कुसुम की अच्छी प्रजाति के 65 है, जो 180 से 190 दिन में पकती है। इसमें तेल की मात्रा 30 से 35 प्रतिशत है और औसत उपज 14 से 15 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। दूसरी प्रजाति मालवीय कुसुम 305 है जो 160 दिन में पकती है। इसमें तेल की मात्रा 36 प्रतिशत है।



बीज दर :

18—20 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

बुवाई का समय एवं विधि :

बुवाई का उचित समय मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर है। इसकी बुवाई 45 सेमी. कतार की दूरी पर कूँड़ों में करें बुवाई के 15—20 दिन बाद अतिरिक्त पौधे निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 20 से 25 सेमी. कर दी जाये। बीज को 3 से 4 सेमी. की गहराई पर बोयें।

उर्वरकों की मात्रा :

उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी परीक्षण की संस्तुतियों के आधार पर करें अन्यथा नत्रजन 40 किग्रा. एवं 20 किग्रा. फॉस्फोरस का प्रयोग अधिक लाभकारी होता है। उर्वरकों का प्रयोग उन्नतशील बुवाई कृषि यंत्र द्वारा 3 से 4 सेमी. की गहराई पर करना चाहिए ताकि खाद का पूरा लाभ फसल को मिल सके।

निराई—गुड़ाई :

बुवाई के 20—25 दिन बाद निराई—गुड़ाई करें। अनावश्यक पौधों को निकालते हुए पौधों की दूरी 20—25 सेमी. कर दें।

सिंचाई :

प्रायः इसकी खेती असिंचित क्षेत्रों में की जाती है यदि सिंचाई के साधन हैं तो एक सिंचाई फूल आते समय करें।

फसल सुरक्षा :

खड़ी फसल में कभी—कभी गेरुई रोग तथा माहूँ कीट का प्रकोप हो जाता है, जिससे फसल को भारी क्षति होती है, अतः आवश्यकतानुसार इनकी रोकथाम निम्नलिखित विधि से करना चाहिए—

1. **गेरुई रोग की पहचान :** पत्तियों पर पीले अथवा भूरे रंग के फफोले पड़ जाते हैं।

उपचार : इस रोग की रोकथाम के लिए मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2 किग्रा. अथवा जिनेब 75 प्रतिशत 2.5 किग्रा. को 800—1000 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से 10—14 दिन के अन्तर पर 3—4 बार छिड़काव करें।

2. **झुलसा रोग :** लक्षण एवं उपचार राई/सरसों की भाँति करें।

3. **माहूँ कीट की पहचान :** यह कीट काले रंग के होते हैं, जो समूह में पुष्प/पत्तियों/कोमल शाखाओं पर चिपके रहते हैं तथा रस चूसकर क्षति पहुँचाते हैं।

उपचार : इस कीट की रोकथाम के लिए निम्नलिखित किसी एक रसायन का छिड़काव प्रति हेक्टेयर की दर से करें तथा आवश्यकता पड़ने पर 15—20 दिन के अन्तर पर पुनः छिड़काव करें—

- ◆ मैलाथियान 50 ई.सी. 2 लीटर प्रति हेक्टेयर अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 प्रतिशत एस.एल. 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर।
- ◆ ऑक्सीडेमेटान—मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कटाई—मङ्गाई :

फसल पकने पर पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तभी इसकी कटाई करनी चाहिए। सूखने के बाद मङ्गाई करके दाना अलग कर देना चाहिए।



35. जायद मक्का की उन्नतशील खेती

जायद में मक्का की खेती भुट्टे एवं चारे दोनों के लिए की जाती है। आधुनिक खान-पान के कारण अधिकांश भारतीय और विदेशी व्यंजनों में मक्का का प्रयोग आम हो गया है। हालांकि पहले मक्के का इस्तेमाल सिर्फ ब्रेड और कॉर्न सिरप बनाने के लिए ही किया जाता था। लेकिन आज मक्के से कॉर्न फ्लेक्स, पॉपकॉर्न और यहाँतक कि पास्ता, पिज्जा और सैंडविच तक में मक्के का प्रयोग होने लगा है।

रबी की फसल कटाई के बाद जब खेत खाली हो जाएं तब किसान जायद की मक्का की बुआई करते हैं। इससे किसानों को कम समय में अधिक लाभ मिलता है। जहाँ सिंचाई के साधन होते हैं, वहाँ जायद की फसल के रूप में मक्का की खेती की जाती है।

भूमि का चुनाव :

मक्का की खेती के लिए पर्याप्त जीवांश वाली दोमट भूमि अच्छी होती है। भली—भाँति समतल एवं अच्छी जल धारण क्षमता वाली भूमि मक्का की खेती के लिए उपयुक्त होती है।

भूमि की तैयारी :

पलेवा करने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से 10—12 सेमी. गहरी एक जुताई तथा उसके बाद कल्टीवेटर या देशी हल से दो—तीन जुताइयां करके पाटा लगाकर खेत की तैयारी कर लेनी चाहिए।

संस्तुत प्रजातियाँ :

क्रं. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना वर्ष	पकने की अवधि दिन	उपज कु./हे.
अ.	संकुल प्रजातियाँ			
1.	नवीन	1982	75—80	35—40
2.	नवजोत	1983	75—80	35—40
3.	कंचन	1986	70—75	35—40
4.	श्वेता	—	75—80	35—40
5.	आजाद उत्तम	1991	75—80	35—40
6.	गौरव	1999	70—75	35—40
7.	प्रताप कंचन—2	2009	60—65	45—55
ब.	संकर प्रजातियाँ :			
1.	प्रकाश	—	70—75	35—40
2.	पूसा अगेती संकर मक्का—2	1997	70—75	35—40
3.	जे.एच. 3459	2001	70—75	35—40
4.	मालवीय संकर मक्का—2	2007	80—85	40—45
5.	एन.एम.एच.—920	2012	110—115	60—70
6.	एन.एम.एच.—803	2012	75—90	60—65
7.	एल.जी. 32—81	2013	90—95	60—75

क्रं. सं.	प्रजातियाँ	अधिसूचना वर्ष	पकने की अवधि दिन	उपज कु./हे.
7.	एल.जी. 32–81	2013	90–95	60–75
8.	सी.ओ.एच. (एम) 8	2014	90–95	65–70
9.	पी.ए.सी.–751	2019	100–105	65–70
10.	दक्कन–115	—	80–85	40–45
11.	पी.ए.सी.–740	.	110–115	50–60
12.	एम.एम.एच.–133	—	80–85	40–45
13.	प्रो.–4212 (बेबी कार्न हेतु भी उपयुक्त)	—	80–85	40–45
14.	एच.क्यू.पी.एम. 15	—	85–90	45–50
स.	हरे भुट्टे हेतु			
1.	संकुल			
2.	माधुरी (मीठी मक्का)	—	50–55	35–40
3.	प्रिया (मीठी मक्का)	—	50–55	35–40
4.	विन आरेंज (मीठी मक्का)	—	50–55	35–40
द.	शिशु मक्का हेतु	उपज (कु./हे.) छिलका सहित	छिलका सहित लम्बाई इंच	बेबी कार्न की छिलका रहित उपज
1.	आजाद कमल	45–45	4–5	15–20
2.	प्रकाश	45–50	4–5	16–18
3.	पूसा अगोती संकर मक्का–2	45–50	5–6	16–18
4.	एच.एम.–4	45–50	7–8	15–2

शिशु मक्का के लिए भूआ (सिलकिंग स्टेज) निकलते ही उन्हें तोड़ देना चाहिए। इससे शिशु भुट्टे अधिक निकलते हैं।

बुवाई का समय :

मक्का की बुवाई के लिए फरवरी का प्रथम सप्ताह सर्वोत्तम है। बुवाई 20 फरवरी तक अवश्य कर लेना चाहिए। विलम्ब करने से जीरा निकलते समय गर्म हवायें चलने पर सिल्क तथा पराग कणों के सूखने की सम्भावना रहती है, जिससे दाना नहीं पड़ता है।

बीज दर :

20–25 किग्रा. संकुल एवं 18–20 किग्रा. संकर बीज प्रति हेठो पर्याप्त होता है। बीज को 2.5 ग्राम थीरम या 2 ग्राम कार्बन्डाजिम रसायन से प्रति किलो बीज को शोधित करके बोये।

बुवाई की विधि :

मक्का की बुवाई हल के पीछे उठे हुये बेड पर लाइनों में करें। संकर व संकुल प्रजातियों की बुवाई 60 सेमी. की दूरी पर करनी चाहिए। पौधे से पौधे की दूरी 20–25 सेमी. रखनी चाहिए। मीठी मक्का की बुवाई अन्य प्रजातियों से लगभग 400 मीटर की दूरी पर करना चाहिए।

नोट : शेष क्रियाएं खरीफ मक्का की भाँति करें।

36. जायद मूँग की उन्नतशील खेती

मूँग जायद की प्रमुख फसल है। दलहनी फसलों में मूँग की बहुमुखी भूमिका है। इससे पौष्टिक तत्व प्रोटीन प्राप्त होने के अलावा फली तोड़ने के बाद फसलों को भूमि में पलट देने से यह हरी खाद की पूर्ति भी करता है।

भूमि की तैयारी :

मूँग की खेती के लिए दोमट भूमि उपयुक्त रहती है। पलेवा करके दो जुताई करने से खेत तैयार हो जाता है। यदि नमी की कमी हो तो दोबारा पलेवा करके बुआई की जाए। ट्रैक्टर, पावर टिलर रोटोवेटर या अन्य आधुनिक कृषि यंत्र से खेत की तैयारी शीघ्रता से की जा सकती है।

संस्तुत प्रजातियाँ :

अच्छी उपज लेने के लिए कम समय में पककर तैयार होने वाली निम्न प्रजातियाँ उपयुक्त रहती हैं।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ रोगरोधी प्रजातियों की बुवाई करें।
- ◆ गर्मी में गहरी जुताई करें।
- ◆ पंक्तियों में बुवाई करें।
- ◆ विरलीकरण किया जाय।
- ◆ बीजोपचार एवं बीज शोधन अवश्य करें।
- ◆ सल्फर एवं फास्फोरस का प्रयोग करें।

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	विशेषता	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु / हेक्टेयर	कीट रोग ग्राहिता उपयोगिता	उपयुक्त क्षेत्र
1.	नरेन्द्र मूँग-1	1992	दाना धूमिल	65-70	11-13	पीला मौजेक	सम्पूर्ण उ.प्र.
2.	मालवीय जाग्रति (एच.यू.एम-2)	2000	हरा दाना	65-70	12-15	सहिष्णु, तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
3.	सम्राट पी.डी.एम-139)	2001	हरा चमकीला	60-65	9-10	पीला मौजेक अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
4.	मालवीय जनप्रिया (एच.यू.एम.-6)	2001	-	60-65	12-15	तदैव	सम्पूर्ण उ. प्र.
5.	आजाद मूँग-1 (के. एम.- 2342)	2020	चमकदार हरे रंग का मध्यम बोल्ड दाना	62-65	10-12	एम.वाई.एम.वी., सी.एल.एस., एथ्कनोस, लीफ क्रिन्कल एवं वेब ब्लाइट अवरोधी एवं ह्लाइट फ्लाई, जैसिड एवं थ्रिप्स अवरोधी।	सम्पूर्ण उ. प्र.
6.	आई.पी.एम. 312-20	2020	हरे एवं मध्यम बड़े दाने	65-85	6-7	एम.वाई.एम.वी., पउडरी मिल्ड्यू सर्कार्स्पोरा लीफ स्पाट के प्रति अवरोधी एवं सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स के प्रति अवरोधी।	सम्पूर्ण उ. प्र.

जायद फसलों की खेती

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	विशेषता	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु./ हेक्टेयर	कीट रोग ग्राहिता उपयोगिता	उपयुक्त क्षेत्र
7.	आई.पी.एम.-409-4 (हीरा)	2020	हरे एवं मध्यम बड़े दाने	65-80	6-7	एम.वाई.एम.वी., सर्कोस्पोरा लीफ स्पाट के प्रति उच्च अवरोधी, लीफ क्रिन्कल एवं लीफ कर्ल रोग के प्रति अवरोधी, थ्रिप्स के प्रति अवरोधी।	सम्पूर्ण उ.प्र.
8.	मेहा (आई.पी.एम.-99-125)	2005	—	60-65	12-15	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
9.	पूसा विशाल	2001	बड़ा चमकीला	60-65	12-14	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
10.	एच.यू.एम.-16 (मालवीय जनकल्याणी)	2006	—	55-60	11-12	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
11.	मालवीय ज्योति (एच.यू.एम.-1)	1999	—	65-70	14-16	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
12.	टी.एम.वी.-37 टी.बी.एम.-37 (टी.एम.-99.37)	2005	—	60-65	12-14	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
13.	मालवीय जन चेतना (एच.यू.एम-12)	2003	—	60-62	12-14	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
14.	आई.पी.एम-2-3	2009	—	65-70	10.0	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
15.	आई.पी.एम-2-14	2011	—	62-65	10-11	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
16.	के.एम.-2241 (खेता)	2009	—	60-62	12-14	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
17.	के.एम.-2195 (स्वाती)	2012	—	65-70	8-10	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
18.	आई.पी.एम.-205-7 (विराट)	2016	—	52-55	10-12	अवरोधी पीला मोजेक, पाउड्री मिल्ड्यू	सम्पूर्ण उ.प्र.
19.	आई.पी.एम.-410-3 (शिखा)	2016	—	60-70	11-12	पीला मोजेक, पाउड्री मिल्ड्यू उच्च अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.
20.	कनिका (आई.पी.एम.-302-2)	2018	—	65-72	9-10	पीला मोजैक, सर्कोस्पोरा स्पॉट उच्च अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र
21.	वर्षा (आई.पी.एम.-2के-14-9)	2018	—	56-80	5-6	पाउडरी मिल्ड्यू पीला मोजैक उच्च अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प
22.	हीरा (आई.पी.एम.-409-4)	2020	—	60-70	10-11	पीला मोजैक उच्च अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	विशेषता	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु./ हेक्टेयर	कीट रोग ग्राहिता उपयोगिता	उपयुक्त क्षेत्र
23.	वसुधा (आई.पी.एम. —312—20)	2020	—	65—75	10—11	तदैव	सम्पूर्ण उ.प्र.
24.	सूर्या (आई.पी.एम.—512—1)	2020	—	62—80 (मध्यम आकार का चमकीला दाना)	13—14	तदैव	पूर्वी उ.प्र.
25.	आजाद मूँग—1 (के.एम.—2342)	2020	—	65—70	8—10	एम.वाई. एम.पी. के प्रति मध्यम अवरोधी	सम्पूर्ण उ.प्र.

बुआई का समय : मूँग की बुआई के लिए उपयुक्त समय 10 मार्च से 10 अप्रैल तक है। बुआई में देर करने से फल एवं फलियां गर्म हवा के कारण तथा वर्षा होने से क्षतिग्रस्त हो सकती है। तराई क्षेत्र में मूँग की बुआई मार्च के अन्दर कर लेनी चाहिए। अप्रैल माह में शीघ्र पकने वाली प्रजातियां ही बोई जाये। बसंत कालीन प्रजातियों की बुआई 15 फरवरी से 15 मार्च तक तथा ग्रीष्म कालीन प्रजातियों के लिए 10 मार्च से 10 अप्रैल का समय उपयुक्त होता है। जहाँ बुआई अप्रैल के प्रथम सप्ताह के आसपास हो वहाँ प्रजाति सम्प्राट एवं एच.यू.एम.—16 की बुआई की जाय।

बीज दर : 20—25 किग्रा। स्वरथ बीज प्रति हे. पर्याप्त होता है।

नोट : अन्य क्रियाएं खरीफ मूँग की भाँति करें।

बीज उपचार : बीज शोधन करने के पश्चात् बीजों को एक बोरे पर फैलाकर, मूँग के विशिष्ट राइजोबियम कल्वर से उपचारित करें। आधा लीटर पानी में 50 ग्राम गुड़ एवं 200 ग्राम राइजोबियम कल्वर का पूरा पैकेट मिला दें इस मिश्रण को 10 किग्रा बीज के ऊपर छिड़कर हल्के हाथ से मिलायें जिससे बीज के ऊपर एक हल्की पर्त बन जाती है। इस बीज को छाये में 1—2 घन्टे सुखाकर बुआई प्राप्त: 9 बजे तक या सायंकाल 4 बजे के बाद करें। तेज धूप में कल्वर के जीवाणुओं के मरने की आशंका रहती है। ऐसे खेतों में जहाँ मूँग की खेती पहली बार अथवा काफी समय के बाद की जा रही हो, वहाँ कल्वर का प्रयोग अवश्य करें।

बुआई की विधि : मूँग की बुआई कूड़ों में 4—5 सेमी. की गहराई पर करें और पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25—30 सेमी. रखनी चाहिए।

सिंचाई : मूँग की सिंचाई भूमि की किस्म, तापमान तथा हवाओं की तीव्रता पर निर्भर करती है। आमतौर पर मूँग की फसल को 3—4 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। पहली सिंचाई बुआई के 25—30 दिन बाद और फिर बाद में 10 से 15 दिन के अन्तर से आवश्यकतानुसार सिंचाई की जाय। पहली सिंचाई बहुत जल्दी करने से जड़ों तथा ग्रन्थियों के विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। फूल आने से पहले तथा दाना पड़ते समय सिंचाई आवश्यक है। सिंचाई क्यारी बनाकर करना चाहिए। जहाँ स्प्रिंकलर हो वहाँ इसका प्रयोग उत्तम जल प्रबन्ध हेतु किया जाय।

नोट : अन्य क्रियाएं खरीफ मूँग की भाँति करें।



37. जायद उर्द की उन्नतशील खेती

उर्द प्रदेश की एक मुख्य दलहनी फसल है। इसकी खेती मुख्य रूप से खरीफ में की जाती है लेकिन जायद में समय से बुआई सघन पद्धतियों को अपनाकर करने से अच्छी पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

भूमि की तैयारी : जायद में उर्द की खेती के लिए हल्की दोमट, तथा मटियार भूमि उपयुक्त रहती है। पलेवा करके एक दो जुताई देशी हल अथवा कल्टीवेटर से करके खेत तैयार हो जाता है। हर जुताई के बाद पाटा लगाना आवश्यक है, जिससे नमी बनी रहे। पावर टिलर या ट्रैक्टर से खेत की तैयारी जल्दी हो जाती है।

प्रजातियाँ : सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश के लिए संस्तुत हैं –

क्र. सं.	प्रजाति	अधिसूचना वर्ष	पकने की अवधि (दिन)	उपज कु./ हेक्टेयर	कीट रोग ग्राहिता उपयोगिता
1.	टाईप.-9	1982	75–80	6–8	पीला मौजेक सहिष्णु
2.	नरेन्द्र उर्द-1 (NDU-88.8)	1993	75–80	8–10	पीला मौजेक अवरोधी
3.	आजाद उर्द-1 (KU-91.2)	1999	70–75	8–10	पीला मौजेक अवरोधी
4.	उत्तरा	—	80–85	8–11	पीला मौजेक अवरोधी
5.	आजाद उर्द-2 (KU.91)	2001	70–75	10–12	पीला मौजेक अवरोधी
6.	शेखर-2 (KU-300)	2001	75–80	10–12	पीला मौजेक अवरोधी
7.	आई.पी.यू. 2–43	2009	70–75	10–12	पीला मौजेक अवरोधी
8.	सुजाता	1999	70–75	10–12	पीला मौजेक अवरोधी
9.	माश-479	2011	70–75	11–12	पीला मौजेक अवरोधी
10.	वल्लभ उर्द-1	2015	70–75	10–11	पीला मौजेक अवरोधी
11.	विश्वास (NUL-T)	2012	65–70	10–11	मुख्य रोग सहिष्णु
12.	पी.यू.-40	2008	70–75	14–15	—
13.	आई.पी.यू.-11-2	2019	75–80	7–8	पीला मौजेक, पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी
14.	आई.पी.यू.-13-1	2019	75–80	8–9	तदैव
15.	प्रताप उर्द-1	2013	74–76	10–11	पीला मौजेक, लीफ क्रिन्कल मध्यम अवरोधी
16.	पन्त उर्द-10	2020	65–70	10–15	पीला मौजेक, पाउडरी मिल्ड्यू अवरोधी
17.	आ.पी.यू.-13-1	2020	74–80	6–7	यलो मौजेक वायरस, पाउडरी मिल्ड्यू सर्कोस्पोरा लीफ स्पॉट, एन्ट्रिकिनोज लीफ क्रिन्कल एवं बैकटीरियल लीफ ब्लाइट के प्रति अवरोधी।

नरन्द्र उर्द—1 प्रजाति की बुआई फरवरी के अन्दर अवश्य करें।

बीजोपचार एवं बीज शोधन : मूँग की तरह करें।

बीज की मात्रा : उर्द का पौधा जायद में कम बढ़ता है अतः 25 – 30 किग्रा. बीज प्रति हे. बुआई हेतु प्रयोग करें।

बुआई की विधि : उर्द की बुआई कूँड़ों में करना चाहिए। कूँड़ से कूँड़ की दूरी 25–30 सेमी. रखना चाहिए। बुआई के तुरन्त बाद पाटा लगा देना चाहिए।

बुआई का समय : बुआई का उपयुक्त समय 15 फरवरी से 15 मार्च।

उर्वरकों का प्रयोग : सामान्यतः उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण की संस्तुतियों के अनुसार किया जाना चाहिए अथवा उर्वरक की मात्रा निम्नानुसार निर्धारित की जाय। 15–20 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस 20 किग्रा. पोटाश एवं 20 किग्रा. गन्धक प्रति हे. प्रयोग करें।

फास्फोरस प्रयोग से दाने की उपज में विशेष वृद्धि होती है। उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा बुआई के समय कूँड़ों में बीज से 2–3 सेमी. नीचे देनी चाहिए। यदि सुपरफास्फेट उपलब्ध न हो तो 1 कुन्तल डी.ए.पी. तथा 2 कुन्तल जिप्सम का प्रयोग बुआई के समय किया जाय।

सिंचाई : पहली सिंचाई 30–35 दिन बाद करनी चाहिए। पहली सिंचाई बहुत जल्दी करने से जड़ों तथा ग्रन्थियों का विकास ठीक प्रकार नहीं होता है। बाद में आवश्यकतानुसार 10 से 15 दिन बाद हल्की सिंचाई करते रहे। स्प्रिंकलर से सिंचाई अत्यधिक लाभप्रद रहता है।

खरपतवार नियंत्रण : मूँग की भाँति करें।

फसल सुरक्षा : उर्द में प्रायः पीला चित्रवर्ण (मोजैक) रोग का प्रकोप होता है। इस रोग के विषाणु सफेद मक्खी द्वारा फैलते हैं।

नियंत्रण :

1. समय से बुआई करनी चाहिए।
2. पीला चित्रवर्ण (मोजैक) अवरोधी प्रजातियों की बुआई करनी चाहिए।
3. पीला चित्रवर्ण (मोजैक) प्रकोपित पौधे दिखते ही सावधानी पूर्वक उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए या गड्ढे में गाड़ दें।
4. 5 से 10 प्रौढ़ मक्खी (सफेद मक्खी) प्रति पौध की दर से दिखाई पड़ने पर ऑक्सीडेमेटान–मिथाइल 25 ई.सी. या डाईमिथोएट 30 ई.सी. 1 लीटर प्रति हे. की दर से 600 – 800 ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

थ्रिप्स : इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ दोनों पत्तियों एवं फूलों से रस चूसते हैं। भारी प्रकोप होने पर पत्तियों से रस चूसने के कारण वे मुड़ जाती हैं तथा फूल गिर जाते हैं, जिससे उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

नियन्त्रण : आक्सीडेमेटान–मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर या डायमिथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 250 मिली. / हे. की दर से प्रति हे. की दर से 500–700 ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

हरे फुदके : इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु दोनों पत्तियों से रस चूस कर उपज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं।

नियन्त्रण : थ्रिप्स के लिए बताये गये कीटनाशियों के प्रयोग से हरे फुदके का नियंत्रण किया जा सकता है।

फलीवेधक : किन्हीं—2 वर्षों में फली वेधकों से फसल को काफी हानि होती है। इनके नियंत्रण के लिए इन्डोक्साकार्ब 15.8 प्रतिशत 500 मिली. अथवा क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी. 1.25 लीटर प्रति हे. की दर से 600—800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई एवं भण्डारण : फसल पूरी तरह पक जाने पर जब फलियाँ काली हो जाये तो कटाई करना चाहिए। उर्द की फलियाँ एक साथ ही पक जाती हैं तथा चिटकती नहीं हैं। अतः फसल की कटाई एक साथ ही की जा सकती है। भण्डारण मूँग की भाँति करें। नीम की पत्तियों का भी प्रयोग करना चाहिए।

प्रमुख बिन्दु :

- ◆ उर्द की बुआई 15 फरवरी से 15 मार्च तक।
- ◆ सुपर फास्फेट का प्रयोग बेसल ड्रेसिंग में अधिक लाभदायक रहता है।
- ◆ पहली सिंचाई बुआई के 30—35 दिन बाद करें
- ◆ बीजोपचार राइजोबियम कल्चर एवं पी.एस.बी. से अवश्य करें।
- ◆ यदि आलू के बाद उर्द की फसल ली जाती है तो नत्रजन के प्रयोग की आवश्यकता नहीं है।
- ◆ थ्रिप्स के लिए निगरानी रखें। प्रथम सिंचाई के पहले नियंत्रण हेतु सुरक्षात्मक छिड़काव करें।



38. जायद सूरजमुखी की उन्नतशील खेती

सूरजमुखी की खेती खरीफ, रबी एवं जायद तीनों ही मौसमों में की जा सकती है परन्तु खरीफ में, सूरजमुखी पर अनेक रोग एवं कीटों का प्रकोप होता है। फूल छोटे होते हैं तथा उनमें दाना भी कम पड़ता है। जायद में सूरजमुखी की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है।

भूमि एवं जलवायु :

सूरजमुखी की खेती सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है, परन्तु अधिक जल रोकने वाली भारी भूमि उपयुक्त है। निश्चित सिंचाई वाली सभी प्रकार की भूमि में अम्लीय व क्षारीय भूमि को छोड़कर इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

खेत की तैयारी :

खेत में पर्याप्त नमी न होने की दशा में पलेवा लगाकर जुताई करनी चाहिए। आलू, राई, सरसो अथवा गन्ना आदि के बाद खेत खाली होते ही एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा देशी हल से 2-3 बार जोतकर मिट्टी भुरभुरी बना लेनी चाहिए। रोटावेटर से खेत की तैयारी शीघ्र हो जाती है।

प्रजातियां एवं उनके गुण :

क्र. सं.	प्रजाति	पकने की अवधि (दिन)	पौधों की ऊँचाई (सेमी.)	मुँडक का व्यास से.मी.)	अधिकतम उपज क्षमता (कु. / हे.)	औसत उपज (कु. / हे.)	तेल प्रतिशत
(अ)	संकुल						
	1. मार्डन	75-80	80-100	12-15	18.00	10-12	34-38
	2. सूर्या	80-85	75-110	12-15	15.00	12-15	35-37
	3. पी.बी.एन.एस.-40	48-128	78-100	12-15	15.79	10-15	27-28
(ब)	संकर						
	3. के.वी.एस.एच.-1	90-95	150-180	15-20	30.00	18-20	43-45
	4. एस.एच..3322	90-95	135-175	15-20	28.00	22-25	40-42
	5. एम.एस.एफ.एच.17	90-95	140-150	15-20	28.00	18-20	35-40
	6. वी.एस.एफ.-1	90-95	140-150	15-20	28.00	18-20	35-40

बुवाई का समय तथा विधि :

जायद में सूरजमुखी की बुआई का उपयुक्त समय फरवरी का दूसरा पखवारा है, जिससे फसल मई के अन्त या जून के प्रथम सप्ताह तक पक जाय। बुआई में देर करने से वर्षा शुरू हो जाने के बाद पैदावार में नुकसान होता है। बुआई कतारों में हल के पीछे 4-5 सेमी. की गहराई पर करनी चाहिए। लाइन से लाइन की दूरी 45 सेमी. होनी चाहिए और बुआई के 15-20 दिन बाद सिंचाई से पूर्व थिनिंग (विरलीकरण) द्वारा पौधों से पौधों की आपसी दूरी 15 सेमी. कर देनी चाहिए। 10 मार्च तक बुआई अवश्य पूरी कर लें।

बीज दर :

एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 12 से 15 किग्रा. स्वस्थ संकुल प्रजाति का प्रमाणित बीज पर्याप्त होता है, जब कि संकर प्रजाति का 5–6 किग्रा. बीज प्रति है. उपयुक्त रहता है। यदि बीज का जमाव 70 प्रतिशत से कम हो तो तदनुसार बीज की मात्रा बढ़ा देना चाहिए।

बीज शोधन :

बीज को 12 घण्टे पानी में भिगोकर छाया में 3–4 घण्टे सुखाकर बोने से जमाव शीघ्र होता है। बोने से पहले प्रति किग्रा. बीज को कार्बन्डाजिम की 2 ग्राम मात्रा या थीरम की 2.5 ग्राम मात्रा में से किसी एक रसायन से शोधित कर लेना चाहिए।

उर्वरक :

सामान्यतः उर्वरक का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। मिट्टी परीक्षण न होने की दशा में संकुल में 80 किग्रा. संकर में 100 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फास्फोरस एवं 40 किग्रा. पोटाश प्रति है. पर्याप्त होता है। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय कूँड़ों में प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा बुआई के 25–30 दिन बाद टाप ड्रेसिंग के रूप में देनी चाहिए। अगर आलू के बाद बुआई की जा रही है तो उर्वरकों की मात्रा 25 प्रतिशत तक कम की जा सकती है। सूरजमुखी की खेती में 200 किग्रा. जिप्सम प्रति है. का प्रयोग बुआई के समय अवश्य करना चाहिए। इसकी खेती में 3 से 4 टन गोबर की कम्पोस्ट खाद प्रति है. का प्रयोग लाभप्रद पाया गया है।

सिंचाई :

हल्की भूमि में जायद में सूरजमुखी की अच्छी फसल के लिए 4–5 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है तथा भारी भूमि में 3–4 सिंचाइयां क्यारियां बनाकर करनी चाहिए। पहली सिंचाई बोने के 20–25 दिन बाद आवश्यक है। फूल निकलते समय तथा दाना भरते समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। इस अवस्था में सिंचाई बहुत सावधानी पूर्वक करनी चाहिए ताकि पौधे न गिरने पाये। सामान्यतः 10 से 15 दिनों के अन्तर पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। प्रारम्भिक अवस्था की सिंचाई स्प्रिकलर द्वारा किया जाय तो लाभप्रद होती है।

खरपतवार नियंत्रण :

यांत्रिक विधि से खरपतवार नियंत्रण करना उपयुक्त है। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु पेन्डिमेथेलिन 30 प्रतिशत की 3.3 लीटर मात्रा प्रति है. के हिसाब से 500–700 लीटर पानी में घोल बनाकर बुआई के बाद 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव करना चाहिए।

मिट्टी चढ़ाना :

सूरजमुखी का फूल काफी बड़ा होता है, जिससे पौधों के गिरने का भय रहता है। अतः नत्रजन की टाप ड्रेसिंग के बाद एक बार पौधों पर 10 से 15 सेमी. मिट्टी चढ़ा देना अच्छा होता है।

परसेंचन क्रिया :

सूरजमुखी एक परसेंचित फसल है। इसमें अच्छे बीज पड़ने हेतु परसेंचन क्रिया नितान्त आवश्यक है। यह क्रिया भौरों एवं मधु—मक्खियों के माध्यम से होती है। जहाँ इनकी कमी हो हाथ द्वारा परसेंचन की क्रिया अधिक प्रभावकारी है। अच्छी तरह फूल आ जाने पर हाथ में दस्ताने पहनकर या किसी मुलायम रोंयेदार कपड़े को लेकर सूरजमुखी के मुँडकों पर चारों ओर धीरे से घुमा दें पहले फूल के किनारे वाले भाग पर, फिर बीच के भाग पर यह क्रिया प्रातःकाल 7:30 बजे तक करनी चाहिए। यह क्रिया एक दिन के अन्तराल पर सप्ताह में कम से कम तीन बार करें।

फसल सुरक्षा :

1. **दीमक** : इस कीट के श्रमिक फसल को भारी क्षति पहुँचाते हैं।

नियन्त्रण : बुआई से पूर्व

- अ. पूर्व फसल के अवशेषों को नष्ट कर देना चाहिए।
- ब. गुणवत्ता युक्त कम्पोस्ट खाद का ही प्रयोग करना चाहिए।
- स. दीमक के नियंत्रण हेतु 2.5 किग्रा. ब्यूवेरिया बैसियाना को लगभग 75 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर एक सप्ताह छाया में फैलाने के बाद प्रति हे. की दर से प्रयोग करें।

खड़ी फसल में प्रकोप दिखाई देने पर :

सिंचाई के पानी के साथ क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. 2.0—3.0 लीटर प्रति हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।

हरे फुदके :

इस कीट के प्रौढ़ तथा बच्चे पत्तियों से रस—चूसकर हानि पहुँचाते हैं। इससे पत्तियों पर धब्बे पड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण हेतु नीम औयल 0.15 प्रतिशत ई.सी. 2.50 लीटर या आक्सीडेमेटान—मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर या डाइमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. की 1.00 लीटर मात्रा अथवा इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 250 मिली. की दर से 600—800 लीटर पानी के साथ मिलाकर छिड़काव करें। यह छिड़काव अपरान्ह देर से करना चाहिए ताकि परस्परेंचन क्रिया प्रभावित न हो।

डस्की बग :

सुरमई रंग की यह छोटी—छोटी बग पत्तियों, डंठल एवं मुंडक की निचली सतह से रस चूसकर हानि पहुँचाते हैं। अधिक संख्या हो जाने पर पौधे कमजोर हो जाते हैं और पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। हरे फुदकों के लिए संस्तुत उपचार इसके लिए भी प्रभावी है।

चने की फलीवेधक :

इस कीट की सूडियाँ मुंडक में बन रहे बीजों को खाकर काफी क्षति पहुँचाती है।

नियन्त्रण :

- ◆ सर्वेक्षण के लिए 8 तथा नियंत्रण के लिए 15—20 फेरोमोन ट्रैप प्रति हे. की दर से लगाना चाहिए।
- ◆ प्रति ट्रैप औसत 5—6 पतंगे प्रति रात्रि लगातार 2—3 रातों तक आने के 20—25 दिन बाद एन.पी.वी.(एच) 250—300 एल.ई. या बी.टी. की 1 किग्रा. मात्रा को 350—400 ली. पानी में घोल कर सांय काल छिड़काव करना चाहिए। क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई.सी. 2.00 लीटर या फेनवेलरेट 1.00 ली. प्रति हे. की दर से 800—1000 लीटर पानी में घोल कर सांयकाल जब मधुमक्खियाँ कम से कम क्रियाशील हो, छिड़काव करना चाहिए।

कटाई—मङ्गाई :

जब सूरजमुखी के बीज पक कर कड़े हो जायें तो मुंडकों की कटाई कर लेना चाहिए। पके हुए मुंडकों का पिछला भाग पीला भूरा रंग का हो जाता है। मुंडकों को काटकर साथे में सुखा लेना चाहिए और इन्हें ढेर बनाकर नहीं। रखना चाहिए। इसके बाद मङ्गाई डण्डे से पीटकर की जाती है। मङ्गाई हेतु सूरजमुखी थेसर का प्रयोग किया जाना उपयुक्त होगा।

उपज एवं भण्डारण :

सूरजमुखी फसल की संकुल प्रजातियों की औसत उपज 12–15 कु0 तथा संकर प्रजातियों का 20–25 कु0 प्रति हे. हो जाता है। सूरजमुखी के बीज को सामान्य परिस्थिति के अंतर्गत भण्डारित किया जा सकता है, परन्तु बीजों में नमी 8–10 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। अतः बीजों को अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। बीज से तीन महीने के अन्दर तेल निकाल लेना चाहिए अन्यथा तेल में कड़वाहट आ जाती है।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ फरवरी में बुआई अवश्य करें।
- ◆ 200 किग्रा. प्रति हे. जिप्सम का प्रयोग अवश्य करें।
- ◆ 15 दिन पर विरलीकरण कर पौधे से पौधे की दूरी 15–20 से0मी0 सुनिश्चित करें।
- ◆ क्रान्तिक अवस्थाओं में सिंचाई अवश्य करें। (फूल निकलते एवं दाना भरते समय)
- ◆ प्रथम सिंचाई के पश्चात् पौधों पर मिट्टी अवश्य चढ़ा दी जाये।



39. कपास की उन्नतशील खेती

कपास एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। व्यावसायिक जगत में यह 'श्वेत स्वर्ण' के नाम से जानी जाती है। प्रदेश में कपास के अंतर्गत 5 लाख रुई की गांठों की प्रति वर्ष आवश्यकता है। प्रदेश में व्यापक स्तर पर कपास उत्पादन की आवश्यकता है। प्रदेश में कपास की औसत उपज 2 कुन्तल/हेक्टेक्टर है, जो सभी कपास उत्पादक राज्यों से अत्यन्त कम है। आधुनिक फसल उत्पादन एवं फसल सुरक्षा तकनीक अपनाकर 15 कुन्तल/हेक्टेक्टर तक औसत उपज प्राप्त की जा सकती है तथा 15-20 हजार रुपये/हेक्टेक्टर तक का शुद्ध लाभ कपास से प्राप्त किया जा सकता है।



फसल उत्पादन तकनीक :

जलवायु :

उत्तम जमाव हेतु न्यूनतम 16° सेन्टीग्रेट तापमान, फसल बढ़वार के समय 21 से 27 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान व उपयुक्त फलन हेतु दिन में 27 से 32 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान तथा रात्रि में ठंडक का होना आवश्यक है। गूलरों के फटने हेतु चमकीली धूप व पाला रहित ऋतु आवश्यक है।

भूमि :

बलुई, क्षारीय, कंकड़युक्त व जलभराव वाली भूमियां कपास के लिए अनुपयुक्त हैं। अन्य सभी प्रकार की भूमि में कपास की सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है।

संस्तुत प्रजातियाँ :

प्रजाति	अवधि	औसत उपज (कुन्तल/हेक्टेक्टर)	रेशे की लम्बाई (मिमी.)	ओटाई (प्रतिशत)	कताई अंक
देशी					
लोहित	175-180	15	17.5	38.5	6-8
आर.जी. 8	175-180	15	16.5	39.0	6-8
सी.ए.डी. 4	145-150	16	17.5	39.4	6-7
अमेरिकन					
एच.एस. 6	165-170	12	24.8	33.4	30
विकास	150-165	16	25.6	34	30
एच. 777	175-180	16	22.5	33.8	30
एफ. 846	175-180	14	25.4	35.0	30
आर. एस. 810	165-170	15	25.2	34.2	30
आर. एस. 2013	160-165	16	26.0	35.0	30

लोहित सी.ए.डी. 4 एवं विकास उत्तर प्रदेश के लिए संस्तुत प्रजातियाँ हैं। अन्य प्रजातियाँ परीक्षणों में उत्तम पाइ गई हैं। उनमें आर.जी. - 8, आर.एस. - 810, राजस्थान की, एफ. - 846 पंजाब की एच. - 777 व एच.एस. - 6 हरियाणा की प्रजातियाँ हैं। इनकी खेती भी प्रदेश में की जा सकती है।

खेत की तैयारी :

कपास की बुआई से पूर्व दो बार पलेवा की आवश्यकता होती है। पहला पलेवा लगाकर मिट्टी पलटने वाले हल से एक गहरी जुताई (20-25 सेमी) करनी चाहिए। दूसरा पलेवा कर कल्टीवेटर या देशी हल से तीन-चार जुताई करके खेत तैयार करना चाहिए। उत्तम अंकुरण के लिए भूमि का भुरभुरा होना आवश्यक है। मथुरा, आगरा आदि जनपदों में जहाँ नलकूपों में खारा पानी है वहाँ नहरों के पानी द्वारा पलेवा कर खेत की तैयारी करें।

बीज दर : देशी प्रजाति 15 किग्रा. प्रति हे. (रेशा रहित)

अमेरिकन प्रजाति 20 किग्रा. प्रति हे. (रेशा रहित)

बीज शोधन :

बीज सुखाने के बाद कार्बन्डाजिम फफूंदनाशक द्वारा 2.5 ग्राम प्रति किग्रा. की दर से बीज शोधन करना चाहिए। फफूंदनाशक दवाई के उपचार से राइजोकटोनिया जड़ गलन फ्यूजेरियम उकठा और अन्य भूमि जनित फफूंद से होने वाली व्याधियों को बचाया जा सकता है। कार्बन्डाजिम अन्तर्प्रवाही (सिस्टेमिक) रसायन है, जिससे प्राथमिक अवस्था में रोगों के आक्रमण से बचाया जा सकता है।

बुवाई का उपयुक्त समय :

क्र.सं.	जनपद	प्रजाति	बुवाई का उपयुक्त समय
1.	मथुरा, आगरा	देशी	अप्रैल का प्रथम पखवारा
		अमेरिकन	मध्य अप्रैल से मध्य मई
2.	अन्य जनपद	देशी	अप्रैल का प्रथम व दूसरा पखवारा
		अमेरिकन	मध्य अप्रैल से मई का प्रथम सप्ताह

बुवाई व दूरी :

सामान्यतः कपास की बुआई हल के पीछे कूड़ों में की जाती है। ट्रैक्टर द्वारा बुआई करने पर कतार से कतार की दूरी 67.5 सेमी. व पौध से पौध की दूरी 30 सेमी. तथा देशी हल से बुआई करने पर कतारों के मध्य की दूरी 70 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 30 सेमी. हो। भूमि में जहाँ जलस्तर ऊँचा हो या लवणीय मिट्टी / पानी हो या जल भराव की समस्या हो वहाँ मेड़ों पर बुआई करना उपयोगी है। इसके लिए 20-25 सेमी. ऊँची मेड़ें बनाकर नीचे से दो तिहाई भाग पर निश्चित दूरी पर खुर्पी द्वारा मेड़ों पर बुआई करें। बुआई हेतु प्रतिस्थान केवल 4-5 बीज ही प्रयोग करें।

उर्वरक :

उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना उपयोगी है। कपास में केवल नत्रजन व फास्फोरस उर्वरकों की ही संस्तुति है, जो निम्न है:

क्र.सं.	प्रजातियां	तत्व की मात्रा (किग्रा./हे.)			उर्वरक की मात्रा (किग्रा./हे.)	
		नत्रजन	फास्फोरस	यूरिया	डी.ए.पी.	सुपरफास्फेट
1.	देशी व अमेरिकन	60	30	120	67	188

नोट : डी. ए. पी. एवं यूरिया का प्रयोग करने पर 67 किग्रा. डी.ए.पी. एवं 105 किग्रा. यूरिया का प्रयोग करना चाहिए अथवा सुपर फास्फेट + यूरिया प्रयोग करने पर 188 किग्रा. सिंगिल सुपर फास्फेट तथा 130 किग्रा. यूरिया का प्रयोग करना चाहिए।

रोग एवं नाशीजीव का प्रबन्ध :

फसल को रोगों और कीटों से बचाने के लिए सारणी के अनुसार समयबद्ध पूर्ण छिड़काव करें।

- ◆ आई०पी०एम० विधि द्वारा कीट नियंत्रण करें।
- ◆ रस चूसने वाले कीटों जैसे हरा फुदका, माहू, तेला, सफेद मक्खी की रोकथाम हेतु डाइमिथोएट रसायन का प्रयोग करें।
- ◆ पत्तियों को खाने वाली इल्लियों व गूलर बेधक कीटों की रोकथाम क्लोरपाइरीफास, क्यूनालफास या सिन्थेटिक पाइरेथोएड्स रसायनों द्वारा करें।
- ◆ शाकाणु-झुलसा (ब्लैक आर्म) रोग नियंत्रण हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लीन सल्फेट या एग्रीमाइसीन के साथ ताम्रयुक्त फफूँदी नाशक रसायन मिलाकर छिड़काव करें।
- ◆ शक्ति चालित मशीनों के छिड़काव में 150-200 लीटर व नेपसेक मशीन हेतु 600-800 ली०/हे० पानी की आवश्यकता होती है।
- ◆ छिड़काव के 24 घण्टे के अन्दर वर्षा हो जाये तो पुनः छिड़काव करें।
- ◆ पत्तियों की निचली सतह पर पूरी तरह से छिड़काव किया जाय क्योंकि कीट इसी सतह पर रहते हैं।

पल्लवनाशक रसायन (डिफोलिएन्ट) का प्रयोग :

यह प्रायः देखा गया है कि देर से बोई गई कपास की फसल में काफी बिना खिले हुए गूलर शेष रह जाते हैं। जिसमें पैदावार पर विपरीत असर पड़ता है। इसकी रोकथाम के लिए झाप नामक रसायन की 200 ग्रा०/हे० की दर से एक छिड़काव 60 प्रतिशत गूलर की खिलने की अवस्था में किया जाय। ऐसा करने से 40-50 प्रतिशत अधिक गूलर फट जाते हैं, जिससे पैदावार बढ़ जाती है व गेहूँ की बुआई हेतु भी खेत समय से खाली हो जाता है।

चुनाई व भण्डारण :

इस बात का ध्यान देना आवश्यक है कि ओस हटने के पश्चात् ही चुनाई की जाय। चुनाई करते समय पूर्ण खिले हुए गूलरों की ही चुनाई की जाय। इसका भण्डारण भी अर्द्ध खिली हुई व कीटों से प्रभावित कपास से अलग रखा जाय। चुनाई के साथ सूखी पत्तियां, डन्ठल नहीं आने चाहिए, इससे गुणवत्ता घटती है। भण्डारण से पूर्व कपास को भलीभांति सुखा लेना चाहिए। भण्डारण गृह भी भली प्रकार सूखा हो।

कपास के अवस्थावार नाशीजीव :

कपास के जमाव से लेकर उसकी बढ़वार, पुष्प, गूलर तथा चुनाई की अवस्थाओं में भिन्न-भिन्न किस्म के नाशीजीवी एवं बीमारियां सक्रिय रहते हैं। संक्षेप में प्रमुख नाशीकीटों एवं बीमारियां अवस्थावार इस प्रकार क्षति करते हैं।

1. वानस्पतिक बढ़वार अवस्था (1 से 30 दिन) :

इस अवस्था में कोमल फुनियां से रस चूसने वाले माहू भुनगे एवं थ्रिप्स से नुकसान होता है। इसके अतिरिक्त पत्तियों को निचली सतह पर रस चूसने वाली माइट एवं कोमल बढ़वार से रस चूसने वाली सफेद मक्खी प्रमुख है।

2. कलिक विकास अवस्था (31 से 60 दिन) :

इस अवस्था में भी सामान्यतः प्रथम अवस्था के समस्त कीट क्षति करते हैं।

3. पुष्प अवस्था (61 से 100 दिन) :

इस अवस्था में भी प्रथम एवं द्वितीय अवस्था वाले कीट के प्रकोप के साथ-साथ निम्न कीड़ों का प्रकोप प्रारम्भ हो जाता है:-

अ. चित्तीदार कीट : कोमल फुगियां एवं पुष्प कलिकाओं को क्षति करती है।

ब. गुलाबी कीट : फुनियां के साथ ही पुष्पों एवं कलिकाओं में अण्डे देने लगती है।

स. तम्बाकू सूँड़ी : यह पत्तियों को चाटकर कंकाल बनाती है। और बाद में कलियों एवं फूलों की क्षति करती है।

द. अमेरिकन बालवर्म (हेलिकोवर्पा) : यह कीट आरम्भ में कलिकाओं तथा पुष्प को क्षति करता है।

4. 100 दिन से आगे (गूलर बनने एवं पकने की अवस्था) :

पुष्प अवस्था के सभी कीट इस अवस्था में बढ़ते हैं और गूलरों को क्षति पहुँचाते हैं। इसमें निम्नलिखित कीड़े विशेष सक्रिय होते हैं -

1. सभी गूलर भेदक।

2. तम्बाकू सूँड़ी।

3. लाल कीड़ा - यह लाल-काले रंग का मत्कुण (बग) कीट कपास के नये गूलरों से रस चूसता है, उन्हें सुखा देता है और खिलने पर कपास को रंगकर उसकी गुणवत्ता को प्रभावित करता है।

कपास के मित्र जीव :

कपास में लगने वाले कीड़ों के नियंत्रण हेतु उपयोगी (मित्र) जीव इस प्रकार है -

1. भेदक कीड़ों के अण्ड परजीवी : ट्राइकोग्रामा टेलोनोमास तथा टेट्रस्टीकस एपेसीज।

2. भेदक तथा सूँड़ी नाशी कीटों के लिए सूँड़ी परजीवी : किलोनस, कोटिशिया, अपैनटेलिस, ब्रेकान तथा कम्पोलेटिस।

3. न्यूकिलयर पालीहेड्रोसिस वाइरस (एन०पी०वी०) : यह एक प्रभावी वाइरस है, जो पत्ती खाने वाले सूँड़ी कीटों में बीमारी पैदा करता है। प्रत्येक प्रजाति की सूँड़ी के लिए अलग-अलग वायरस की आवश्यकता होती है।

4. परभक्षी कीड़े :

क) क्राइसोपर्ला (ग्रीनलेसविंग) : यह कीड़ा माहू सफेद मक्खी भेदक कीड़ों के अण्डों तथा उनकी प्रारम्भिक सूँड़ियों को खाकर नष्ट करते हैं।

ख) इन्द्रगोप भृंग : इन कीटों के शिशु तथा वयस्क माहू को तेजी से खाते हैं।

5. जैव रसायन : इस श्रेणी में एन०पी०वी० वाइरस के अतिरिक्त निम्नलिखित दो प्रमुख जैविक पदार्थ उपयोग में हैं।

(1) बैसिलस थ्यूरिन्जिएंसिस (बी०टी०) नामक शाकाणु पर आधारित कीटनाशक :

यह छिड़काव के योग्य तरल अथवा घुलनशील पाउडर के रूप में इस बैक्टीरिया पर आधारित पदार्थ जो अमेरिकन बालवर्म (हेलिकोवर्पा इरीयस) तथा तम्बाकू-सूँड़ी पर बहुत प्रभावी है।

(2) नीम आधारित पदार्थ : नीम के तेल अथवा पक्की हुई निबौलियों पर आधारित उनके एजाडीरेविटन नामक पदार्थ सक्रिय अंश वाले ये कीटनाशक के पास में माहूं, जैसिड, सफेद मक्खी तथा गूलरभेदक के नियंत्रण में प्रभावी हैं। इसके प्रयोग से कीड़ों का प्रकोप नहीं होता है।

प्रभावी बिन्दु :

- ◆ लम्बी अवधि में पकने वाली प्रजातियों की बुआई कदापि न करें।
- ◆ समय पर बुआई करें। बीज दर तथा दूरी पर विशेष ध्यान दें।
- ◆ संस्तुत मात्रा में ही उर्वरकों का प्रयोग करें।
- ◆ बोने के पश्चात् वर्षा न होने पर 30 - 35 दिन बाद सिंचाई अवश्य करें।
- ◆ 1.5 मीटर से बड़े पौधे होने पर फूल आने से पूर्व छटाई करें।
- ◆ गूलर फटने पर प्रथम चुनाई अवश्य करें। चुनाई समयानुसार न करने पर पैदावार कम मिलने की संभावना रहती है।

40. आलू की उन्नतशील खेती

आलू की खेती करने वाले राज्यों में उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान है, जहाँ देश के आलू के कुल क्षेत्रफल का 35.5 प्रतिशत तथा कुल उत्पादन का 41.1 प्रतिशत आलू पैदा किया जाता है।

उन्नत किस्में: केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित आलू की 35 किस्मों में से उ.प्र. की भौगोलिक स्थिति, मृदा एवं जलवायु आदि के अनुसार निम्नलिखित प्रजातियां उपयुक्त पाई गई हैं, जिन्हें मुख्य रूप से दो वर्गों में बाँटा जाता हैः—

अ. सब्जी वाली किस्में ब. प्रसंस्करण वाली किस्में

क्र.सं.	किस्म का नाम	पकने की अवधि (दिनों में)	औसत उपज कुन्तल (प्रति हे.)
अ.	सब्जी वाली किस्में :		
1.	कुफरी चन्द्रमुखी (ए. 2708)	70–80	200–250
2.	कुफरी बहार (झ. 3797)	90–100	250–300
3.	कुफरी अशोका (पी.जे. 376)	70–80	250–300
4.	कुफरी बादशाह (जे.एफ. 4870)	100–120	350–400
5.	कुफरी लालिमा (बी.एस./सी. 1753)	90–100	250–300
6.	कुफरी पुखराज (जे.ई.एक्स./सी. 166)	90–100	350–400
7.	कुफरी सिन्दुरी (सी–140)	110–120	300–400
8.	कुफरी सतलुज (जे.आई. 5857)	100–110	250–300
9.	कुफरी आनन्द (एम.एस./ 82–717)	110–120	350–400
ब.	प्रसंस्करण योग्य किस्में :		
1.	कुफरी चिप्सोना–1 (हाइब्रिड एम.पी./ 90–83)	110–110	350–400
2.	कुफरी चिप्सोना–2 (हाइब्रिड एम.पी./ 91जी)	110–110	300–350

खेत का चयन एवं तैयारी : आलू की अच्छी पैदावार के लिए अच्छे जल निकास वाली समतल एवं अधिक उर्वरायुक्त, बलुई दोमट एवं दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है। 2–3 जुताई करके खेत को खाली छोड़ दें आलू की अच्छी फसल लेने के लिए बोने से पहले पलेवा करना आवश्यक है। ओट आने पर आवश्यकतानुसार जुताई करें एवं पाटा चलाकर खेत को समतल कर ले।

खाद एवं उर्वरक : परीक्षणों के परिणामों के अनुसार आलू की अच्छी पैदावार के लिए सामान्यतः 180 किग्रा. नाइट्रोजन, 80 किग्रा. फार्स्फोरस व 100 किग्रा. पोटाश की आवश्यकता पड़ती है। यदि मृदा में जस्ता व लोहा जैसे सूक्ष्म तत्वों की कमी है तो क्रमशः 25 किग्रा. जिंक सल्फेट एवं 50 किग्रा. फेरस सल्फेट प्रति हे. की दर से उर्वरकों के साथ बुआई से पहले खेत में डाले।

बुआई का समय : अगेती फसल प्रायः 15 सितम्बर के आस–पास बोई जाती है और 70–80 दिन में खोद ली जाती है। मुख्य फसल की बुआई के लिए 15 अक्टूबर से 25 अक्टूबर का समय उचित रहता है।

बीज की मात्रा : आलू का रोगरहित, शुद्ध बीज हमेशा विश्वसनीय स्रोतों, विशेषकर सरकारी संस्थानों राज्य बीज निगमों या बीज उत्पादन एजेन्सियों से ही प्राप्त करना चाहिए। खेत में बुआई के लिए लगभग 40–50 ग्राम वजन वाले अच्छे अंकुरित बीज का प्रयोग करें। सामान्यतया आलू की एक हे. फसल बोने के लिए 30–35 कुन्तल (35–40 ग्राम) या (3.5–4.0 सेमी. आकार वाले) कन्द पर्याप्त होते हैं।

बुआई की विधि : पंक्ति की दूरी 60 सेमी. रखें तथा कन्द से कन्द की दूरी बीज आलू के आकार के अनुसार समायोजित की जा सकती है। 20, 40, 60 व 80 ग्राम आकार वाले बीज कन्दों को 15, 20, 30 व 40 सेमी. की दूरी पर रखकर आलू को मेंडों/गुलों में 8–10 सेमी. गहराई पर खुरपी की सहायता से बो दिया जाता है ताकि अंकुरण के लिए मिट्टी में पर्याप्त नमी बनी रहे।

खरपतवार नियंत्रण एवं मिट्टी चढ़ाना : आलू बुवाई के 20–25 दिन बाद पौधे 8–10 सेमी. ऊँचाई के हो जायें तो लाइनों के बीच स्प्रिंग–टाइन कल्टीवेटर या खुरपी से खरपतवार निकालने का कार्य करें। इसी दौरान नत्रजन की शेष मात्रा गुलों पर डालकर खुरपी या ट्रैक्टर चालित रिजर से मिट्टी चढ़ा दें।

मैदानी क्षेत्रों में आलू की फसल में खरपतवारों का प्रकोप बिजाई के 4–6 सप्ताह बाद अधिक होता है। अर्थात् इस विधि से फसल को खरपतवार रहित रहना चाहिए। खरपतवारों के रासायनिक नियंत्रण के लिए खरपतवार नाशी रसायनों को 1000 लीटर पानी में घोलकर आवश्यकतानुसार दी गयी विधियों को अपना कर छिड़काव करें।

सिंचाई : अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 7–10 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। बुआई के 8–10 दिन बाद तथा भारी मृदा में 10–12 दिन बाद अंकुरण से पूर्व पहली सिंचाई करें। सिंचाई करते समय ध्यान रखें कि आलू की गूलें पानी में दो तिहाई से अधिक न ढूबे अन्यथा पानी की अधिकता के कारण मृदा में अजैविक दशायें उत्पन्न होती हैं। आलू की फसल में दूसरी सिंचाई बुआई के 20–22 दिन बाद (बरोह—शाखायें बनते समय) तथा तीसरी सिंचाई टॉपड्रेसिंग एवं मिट्टी चढ़ाने के तुरन्त बाद (कन्द बनने की प्रारम्भिक अवस्था में) अर्थात् बुआई के लगभग चार सप्ताह बाद करें। अन्तिम सिंचाई खुदाई के लगभग 10 दिन पूर्व बन्द कर दें।

फसल सुरक्षा :

a. रोग नियंत्रण :

झुलसा रोग : यह रोग पौधों के पत्तियों, डण्ठलों और कन्दों सभी पर लगता है। इस बीमारी के प्रारम्भिक लक्षण पत्तियों पर छोटे, हल्के पीले, हरे अनियमित आकार के धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं, जो शीघ्र ही बढ़कर बड़े गीले दिखे वाले धब्बे बनाते हैं बाद में पत्तियों के निचले भाग पर इन धब्बों के चारों ओर अंगूठीनुमा सफेद फफूँदी आ जाती है।

नियंत्रण :

- ❖ कुफरी सतलुज, कुफरी आनन्द, कुफरी बादशाह, कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2 तथा कुफरी सिन्दूरी जैसी प्रतिरोधी किस्में लगाये।
- ❖ रोग ग्रसित कन्दों को भण्डारण एवं फसल की बुआई से पूर्व छांटकर व अलग करके गड्ढे में दबा दे।
- ❖ बीमारी के लिए अनुकूल मौसम होने पर सिंचाई बन्द कर दें तथा 75 प्रतिशत पत्तियाँ नष्ट होने पर डण्ठलों को काटकर खेत से बाहर गड्ढे में दबा दे।
- ❖ बीज की बुआई 4 ग्राम प्रति किग्रा. की दर से ट्राइकोडर्मा द्वारा शोधित करके बोना चाहिए।
- ❖ कॉपर आकसी क्लोराइड 2 किग्रा. प्रति हे. अथवा फसल पर बीमारी के लक्षण दिखाई देने से पूर्व मैकोज़ेब 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का घोल बनाकर छिड़काव करें। तत्पश्चात् 8–10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करते रहें। झुलसा का भयंकर प्रकोप होने पर मेटालेक्सिल 0.25 प्रतिशत घोल का 1–2 छिड़काव करें।

कामन स्कैब : इस रोग से फसल की पैदावार में तो कमी नहीं आती लेकिन कन्द भद्दे हो जाते हैं, जिससे बाजार में उपज का अच्छा दाम नहीं मिल पाता है। रोगग्रसित कन्दों के छिलके पर लाल या भूरे रंग के छोटे धब्बे बनते हैं, जो धीरे-धीरे बढ़कर बड़े गोल या अनियमित चक्कते बन जाते हैं।

नियंत्रण :

- ❖ बीज हेतु आलुओं को शीत भण्डार में रखने से पूर्व अथवा बुआई से पहले 3 प्रतिशत बोरिक एसिड के घोल में 30 मिनट तक उपचारित करें तथा बीज कन्दों को छाया में सुखाकर ही बुआई करें।
- ❖ कन्द बनने की प्रारम्भिक अवस्था से लेकर कन्द बनने की अन्तिम अवस्था तक खेत में नमी बनाये रखने के लिए हल्की तथा नियमित सिंचाई करते रहे।
- ❖ मैदानी भागों में ग्रीष्मकालीन जुताई करें तथा गेहूँ, मटर, जौ, चरी, बाजरा व हरी खाद का फसल चक्र अपनाये।

b. कीट नियंत्रण :

माहू या चैंपा : माहू आलू की फसल को प्रत्यक्ष रूप से हानि नहीं पहुँचाता।

नियंत्रण : माहू रहित क्षेत्र एवं अवधि में बीज आलू की फसल लेना चाहिए। इसके लिए प्रदेश के पश्चिमोत्तरी मैदानी भागों में आलू की बुआई 15 अक्टूबर तक तथा मध्य एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश के मैदानी भागों में 25 अक्टूबर तक कर ली जानी चाहिए।

- ❖ खेत में संयुक्त रूप से प्रति 100 पत्तियों पर जैसे ही माहू की संख्या 20 से ऊपर होने लगे तो बीज आलू की फसल की डण्ठलों की कटाई कर देना आवश्यक है।
- ❖ आलू की शीघ्र समय से बुआई तथा उचित जल प्रबन्ध करें।
- ❖ यदि कीट का प्रकोप आर्थिक क्षति स्तर (5 प्रतिशत प्रभावित पौधे) से अधिक हो तो निम्नलिखित कीटनाशक का प्रयोग 500–600 प्रति हें पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए –
एजाडिरैकिटन (नीम औंयल) 0.15 प्रतिशत ई.सी. 2.5 लीटर अथवा डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1.0 लीटर अथवा ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. 1.0 लीटर।

पत्ती फुटका (लीफ हापर्स) : यह एक हरा तथा गहरे भूरे रंग का कीड़ा है जिसका शरीर पतले शंकु के आकार का होता है। लीफ हापर्स को निम्फस तथा प्रौढ़ हरी पत्तियों का रस चूसते हैं, जिसके कारण पत्तियाँ भूरे रंग की होकर सूख जाती हैं। इसका प्रकोप अगेती फसल पर बहुत अधिक होता है।

नियंत्रण : इसकी रोकथाम के लिए थायोमेथाक्साम 25 प्रतिशत डब्लीू.ए. को 100 प्रति हें मात्रा या ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 25 ई.सी. की 1.0 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। इसके बाद आवश्यकता पड़ने पर दूसरा छिड़काव 10 से 15 दिनां बाद करें।

प्रमुख कीट :

फफूँद जनित रोग :

अगेती / पछेती झुलसा : पत्तियों पर काले रंग के धब्बे बनते हैं जिसके तीव्र प्रकोप से सम्पूर्ण पौधा झुलस जाता है।

रोकथाम के उपाय :

1. रोग रोधी प्रजातियाँ जैसे— कुफरी नवीन, सिंदूरी, जीवन, बादशाह आदि को उगाना चाहिए।
2. जिनेब 2.5 किग्रा प्रति हें 600–800 लीटर पानी में घोलकर सुरक्षात्मक छिड़काव करना चाहिए।



विषाणु जनित रोग :

1. पोटैटो मोजैक, पोटैटो लीफ रोल, पोटैटो वाइरस एक्स, पोटैटो वाइरस वाई।
2. पत्तियों पर हरे पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं तथा पत्तियाँ छोटी होकर सिकुड़ जाती हैं।

रोकथाम के उपाय :

1. रोग ग्रसित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
2. रोग वाहक कीटों को नष्ट करने के लिए डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1.0 लीटर/हें अथवा की दर से प्रयोग करना चाहिए।

खुदाई : अगेती फसल से अधिक कीमत प्राप्त करने के लिए बिजाई के 60–70 दिनों के उपरान्त खुदाई की जा सकती है। मुख्य फसल की खुदाई तापमान 20–30 डिग्री सेल्सियस तक पहुँचने से पहले कर लें। ताकि फसल अधिक तापमान पर मृदुगलन तथा काला गलन जैसे रोगों से ग्रसित न होने पाये।

उपज : जल्दी तैयार होने वाली पैदावार अपेक्षाकृत कम होती है जबकि लम्बी अविधि वाली किस्में अधिक उपज देती है। सामान्य किस्मों की अपेक्षा संकर किस्मों से अधिक पैदावार (600–800 कुन्तल प्रति हें) मिलती है। ■

41. टमाटर की उन्नतशील खेती

टमाटर में सामान्य (मुक्त परागित) तथा संकर दोनों प्रकार की किस्में उपलब्ध है। सामान्यतयः मुक्त परागित किस्मों के फल के छिलके पतले होते हैं और उनमें जूस की मात्रा अधिक होती है तथा फल में खटास अच्छी होती है। संकर किस्मों के फल समान आकार व लाल रंग के होते हैं और इनके फल का छिलका काफी मोटा होता है। संकर किस्म के फल को कमरे के तापक्रम पर कई दिन तक बिना खराब हुए रखा जा सकता है।

प्रजातियाँ :

क्र.सं.	किस्म का नाम	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)	बीज की मात्रा (ग्राम / हे.)
1.	काशी अमृत	75–80	400–450	450–500
2.	काशी अनुपम	75–80	500	450–500
3.	काशी	80–82	450	450–500
4.	पूसा	90	300–350	450–500
संकर प्रजातियाँ				
6.	स्वर्ण वैभव	55–60	700–800	300–350
7.	अविनाश 2	85–90	600–700	300–350
8.	रुपाली	80–82	450–500	300–350

बुवाई का समय : उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में टमाटर की मुख्य रूप से दो फसल ली जाती है।

- बरसात की फसल :** जून–जुलाई में पौध तैयार करके जुलाई–अगस्त के महीने में रोपण किया जाता है। फल अक्टूबर–नवम्बर में तैयार।
- जाड़े की फसल :** अक्टूबर माह में पौध तैयार करके रोपण किया जाता है। संकर किस्मों को लगाना लाभप्रद, फल जनवरी से लेकर अप्रैल तक उपलब्ध रहते हैं।

खेत का चयन एवं तैयारी : टमाटर को लगभग हर प्रकार की भूमि में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। उचित जल निकास एवं मृदा का पीएच. मान 6–7 उपयुक्त होता है। भूमि की 3–4 बार गहरी जुताई करके समतल कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : खेत की अंतिम जुताई करते समय 25–30 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए। इसके अतिरिक्त रोपण के समय 150 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फार्स्फोरस और 60 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर तत्व के रूप में देना चाहिए।

पौध तैयार करना : पौध तैयार करने के लिए जमीन की सतह से 15–20 सेमी. ऊँची उठी क्यारी बनाते हैं। क्यारी की लम्बाई आवश्यकतानुसार तथा चौड़ाई इतनी (सामान्यतः 1 मीटर) रखते हैं। बीज की बुवाई पंक्तियों में करते हैं। बीज को जमीन में 1.5 से 2.0 सेमी. गहरा बोते हैं। बुवाई के बाद ऊपरी सतह पर गोबर की खाद की पतली सी सतह बिछा कर समतल कर लेते हैं। क्यारी को धूप एवं तेज बरसात, ठण्ड आदि से बचाने के लिए घास–फूस से ढक देते हैं तथा हजारे या फुहरे से सिंचाई करते हैं। जब बीज पूर्ण रूप से अंकुरित हो जाते हैं। तब ऊपर से घास–फूस की पर्त को हटा दिया जाता है। जब पौधे लगभग एक सप्ताह के हो जायें तो उन पर मैंकोजेब 75 प्रतिशत या कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत दवा की 2 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। संकर किस्मों के पौधों पर कभी–कभी पत्तियों में सुरंग बनाने वाले कीट (लीफ माइनर) का प्रकोप होता है। इसके नियंत्रण के लिए मैंकोजेब 75 प्रतिशत / कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत दवा की 2 मिली मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

रोपण विधि : नर्सरी से जब पौधे 5–6 पत्ती के हो जाय या जब पौधे की ऊँचाई 15–20 सेमी. की हो तब उनको रोपण के लिए उपयुक्त समझना चाहिए। रोपण के लिए 60 सेमी. चौड़ी तथा जमीन की सतह से 20 सेमी. ऊँची उठी हुई क्यारियों बनायी जाती है, जिनके दोनों तरफ 20 सेमी. की जानी चाहिए। रासायनिक रूप से खरपतवार नियंत्रण के लिए पैंडिमीथेलिन की 3.3 लीटर मात्रा को 1000 लीटर पानी में घोलकर रोपाई के 1 से 2 दिन बाद छिड़काव करें। प्रत्येक निराई-गुड़ाई के बाद पौधों पर मिट्टी चढ़ाना आवश्यक होता है।

फसल सुरक्षा

अ. रोग नियंत्रण :

आर्द्धगलन (डंपिंग ऑफ) : यह नर्सरी में लगने वाली प्रमुख बीमारी है जो पीथियम, राइजोकटोनिया तथा फाइटोथेरा नामक फफूँदी के कारण होती है।

नियंत्रण :

- ❖ बीज को बुवाई से पूर्व ट्राइकोडर्मा अथवा थीरम दवा से उपचारित कर लें।
- ❖ नर्सरी में थीरम, मैंकोज़ेब दवा की 2 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करें।

अगेती झुलसा : यह रोग अल्टरनेरिया सोलेनी नामक फफूँद के द्वारा होता है। रोग का लक्षण सर्वप्रथम पुरानी पत्तियों पर छोटे-छोटे गोल एवं काले रंग के धब्बे के रूप में प्रकट होता है। प्रभावित पत्तियाँ पीली पड़कर सूखकर गिर जाती हैं।

नियंत्रण :

- ❖ बुवाई से पूर्व बीज को केप्टान या थीरम दवा में उपचारित करें।
- ❖ मैंकोज़ेब की 2 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करें। अथवा
- ❖ कापर ऑक्सी क्लोराइड की 3 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर छिड़काव करें।

टमाटर का पत्तीमोड़ विषाणु रोग : उत्तर प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में बरसात में लगाई गयी टमाटर की फसल की यह प्रमुख बीमारी है जो सफेद मक्खी के द्वारा फैलती है। रोग ग्रस्त पौधों की पत्तियाँ सिकुड़कर मुड़ जाती हैं। पत्तियाँ खुरदुरी एवं मोटी हो जाती हैं।

नियंत्रण :

- ❖ रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर जमीन में दबा दें।
- ❖ रोगवाहक कीट सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए आक्सीडेमेटान मिथाइल 25 प्रतिशत ई.सी. या डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव किया जाय।



42. बैंगन की उन्नतशील खेती

बैंगन हमारे प्रदेश की एक लोकप्रिय सब्जी है। इसका प्रदेश के विभिन्न भागों में विविध प्रकार की सब्जी, भुरता, कलौंजी आदि बनाने में प्रयोग किया जाता है।

उन्नत किस्में :

प्रजाति	पकने की अवधि (दिनों में)	उपज (कु. / हे.)	बीज की मात्रा (ग्राम / हे.)
अ. लम्बे फल वाली किस्में			
आई.वी.बी.एल. 9	60-65	350	400-500
पन्त सम्राट	65-70	300	तदैव
ब. गोल फल वाली किस्में			
पन्त ऋतुराज	60	400	तदैव
बी.आर. 14	65-70	400	तदैव
के.एस. 224	65-70	350	तदैव
स. हरे रंग के फल वाली किस्में			
सम्राट जाइण्ट (बनारस जाइण्ट)	70	250-300	तदैव
संकर किस्में : संकर किस्में भी लम्बे व गोल फलों वाली होती है।			
पूसा हाइब्रिड -5	55-60	600-700	300—400
द. गोल फसल वाली किस्में			
काशी सन्देश	65-70	600-700	तदैव
पूसा हाइब्रिड-6	65-70	450-500	तदैव

बुआई का समय :

फसल	नर्सरी में बीज की बुआई	रोपण का समय
शरदकालीन	मई—जून	जून—जुलाई
ग्रीष्मकालीन	नवम्बर—दिसम्बर	दिसम्बर—जनवरी
वर्षाकालीन	मार्च—अप्रैल	अप्रैल—मई

खेत का चयन एवं तैयारी :

बैंगन को हर प्रकार की जमीन में उगाया जा सकता है। यदि जमीन दोमट प्रकृति की हो और उसमें जीवांश की मात्रा अच्छी हो तो उपज अच्छी मिलती है। खेत को अच्छी प्रकार से 3-4 बार जुताई करके मिट्टी के नीचे की कड़ी सतह वाली पर्त को तोड़ देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक :

अधिक उपज के लिए खेत की अंतिम बार जुताई करते हुए 25–30 टन गोबर की खाद मिला देना चाहिए। इसके अतिरिक्त 150 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फारफोरस तथा 60 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रूप में देना चाहिए। नत्रजन की एक तिहाई मात्रा तथा फारफोरस व पोटाश की पूरी मात्रा रोपण के समय दी जाये। शेष नत्रजन की दो तिहाई मात्रा को टाप ड्रेसिंग के रूप में रोपण के 30 दिन तथा 45 दिन बाद देना चाहिए।

पौध तैयार करना :

पौध तैयार करने के लिए ऊँची जगह का चुनाव करके उसकी 3–4 बार जुताई करके गोबर की खाद मिला देते हैं। इस प्रकार से तैयार क्यारी में 10 सेमी. की दूरी बनायी गयी पंक्तियों में 5 सेमी. की दूरी पर 1 से 1.5 सेमी. गहराई में बीज की बुआई की जाती है। बीज बोने के बाद क्यारी में गोबर की खाद की 1 सेमी मोटी परत से ढक दिया जाता है और क्यारी में ऊपर से घास—फूस बिछा देते हैं। बीज के अंकुरण के लिए हजारे या फवारे से सिंचाई की जाती है। अंकुरण के बाद घास—फूस को हटा दिया जाता है।

रोपण विधि :

रोपाई के लिए पौधे तैयार होने में सामान्यतयः 4 – 6 सप्ताह का समय लगता है। पौधों की रोपाई के लिए 75 सेमी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में 50 सेमी. की दूरी पर रोपण किया जाता है। अधिक बढ़ने वाली तथा फैलने वाली किस्सों के लिए पौध अन्तराल 10 सेमी. रखा जाता है।

सिंचाई :

रोपण के पश्चात् एक हल्की सिंचाई करें या हजारे की सहायता से पौधों के थालों में 2 – 3 दिन तक सुबह और सायंकाल पानी दें पौधे स्थापित हो जाने के बाद हल्की सिंचाई कर दी जाती है। बाद में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहे। साधारणतयः गर्म मौसम में 8 – 10 दिन के अन्तर पर जबकि सर्दी के मौसम में 12 – 15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण :

बरसात के समय पौधे के आस—पास उगे खरपतवारों को खुरपी की सहायता से निकाल देना चाहिए। बैंगन का पौधा तेज वृद्धि करता है। अतः फल लगने के बाद यह जमीन पर न गिर जाय इसके बचाव के लिए रोपण के 30 – 35 दिन बाद क्यारी की गुड़ाई करके पौधों की जड़ों के पास मिट्टी चढ़ा देना चाहिए। मिट्टी चढ़ा देने से बरसात में अधिक पानी के कारण पौधे गलते नहीं हैं।

फसल सुरक्षा :

अ. फोमोप्सिस अंगमारी :

फोमोप्सिस अंगमारी यह बैंगन की प्रमुख बीमारी है, जो फोमोप्सिस बैक्सेन्स नामक कवक के द्वारा होती है। रोगग्रस्त पौधों की पत्तियों पर नियमित गोल, धूसर या भूरे रंग के धब्बे बनते हैं, जिनके बीज का भाग हल्के रंग का होता है।

नियंत्रण :

- ❖ पौध तैयार करते समय बीज को कार्बोण्डाजिम दवा से उपचारित करें।
- ❖ एक ही क्यारी में बार—बार बैंगन को न लगाए।
- ❖ रोग का लक्षण दिखाई देते ही पौधों पर मैकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. दवा की 2.5 ग्राम मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 8–10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

जीवाणु उकठा : यह जीवाणु जनित बीमारी है। रोग का प्रभाव पहले निचली पत्तियों से आरम्भ होता है। तने को काटने पर उसमें भूरा जमा हुआ पदार्थ दिखाई देता है। रोगग्रस्त पौधे सूख जाते हैं।

नियंत्रण :

- ❖ रोग अवरोधी / सहनशील किसमें जैसे पंज ऋतुराज, पूसा पर्पल क्लस्टर या पंत सग्राट का चुनाव करें।
- ❖ रोपाई से पूर्व पौधों को स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 100 मिग्रा. मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 3–5 मिनट तक डुबोकर रोपाई करें।

ब. कीट नियंत्रण :

तना एवं फल छेदक कीट : यह बैंगन का प्रमुख कीट है। इस कीट की सूँडियाँ बैगन के पौधों को तनों एवं पत्तियों के डण्ठल में धुल जाती हैं और उन्हें अन्दर से खाती है जिसके फलस्वरूप क्षतिग्रस्त भाग से पौधा सूख जाता है।

नियंत्रण :

- ❖ निमौली की 40 ग्राम मात्रा को पीसकर प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर 10 दिन के अन्तर पर छिड़काव किया जाये।
- ❖ लैम्ब्डासाइहैलोथिन 5 प्रतिशत ई.सी. रसायन 1 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

फल की तुड़ाई :

बैंगन में फलों की तुड़ाई मुलायम अवस्था में की जानी चाहिए। तुड़ाई करते समय कीट ग्रस्त एवं रोग से प्रभावित फलों की भी तुड़ाई करके उनको नष्ट कर देना चाहिए।

उपज :

बैंगन में रोपण के 45–60 दिन बाद किसम के अनुसार पहली तुड़ाई की जा सकती है। एक हैक्टेयर क्षेत्र से 350–400 कुन्तल उपज प्राप्त होती है।



43. फूल गोभी की उन्नतशील खेती

गोभी वर्गीय सब्जियों में फूलगोभी एक महत्वपूर्ण फसल है। इसकी खेती मुख्य रूप से श्वेत, अविकसित व गठे हुए पुष्पपुंज (फूल) के लिए की जाती है। इसका प्रयोग सब्जी, सूप, अचार, बिरियानी, पकौड़ा इत्यादि बनाने में किया जाता है। यह प्रोटीन, कैल्शियम, विटामिन ए तथा सी का भी अच्छा स्रोत है।

उन्नतशील किस्में

अगेती किस्में :

काशी कुँवारी : यह अगेती वर्ग के लिए अनुमोदित की गयी है इसकी पौधशाला जून के अन्त से जुलाई तक डाल सकते हैं। फूल अर्द्धगुम्बदाकार, सफेद, महीन दाने वाला और वजन 300—450 ग्राम तक होता है।

पूसा दीपाली : इसके पौधे सीधे, पत्तियाँ लम्बी, हकी तथा चिकनी होती हैं। फूल का रंग सफेद तथा मध्यम आकार का होता है। इसका फूल मध्य अकट्टूबर में तैयार हो जाते हैं। पौधशाला में बीज की बुवाई जुलाई तथा रोपण अगस्त महीने में करते हैं। इससे प्रति हेक्टेयर 100—150 कुन्तल तक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

समरकिंग : यह संकर प्रजाति है जो रोपाई के 60 से 65 दिन बाद तैयार हो जाती है पौधशाला में बीज की उगाई जून और रोपण जुलाई में करते हैं। इसका फूल औसतन 500 ग्राम का होता है। इसकी रोपाई जनवरी में भी कर सकते हैं। इसके फूल अप्रैल तक बन सकते हैं। इसकी औसत उपज 125 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

पावस : यह भी संकर प्रजाति है जो रोपाई के 60 से 65 दिन बाद तैयार हो जाती है इसका फूल औसतन 800—900 ग्राम का गठा हुआ सफेद गुम्बदाकार का होता है। पौधशाला में बीज की बुवाई जून माह में और रोपण जुलाई में करते हैं। इसकी औसत उपज 125 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

मध्यमी किस्में :

इम्पूब्ड जापानी : पौधे सीधे तथा पत्तियाँ आसमानी रंग की होती हैं पौधशाला में बीज को बोने का उचित समय अगस्त व रोपण सितम्बर है। इसके फूल ठोस, आकार में बड़े तथा सफेद रंग के होते हैं। इसकी फसल नबम्बर के अन्त में दिसम्बर तक तैयार हो जाती है इसकी औसत उपज 150 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक होती है।

सैरानो : यह एक संकर किस्म है जो रोपाई के 80—85 दिन में तैयार हो जाती है। पौधशाला में बीज बोने का समय अगस्त और पौध रोपाग का समय सितम्बर है। इसका फूल औसतन 1.00 किग्रा तक होता है। इसका फूल बंधा हुआ, सुगठित एवं सफेद रंग का होता है इसकी औसत उपज 150 से 175 कुन्तल प्रति हेक्टेयर होती है।

पिछौती किस्में

स्नोबाल—16 : इसके फूल मध्यम आकार के ठोस एवं बर्फ के समान श्वेत रंग के होते हैं। रोपण के 100—110 दिन में फसल तैयार हो जाती है। इसके बीज की बुवाई पौधशाला में अकट्टूबर के प्रारम्भ में तथा रोपण मध्य नबम्बर तक करते हैं। इसकी फसल जनवरी से मध्य मार्च तक उपलब्ध रहती है। इसकी प्रति हेक्टेयर उपज 200 कुन्तल है।

पूसा स्नोबाल के 0—1 : इसकी बाहरी पत्तियाँ फैलावदार तथा भीतरी पत्तियाँ फूल को ढककर सुरक्षित रखती हैं। फूल के बीच का भाग उभार लिए होता है। उत्तर भारत है मैदानी क्षेत्रों में बीज की पौधशाला में बोने का उचित समय सितम्बर के अन्त से अकट्टूबर तक है और रोपण नबम्बर में करते हैं। फसल रोपण के 90—95 दिन बाद उपलब्ध हो जाती है। इसकी औसत उपज 200—250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

भूमि एवं भूमि की तैयारी : अच्छी जल निकास वाली जीवांश युक्त गहरी दोमट या बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए अच्छी होती है। फूल गोभी की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए खेत की मिट्टी अच्छी प्रकार से तैयार करनी चाहिए। इसके लिए 3—4 जुताई करके पाटा लगा देना चाहिए।

बीज बुवाई एवं रोपण का समय : फूल गोभी पौधशाला में बीज की बुवाई व रोपण का उचित समय इनकी किस्मों के साथ दिया गया है।

बीज दर : अगेती किस्मों की बीज दर 600—700 ग्राम और मध्यम व पिछेती किस्मों का बीज दर 350—400 ग्राम प्रति हेक्टेयर है।

पौधशाला की तैयारी एवं बीज की बुवाई : एक हेक्टेयर की फसल लगाने के लिए 3 मीटर लम्बी, 1 मीटर चौड़ी व 20—25 सेमी. ऊपर उठी हुई 20—25 क्यारियां तैयार करें। प्रत्येक क्यारी में 40 ग्राम डी.ए.पी., 25 ग्राम यूरिया, 30 ग्राम म्यूरेट आफ पोटाश एवं 10 से 15 ग्राम कार्बोफ्युरॉन 3 सी.जी. डालकर अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें। क्यारियाँ तैयार करने के बाद थीरम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर क्यारी की सिंचाई कर दें। बीज शोधन थीरम 2.5 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज की दर से करें। इन क्यारियों में लगभग 5 सेमी. की दूरी पर पंक्तियाँ बना लें व इन पंक्तियों में 0.5 सेमी. की गहराई पर बीज इस प्रकार बोएं कि एक जगह पर एक ही बीज पड़े। बीज को सड़ी हुई गोबर की भुरभुरी खाद एवं बालू की समान मात्रा मिला कर ढक दें। फुहारे से अवश्यकतानुसार सिंचाई करें और खरपतवार निकालें। लराभग 4 सप्ताह में पौधे रोपाई योग्य तैयार हो जाते हैं। पौधों को खेत में रोपण करने से पूर्व 1 ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट को 8 लीटर पानी में घोलकर 30 मिनट तक डुबोने के बाद लगाना चाहिए।

पौधे रोपण : रोपण कतार से कतार 40 सेमी. पौधे से पौधे 30 सेमी. की दूर पर करते हैं। परन्तु मध्यम व पिछेती किस्मों में कतार से कतार 45—60 सेमी. व पौध से पौध की दूरी 45 सेमी. रखते हैं। रोपण के तुरन्त बाद पौधे की सिंचाई करें। यदि खेत में पानी रुकने की सम्भावना हो तो अगेती फूल गोभी का रोपड़ मेड़ों पर करें।

खाद एवं उर्वरक : खेत में 20—25 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद रोपाई के 3—4 सप्ताह पूर्व खेत में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इसके अलावा 120 किग्रा. ग्राम नाइट्रोजन, 60 किग्रा. ग्राम फास्फोरस व 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा व फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा अंतिम जुताई या रोपण से पूर्व खेत में अच्छी प्रकार मिला देना चाहिए तथा शेष आधी नाइट्रोजन की मात्रा दो बराबर भागों में। बॉटकर सड़ी फसल में 30 व 45 दिन बाद टापड़ेसिंग के रूप में देनी चाहिए।

अंतः सस्य क्रियाएं : फूल गोभी में पौध रोपण से लेकर फूल तैयार होने तक दो या तीन निराई—गुड़ाई से खरपतवार की रोकथाम हो जाती है। खरपतवारनाशी पेण्डीमेथिलीन 3.3 लीटर को 600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव रोपाई से पूर्व काफी लाभप्रद होता है। पौधे की जड़ों के पास मिट्टी चढ़ाने से पौधे सुरक्षित रहते हैं।

सिंचाई : पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में नमी का होना अत्यन्त आवश्यक है। सितम्बर के बाद 10 या 15 दिन के अन्तराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु में 5 से 7 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें।

गोभी की विकृतियाँ (डिसआर्डर): फूलगोभी में विभिन्न प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण निम्न विकृतियाँ हैं :

बटनाकार गोभी : गोभी अपेक्षाकृत जल्दी बनना प्रारम्भ हो जाती है। बटनाकार गोभी का मुख्य कारण नाइट्रोजन की कमी तथा एक वर्ग की गोभी (मौसम की) दूसरे वर्ग में बुवाई करना या पौधों की वृद्धि में कहीं रुकावट आना इयादि मुख्य कारण हैं। जैसे कीड़ों द्वारा जड़ों पर आक्रमण या अगेती फूलगोभी की किस्म का रोपण देर से या देर वाली किस्म का रोपण जल्दी करना। निदान के लिए सही किस्म सही समय पर लगायें तथा पौधे को बीमारी व कीड़ों से बचाये।

कलात्मकता : बिना तैयार गोभी (खाने वाले भाग यानी फूल) पर फूल निकलने लगते हैं जिससे बाजार भाव घट जाता। यह प्रक्रिया ज्यादातर बदली के मौसम या फुहार पड़ने के कारण होती है। बचाव के लिए बदली का मौसम होते ही गोभी तैयार होने से थोड़ा पहले ही उसे काटकर बाजार में बेच दे।

पत्तापत : फूलगोभी में कभी—कभी गोभी के फल भाग पर छोटी—छोटी पत्तियों निकल आती है। ऐसा मुख्य रूप से फूल बनने के समय तापमान अधिक हो जान के कारण होता है। इसके बचाव के लिए उचित किस्मों का चुनाव तथा उचित समय पर रोपण करना चाहिए।

राइसीनेस या हेयरीनेस : फूल बनने के समय लम्बे समय तक तापमान अधिक होने के कारण फूलों पर दाने आ जाते हैं। बचाव के लिए खेत में पानी लगाकर तापमान को कुछ हद तक नियंत्रित किया जा सकता है।

फूलों में गुलाबी या बैंगनी रंग आना : कभी—कभी फूलों का धब्बा हल्का बैंगनी या गुलाबी हो जाता है। इसके बचाव के लिए ऐसी किस्मों का चुनाव करें, जिसमें पत्तियाँ स्वयं फूल के ऊपर सुरक्षा कवच बना देती हों या फिर पत्तियों के गुच्छों को फूल के ऊपर धागे या रबर के छल्ले की सहायता से बौध दे।

सूक्ष्म तत्वों का महत्व : फूलगोभी में सूक्ष्म तत्वों के प्रयोग उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि होती है। इसमें बोरान एवं मालिब्डेनम प्रमुख है।

1. बोरोन की कमी से गोभी का फूल हल्का गुलाबी या भूरे रंग का होता जाता है जो खाने में कड़वा लगता है। इसमें फूलगोभी की पैदावार तथा माँग दोनों में कमी हो जाती है। बचाव के लिए बोरेक्स या बोरान 20 किग्रा./हे. की दर से अन्य उर्वरकों के साथ खेत में डाले। यदि फसल पर बोरेक्स के 2–4 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें तो आशातीत उपज और अच्छे फूल प्राप्त होते हैं।
2. मालिब्डेनम की कमी से पत्तियों में हरे रंग की कमी हो जाती है और वे किनारे से पतली हो जाती है। नयी पत्तियाँ विकृत हो जाती हैं। इससे बचाव के लिए 150 किग्रा. अमोनिया मालिब्डेनम प्रति हे. की दर से देने पर गोभी के आकार, गुणवत्ता व विटामिन सी में वृद्धि होती है।

फसल की कटाई : जब गोभी का फूल जातीय गुण के अनुरूप पूर्ण आकृति व रंग ग्रहण कर ले तब पौधों की कटाई करें। देर से कटाई करने पर रंग पीला पड़ने लगता है और फूल ढीले पड़ने लगते हैं, जिससे बाजार भाव घट जाता है। गोभी को उखाड़ने की अपेक्षा तेज चाकू से जमीन की सतह से थोड़ा ऊपर से काट लेना अच्छा रहता है।

प्रमुख कीट :

डायमण्ड बैक कीट : इस कीट के सूण्डी पत्तियों की निचली पत्तह पर खाते हैं और छोटे—छोटे छिद्र बना देते हैं। जब इनका प्रकोप अधिक मात्रा में होता है तो छोटे पौधों की पत्तियाँ बिल्कुल समाप्त हो जाती हैं, जिससे पौधे मर जाते हैं।

प्रबन्धन :

1. 25 वर्गमीटर गोभी की क्यारी के चारों तरफ मेंड़ पर चीनी पत्ता गोभी को फंसाने वाले फसल के रूप में गोभी के साथ—साथ रोपाई करना चाहिए। चीनी पत्तागोभी में क्यूनालफास 1 मि.ली. लीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़क देना चाहिए, जिससे कीट मर जाए।
2. 4 प्रतिशत नीम की गिरी का निचोड़ फसल पर छिड़कने से इस कीट का प्रकोप कम हो जाता है।
3. अगर इस कीट का प्रकोप बहुत अधिक हो तो फेनवरेट 20 प्रतिशत ई.सी. 1.5–2 लीटर प्रति हे. की दर से एक बार छिड़काव करना चाहिए।

तम्बाकू की सूण्डी (स्पोडोप्टेरा) : वयस्क मादा कीट पत्तियों की निचली सतह पर झुण्ड में अण्डे देती हैं। 4–5 दिनों के बाद अण्डों में सूण्डी पलती है और पत्तियों को खाती है। सितम्बर से नवम्बर तक इसका प्रकोप अधिक होता है।

प्रबन्धन :

1. पत्तियों के निचले हिस्से पर गुच्छे में दिए गए अण्डों को पत्तियों से तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए।
2. फेरोमोन ट्रैप लगाकर वयस्क नर को पकड़कर खत्म कर देना चाहिए।
3. एन.पी.वी.(एच.) 250 से 300 एल.ई. एक किग्रा. गुड़ व 0.01 प्रतिशत टीपोल का 800 लीटर पानी में घोलकर 10 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें। अथवा
4. क्यूनालफॉस 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर पन्द्रह दिन के अन्तराल पर छिड़काव इस कीट के नियंत्रण में लाभकारी है।

प्रमुख रोग :

पत्ती का धब्बा रोग : अल्टरनेरिया पर्णदाग, फूलगोभी में बढ़वार को प्रारम्भिक अवस्था में आता है। अल्टरनेरिया पर्णदाग निचली पत्तियों में ही आता है। इस रोग में पत्तियों पर गोल भूरे धब्बे बनते हैं। धब्बों में गोल छल्ले स्पष्ट दिखते हैं। बीज की फसल में पुष्पक्रम तथा कलियां भारी मात्रा में प्रभावित होती हैं और पैदावार कम हो जाती है।

प्रबन्धन :

- शाम के समय क्लोरोथैलोनिल 75 प्रतिशत डब्लू.पी. कवकनाशी के 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिछकाव करें।
- स्वस्थ पौधों से ही बीज का चुनाव करें तथा पत्ती बनने के समय एक बार उपरोक्त दवा या मैंकोज़ेब 0.25 प्रतिशत (2.5 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) का प्रयोग करें।

मृदुरोमिल आसिता : मृदुरोमिल आसिता रोग, पौध से फूल बनने तक कभी भी लग सकती है। पत्तियों को निचली सतह पर जहाँ कवक तन्तु दिखते हैं, उनहीं के ऊपर पत्तियों के ऊपरी सतह पर भूरे धब्बे बनते हैं जो कि रोग के तीव्र हो जाने पर आपस में मिलकर बड़े धब्बे बन जाते हैं।

प्रबन्धन :

- पूर्व फसल के अवशेषों को जलाकर एवं सिंचाई की नालियों की सफाई तथा रोगमुक्त बीजों का चयन करें।
- मैंकोज़ेब कवकनाशी के 0.25 प्रतिशत जलीय घोल (2.5 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) का रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पर्णीय छिड़काव एवं 6 से 8 दिन के अन्तराल पर दोहराना चाहिए।

काला गलन : रोग का प्रारम्भिक लक्षण 'V' आकार में पीलापन लिए होता है। रोग का लक्षण पत्ती के किसी किनारे या केन्द्रीय भाग से शुरू हो सकता है।

प्रबन्धन :

- स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट के 100 मिली ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल द्वारा 30 मिनट तक बीजोपचार करें।
- स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 100 मि.ग्रा. प्रति लीटर एवं कापर आक्सीक्लोरोइड 0.3 प्रतिशत (3 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) जलीय घोल के मिश्रण को 0.1 प्रतिशत चिपकने वाले पदार्थ के साथ मिलाकर भी प्रयोग करें।



44. पात गोभी की उन्नतशील खेती

यह रबी मौसम की एक महत्वपूर्ण सब्जी है जिसका प्रदेश के लगभग सभी बड़े शहरों के निकट उत्पादन किया जाता है। इसका प्रयोग विभिन्न सब्जियों एवं व्यंजनों में होता है। इसको बन्धा अथवा बन्दगोभी भी कहते हैं। इसके प्रति 100 ग्राम पदार्थ में प्रोटीन 1.4 ग्राम, वसा 0.2 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट 5.7 ग्राम तथा विटामिन ए, बी, सी, ई पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है। इसमें लोहा, कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा सोडियम आदि लवण भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। पात गोभी की विशिष्ट स्वाद सिनीग्रीन नामक ग्लूकोसाइड की उपस्थिति के कारण होता है।

उन्नत किस्में :

क्र.सं.	प्रजाति	अवधि (दिनों में)	बुवाई का समय	बीज की मात्रा (ग्राम/हे.)	उपज (कु./हे.)
1.	अगेती किस्में	60–80	मध्य सितम्बर से मध्य अक्टूबर	500	300–350
2.	पिछेती किस्में	100–120	मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर	500	350–450

अगेती किस्में — प्राइड ऑफ इण्डिया, गोल्डेन एंकर, अर्ली ड्रमहेड, मीनाक्षी।

पिछेती किस्में — लेट ड्रमहेड, डेनिसबालहेड, मुक्ता, पूसा ड्रमहेड, रेड कैबेज, पूसा हिल टॉपर, कोपेन हेगन मार्केट।

खेत का चयन एवं तैयारी :

पात गोभी रेतीली से भारी लगभग सभी प्रकार की भूमियों में उत्पादित की जा सकती है। सफल खेती के लिए भूमि का जल निकास उत्तम होना आवश्यक है। अम्लीय मिट्टी पात गोभी के लिए अच्छी नहीं होती है। भूमि का पी.एच. मान 5.5 से 7.5 के बीच होना चाहिए। खेत की तैयारी के लिए मिट्टी पलटने वाले हल में पहली जुताई तथा 3–4 दिन बाद देशी हल से जुताई करके एवं पाटा चलाकर खेत भलीभाँति तैयार कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक :

पात गोभी के लिए 300 कुन्तल प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद, 120 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फास्फोरस तथा 60 किग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है। गोबर की खाद को रोपाई के पूर्व भली प्रकार मिट्टी में मिला देना चाहिए। निर्धारित नत्रजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस तथा पोटाश की पूर्ण मात्रा रोपाई के समय तथा नत्रजन की शेष मात्रा रोपाई के एक माह बाद देना चाहिए।

पौध तैयार करना :

एक हेक्टेयर क्षेत्र में रोपाई के लिए पात गोभी की बेहन (पौध) भूमि की सतह से 10 से 15 सेमी. ऊँची, 2.5 मीटर लम्बी तथा 1 मीटर चौड़ी, 10–12 क्यारियों में तैयार हो जाती है। नर्सरी में बोने से पहले प्रति 0.45 किग्रा. बीज को आधा चम्चच सेरेसान से उपचारित करना चाहिए।

रोपण विधि :

अगेती किस्में — पंकित से पंकित की दूरी 45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 45 सेमी.

पिछेती किस्में — पंकित से पंकित की दूरी 60 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 60 सेमी.

सिंचाई :

उचित विकास के लिए भूमि में सदैव नमी बनी रहनी आवश्यक है। अतः फसल की उचित समय पर सिंचाई आवश्यक है। जाड़ों में 10—12 दिन एवं गर्म मौसम होने पर हर सप्ताह सिंचाई करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण / निराई—गुड़ाई :

खेत की दो—तीन बार निराई गुड़ाई करके मिट्टी पोली कर लेना चाहिए। जब पौधे बड़े जो जायें और हेड बनने लगें तो जड़ों पर मिट्टी चढ़ा देना चाहिए अन्यथा पौधों को हानि होने की सम्भावना रहेगी।

फसल सुरक्षा :

पात गोभी की फसल को मुख्य रूप से माहू (एफिड्स) द्वारा हानि पहुँच सकती है। अतः इसके नियंत्रण के लिए डाइमिथोएट 300 ई.सी. या आक्सीडेमेटॉन मिथाइल 25 ई.सी. की एक लीटर मात्रा एक हजार लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।



45. भिण्डी की उन्नतशील खेती

भिण्डी (एबलमास्कस एस्कुलेंट्स) मालवेसी कुल का सदस्य है। यह ग्रीष्म तथा वर्षाकाल दोनों ही ऋतुओं में सफलतापूर्वक उगाई जाती है। भिण्डी के हरे मुलायम फलों का प्रयोग सब्जी, सूप फ्राई तथा अन्य रूप में किया जाता है। आजकल भिण्डी की कैनिंग और फ्रीजिंग भी की जा रही है। पौधे का तना व जड़ गुड़ एवं खाण्ड बनाते समय रस साफ करने के काम में प्रयोग किये जाते हैं। इसके रेसे से रस्सियां बना सकते हैं तथा डण्ठलों को कागज बनाने के काम में प्रयोग किया जाता है।

उन्नत किस्में :

प्रजाति	अवधि (दिनों में)	उत्पादन (कु. / हे.)	बुआई का समय	बीज की मात्रा
पूसा सावनी	40–45 ग्रीष्म 60–64 वर्षा	105–125	फरवरी–मार्च जून–जुलाई	18–20 किग्रा./हे. 10–12 किग्रा./हे.
परभनी क्रान्ति	40–45	85–90 ग्रीष्म 120–130 वर्षा	तदैव	तदैव
वर्षा उपकार	40 वर्षा	90–100	तदैव	तदैव
हिसार उन्नत	46–47 (दोनों हेतु)	120–130	तदैव	तदैव
पूसा ऐ-4	—	100–120	तदैव	तदैव
आजाद क्रान्ति	—	120–125	तदैव	तदैव

खेत का चयन एवं तैयारी : भिण्डी की खेती हर प्रकार की भूमि में की जा सकती है, वैसे अच्छे जल निकासी वाली दोमट भूमि सबसे अच्छी होती है। खेत को एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से 20–25 सेमी. हरी जुताई करके दो–तीन बार हैरो या देसी हल से जुताई करें मिट्टी भुरभुरी कर लेना चाहिए। खेत को अच्छी प्रकार समतल बना लेना चाहिए ताकि सिंचाई करते समय कठिनाई न हो।

खाद एवं उर्वरक : भूमि तैयार करते समय लगभग 25–30 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद खेत में मिलाई जाती है। सामान्य उपजाऊ भूमि में 80 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस एवं 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देते हैं।

बुवाई की विधि : जायद में अच्छे जमाव की दृष्टि से 10–12 घण्टे पहले बीजों को पानी में भिगोना लाभप्रद है। फरवरी में सामान्यतः बीज जमाने में 10–12 दिन का समय लगता है। बुवाई 30 सेमी. की दूरी पर कतारों में की जाती है। एक पौधे से दूसरे पौधे का अन्तर 20–30 सेमी. भी रखते हैं। वर्षा ऋतु में कतारों की दूरी 45–60 सेमी. तथा कतार ने पौधों का अन्तर 20 सेमी. रखते हैं। बुवाई डिबलिंग द्वारा अथवा सीडिल से या हल के पीछे करते हैं।

सिंचाई : यदि भूमि में बुवाई के समय नमी कम हो तो पहले पलेवा करना अनावश्यक है ताकि बीजों का जमाव अच्छा हो सके। ग्रीष्म कालीन फसल से सप्ताह में एक बार सिंचाई करने की आवश्यकता पड़ जाती है। देर से सिंचाई करने पर फल जल्दी सख्त हो जाते हैं। एवं पौधे तथा फल की बढ़वार कम होती है। बरसात के मौसम में यदि काफी लम्बे समय तक वर्षा न हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करते हैं।

खरपतवार नियंत्रण : भिण्डी में मौसमी खरपतवारों की समस्या बनी रहती है और ये फसल को बहुत हानि पहुँचाते हैं। इसलिए इनको नष्ट करना आवश्यक है। भिण्डी का खेत यदि बुआई के बाद प्रथम 30–40 दिन तक खरपतवार रहित रह जाये तो इसके बाद खरपतवार फसल पर विशेष कुप्रभाव नहीं डालते हैं। पेंडीमेथिलीन का 3.3 किग्रा. प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए।

फसल सुरक्षा :

अ. रोग नियंत्रण :

पीत शिरा मोजैक : यह एक वाइरस से फैलने वाला भिण्डी का सबसे व्यापक व हानिकारक रोग है। इसका प्रकोप वर्षा ऋतु की फसल में अधिक होता है। इसे रोग ग्रस्त पौधों की पत्तियों की शिरायें चमकीली व पीले रंग की हो जाती हैं और कुछ दिन बाद पूरी पत्ती पीली पड़ जाती है। नई पत्तियां पीली, छोटी तथा सिकुड़कर मुड़ जाती हैं।

नियंत्रण :

- ◆ पौधों में रोग के लक्षण दिखाई देते ही उनको उखाड़कर जला देना चाहिए।
- ◆ इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 250 मिली. अथवा डाइसेथोएट 30 प्रतिशत ईसी. 1 लीटर 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव फल आने से पूर्व 15 दिन के अन्तर पर करना चाहिए।

ब. कीट नियंत्रण :

जैसिड या हरा फुदका : यह हरे रंग के कीट होते हैं जिनके पीठ के पिछले भाग पर काले धब्बे पाये जाते हैं।

नियंत्रण :

- ◆ इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 250 मिली. अथवा डाइसेथोएट 30 प्रतिशत ईसी. 1 लीटर 500—600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

तना एवं फल छेदक कीट : इस कीट की सूण्डी का रंग सफेद होता है, जिसके ऊपर काले और भूरे धब्बे पाये जाते हैं। इसीलिए इसे चित्तीदार सूण्डी कहते हैं, सूंडियां तने एवं फलों में छेद करके क्षति पहुँचाती हैं जिसके फलस्वरूप तने एवं फल मुरझाकर गिर जाते हैं।

नियन्त्रण : क्यूनालाफॉस / क्लोरपायरीफास (0.05 प्रतिशत) का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव किया जा सकता है।

भिण्डी की तुड़ाई : भिण्डी की तुड़ाई फूल खिलने के 6 — 7 दिन बाद की जाती है। केवल उन्हीं फलों को तोड़ना चाहिए जो नरम हों और जिनके सिरे थोड़ा सा ही मोड़ने पर टूट जाये। साधारणतः हर 3 — 4 दिन के अंतर पर फल तोड़ने योग्य तैयार हो जाते हैं।



46. सब्जी मटर की उन्नतशील खेती

प्रोटीन की धनी सब्जियों में मटर का महत्वपूर्ण स्थान है तथा इसकी खेती उत्तर प्रदेश में कच्चे बीजों वाली हरी फलियों के लिए की जाती है।

उन्नतशील किस्में :

क्र.सं.	प्रजाति का नाम	बुवाई का समय	बीज की मात्रा (किग्रा./हें.)	उत्पादन (कु. / हें.)
1.	अगेती किस्म : अगेता-6, आर्किल, पन्त सब्जी मटर-3, आजाद पी-3, आजाद पी-3	अक्टूबर-नवम्बर	150-160	50-60
2.	मध्य एवं पिछेती किस्में : आजाद पी-1, बोनविले, जवाहर मटर-1 इत्यादि	अक्टूबर-नवम्बर	100-120	60-125

खाद एवं उर्वरक :

200 कुन्तल गोबर खाद खेत तैयारी के समय मिट्टी में भलीभांति मिला देना चाहिए। अच्छी फसल लेने के लिए नाइट्रोजन 40-50 किग्रा., फार्स्फोरस 50 किग्रा. तथा पोटाश 40 किग्रा. प्रति हें. देना आवश्यक है। पूरा फार्स्फोरस एवं पोटाश तथा आधा नत्रजन बुआई के समय तथा शेष नत्रजन बुआई के 25-30 दिन बाद टॉपड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए।

खेत का चयन एवं तैयारी :

इसकी खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली, जीवांशयुक्त दोमट एवं बलुई दोमट भूमित सर्वोत्तम है। खेत को भलीभांति तैयार करने के लिए 4-4 जुताई करके एवं पाटा चलाकर खेत का समतल कर लेना चाहिए। बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है।

बुआई की विधि :

सब्जी वाली मटर को 20-25 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में बोना चाहिए।

सिंचाई :

मटर कम पानी चाहने वाली फसल है लेकिन इसकी बुआई पलेवा करके करना चाहिए। बुआई के समय पर्याप्त नमी होना चाहिए। बुआई के समय पर्याप्त नमी होना आवश्यक है। मटर की फसल में साथ फूल आने की अवस्था तथा फलियों में दाना पड़ने की अवस्था में खेत में उचित नमी होना अत्यन्त आवश्यक है। अतः आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण :

फसल की प्रारम्भिक अवस्था में हल्की निराई-गुड़ाई करके खरपतवार को खत से निकाल देना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण में देर करने से मटर की उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

फसल सुरक्षा :

अ. रोग नियंत्रण

एस्कोकाइटा ब्लाइट : इस रोग से प्रभावित पौधे मुरझा जाते हैं। जड़ें भूरी हो जाती हैं तथा पत्तियों एवं तनों पर भूरे धब्बे पड़ जाते हैं।

नियंत्रण :

❖ बीज को कार्बोण्डाजिम 50 प्रशित डब्लू.पी. (20 ग्राम प्रति 10 किग्रा. बीज) से उपचार करें।

- ❖ संक्रमित पौधों पर कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. (50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव तुरन्त लक्षण देखते ही कर दें।

फ्यूजेरिम विल्ट : इस रोग से मटर के पौधे की जड़ें सड़ जाती हैं तथा पौधे बिना पीले हुए मुरझा जाते हैं।

नियंत्रण :

- ❖ बीज को बोने से पहले कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. (50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) में 2 घण्टे के लिए भिगोयें तथा छाया में सुखाये।
- ❖ अधिक संक्रमित क्षेत्रों में अगेती बुआई न करें।

बैकटीरियल ब्लाइट : भूरे रंग का पनीले धब्बे जड़ों, तनों, शाखाओं के जोड़ों, फलियों तथा पत्तियों के किनारे पर पड़ जाते हैं। रोग के जल्दी प्रकोप से पौधे पूरी तरह मुरझा जाते हैं।

नियंत्रण :

- ❖ बुआई के पहले बीज को 2 ग्राम थीरम तथा 1 ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट के मिश्रण से प्रति किग्रा. बीज की दर से शोधित करें।
- ❖ जहाँ पौधे सूखने की समस्या आ रही हो वहाँ ऊपर लिखे स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट घोल के साथ कार्बैण्डाजिम 50 प्रतिशत डब्लू.पी. (5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी में बीज का उपचार एक ही साथ कर लें।

तुड़ाई :

फूल आने पर सामान्यतया तीन सप्ताह में फलियां तोड़ने योग्य हो जाती हैं। फलियां तैयार होने का समय फसल की देखभाल, मृदा के प्रकार एवं उगाई गयी किस्म पर निभर करता है। सामान्यतः 7–10 दिन के अन्तर पर फलियों की 3–4 तुड़ाई की जाती है।



47. प्याज की उन्नतशील खेती

हमारे जीवन में प्याज का मूहत्वपूर्ण स्थान है। प्याज मुख्यतः बीज द्वारा उगाया जाता है। यह फसल उत्तर प्रदेश के लगभग सभी क्षेत्रों में उगायी जाती है।

उन्नतशील किस्में :

क्र. सं.	किस्म का नाम	बुवाई का समय	बीज की मात्रा (किग्रा./हें.)	रोपाई का समय	उपज (कु. / हें.)
1.	खरीफ : एग्रीफाउन्ड डार्क रेड, बसवन्त 780, एन-53।	डंठ/गांठ (हरी प्याज) के लिए फरवरी एवं पौध के लिए जून	8-10	अगस्त प्रथम पखवारा	200-250
2.	रबी : एग्रीफाउन्ड लाइट रेड, कल्यानपुर रेड, पूसा रेड, नासिक रेड।	मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक	8-10	बुआई के 6-8 सप्ताह बाद	300-350

खेत का चयन एवं तैयारी :

प्याज की फसल हल्की दोमट से लेकर भारी दोमट वाली मृदा में उगाई जा सकती है। अच्छी उर्वरा शक्ति वाली, समतल एवं समुचित जल निकास वाले खेत में प्याज की फसल उगाइना चाहिए। रोपाई से पूर्व खेत की आवश्यकतानुसार जुताई करके तथा पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी कर लिया जाता है।

खाद एवं उर्वरक :

प्याज की अच्छी फसल के लिए अंतिम जुताई के समय गोबर की खाद 25-30 टन प्रति हेक्टेयर की दर से मिलाना चाहिए। रोपाई के समय 200 किग्रा. सी.ए.एन. (कैल्शियम अमोनियम नाइट्रोट) या 100 किग्रा. यूरिया 250-300 किग्रा. सिंगल सुपर फार्मेट तथा 100 से 120 किग्रा. म्यूरोट ऑफ पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। बुवाई के चार सप्ताह बाद 100 किग्रा. यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में समान रूप से छिटकवां विधि से देना चाहिए।

पौध तैयार करना :

बीज को ऊँची उठी हुई क्यारियों में बोया जाता है। परन्तु समतल क्यारियों में भी बोया जा सकता है। क्यारियों की चौड़ाई 0.60 मीटर तथा लम्बाई सुविधानुसार रखते हैं। तीन मीटर लम्बी क्यारियां प्रायः सुविधानुसार रहती हैं। एक हेक्टर की रोपाई के लिए 80-100 क्यारियाँ (3.0×0.06 मी.) पर्याप्त होती हैं। बीज जब अच्छी तरह अंकुरित हो जाये तो यह घास हटा देना चाहिए। इसके पहले यदि सिंचाई की आवश्यकता हो तो सूखी घास हटाकर फव्वारे से करें। सिंचाई के बाद पुनः क्यारियों को ढक दिया जाता है। बीज अंकुरित होते ही सूखी घास हटा देना चाहिए। पौध 7-8 सप्ताह में तैयार हो जाती है। शुरू में 4 सप्ताह तक पौध की सिंचाई फव्वारे से कर सकते हैं।

सिंचाई :

सिंचाई आवश्यकतानुसार करते हैं। जाड़ों में सिंचाई लगभग 10 से 15 दिन के अन्तर पर परन्तु गर्मियों में प्रति सप्ताह सिंचाई आवश्यक होती है। यदि मिट्टी ज्यादा रेतीली है तो गर्मियों में सिंचाई हर तीसरे दिन करना चाहिए। सी.ए.एन. उर्वरक डालने से पहले तथा यूरिया डालने के बाद सिंचाई करें तो अच्छा रहता है।

रोग नियंत्रण :

स्टेफीलियम झुलसा एवं पर्फल ब्लॉच नामक रोग लगने पर मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. को 2.5 किग्रा. अथवा कार्बेंडाजिम 12 प्रतिशत + मैंकोज़ेब 63 प्रतिशत डब्लू.पी. 2.0 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में 10 से 15 दिनों के अंतर पर छिड़काव करना चाहिए। दवा का छिड़काव करते समय चिपकने वाला पदार्थ जैसे ट्राईटोन या सैन्डोविट 450 मिली. जरूर मिला लेना चाहिए।

कीट नियंत्रण :

फसल को हानिकारक कीटों से बचाना चाहिए। प्याज में थ्रिप्स नामक कीट लगने पर 750 मिली. मैलाथियान या 1 लीटर क्यूनालफास को 750 लीटर पानी में घोलकर कीट देखते ही छिड़काव करें। घोल में ट्राइटोन या सैण्डोविट 450 मिली. अवश्य मिला लें। आवश्यकता पड़ने पर इस दवा का और भी छिड़काव करते हैं। प्याज खोदने के 10 दिनों के पूर्व छिड़काव बंद कर देना चाहिए।

खुदाई, सुखाना एवं भण्डारण :

प्याज को भण्डारण करने के लिए निम्न बातों की जानकारी होना बहुत ही आवश्यक होता है –

- ❖ खरीफ की फसल को तैयार होने में लगभग 2.5 से 3 माह लग जाते हैं क्योंकि गांठे नवम्बर से दिसम्बर में तैयार होती है जिस समय तापमान काफी कम होता है। पौधे पूरी तरह से सूख नहीं पाते इसलिए जैसे ही गांठे अपने पूरे आकार की हो जाए एवं उनका रंग लाल हो जाये तब करीब 10 से 15 दिन खुदाई से पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। इससे गांठे सुडौल एवं ठोस हो जाती हैं तथा उनकी वृद्धि रुक जाती है।
- ❖ पत्तियों को गर्दन से 2.5 सेमी, ऊपर से अलग कर देते हैं और फिर एक सप्ताह तक सुखाते समय सड़े-कटे हुए दोफाड़े, पाईप वाली एवं अन्य खराब किस्म की गांठे निकाल देते हैं।
- ❖ रोपाई के 75 दिनों बाद 2000–2500 पी.पी.एम. मैलिक हाइड्राजाइड रसायन का छिड़काव तथा खुदाई से 10 से 15 दिनों पहले सिंचाई रोकने से भण्डारण में होने वाली क्षति कम होती है।
- ❖ पत्तियों सहित धूप में सुखाने तथा अच्छी तरह से गांठों की सुखाई करके भण्डारण से क्षति कम होती है।



48. लहसुन उत्पादन की उन्नत तकनीक व प्रसंस्करण

लहसुन की खेती इसके औषधीय गुण के लिए की जाती है। उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जनपद में लहसुन की बहुतायत में की जाती है। लहसुन का उपयोग सम्पूर्ण विश्व में मसालों या विभिन्न दवाइयों के रूप में होता है। इसी लिए लहसुन विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाली महत्वपूर्ण मसाला फसल है। भारत में यह व्यवसायिक रूप से उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण कंदवर्गीय फसल है लहसुन ताजा सुखाकर अर्थात् प्रसंस्करण कर उपयोग में लाया जाता है। सभी प्रकार के शाकाहारी व माँसाहारी भोजन में लहसुन सुगन्ध के लिए मसाला अवयव के रूप में उपयोग किया जाता है। ताजे लहसुन में खाद्य पदार्थ जैसे कार्बोहाइड्रेट (62.8 प्रतिशत), प्रोटीन (63.3 प्रतिशत), लवण (1.0 प्रतिशत), रेशे (0.8 प्रतिशत) इसके अतिरिक्त कैल्शियम, फास्फोरस, लोहा इत्यादि तत्व पाये जाते हैं। आमवात व गठिया दर्द, पक्षाघात, कम्पनवात, अजीर्ण आफरा, हृदयरोग (कोलेस्ट्राल नियंत्रण हेतु) सम्बन्धी बीमारियों इत्यादि में लहसुन का उपयोग लाभकारी पाया जाता है। लहसुन में कीटनाशक गुण होने की वजह से इसके अर्क व तेल का इस्तेमाल दवा बनाने व उन्हें फसलों में कीटों के लार्वा व प्यूपा की रोकथाम के लिए किया जाता है।

जलवायु एवं भूमि का चुनाव : लहसुन की उपज के लिए ठण्डी व नम जलवायु उपयुक्त रहती है। कन्द बनने के लिए लम्बे व शुष्क दिन फायदेमन्द रहते हैं। कन्द बनने के पश्चात यदि तापमान कम हो जाय तो कन्दों का विकास और अधिक अच्छी तरह से होगा। लहसुन की खेती के लिए प्रचुर मात्रा में जीवाश्म व जल निकास युक्त दोमट भूमि सर्वोत्तम है। गांठों के समुचित विकास व अच्छे रंग के लिए इस प्रकार की मिट्टी उत्तम मानी जाती है। भारी मिट्टी वाले क्षेत्र में लहसुन की खेती अनुपयुक्त है।

खेत की तैयारी : खेत की 3 से 4 बार जुताई करके खेत तैयार कर मिट्टी को भुरभुरा बना लेना चाहिए। यदि खेत में नमी कम हो तो पलेवा कर लेना अच्छा होता है। जुताई से पहले खेत में जैविक खाद, गोबर की खाद या कम्पोस्ट को एक साथ बिखेर देते हैं, जिससे जुताई के समय खाद खेत में अच्छी तरह मिल जाती है। मिट्टी के अनुसार 200–300 कुन्तल प्रति हैं। तक गोबर की खाद का उपयोग करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : खेत की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए खेत की तैयारी के समय खादों का प्रयोग कर लेना चाहिए। यह लहसुन फसल की उत्पादन क्षमता को बढ़ाने में सहायक है। खेत की अंतिम जुताई के समय प्रति है 100 किग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश, 100 किग्रा. यूरिया एवं 300 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट उर्वरकों को मिला देना चाहिए। इसके साथ ही लहसुन की खड़ी फसल में एक माह पश्चात् 500 किग्रा. प्रति है। यूरिया की टॉप ड्रेसिंग करने से आशातीत लाभ होता है।

बीज व बुआई का समय : बुवाई हेतु लहसुन बीज का चुनाव करते समय कुछ बातों का ध्यान रखें। लहसुन स्वस्थ, बड़े व आर्कषक कन्दों में हो। लहसुन की बुवाई के लिए इनकी पुत्तियों (जवों) को पृथक—पृथक कर लें। कन्द / जवे संक्रमित न हों, कटा न हो, दाग व चोट रहित हो। बराबर आकार की बड़ी व सफेद रंग की मोटी त्वचा वाली हो। औसतन 5–7 कुन्तन प्रति हैं। की दर से इन जवों की बुआई हेतु आवश्यकता पड़ती है। उत्तर प्रदेश में लहसुन की बुआई का उपयुक्त समय नवम्बर माह है। लहसुन की बुआई में कतार से कतार की दूरी 15 सेमी., पौध से पौध की दूरी 8 सेमी. की तथा जवों को 4–5 सेमी. की गहराई पर रखकर बुआई की जाती है। बुआई के समय खेत में नमी होना जरूरी है यदि नमी कम है तो बुआई के तुरन्त बाद पानी का हल्का छिड़काव करना बेहतर होता है।

लहसुन की उन्नतशील प्रजातियाँ : लहसुन की उन्नत किस्मों में यमुना सफेद-1, यमुना सफेद-2, यमुना सफेद-3 तथा एग्रीफाउण्ड सफेद, एग्रीफाउण्ड पार्वती एवं पन्त लोहित आदि प्रचलित हैं।

खरपतवार नियंत्रण : लहसुन में अच्छी फसल लेने के लिए दो—तीन उथली निकाई—गुड़ाई करनी चाहिए और खुरपी द्वारा निराई करके फसल को खरपतवार से मुक्त किया जा सकता है। रसायन जैसे पेंडीमेथिलीन 30 ई.सी. की 3.3 लीटर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 4–5 सप्ताह पश्चात् फसल पर छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई : लहसुन की अच्छी उपज के लिए 7–8 दिन के अन्तराल पर या आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए। गांठों के बनने के समय खेत में पर्याप्त नमी का होना गांठों के समुचित विकास के लिए अच्छा होता है।

खुदाई एवं सुखाना : जब लहसुन की पत्तियों का ऊपरी भाग सूख कर भूमि की सतह पर झुक जाए तब लहसुन की खुदाई का उपयुक्त समय है। गांठों की खुदाई के 12–15 दिन पूर्व किसी भी तरह से खेत में सिंचाई नहीं करनी चाहिए। गांठों को खोदने के पश्चात् उसे किसी छायादार स्थान में रखकर 4–5 दिन रखकर सुखाना चाहिए। गांठों की पत्तियों व जड़ों को अच्छी तरह साफ कर लेना चाहिए।

ऊपज व भण्डारण : लहसुन की 100–125 कुन्तल प्रति है। गांठों की अच्छी उपज अच्छी मानी जाती है। लहसुन की फसल मार्च–अप्रैल में खोदी जाती है और इसे साल भर सुरक्षित रखा जाता है। क्योंकि इसकी आवश्यकता सालभर रहती है। भण्डारण के लिए निम्न बातों का ध्यान रखें :

- ◆ गांठों को अच्छी तरह सुखा ले।
- ◆ अच्छी तरह से पके ठोस व स्वस्थ कन्दों का चुनाव करें।
- ◆ गांठों के छोटे–छोटे गुच्छों में बांधकर लटका दें या बांस की टोकरी में रखें।
- ◆ भण्डारण गृह नमी रहित हवादार हो कन्दों की बीच–बीच में देखभाल कर खराब व सूखे कन्दों को निकालते रहें।
- ◆ भण्डार गृह की समय–समय पर साफ सफाई करें।

लहसुन प्रसंस्करण : लहसुन की कलियों से स्वादिष्ट अचार, चटनी, पेस्ट व पाउडर बनाए जाते हैं। लहसुन मांस, मछली में गंध को दबाने व सुगंधित करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। ताजे लहसुन को निर्जलीकृत लहसुन पाउडर बनाकर और ग्रेन्यूल्स (दाने के रूप में) विदेशों में निर्यात कर विदेशी मुद्रा अर्जित की जाती है। लहसुन प्रसंस्करण के मुख्य उत्पादन फ्लेक्स, पाउडर, चटनी, अचार, तेल इत्यादि है, जो कि खाद उत्पाद के रूप में बहुत पसंद किए जाते हैं। खासतौर पर बड़े–बड़े होटलों में इनकी काफी मांग है वैसे तो लहसुन की कली अपनी सामान्य अवस्था में कोई महक नहीं देती, लेकिन जब इसे तोड़ा या छीला जाता है तो एलीमेन एन्जाइम की क्रिया द्वारा इसमें विद्यमान एलीन एलीसन में बदलकर एक तेज महक देता है। लहसुन प्रसंस्करण हेतु सर्वप्रथम लहसुन की गांठों को तोड़ना या कलियों की पिचकाई व पिसाई, पेस्ट बनाने हेतु छिलाई फिर गीली कलियों की पिसाई, कलियों से आसवन विधि द्वारा तेल प्राप्त करना प्रमुख क्रियाएं हैं। लहसुन से मूल्यवर्धक उत्पाद बनाने का मुख्य उद्देश्य लहसुन का आसानी से निर्यात सूखे लहसुन (फ्लेक्स) व निर्जलीकृत पाउडर के रूप में परिवहन में भार घटाकर व भण्डारण अवधि बढ़ाकर विदेशी मुद्रा अर्जित करना है। इसकी वजह से किसान बन्धु लहसुन की फसल खेती के रूप में अपनाकर अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं।



49. मिर्च की उन्नतशील खेती

मिर्च, अचार और मसाले की उपयोगी फसल है।

जलवायु एवं मिटटी :

मिर्च की फसल जायद और खरीफ दोनों में उगायी जाती है। अच्छे जल निकास वाली उपजाऊ दोमट या बलुई दोमट भूमि उपयुक्त होती है।

उन्नतशील किस्में :

किस्में	फलों की लम्बाई (सेमी. में)	तीखापन	उपज हरी मिर्च (कुन्तल / हेठो)
पन्त सी-1	5-6	अधिक	90.00
एन.पी. 46-ए चंचल	7-9	सामान्य	60.00
पूसा ज्वाला	8-11	सामान्य	70.00
के-5452	6	सामान्य	20-22 (सूखी)

उपरोक्त किस्मों में। पूसा ज्वाला सबसे पहले तथा पन्त सी-1 बाद में फलत में आती है लेकिन दोनों के अन्तर केवल 7-10 दिन का होता है। पन्त सी-1 किस्म में विषाणु रोग का प्रभाव बहुत कम होता है तथा इसकी फलने की अवधि और किस्मों से अधिक है अन्य किस्मों में विषाणु का प्रभाव अधिक होता है। कभी-कभी पूरी फसल खराब हो जाती है।

पौध की तैयारी एवं रोपाई :

एक हेठो क्षेत्रफल के पौध के लिए 1.5 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। पौध के लिए मई से जुलाई तथा फरवरी से मार्च में बुआई की जाती है।



जब पौधे एक या डेढ़ महीने के हो जाते हैं। तो उसकी रोपाई जुलाई से सितम्बर में 60 सेमी. की दूरी पर कतारों में 40 सेमी. पौधों की दूरी रखी जाती है जबकि मार्च से अप्रैल में 45 सेमी. कतारों में तथा पौधों की दूरी 30 सेमी. रखी जाती है। सिंचाई-गुड़ाई करना चाहिए। रोपाई के दो दिन पर पौधों के चारों ओर मिटटी चढ़ा देना चाहिए, पौधे गिरने से बच जाते हैं।

फसल की रक्षा :

मिर्च की फसल में कभी-कभी थिप्स (छोटे कीड़े) पत्तियों का रस चूस लेते हैं। उनसे फसल बचाव के लिए 10 प्रतिशत मैलाथियान धूल 20-25 किग्रा. प्रति हेठो की दर से बुरकाव अथवा 0.9 प्रतिशत मैलाथियान का 400-500 लीटर पानी का घोल बनाकर प्रति हेठो की दर से छिड़काव करना चाहिए। मिर्च में पत्ती का सिकुड़न (लीफ कर्ल) वाली भयंकर बीमारी हो जाती है। इस बीमारी के प्रकोप से



पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं जिससे पौधों की प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया बाधित होती है अन्ततः फसल की उत्पादकता प्रभावित होती है।

उकठा रोग के प्रकोप से पूरा पौधा सूख जाता है। इस बीमारी के लक्षण परिलक्षित होने पर प्रभावित पौधे को उखाड़कर जमीन में दबा देना चाहिए। इसके अलावा खेत के जिस हिस्से में उकठा की बीमारी हो जाये, उसमें 5–6 वर्ष तक मिर्च की फसल नहीं लेनी चाहिए। रोग से बचाव के लिए रोगरोधी किस्म लगाना चाहिए। ट्राइकोडर्मा से भूमि शोधन करना चाहिए। सतर्कता बरतने के लिए आवश्यकतानुसार मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. का छिड़काव करना चाहिए।

फलियों की तुड़ाई :

मिर्च की फलियां जब पककर लाल हो जायं तो इनकी तुड़ाई करना चाहिए। आम तौर से फलियां दिसम्बर से जनवरी में पकती हैं।

उपज :

प्रति हेटो ताजी लाल मिर्च की 40–80 कुन्तल और सुखाई हुई मिर्च 8–10 कुन्तल पैदा होती है।



50. आम की उन्नतशील खेती

आम भारत का राष्ट्रीय फल है। भारत में आम उगाने वाले क्षेत्रों में सर्वाधिक क्षेत्रफल उत्तर प्रदेश में है। आकर्षक रंग, स्वाद व सुगंध वाला यह फल विटामिन 'ए' व 'बी' का प्रचुर स्रोत है। इसका प्रयोग फल की हर अवस्था में किया जा सकता है। कच्चा आम चटनी, अचार व अनेक प्रकार के पेय के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इससे अनेक प्रकार के स्वैच्छिक, जैम, जैली, सीरप तथा नैकटर बनाये जाते हैं।

भूमि एवं जलवायु :

आम हर प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है। अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी अच्छी है। इसकी अच्छी वृद्धि हेतु 2–2.5 मीटर गहरी मृदा की आवश्यकता होती है। आम उष्ण व समशीतोष्ण जलवायु में पैदा होता है तथा समुद्र तल से 600 मी. की ऊँचाई तक पैदा किया जा सकता है। यह 4.4° – 43.3° सेंट्रें. वार्षिक तापमान वाले क्षेत्रों में पनपता है परन्तु 23.8° – 26.6° सेंट्रें. को इसके लिए आदर्श तापमान माना गया है।

किस्में :

- बम्बई हरा :** यह अगैती किस्म है। इसे माल्दा तथा सरौली भी कहते हैं। फल मध्यम आकार का अण्डाकार तथा पकने पर हरापन लिए होता है। इसकी भण्डारण क्षमता कम होती है।
- रटौल :** यह भी अगैती किस्म है। इसका फल छोटे आकार का अण्डाकार रंग हरा—पीला सुगंधयुक्त व मीठा होता है।
- दशहरी :** यह मध्य मौसम की सबसे लोकप्रिय किस्म है। फल मध्यम आकार का, रंग हरा—पीला, मीठा व सुगंधयुक्त होता है। इसकी भण्डारण क्षमता अधिक (लगभग 10 दिन) है।
- लगड़ा :** यह भी एक मध्य मौसम की किस्म है। इससे रुहअफजा, दरभंगा तथा हरदिल अजीज भी कहते हैं। फल बड़ा तथा पकने पर हरापन लिए होता है, गूदा, सुगंधयुक्त, मीठा होता है। इसकी भण्डारण क्षमता लगभग 4 दिन होती है।
- चौसा :** यह पिछेती किस्म होती है। इसे काजरी व खाजरी भी कहते हैं। पका फल बड़े आकार का हरा—पीला रंग लिए होता है तथा गूदा मीठा व सुगंधयुक्त होता है। इसकी भण्डारण क्षमा लगभग 5 दिन है।
- फजली :** यह भी पिछेती किस्म है। इसे फजली भी कहते हैं। फल का आकार मध्यम तथा रंग पीला होता है। गूदा सुगंधयुक्त होता है। इसकी भण्डारण क्षमता कम होती है।
- रामकेला :** यह देर से पकने वाली किस्म है। इसका फल पके पर भी खट्टा होता है। यह अचार के लिए सर्वोत्तम किस्म है।
- मल्लिका :** यह किस्म नीलम तथा दशहरी किस्मों के संयोग से विकसित की गयी है। यह नियमित रूप से फलने वाली मध्य मौसम की किस्म है। इसका फल लम्बा, बड़ा, कैडिमियम के रंग की भाँति पीला व स्वादिष्ट होता है। इसकी भण्डारण क्षमता अधिक है, किन्तु फलत कम है। इसके फल, निर्यात के लिए अच्छे प्रमाणित हो रहे हैं।
- आम्रपाली :** यह दशहरी एवं नीलम किस्मों के संयोग से विकसित की गयी है। यह मध्य मौसम की बौनी व नियमित फलत वाली किस्में है। इसके एक हैक्टर में 2.5×2.5 मी. पर 1600 पौधे लगाये जा सकते हैं।
- सौरभ :** यह दशहरी एवं फजरी जाफरानी के संयोग से विकसित की गयी है। यह मध्य मौसम की किस्म है। फल मध्यम लम्बा व पकने पर हरापन लिए हुए सुनहरा पीला होता है। गूदा ठोस, रेशा रहित सुनहरा, पीला, मीठा व सुगंधयुक्त होता है।
- गौरव :** यह दशहरी एवं तोतापरी, हैदराबाद किस्मों का संकर है। यह भी मध्य मौसम की किस्म है। फल अत्यन्त सुन्दर, मध्यम आकार का लम्बा व पकने पर लाल आभा लिए हुए सुनहरा—पीला, मीठा व सुगंधयुक्त होता है। इसकी फलत कम है किन्तु भण्डारण क्षमता अधिक होने के कारण इसके सुन्दर व स्वादिष्ट फलों को निर्यात किया जा सकता है।
- राजीव :** यह दशहरी एवं रोमानी का संकर है। यह जुलाई के तीसरे सप्ताह में पकती है। फल मध्यम रोमानी किस्म के फल जैसा गोल व पकने पर हरा—पीला होता है। गूदा मुलायम, नींबू जैसा पीला, रेशारहित खट्टा—मीठा व

सुगंधियुक्त होता है। अधिक नियमित फलत तथा अपेक्षाकृत हल्का पीला व खटासयुक्त मीठा गूदा होने के कारण इसके फलों को आम उद्योग में प्रयोग किया जा सकता है।

13. **अंबिका (2000)** : आम्रपाली और जनार्दन पसंद के बीच एक क्रॉस, फल तिरछा अंडाकार, गहरे लाल रंग के ब्लश के साथ चमकीला पीला, गूदा गहरे पीले रंग का, स्केन्टी फाइबर युक्त होता है और इसका वजन लगभग 300–350 ग्राम होता है। यह एक नियमित फलत वाली किस्म है और परिपक्वता में देर से होती है। हाइब्रिड में इसके हल्के रंग के कारण आंतरिक और निर्यात दोनों बाजारों में माग है। रोपण के लगभग 10 वर्षों तक 80 किग्रा./पौधा उत्पादन देता है।
14. **अरुणिका (2008)** : आम्रपाली और वनराज के बीच एक क्रॉस, पेड़ बौना और कॉम्पैक्ट होता है। फल चिकना, नारंगी लाल लाल ब्लश के साथ होते हैं। वजन लगभग 190–210 ग्राम। मध्यम आकार, ओवेट तिरछा, लुगदी नारंगी पीला, स्कैन्टी फाइबर युक्त होता है। हाइब्रिड में अपने आकर्षक फलों के रंग के कारण आंतरिक और निर्यात दोनों बाजारों के लिए उपयुक्त है। औसत फल की उपज रोपण के 8 वर्षों में लगभग 69 किग्रा./पौधा है।

रोपण :

मई–जून के महीने में किस्म के अनुसार 8 से 10 मीटर की दूरी पर एक घनमीटर आकार के गड्ढे खोदने चाहिए। इन गड्ढों को तेज धूप में लगभग 15 दिन खुला छोड़ देना चाहिए, जिससे उसकी मिट्टी में उपस्थित बैकटीरिया व कीड़े आदि तेज गर्भ से समाप्त हो जाये, तत्पश्चात खाद एवं मिट्टी की समान मात्रा के मिश्रण से भरकर सिंचाई कर देनी चाहिए, जिससे गड्ढों की मिट्टी बैठ जाय। पौधे लगाने का सर्वोत्तम समय जुलाई है।

पोषण :

पेड़ की आयु वर्षों में	कम्पोस्ट (किग्रा.)	मात्रा प्रति पेड़ (ग्राम) तत्व के रूप में					
		नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश	कॉपर सल्फेट	जिंक सल्फेट	बोरेक्स
1	10	100	50	100	25	25	—
2	20	200	100	200	50	50	—
3	30	300	150	300	75	75	—
4	40	400	200	400	100	100	—
5	50	500	250	500	125	125	125
6	60	600	300	6100	150	150	150
7	70	700	350	700	175	175	175
8	80	800	400	800	200	200	200
9	90	900	450	900	225	225	225
10	100	1000	500	1000	250	250	250

आम में पोषक तत्वों की मात्रा को उपरोक्तानुसार 10 वर्ष तक बढ़ाते रहना चाहिए। इसके बाद यही मात्रा निश्चित कर देनी चाहिए। उपरोक्त मात्रायें एक औसत उपजाऊ भूमि के लिए संस्तुति की गयी है। मिट्टी की जाँच के आधार पर अधिक उपजाऊ मिट्टियों के लिए यह मात्रायें कम अथवा अधिक की जा सकती हैं।

कीट एवं रोग नियंत्रण :

1. आम का भुनगा अथवा लस्सी कीट (मैंगो हापर) :

यह एक छोटा तिकोने शरीर वाला आम का सबसे विनाशकारी कीट है। इस कीट के नियंत्रण हेतु कीटनाशकों को प्रथम छिड़काव बौर के 2–3 इंच अवरथा पर, द्वितीय छिड़काव 15–20 दिन के बाद और तृतीय छिड़काव जब फल सरसों के दाने के आकार के हो जाये तथा निम्नलिखित कीटनाशकों में चयन कर प्रयोग करना चाहिए –

- ◆ बुप्रोफेजिन 25 प्रतिशत ई.सी. 1–2 मिली प्रति लीटर पानी में।
- ◆ डाईमथोएट 30 ई.सी. 1.6 से 2.0 मिली. प्रति लीटर पानी में।

2. मैंगो मीलीबग :

इस कीट की प्रौढ़ मादा सफेद, चपटी, मोटी अण्डाकार तथा पंखहीन होती है। इसके शिशु कीट और प्रौढ़ मादा कोमल शाखाओं व वृन्तों से रस चूसते हैं तथा उनके द्वारा उत्सर्जित चिपचिपे पदार्थ का विसर्जन करते हैं जिस पर काली फफूँदी उग जाती है। अधिक प्रकोप में फल गिर जाते हैं। मादा कीट अप्रैल, मई माह में वृक्ष से उतर कर जमीन में लगभग 15 सेमी. गहराई तक थैली में अण्डे देती है, जिससे दिसम्बर—जनवरी में शिशु निकलते हैं, जो पेड़ों के ऊपर धीरे—धीरे रेंग कर चढ़ते हैं। इनकी रोकथाम के लिए मई—जून के माह में बाग की गहरी खुदाई करनी चाहिए ताकि अण्डे ऊपर आकर तेज धूप से नष्ट हो सके। दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक थालों की गुडाई कराकर कार्बोफ्यूरॉन 03 प्रतिशत सी.जी. 100—150 ग्राम प्रति थाले के हिसाब से मिट्टी में मिला देना चाहिए। दिसम्बर के अंतिम सप्ताह तक वृक्ष के मुख्य तने पर लगभग 1/2 मीटर की ऊँचाई पर 25—30 सेमी. चौड़ी 400 गेज की पालीथीन शीट को पतली सुतली से बाँधकर दोनों सिरों को चिकनी मिट्टी अथवा ग्रीस का लेप करना चाहिए। ऊपर गये कीटों के नियंत्रण हेतु उपरोक्त दर्शाई गई दवाओं में से किसी एक दवा का छिड़काव करें।

3. शल्क कीट (स्केल इनसेक्ट) :

शल्क कीट की कई प्रजातियाँ हैं, जो आम को अत्याधिक हानि पहुँचाती है। इन कीटों के शिशु व प्रौढ़ मुलायम टहनियों व पत्तियों की निचली सतह पर सैंकड़ों की संख्या में चिपके रहते हैं तथा रस चूसकर वृक्ष की पत्तियों पर एक प्रकार चिपचिपा पदार्थ (हनीडियू) छोड़ते हैं, जिस पर काली फफूँदी उग जाती है—

- ◆ क्यूनालफास 25 ई.सी. दर 2.0 मिली. प्रति लीटर पानी में।
- ◆ नीम ऑयल 0.03 प्रतिशत का प्रयोग करें।
- ◆ इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. का प्रयोग करें।
- ◆ डाईमेथोएट 30ई.सी.1.6 से 2.0 मिली. प्रति लीटर पानी में।

पहला छिड़काव फरवरी माह में बौर निकलने के बाद फूल परन्तु फूल खिलने से पूर्व तथा द्वितीय छिड़काव 15—20 दिन पश्चात् फल सरसों के दाने के आकार का हो जाये करना चाहिए।

4. तना बेधक (स्टेम बोरर) :

प्रौढ़ कीट लगभग 5 सेमी. लम्बा तथा राख के रंग का होता है। पूर्ण विकसित गिडार लगभग 8 सेमी. से 9.50 सेमी. तक लम्बी मटमैले रंग की होती है। इसकी गिडार तने को छेदकर सुरंग बना लेती हैं, जिससे पेड़ कमजोर हो जाता है। अधिक प्रकोप में कभी—कभी पेड़ सूख जाते हैं। इस कीट के नियंत्रण हेतु मिट्टी का तेल या पेट्रोल या एल्यूमिनियम फास्फाइड तने में किये छिद्र में डालकर छेद को गीली मिट्टी में बंद कर देना चाहिए। कार्बोफ्यूरॉन बेंजोएट 5 प्रतिशत 5जी. का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

5. शाखा बेधक कीट (शूट बोरर) :

इस कीट की सूड़ियाँ अण्डे से निकलकर मुलायम पत्तियों की मध्य शिरा के अन्दर छेद करके घुस जाती हैं। उसके बाद मध्य शिरा से निकलकर मुलायम टहनियों के अग्रभाग से यह कीट अधिक हानि पहुँचाता है तथा इसका प्रकोप मार्च—अप्रैल तथा अगस्त से अक्टूबर तक रहता है। इसकी रोकथाम हेतु साइकोसिल 50 डब्लू.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में बनाये घोल का 2—3 छिड़काव 15—20 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

रोग :

1. खरा (पाउड्री मिल्ड्चू) : यह रोग ओडियम मैन्जीफेरी नाम फफूँदी से उत्पन्न होता है। इसमें पुष्प वृन्त, छोटे—छोटे अविकसित फल एवं उनके वृन्त सफेद चूर्ण से ढक जाते हैं। रोग ग्रसित पुष्प वृन्तों में फूल नहीं आते तथा छोटे—छोटे फल पीले पड़कर सूखकर गिर जाते हैं।

नियंत्रण :

इसकी रोकथाम के लिए फफूँदीनाशक सल्फर 80 प्रतिशत डब्लू.पी. अथवा मैंकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2—2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से या घुलनशील गंधक दो ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

2. कोयलिया (ब्लैक टिप) :

यह रोग ईंट के भट्ठे के आसपास के क्षेत्रों में उसकी निकली विषेली गैस सल्फर डाई आक्साइड तथा इथाइलीन गैस के कारण होता है। इस रोग के कारण पहले फल का निचला हिस्सा हल्का काला पड़ता है। बाद में भूरा और अंत में काला पड़ जाता है।

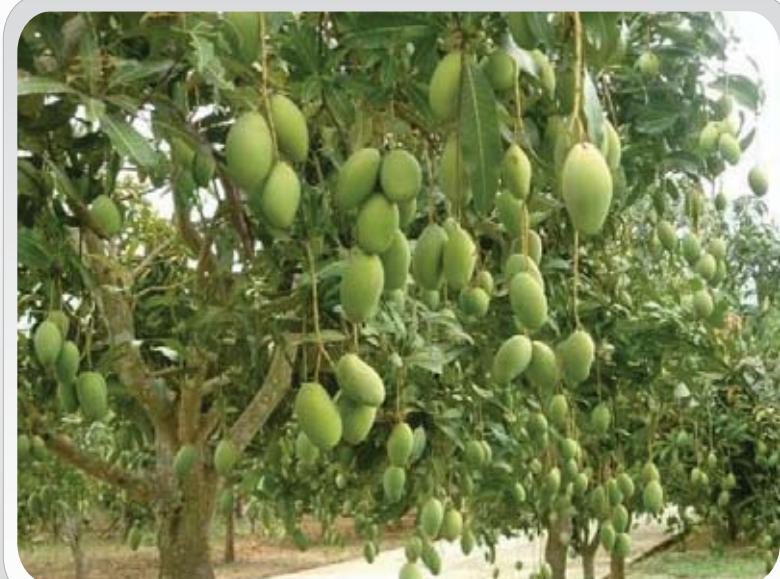
जिन फलों पर इस रोग का कम असर होता है उनके निचले भाग चोंच-दार हो जाते हैं। यह रोग अप्रैल-मई में अधिक होता है। सघन आम प्रक्षेत्र में ईंट के भट्ठे नहीं खुलने देना चाहिए। प्रकोप दिखलाई देने पर इसके लिए बोरेक्स (सुहागा) 6 से 10 ग्राम, प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर दो बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव जब फल कांच की गोली के बराबर हो जाये तथा दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करना चाहिए।

3. फल का आन्तरिक सङ्ग्रह (इन्टरनल नेक्रोसिस) :

यह रोग बोरोन की कमी के कारण होता है। इस रोग में पहले फल के ऊपर बूंद के समान साव दिखाई देता है, वह भाग जलीय धब्बों के समान हो जाता है तथा अन्त में भूरा होकर अन्दर गूदा सङ्ग्रह के कारण जाली पड़ने से बीज के किनारे काले हो जाते हैं। सतह चमड़े जैसी हो जाती है। ऐसे फलों का बीज सङ्ग्रह एवं फटा होता है तथा सङ्ग्रह फल के बीच से आरम्भ होती है। ग्रसित फल परिपक्वा से पूर्व ही गिर जाते हैं। इसके निदान हेतु बोरेक्स (सुहागा) 6 से 10 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर फल के कांच की गोली के बराबर होने पर छिड़काव करना चाहिए तथा द्वितीय छिड़काव उसके 15 दिन बाद करना चाहिए।

4. गोंद निकलने का रोग (गमोसिस) :

यह रोग पौधों में सूक्ष्म तत्व जिंक, तांबा, बोरोन तथा कैल्शियम की कमी से असंतुलन के कारण होता है। ग्रसित वृक्ष की टहनी की छाल में हल्की दरारें बन जाती हैं, जिनमें से गोंद की छोटी-छोटी बूंदे निकल कर दरारों को ढक लेती हैं। गम्भीर प्रकोप होने पर शाखाओं व तनों से बहुत अधिक गोंद निकलता है तथा शनैः-शनैः वृक्ष सूख जाते हैं। गोंद निकलने की शिकायत होने पर 10 वर्ष या अधिक के वयस्क वृक्ष के थाले में 250 ग्राम नीला तूतिया (कापर सल्फेट), 250 ग्राम जिंक सल्फेट 125 ग्राम (सुहागा) बोरेक्स तथा 100 ग्राम बुझा हुआ चूना का मिश्रण वृक्ष में डालकर मिट्टी में मिलाना चाहिए तथा तुरन्त हल्की सिंचाई करनी चाहिए। छोटे वृक्षों में उपरोक्त मिश्रण की मात्रा कम कर देनी चाहिए।



51. अमरुद की उन्नतशील खेती

भूमि :

अमरुद को लगभग प्रत्येक प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु उपजाऊ बलुई दोमट भूमि अच्छी रहती है। कभी—कभी क्षारीय भूमि में उकठा रोग के लक्षण आते हैं। प्रयागराजी सफेदा में 0.35 प्रतिशत खारापन सहन करने की क्षमता रहती है।

प्रवर्धन : मुख्य रूप से भेंट कलम, गूटी तथा पैच वडिंग है।

किस्में : अमरुद की प्रमुख प्रजातियाँ जो बागवानी के लिए उपर्युक्त पाई गई हैं, वे इस प्रकार हैं—

प्रयागराजी सफेदा : इसकी पैदावार 450—600 फल प्रति पौधा। यह किस्म बागवानी हेतु उत्तम है।

सरदार (लखनऊ—49) :

फलत 400—500 फल प्रति पौधा। इस प्रजाति के पौधे ग्वावा विल्ट के लिए सहिष्णु होते हैं। व्यावसायिक दृष्टि से यह प्रजाति उत्तम प्रमाणित हो रही है।

सेबनुमा अमरुद (एपिल कलर ग्वावा) :

रंग सिन्दुरी, खुरदुरा गूदा पीलापन लिए सफेद, मीठा और हल्की सुगन्ध, औसत पैदावार 150—200 फल प्रति पौधा, रंग केवल जाड़ों की फसल पर ही आता है।

इलाहाबादी सुरखा :

रंग सिन्दुरी, खुरदुरा गूदा पीलापन लिए सफेद, मीठा और हल्की सुगन्ध, औसत पैदावार 200—400 फल प्रति पौधा। यह प्रजाति प्राकृतिक म्यूठेन्ट के रूप में विकसित हुई है।

बेहट कोकोनट :

यह किस्म उ.प्र. के सहारनपुर जिले के बेहट स्थान से विकसित हुई है। शाखाएं बहुत अधिक निकलती हैं। अतः फलत अच्छी होती है। फल आकार में बड़े, छिलका हरे नीले रंग का होता है। गूदा सफेद और खटासयुक्त मीठा होता है।

श्वेता : यह मध्यम आकार के गोलाकार फलों, लाल धब्बों वाली मखमली सफेद त्वचा और लगभग सफेद गूदा वाली प्रजाति है। अधिक पैदावार वाली प्रजाति के साथ—साथ फल आकर्षक, स्वादिष्ट एवं अत्यधिक पौष्टिक होते हैं।

ललित :

फल केसरिया पीले रंग के, गूदा लाली लिए सफेद, मीठा और 6 वर्ष की आयु में औसत पैदावार 100 किग्रा. फल प्रति पौधा। फल लगभग 185—200 ग्राम का औसत वजन।

धवल : इस प्रजाति का उत्पादन अच्छा तथा फल आकर्षिक होता है।

रोपण :

6.0x6.0 मीटर की दूरी पर 60x60x60 सेमी. के गड्ढे में 20—25 किग्रा. गोबर की खाद, 250 ग्राम सुपर फास्फेट तथा 40—50 ग्राम फालीडाल धूल ऊपरी मिट्टी में मिलाकर गड्ढे को अच्छी तरह से भर देते हैं। इसके पश्चात् खेत की सिंचाई कर देते हैं, जिससे कि गड्ढे की मिट्टी बैठ जाये। इस प्रकार गड्ढा पौधा लगाने के लिए तैयार हो जाता है। इसके बाद पिण्डी के अनुसार गड्ढा खोदकर उसके बीचों—बीच लगाकर चारों तरफ से अच्छी प्रकार दबाकर फिर हल्की सिंचाई कर देते हैं।

पोषण :

पेड़ की आयु वर्षों में	गोबर की खाद (किग्रा.)	नत्रजन ग्राम	फास्फोरस ग्राम	पोटाश ग्राम
1	10	60	30	60
2	20	120	60	120
3	30	180	90	180
4	40	240	120	240
5	50	300	150	300
6 से अधिक	60	360	180	360

सिंचाई :

छोटे पौधों में सिंचाई शरद ऋतु में 15 दिन के अंतराल पर तथा गर्मियों में 7 दिन के अंतर पर करते रहना चाहिए।

उपज :

अमरुद के पौधे 8–10 वर्ष में पूर्ण विकसित हो जाते हैं। एक पूर्ण विकसित पौधे से 400–600 फल तक प्राप्त हो जाते हैं जिनका वजन 125 से 150 किग्रा. होता है।

कीट एवं रोग नियंत्रण :

1. फल छेदक :

इसकी रोकथाम के लिए फल बनने के बाद 15–20 दिन के अन्तर पर क्यूनालफास 1.5 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 2–3 छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करना चाहिए।

2. फल मक्खी :

इसके उपचार के लिए प्रभावित फलों को तोड़कर नष्ट कर के फेंक देना चाहिए। इसके लिए मैलाथियान 2.0 मिली. प्रति ली. पानी की दर से 2–3 छिड़काव करना चाहिए। यह मक्खी बरसात की फसल में ही लगती है। अतः बरसात की फसल नहीं लेना चाहिए।

3. उकठा रोग :

रोगी पौधे को तुरन्त निकालकर उस गड्ढे की थीरम 2 ग्राम प्रति ली से उपचारित करना चाहिए। पौधे की जड़ों के पास पानी नहीं रुकना चाहिए। सरदार किस्म में यह रोग व्यापक रूप से नहीं लगता है।



52. केला की उन्नतशील खेती

भूमि : जीवांश बाहुल्य, दोमट अथवा मटियार दोमट भूमि जिसमें जल निकास की समुचित व्यवस्था हो, केले की खेती के लिए उपयुक्त होती है।

किस्में :

1. **बसराई ड्वार्फ :** इसके पौध बौने (150 से 175 सेमी.) हरा तना वजनदार फलियां बड़ी कुछ मुड़ी हुई पकने पर हल्की होती हैं। फल स्वादिष्ट, मीठा तथा कम टिकाऊ होता है। यह किस्म पर्ण चित्ती रोग से अधिक प्रभावित होती है।
2. **हरी छाल :** इसके पौधे बसराई ड्वार्फ से बड़े (200 से 250 सेमी.) मोटे, हरे धब्बे युक्त होते हैं। घार भारी, फलियां बड़ी, सीधी पकने पर हरी तथा गूदा मीठा एवं मुलायम होता है। यह भी पर्ण चित्ती रोग से अधिक ग्रसित होती है।
3. **अल्पान :** इसका पौधा (3 से 4 मीटर) तथा सफेद हरा, धार भारी, लम्बा कसा हुआ, फलियां मध्यम, पकने पर पीली स्वादिष्ट, खटास लिए हुए मीठी तथा टिकाऊ होती है।
4. **मालभोग :** पौधा, ऊँचा, तना सफेद हरा, घार मध्यम छितराया हुआ, फलियां मध्यम पकने पर सुनहरी, स्वादिष्ट, मीठी तथा टिकाऊ होती है।
5. **पुवन :** यह अधिक गर्मी चाहने वाली किस्म है। फलियां पीली, गूदा हल्का लालपन लिए हुआ कड़ा होता है। यह पर्ण—चित्ती रोग के लिए प्रतिरोधी तथा टिकाऊ किस्म है।
6. **रोबस्टा :** इसके पौधा ऊँचे तथा तना मजबूत, घार सुडौल, फलियां लम्बी हल्के पीली रंग की स्वादिष्ट होती हैं। यह पर्ण—चित्ती रोग से अधिक तथा पनामा रोग से कम ग्रसित होता है।
7. **कोठिया :** इसके पौधा ऊँचे, तना मजबूत, घार सुडौल, फलियां लम्बी, मीठी कोनाकार, पकने पर पीली, गूदा ढीला तथा स्टार्च युक्त होता है, पकने पर खाया जा सकता है। यह सब्जी के लिए उपयुक्त किस्म है।
8. **मुन्यन :** इसके फल छोटे, सीधे, मीठे एवं कोणीय होते हैं। इसकी भण्डारण क्षमता अधिक होती है। यह सब्जी के लिए उपयुक्त किस्म है।
9. **जी—९ :** यह टिश्यू कल्वर द्वारा विकसित प्रजाति है।

प्रवर्धन एवं पौध रोपण : केले का प्रवर्धन पुत्तियों द्वारा किया जाता है। तीन माह की तलवार नुमा पुत्तियां जिनमें घनकन्द पूर्ण विकसित गठीला हो, का प्रयोग किया जाता है। पुत्तियों का रोपण 15 जून से 30 जून तक किया जाता है।

पौधों की रोपाई के लिए 2–3 मी. की दूरी पर $50 \times 50 \times 50$ सेमी. आकार के गड्ढे मई माह में खोद दिये जाने चाहिए। 15–20 दिन खुला रखने के बाद 20–25 किग्रा. गोबर की खाद तथा क्लोरोपाइरीफास 3 मिली. + 5 लीटर पानी तथा आवश्यकतानुसार ऊपर की मिट्टी के साथ अच्छी तरह से मिलाकर भर कर गड्ढे की सिंचाई कर देनी चाहिए।

पोषण : भूमि की उर्वरता के अनुसार प्रति पौधा 300 ग्राम नत्रजन, 100 ग्राम फास्फोरस तथा 300 ग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। फास्फोरस की आधी मात्रा रोपाई के समय तथा शेष आधी मात्रा रोपाई के बाद देनी चाहिए। नत्रजन की पूरी मात्रा पाँच भागों में विभाजित कर अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर, फरवरी तथा अप्रैल माह में देनी चाहिए। पोटाश तीन भागों में विभाजित कर सितम्बर, अक्टूबर तथा अप्रैल माह में देनी चाहिए।

सिंचाई : केले के बाग में पर्याप्त नमी बनी रहनी चाहिए। रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई कर देनी चाहिए। आवश्यकतानुसार 7–10 दिन के अन्तराल पर हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए।

अवरोध पर्त (मल्विंग) : केले के थाले में पुआल, गन्ने की पत्ती अथवा पॉलीथीन बिजा देने से सिंचाई की मात्रा आधी हो जाती है तथा पौधों की वृद्धि फलोत्पादन तथा गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है।

कटाई, छंटाई व सहारा देना : केले में रोपण के दो माह के अन्दर ही बगल से नई पुत्तियां निकलती हैं। इन पुत्तियों को समय—समय पर काटते रहना चाहिए। रोपण के दो माह बाद 30 सेमी. व्यास का 25 सेमी. ऊँचा चबूतरानुमा आकृति बना देनी चाहिए इससे पौधों की आवश्यक सहारा मिल जाता है।

पकाना एवं उपज : केले को पकाने के लिए घार को किसी बन्द कमरे में रखकर केले की पत्तियों से ढक देते हैं। एक कोने में उपले अथवा अंगीठी जलाकर कमरे की गीली मिट्टी से सील कर देते हैं। लगभग 48–72 घण्टे में केला पककर खाने योग्य हो जाता है। इस तरह केला पकाने से चित्तियां पड़ जाती हैं तथा उनमें मिठास अधिक हो जाती है। केले की ढेर पर 500 पी.पी.एम. एर्थिल का छिड़काव करके ढेर को बारे से ढक देने से केला अच्छी तरह पकता है तथा रंग अच्छा विकसित होता है। प्रति हेक्टेयर 300–400 कुन्तल तक उपज प्राप्त होती है।

कीट व रोग :

केले का पत्ती बिटिल (बनाना बिटिल) : इसके नियंत्रण के लिए ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 25 ई.सी. 1.25 मिली. एक लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

केला जड़ व तना वीविल : इसके नियंत्रण के लिए कार्बोफ्यूरन 3 प्रतिशत सी.जी. दाने दार कीटनाशी को प्रति पौधा 25 ग्राम प्रयोग करना चाहिए।

पर्ण लॉछन : रोकथाम के लिए ताम्रयुक्त रसायन जैसे कॉपर आक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।

एन्थ्रेकनोज : इस रोग से फलों के गुच्छे एवं डण्ठल काले हो जाते हैं तथा बाद में सड़ने लगते हैं। इसकी रोकथाम के लिए भी कॉपर आक्सीक्लोराइड का 0.3 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।



53. आँवला की उन्नतशील खेती

भूमि : बलुई भूमि के अतिरिक्त सभी प्रकार की भूमियों में आँवला की खेती की जा सकती है। सामान्य भूमि से लेकर ऊसरीली भूमि जिसका पी.एच. मान 9 तक हो, उनमें भी आँवला की खेती की जा सकती है।

गड्ढों की खुदाई एवं भराई : ऊसर भूमि में मई—जून में 8—10 मीटर की दूरी पर एक से सवा मीटर आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए। यदि कड़ी परत अथवा कंकड़ की तह हो तो उसे खोद कर अलग कर लेना चाहिए अन्यथा बाद में पौधों की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बरसात के मौसम में इन गड्ढों में पानी भर देना चाहिए। प्रत्येक गड्ढे में 50—60 किग्रा. गोबर की खाद, 15—20 किग्रा. बालू 8—10 किग्रा. जिप्सम तथा 6 किग्रा. पाइराइट मिलाना चाहिए। गड्ढे भरने के समय 50—100 ग्राम क्लोरपायरीफास धूल भी भर देना चाहिए। भराई के 15—20 दिन बाद अभिक्रिया समाप्त होने पर ही पौधों का रोपण किया जाना चाहिए। व सामान्य भूमि में प्रत्येक गड्ढे में 40—50 किग्रा. गोबर की खाद, 100 ग्राम नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश का मिश्रण 15 : 15 देना आवश्यक होता है। इसके अलावा 250—500 ग्राम नीम की खली + 100—150 ग्राम, क्लोरपाइरीफास डस्ट मिलाना अनिवार्य होता है। गड्ढे जमीन की सतह से 15—20 सेमी. ऊँचाई तक भरना चाहिए।

आँवला की व्यावसायिक प्रजातियाँ : आँवला की व्यावसायिक प्रजातियों में चकैया, फ्रान्सिस, कृष्णा, कंचन, नरेन्द्र आँवला—4, नरेन्द्र आँवला—6, नरेन्द्र आँवला—7 एवं गंगा बनारसी उल्लेखनीय है। व्यावसायिक जातियाँ— चकैया एवं फ्रान्सिस से काफी लाभार्जन होता है।

खाद एवं उर्वरक : आँवला की सफल बागवानी के लिए प्रति वर्ष 100 ग्राम नत्रजन, 60 ग्राम फास्फोरस तथा 75 ग्राम पोटाश प्रति वर्ष पेड़ की दर से देते रहना चाहिए। खाद एवं उर्वरक की यह मात्रा दस वर्ष तक बढ़ाते रहना चाहिए। ऊसर भूमि में जरूरी की कमी के लक्षण दिखाई पड़ते हैं। अतः 2—3 वर्ष उर्वरकों के साथ 250—500 ग्राम ज़िंक सल्फेट पौधों में देना चाहिए।

सिंचाई : आँवला के नवरोपित बाग में गर्मी के मौसम में दस दिन के अन्तराल पर पेड़ों की सिंचाई करते रहना चाहिए और फलत वाले बागों में जून माह में एक बार पानी देना आवश्यक है। फूल आते समय बागों में किसी तरह से पानी नहीं दिया जाना चाहिए। समय—समय पर खरपतवार निकालने हेतु थालों की गुड़ाई करना अत्यन्त आवश्यक है।

आँवला से अधिक उपज और आकर्षक फल लेने के उपाय :

1. बागों की उचित देख—रेख करें।
2. समुचित पोषण दे।
3. सितम्बर माह में 0.5 प्रतिशत यूरिया, 0.4 प्रतिशत एग्रोमिन एवं 0.5 प्रतिशत पोटैशियम सल्फेट का छिड़काव करें।
4. फलों के मौसम में एक माह के अन्तराल पर डाइथेन एम—45 0.3 प्रतिशत तथा मैटासिस्टॉक्स 0.03 प्रतिशत के छिड़काव अच्छे होते हैं।
5. बोरॉन तत्व की कमी के लिए 50 ग्राम बोरेक्स प्रति पेड़ देना आवश्यक है।



54. पपीता की उन्नतशील खेती

भूमि : पपीता की खेती के लिए दोमट अथवा बलुई भूमि उत्तम होती है। भूमि में जल निकास का उचित प्रबन्ध होना अति आवश्यक है।

प्रजातियाँ : पूसा डेलिसियस, पूसा मैजेस्टिक, पूसा नन्हा, पूसा ड्वार्फ, सोलो, पूसा जायन्ट, को०-१, वाशिंगटन, ताईवान-७८६, महाबिन्दु।

रोपण : अच्छी तरह से तैयार खेत में 2x2 मीटर की दूरी 50x50x50 सेमी। आकार के गड़दे मई के महीने में खोदकर 15 दिन के लिए खुला छोड़ देते हैं। ताकि गड़दों में अच्छी तरह से धूप लग जाये तथा हानिकारक कीड़े-मकोड़े नष्ट हो जाये। गड़दों को आधा मिट्टी एवं आधा गोबर की खाद तथा फोरेट 10 जी 2.5 ग्राम को मिलाकर इस प्रकार भरना चाहिए कि गड़दा जमीन से 10 से 15 सेमी। ऊँचा रहे। गड़दों की भराई के बाद सिंचाई कर देनी चाहिए जिससे मिट्टी अच्छी तरह से बैठ जाये। एक गड़दे में थोड़ी-थोड़ी दूरी पर दो-तीन पौधे लगाने चाहिए। रोपण के तुरन्त बाद पौधों की अच्छी तरह से सिंचाई कर देनी चाहिए तथा जबतक पौधे अच्छी तरह से स्थापित न हो जायें, तबतक प्रतिदिन दोपहर बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। फूल आने पर 10 प्रतिशत नर पौधों को छोड़कर बाकी नर पौधों को काट देना चाहिए।

पोषण : पपीता एक शीघ्र बढ़ने एवं फल देने वाला पौधा है, जिसके कारण भूमि से काफी मात्रा में पोषण तत्व का ह्रास होता है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 250 ग्राम नत्रजन, 150 ग्राम फास्फोरस तथा 250 ग्राम पोटाश प्रति पौधा प्रति वर्ष देना चाहिए।

सिंचाई एवं निराई—गुड़ाई : पपीता को गर्मियों में 6-7 दिन के अन्तर पर तथा जाड़ों में 10-12 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। पानी को तने के सीधे सम्पर्क में नहीं आना चाहिए, इसके लिए तने के पास चारों तरफ मिट्टी से ऊँचा कर देना चाहिए।

उपज : पपीता में फल, पौध रोपण के लगभग 8-9 माह बाद से आना शुरू हो जाता है। एक रवस्थ पेड़ से औसतन 35-50 किग्रा०। फल आसानी से प्राप्त हो जाते हैं।

कीट एवं रोग नियंत्रण : पपीता में लगने वाले प्रमुख कीट व बीमारियाँ निम्नलिखित हैं—

1. माहू : इस कीट में प्रौढ़ तथा शिशु पौधों से रस चूसते हैं और पौधों को हानि पहुँचाते हैं तथा विषाणु रोग फैलाने में मदद करते हैं। इसकी रोकथाम हेतु डाईमेथोएट 30 ई.सी. 1.5 मिली। अथवा फास्फेमिडान 1/2 मिली। प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

2. पदगलन : यह बीमारी पिथियम फ्यूजेरियम नामक फफूँदी से होती है। रोग ग्रसित पौधों की बढ़वार रुक जाती है, पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा पौधा सड़कर गिर जाता है। इसकी रोकथाम के लिए ग्रसित भाग को खुरच कर उसपर कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 ग्राम अथवा ब्रासीकोल 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर तैयार घोल से तने के चारों तरफ की मिट्टी को तर कर देना चाहिए।

3. एंथ्रैकनोज : इस बीमारी का प्रकोप पत्तियों तथा फलों पर होता है। पत्तियों तथा फलों की बढ़वार रुक जाती है तथा फल के ऊपर भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए ब्लाईटाक्स 3 ग्राम या मैंकोजेब 75% 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर बनाकर किसी एक का छिड़काव करना चाहिए।



55. अश्वगंधा की उन्नतशील खेती

यह ऊर्ध्व प्रशाखा वाला पौधा है जो 2 से 4 फीट तक ऊँचा होता है। इसकी जड़ गूदेदार, शुण्डाकार, सफेद सी भूरी होती है। पत्तियाँ अंडाकार, छोटे एवं हल्के हरे या पीले रंग की होती हैं।

प्रयोज्य अंग : जड़, पत्ता, फल और बीज।

औषधीय गुणधर्म और उपयोग :

अश्वगंधा, बलवर्धक, स्फूर्तिदायक, कामोत्तेजक होती है और यह महिला के गर्भाशय को मजबूत करने में सहायक है। इससे स्मरणशक्ति की क्षति रुकती है। यह शारीरिक दुर्बलता, अनैच्छिक वीर्यसाव और यौन जनित कमजोरी में फायदेमंद है। यह तनावरोधी, इम्युनोमार्ड्युलेटरी, कैंसररोधी, एंटीआक्सिडेन्ट, कृमिनाशक, मूत्रवर्धक और हाइपोकोलेस्टेरोलेमिक के रूप में प्रयोग किया जाता है।



मृदा और जलवायु :

यह बलुई-दोमट या हल्की लाल मृदा जिसमें 7.5–8.0 पी.एच. तथा बेहतर जल निकासी की व्यवस्था हो, उगाई जा सकती है। इसकी खेती 600–1200 मी. की ऊँचाई तक की जा सकती है।

नर्सरी और रोपना :

इस फसल की बुवाई कतारों में की जाती है। इसके बीज जून–जुलाई में लगभग 1–3 सेमी. की गहराई में आमतौर पर बोएं जाते हैं। बीज बोने के बाद मामूली सी वर्षा से अंकुरण का बेहतर होना निश्चित हो जाता है। एक हेक्टेयर भूमि में तकरीबन 500 – 700 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है। बुवाई के 25–35 दिन बाद पौध को उस खेत में प्रतिरोपित किया जा सकता है जहाँ पादपों और पंक्तियों के बीच 60 X 60 सेमी. का अंतराल बनाया गया हो। अश्वगंधा वर्षा ऋतु की फसल है, अतः इसकी बुवाई का समय क्षेत्र विशेष में मानसून के आगम से तय किया जाता है।

छटाई और निराई :

बोएं गये बीजों को बुवाई के 25–30 दिन बाद हाथ से छाट देना चाहिए। इससे लगभग 30–60 पादप प्रति वर्ग मीटर (लगभग 3.5 से 6 लाख पादप / हेक्टेयर) अनुरक्षित हो जाते हैं।

खाद / उर्वरक :

अश्वगंधा की फसल को खाद/उर्वरक की भारी मात्रा की जरूरत नहीं होती फिर भी गोबर की खाद लाभदायक मानी गई है।

सिंचाई:

प्रतिरोपण के बाद मामूली वर्षा से पौधों की मजबूती पक्की हो जाती है। वर्षा के नियमित समय पर होते रहने की हालत में सिंचाई की जरूरत नहीं है। अत्यधिक बरसात/जल से फसल को नुकसान पहुँचता है।

पैदावार:

ये पादप दिसम्बर में फूल-फल देना शुरू कर देते हैं। फसल की पैदावार बुवाई के बाद 150–180 दिनों पर जनवरी–मार्च में तैयार हो जाती है। पौधा जड़ से उखाड़ लिया जाता है और भूमि के ऊपर के भागों से अलग किया जाता है। इसके लिए तने को 1–2 सेमी. ऊपर से काटा जाता है। तब जड़ को छोटे-छोटे टुकड़ों (7 से 10 सेमी.) में काटा जाता है एवं धूप में रखकर सुखाया जाता है। एक हेक्टेयर भूमि से 650–800 किग्रा. जड़ प्राप्त हो सकती है जो सुखाने के बाद 350–435 किग्रा. रह जाती है। बीज निकलाने के लिए उन्हें सुखाकर तोड़ दिया जाता है।

56. सफेद मूसली की उन्नतशील खेती

यह पौधा बहुवषट्ट, तना रहित तथा शाकीय प्रकृति का होता है। पत्तियाँ लगभग 30 सेमी. लम्बी तथा 2 सेमी. चौड़ी होती हैं, जो पौधे के आधार से निकलती हैं। पत्तियाँ नर्म व चोंच नुकीली होती हैं सफेद फूल लगभग एक मीटर लम्बे पृष्ठवृत्त पर लगे होते हैं।

प्रयोज्य अंग : कंदीय जड़े।

औषधीय गुणधर्म एवं प्रयोग :

सफेद मूसली एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है। यह शारीरिक शिथिलता दूर करने में प्रयोग होता है। यह अस्थमा, उल्टी—दस्त में भी उपयोगी है। सफेद मूसली नपुंसकता, गठिया वात, बवासीर, वातपित नाशक है।

भूमि एवं जलवायु :

सफेद मूसली रेतीली दोमट मिट्टी, नर्म व उत्तम जल निकासी वाली भूमि में अधिक उपज देती है। नम, आर्द्ध जलवायु इसके लिए उपयुक्त होती है। इसकी पैदावार के समय भूमि में नमी होने से इसकी कन्द मोटी हो जाती है और अधिक पैदावार देती है।

नर्सरी एवं रोपण :

सफेद मूसली बीजारोपण एवं रूट—स्टॉक वाली कलियों द्वारा उगाई जाती है।

बीजारोपण द्वारा :

सफेद मूसली के बीज चपटे गोल किनारे वाले होते हैं। इसमें 12—16 दिन में अंकुर निकल आते हैं। मानसून जल्दी न आने की स्थिति में अच्छी तरह पानी देकर मिट्टी को नम बनाये रखना चाहिए। पौधा रोपण अगली वर्षा ऋतु में 30×5 सेमी. की दूरी पर करनी चाहिए क्योंकि पहले वर्ष बीजारोपण द्वारा उगाये गये पौधों की बढ़त उतनी अधिक नहीं होती जितनी की कलियों द्वारा उगाये पौधों की होती है।

अंकुरित पौधों की कन्द :

मई के मध्य में मोटी होनी शुरू हो जाती है। कभी—कभी ये अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में भी हो जाती है। जंगली पौधों में वर्षा ऋतु में वर्षा के 4—6 दिन बाद ही यह जमीन के ऊपर दिखाई देने लगती है। खेतों में पेड़ उगाने के लिए जंगल में अंकुरित पौधों को वर्षा के 10 से 30 दिन के बीच एकत्रित करके लगाना चाहिए अथवा मई के मध्य में भूमि से मोटी कंदों के टुकड़ों या भण्डार में रखी गई कंदों को लगाना चाहिए।

1 सेमी. के छोटे आकार की कन्द का टुकड़ा भी एक नया पेड़ उगाने में सक्षम होता है। ये कन्द मई के दूसरे सप्ताह से जून के दूसरे सप्ताह में अंकुरित होती है। अंकुरित कन्द जून के पहले या दूसरे सप्ताह में लगाने चाहिए और इसके बाद सिंचाई कर देनी चाहिए।

अधिक उपज के लिए 15—20 सेमी. ऊँची मेड़ों पर 30×5 सेमी. की दूरी पर पौधा रोपण करना चाहिए। एक हेक्टेयर भूमि के लिए 250—300 किग्रा. कन्द की आवश्यकता है। सफेद मूसली को मक्का के खेत में भी लाइनों में लगाया जा सकता है।

खाद / उर्वरक :

10–15 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर प्रयोग करने से अच्छी पैदावार होती है।

सिंचाई :

फसल वर्षा के बाद बोनी चाहिए। यदि कन्द के बोने या पौधरोपण के बाद वर्षा न हो तो तुरन्त सिंचाई कर देनी चाहिए। इसके बाद जब भी भूमि में नमी की कमी हो 10 से 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

निराई—गुड़ाई :

भूमि को भूरभुरा बनाये रखने के लिए और फसल को खरपतवार से बचाने के लिए एक—दो निराई—गुड़ाई की आवश्यकता होती है।

उपज :

पौधरोपण के लगभग 90 दिन बाद फसल तैयार हो जाती है। फसल तैयार होने पर इसकी पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं। लगभग 20–25 कुन्तल ताजा जड़ें प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती हैं। यह छीलाई और सूखने के बाद 6–8 कुन्तल रह जाती है।



57. सर्पगंधा की उन्नतशील खेती

यह हमेशा हरा रहने वाला 75 सेमी. से 1 मीटर ऊँचाई वाला झाड़ीनुमा पौधा है। इसकी जड़ें 0.5—2.5 सेमी. मोटी गोलाकार होती हैं जिसमें शाखाएं भी होती हैं। ये भूमि में 40—60 सेमी. गहराई तक जाती हैं।

प्रयोज्य अंग : जड़ें एवं पत्तियाँ।

औषधीय गुणधर्म एवं प्रयोग :

उच्च रक्तचाप के लिए यह अत्यन्त विश्वसनीय दवा है। इसकी जड़ें स्वाद में तीखी, अम्लीय, दुधारू, एन्थेलमिन्टिक, थर्मोजेनिक एवं डाइयूरेटिक होती हैं जोकि हलका नशा भी कर सकती है। इसका उपयोग बुखार, घाव, अनिद्रा, हिस्टीरिया, गिड़डीनेस, उन्माद में भी किया जाता है। इसके पत्तों का रस आँख के कॉर्निया के इलाज में उपयुक्त होता है।

भूमि एवं जलवायु :

इसकी अच्छी पैदावार के लिए अम्लीय मिट्टी अच्छी होती है जिसकी जल निकासी क्षमता उत्तम हो। व्यापारिक उत्पादन के लिए बलुई दोमट मिट्टी जिसमें जीवाशु प्रचुर मात्रा में हो उपयुक्त होती है।

जड़ों के टुकड़ों द्वारा :

गर्मियों में लगभग 5 सेमी. लम्बे जड़ों के टुकड़े, गोबर की खाद, बालू एवं लकड़ी का बुरादा मिली हुई नर्सरी की क्यारियों में बोएं जाते हैं। ये टुकड़े तीन सप्ताह में अंकुरित होने लगते हैं। वर्षा ऋतु में ये पौधे 8—10 वर्षा होने के बाद खेतों में लगाए जा सकते हैं। पौधे का प्रत्यारोपण 45 सेमी. की दूरी पर बनी लाइनों में पौधे से पौधे की दूरी 30 सेमी. रखकर किया जाता है।

तने के टुकड़ों द्वारा :

जून के महीने में लगभग 15—22 सेमी. लम्बे तने के कठोर काष्ठीय टुकड़े नमीयुक्त नर्सरी की क्यारियों में बोएं जाते हैं। अंकुरण के पश्चात् ये पौधे 30—45 सेमी. दूरी पर खेतों में लगाए जा सकते हैं।

जड़ों द्वारा :

सिंचाई सुविधा वाले खेतों में लगभग 5 सेमी. लम्बी जड़ें जिसके ऊपर तने का हिस्सा भी हो को सीधे खेत में लगा सकते हैं।

बीजारोपण द्वारा :

बीज की अंकुरण क्षमता केवल 5 से 30 प्रतिशत तक होती है। हल्के और भारी बीज पानी में डालकर आसानी से अलग किये जा सकते हैं। भारी बीजों को 24 घण्टे पानी में भिगोकर मई—जून में बोने से लगभग 20 से 40 प्रतिशत एवं ताजा भारी बीजों को बोने से 60 प्रतिशत अंकुरण हो सकता है। एक हेक्टेयर पौधे के लिए 6 किग्रा. बीज उपयुक्त होता है।

हल्की छाया में एक तिहाई गोबर एवं पत्तों की खाद तथा दो तिहाई बलुई दोमट मिट्टी मिलाकर 10 वर्ग मीटर की क्यारी कुछ ऊँचाई पर बनाई जाती है। एक एकड़ भूमि की खेती के लिए लगभग 500 वर्ग मीटर की क्यारी में बीज उगाये जा सकते हैं। अप्रैल माह के अंत में बीजों को 2—3 सेमी. की दूरी पर लाइन में पतली नालियों में बोना चाहिए। इसके बाद नालियों को मिट्टी एवं गोबर की खाद से भर देना चाहिए। क्यारी को नम रखने के लिए हल्का पानी देते रहना चाहिए।

15–20 दिन में अंकुरण शुरू हो जाता है और 30–40 दिन तक होता रहता है। जुलाई के मध्य तक पौध प्रत्यारोपण के लिए तैयार हो जाती है। ये पौध 45 सेमी. की दूरी तक बनी लाइनों में 30 सेमी. की दूरी पर लगाये जाते हैं।

खाद / उर्वरक :

भूमि की तैयारी के लिए 20 से 25 कुन्तल गोबर की खाद प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है।

सिंचाई :

गर्मियों में 20 दिन के अन्तराल पर एवं सर्दियों में 30 दिन के अन्तराल पर 15 से 16 सिंचाई की आवश्यक होती है।

पैदावार :

जलवायु के आधार पर 8 महीने पुरानी फसल सबसे अच्छी उपज देती है। साधारणतः 20–25 कुन्तल प्रति हेक्टेयर सूखी कन्द पैदा होती है जो सिंचाई, भूमि उर्वरता आदि पर निर्भर करती है।



58. शतावरी की उन्नतशील खेती

शतावरी एक कॉटेदार आरोही लता है जिसमें बहुत सी शाखाएँ होती हैं। इसकी पत्तियाँ नुकीली होती हैं। इसकी जड़ें 14—40 सेमी. लम्बी भूरे रंग की होती हैं। यह औषधीय पौधा है और सजावटी पौधों के रूप में भी उगाया जाता है।

प्रयोज्य अंग : कंदिल जड़े।

औषधीय गुणधर्म एवं प्रयोग :

इसकी कंदिल जड़ें मधुर तथा ठंडक देने वाली होती हैं। ये शीतवीर्य, मेघाकारक जठराग्निवर्धक, वात, पित्तरक्त तथा शोथ दूर करने वाली होती हैं। मधुमेह, ल्यूकोरिया, अनीमिया, कब्ज तथा मानसिक तनाव से मुक्ति दिलाती हैं। इसके कन्द प्रयोग करने से दुध बढ़ता है और बच्चों के लिए टॉनिक का काम करता है।



भूमि एवं जलवायु :

यह मध्यम काली मिट्टी जिसकी पी.एच. 7—8 हो, में अच्छी तरह पैदा होती है। शतावर की खेती उष्ण आद्र जलवायु में समुद्र तल से लगभग 1400 मीटर तक की ऊँचाई वाले क्षेत्रों में की जाती है।

भूमि तैयारी :

भूमि को 20—30 सेमी. गहरा जोतकर कुछ दिन बाद 2—3 खुदाई की जाती है। घास और खरपतवार निकालकर भूमि को पाटा लगा दिया जाता है।

नर्सरी एवं रोपण :

शतावरी के बीज अप्रैल के माह के क्यारियों में लगाये जाते हैं, जिससे कि वर्षा ऋतु आने तक बीज के कवच की कठोरता खत्म हो जाए। जून में पहली वर्षा के 8—10 दिन बाद अंकुरण शुरू हो जाता है। 60 सेमी. की दूरी पर पौध का रोपण किया जाता है और पौधे की लम्बाई 45 सेमी. होने पर बॉस के डंडे इसको सहारा देने के लिए खड़े कर दिये जाते हैं।

निराई : पहली निराई वर्षा ऋतु में कर देनी चाहिए, दूसरी 2—3 महीने के बाद आवश्यकतानुसार।

सिंचाई : वर्षा ऋतु के बाद सर्दियों में प्रत्येक माह में दो बार सिंचाई करनी चाहिए जबकि गर्मियों में आवश्यकतानुसार।

खाद / उर्वरक : गोबर की खाद / वमट्टकम्पोस्ट का प्रयोग किया जाता है।

पैदावार : 30 महीने के बाद अनुमानतः 4—6 टन सुखी जड़ें प्रति एकड़ प्राप्त होती हैं। चूहों से फसल को बचाना चाहिए।

59. तुलसी (बासिल) की उन्नतशील खेती

तुलसी (बासिल) का पौधा झाड़ीनुमा होता है और पूरे वर्ष फलता है। यह 30 से 60 सेमी. होती है। तना और शाखाएँ काष्ठीय होती हैं। तुलसी प्रदेश के समस्त भागों में पायी जाती है।

पत्तियाँ :

अण्डाकार, दोनों सिरों पर रोमिल, किनारों पर चिकनी एवं लट्वादार होती है। इसके फूल एक वर्धक गुच्छों में लगते हैं।

प्रयोज्य अंग : सम्पूर्ण पौधा।

औषधीय गुणधर्म एवं प्रयोग :

भारतीय समाज में तुलसी के पौधे का धार्मिक महत्व है। इसके पत्ते तथा टहनी विभिन्न प्रकार की बीमारियों में औषधि के रूप में काम आती है। तुलसी में बहुत से औषधीय गुण हैं। तनाव, अल्सर, उच्च रक्त चाप, द्यूमर, पेट के विकार आदि में भी इसका उपयोग किया जाता है। तुलसी का पौधा सुगंधित होता है तथा बच्चों के पेचिस एवं खाँसी के इलाज में यह बहुत उपयोगी है।

भूमि एवं जलवायु :

तुलसी लगभग सभी प्रकार की मिट्टी में उगायी जा सकती है। बलुई दोमट मिट्टी, दोमट मिट्टी, क्षारीय मिट्टी, कम लवणीय मिट्टी इसके लिए अधिक उपयुक्त मानी गई है। इसके लिए जल निकासी की अच्छी व्यवस्था होना जरूरी है क्योंकि जल जमा होने से जड़ें गलने लगती हैं और पैदावार कम होती है। इसके पौधे कम छायादार भूमि पर भी उगाये जा सकते हैं। लेकिन उनमें तेल की मात्रा कम होती है। साधारण वर्षा एवं नमी वाले मौसम में यह अच्छी तरह बढ़ती है। इसमें अधिक तेल की मात्रा के लिए गर्मियों के लम्बे दिन अधिक उपयोगी है। समुद्र तल से लगभग 900 मीटर की ऊँचाई वाले उष्ण एवं शीतोष्ण इलाकों में उगाई जा सकती है।

भूमि की तैयारी :

इसके कृषि के लिए भूमि को अच्छी तरह बारीक करके इसमें 15 टन गोबर की खाद प्रति हैक्टेयर अच्छी तरह मिलाकर क्यारियाँ बना ली जाती हैं।

नर्सरी एवं रोपण :

इसकी नर्सरी फरवरी के तीसरे सप्ताह में तैयार की जा सकती है और पौध का प्रत्यारोपण अप्रैल के मध्य में शुरू करना चाहिए। इसकी खेती बीजारोपण से भी की जाती है। एक हैक्टेयर भूमि के रोपण के लिए लगभग 200 से 300 ग्राम बीज की पौध बहुत होती है। बीज नर्सरी में 2 सेमी. मिट्टी के नीचे बोने चाहिए। बीज 8 से 12 दिन में उगते हैं और प्रत्यारोपण के लिए 4-5 पत्तों वाली पौध लगभग 6 सप्ताह में तैयार हो जाती है। प्रति हैक्टेयर अधिक उपज एवं तेल उत्पादन के लिए इसका प्रत्यारोपण 40×40 सेमी. से 40×50 सेमी. की दूरी पर करना चाहिए।

निराई एवं गुड़ाई :

पहली निराई पौध रोपण के एक माह बाद एवं दूसरी निराई पहली के 4 सप्ताह बाद करनी चाहिए। पौध रोपण के दो माह बाद एक गुड़ाई कर लेनी चाहिए।

खाद / उर्वरक : वर्मी कम्पोस्ट एवं कार्बनिक खाद अच्छी रहती है।

सिंचाई :

सिंचाई मिट्टी की नमी पर निर्भर करती है। गर्मियों में 3 सिंचाई प्रति माह जरूरी है। वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। पूरे वर्ष में 12 से 15 सिंचाई बहुत होती है।

फसल कटाई :

तुलसी की फसल पंक्ति में ली जाती है। पहली कटाई पौध रोपण के 90—95 दिन बाद की जाती है। इसके बाद 65—75 दिन के अन्तराल पर कटाई करनी चाहिए। अच्छे उत्पाद एवं तेल की अधिक मात्रा पाने के लिए तेज धूप वाले मौसम में इसकी फसल लेनी चाहिए।

पैदावार : तुलसी की पैदावार लगभग 5 टन प्रति हेक्टेएक्टर है। वर्ष में 2—3 बार ली जा सकती है।



60. स्टीविया की उन्नतशील खेती

हिन्दी नाम : मधुपत्ती ।

वैज्ञानिक नाम : स्टीविया रीबाउदिआना

पादप कुल : कक्पोजिटी (एस्ट्रेसी)

विवरण :

स्टीविया को मधु पत्र, मधुपत्ती अथवा चीनी तुलसी के नाम से भी जाना जाता है। यह अपनी सामान्य अवस्था में शक्कर से लगभग 25–30 गुना ज्यादा मीठा होता है। इसका पौधा तुलसी के समान होता है। पत्तियां भी तुलसी की पत्ती जैसी होती हैं। इसका पौधा लगभग 60–70 सेमी. ऊँचा एक बहुशाखीय बहुवर्षीय पौधा होता है।



प्राप्ति स्थान :

यह मध्य पेरुगवे का मूल पौधा है। जहाँ पर यह प्राकृतिक अवस्था में नदियों के किनारे एवं तालाबों के किनारे पाया जाता है। वर्तमान में पेरुगवे, जापान, कोरिया, ताईवान, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा दक्षिण एशियाई देशों में इसकी व्यासायिक खेती हो चुकी है। भारतवर्ष के विभिन्न भागों जैसे—बंगलौर, पूणे, इन्दौर आदि में भी इसकी खेती आरम्भ हो चुकी है।

औषधीय उपयोग :

स्टीविया की उपयोगिता इसमें पाये जानने वाले मिठास के गुण के कारण है। यह सामान्य शक्कर की तुलना में 25 से 30 गुना ज्यादा मीठा होता है जिससे शक्कर के विकल्प के रूप में इसके उपयोग की संभावनाएं बढ़ी हैं। यह न केवल सामान्य शक्कर से ज्यादा मीठा है बल्कि यह पूर्णतया कैलोरी रहित भी है, जिससे न केवल मधुमेह रोगियों के लिए शक्कर के विकल्प के रूप में इसका उपयोग सुरक्षित है बल्कि ऐसे व्यक्ति जो अपने वजन बढ़ने के प्रति काफी सचेत रहते हैं। कैलोरी रहित होने की वजह से उनके लिए भी



इसका उपयोग पूर्णतया सुरक्षित है (व्यांकि सामान्य शक्कर के उपायोग से वजन बढ़ता है)। इसके साथ-साथ हर्बल उत्पाद होने की वजह से इसका कोई कुप्रभाव (साइड इफैक्ट) नहीं है तथा वर्तमान में प्रयोग में लाये जाने वाले "स्वीटनर्स" जैसे—शुकर फ्री, सेक्रीन, राटेल, एस्पार्टम की अपेक्षा पूर्णतया सुरक्षित है। विशेषतया भारतीय परिप्रेक्ष्य में जहाँ शक्कर के बिना कोई पकवान नहीं बनाया जा सकता तथा जहाँ 40 वर्ष से अधिक के आयु समूह में काफी अधिक संख्या में लोग मधुमेह से पीड़ित हैं। स्टीविया एक वरदान के रूप में प्रकट हुआ है। इसके अतिरिक्त यह रक्तचाप तथा रक्त शर्करा के नियमतीकरण करने में, दाँतों, मसूड़ों में होने वाली बीमारियों में प्रयोग किया जाता है।

मुख्य रासायनिक अवयव :

इसमें मुख्य रूप से स्टीवियोसाइड (7–14 प्रतिशत) तथा रिबाउदिसाइड-1 होते हैं जिनमें इन्सुलिन संतुलन के गुण पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें रिबाइडिस, रिबाउदिसाइड-सी, डुलकोसोइड तथा छः अन्य यौगिक पाये जाते हैं।

भूमि एवं जलवायु :

उपयुक्त जल निकास वाली रेतीली नम दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. मान 6–8 तक हो, स्टीविया के लिए उपयुक्त पायी गयी है। इसकी खेती क्षारीय भूमियों में नहीं करना चाहिए। जल भराव वाली भूमियों के लिए भी यह अत्यन्त संवेदनशील है। इसकी खेती के लिए अर्द्ध—आर्द्ध तथा अर्द्ध ऊष्ण किरम की जलवायु काफी उपयुक्त पायी जाती है। इसका पौधा मध्य भारत में जलवायु जहाँ औसतन 11 से 42° सेल्सियस तक तापमान रहता हो, में सफलतापूर्व उगाया जा सकता है।

सूक्ष्म जलवायु प्रबन्धन :

विशेष रूप से ग्रीष्म ऋतु में उच्च तापमान 41° सेल्सियस से अधिक होने पर गर्मी की तपिश एवं गर्म हवाओं (लू) से इसकी फसल को बचाने के लिए स्टीविया की दो लाइनों (बेड) के बीच में एक लाइन गर्मी वाली मक्का (बेबी कार्न मक्का) की बुवाई कर दी जाती है। इसके साथ ही जितने क्षेत्रफल में स्टीविया की फसल लगायी गयी है उसके चारों तरफ एक मीटर चौड़ी पट्टी में ढैंचा बोकर, उसकी बाड़ लगा दी जाती है। जिसके कारण गर्मी वाली मक्का तेज धूप को सीधे स्टीविया के पौधों तक नहीं आने देगी इसके साथ ढैंचा की एक मीटर बाड़ गर्म हवाओं (लू) को राकेगी जिससे स्टीविया की फसल अत्याधिक गर्मी एवं गर्म हवा के प्रकोप से झुलसने से सुरक्षित रहेगी। इस विधि से स्टीविया की फसल लेने से इसके लिए किसी भी पॉली हाउस / नेट हाउस / ग्रीन हाउस की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सैसे भी स्टीविया के पौधे अधिक छाया पसन्द नहीं करते हैं। इनके समुचित विकास के लिए इन्हें खुले में ही लगाना चाहिए, जिससे इसमें पाये जाने वाला तत्व स्टीवियोसाइड भी प्रभावित न हो।



प्रजातियाँ :

विश्व भर में स्टीविया की लगभग 90 प्रजातियाँ विकसित की यी हैं जो कि विभिन्न स्थानीय संबन्धित क्षेत्रों की जलवायु के अनुरूप है। किसान भाइयों को ऐसी प्रजातियों की खेती करनी चाहिए जिनमें स्टीवियोसाइड की मात्रा ज्यादा हो तथा जो अपने क्षेत्र जलवायु के भी अनुरूप हो। वर्तमान में कृषिकरण की दृष्टि से स्टीविया की मुख्यतया तीन प्रजातियाँ – एस.आर.बी.–113, 128 एवं 512 प्रचलन में हैं। जो सनफ्रूड्स इतिष्ठया लिमिटेड, पूना द्वारा विकसित की गयी हैं। कृषिकरण की दृष्टिपोषण से स्टीविया की सर्वोत्तम प्रजाति एस.आर.बी.–128 मानी जाती है। इसमें 21 प्रतिशत तक ग्लूकोसाइड पाये गये हैं। यह प्रजाति भारतवर्ष के उत्तरी क्षेत्रों के लिए भी उतनी ही उपयुक्त है जितनी कि दक्षिण भारतवर्ष के लिए है।

बुवाई / प्रवर्धन / नर्सरी :

स्टीविया के व्यावसायिक कृषिकरण की दृष्टि से यह आवश्यक है कि ऐसी उपयुक्त प्रजाति का चयन किया जाय जो सम्बन्धित क्षेत्र की जलवायु के अनुकूल हो। स्टीविया का प्रवर्धन बीजों एवं भूस्तरित तनों द्वारा होता है। इसके बीजों से इसका पुनर्जन्म बहुत ही कम होता है। अतः साधारणतया इसे ताजा वर्ष की टहनियों से कटिंग लेकर (15 सेमी.) नर्सरी

में उगाया जाता है। इसके लिए उत्तम समय फरवरी—मार्च एवं सितम्बर—अक्टूबर माना जाता है। कटिंग्स को 100 पी.पी. एम. शवित के पेकलोब्यूट्राजोल से उपचारित करने पर इसकी जड़े जल्दी आ जाती हैं।

पौधे रोपण :

फरवरी—मार्च में जड़ युक्त तने की कटिंग्स को खेत में 40×30 सेमी. की दूरी पर रोपित कर दिया जाता है तथा एक हल्की सिंचाई कर दी जाती है। खेत में 60 सेमी. (लगभग 2 फीट) चौड़ी उभरी मेंड़ (बेड्स) बना ली जाती हैं जिनकी ऊँचाई 6 से 9 इंच रखते हैं एवं दो बेड्स के बीच में 1 फीट की नाली रखनी चाहिए। बेड्स पर पौधे रोपण करते समय एक मेंड़ पर 2 लाइन 40 सेमी. की दूरी पर रखते हैं एवं 10 सेमी. बेड्स दोनों तरफ खाली रखते हैं। पौधे से पौधे की दूरी 30 सेमी. रखनी चाहिए। इसी साथ इसकी फसल अधिकतम गर्मी (जून माह) एवं लू (गर्म हवा) से बचाने के लिए प्रत्येक 2 लाइन स्टीविया के बाद एक लाइन बीच में बेबीकार्न मक्का बोनी चाहिए। यह मक्का बेड्स के किनारे लाइन में बोते हैं, जो गर्म हवा के प्रकोप से स्टीविया को बचाती हैं। साथ ही स्टीविया की फसल के खेत के चारों तरफ एक मीटर ढैंचा बोना चाहिए। यह भी लू (गर्म हवा) से फसल को चाता है। इस प्रकार एक एकड़ खेत में रोपाई हेतु लगभग 30,000 (तीस हजार) पौधे लगते हैं।

खाद एवं उर्वरक :

स्टीविया की फसल बुवार्ठ से पूर्व 15 टन गोबर की खाद डालनी चाहिए। अच्छी पैदावार के लिए 30 किग्रा. नाइट्रोजन, 20 किग्रा. फार्स्फोरस एवं 20 किग्रा. पोटाश प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है।

सिंचाई :

स्टीविया की खेती को अधिक पानी चाहिए तथा गर्मियों में इसकी 3—5 दिन के अन्तराल पर लगातार सिंचाई करना जरूरी है, जिससे सदैव नमी बनी रहे।

खरपतवार नियंत्रण :

स्टीविया रोपण के एक माह बाद पहली निराई की जाती है इसके बाद आवश्यकतानुसार 15 दिन से 1 माह में खेत को खरपतवार से मुक्त करने के लिए निराई करते रहना चाहिए।

कीट एवं व्याधियाँ :

स्टीविया के पौधे में रोग प्रतिरक्षण के गुण हैं सामान्यतः इसमें रोग कम ही लगता है, लेकिन कभी—कभी बोरॉन की कमी के कारण पत्तियों पर धब्बे हो जाते हैं जिसे 6 प्रतिशत बोरैक्स का छिड़काव कर, समाधान किया जा सकता है।

कटाई :

रोपण के 3 माह पश्चात् यह फसल पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है, इसकी कटाई के लिए जमीन से 5—8 सेमी. ऊपर तक हिस्सा छोड़ते हुए की जाती है, जिससे कि छोटे हिस्से से पुनर्उत्पादन हो सके। इसके बाद दुबारा 90 दिन पश्चात् यह फसल पुनः कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इस प्रकार एक वर्ष में कम से कम 4 कटाई की जा सकती हैं। स्टीविया की पत्तियाँ ही



व्यापार हेतु उपयोगी हैं। अधिक उत्पादन बढ़ाने हेतु फूलों को तोड़कर फेंक दिया जाता है। फूलों की तुड़ाई 30, 45, 60, 75 और 90 दिनों के अन्तराल पर की जानी चाहिए। सामान्यतयः फूल रोपण के 40 दिन बाद दिखाई देने लग जाते हैं। इन फूलों को ऐसे समय में 40 और 55 दिन पश्चात् तोड़ देना चाहिए तथा पत्तियों को भी 90 दिन पर तोड़ना जरूरी हो जाता है।

भण्डारण :

स्टीविया के पत्तों को तोड़ लेने के उपरान्त उन्हें छाया में सुखाया जाना चाहिए। प्रायः तीन—चार दिन तक छाया में सुखा लिये जाने पर पत्ते पूर्णतयः नमी रहित हो जाते हैं। इसके बाद इसकी सूखी पत्तियों को हल्के जूट के बोरे में भरकर सुरक्षित स्थान पर रख लिया जाता है। स्टीविया की सूखी पत्तियों का पाउडर बनाकर भी बेचा जा सकता है तथा इसका एक्स्ट्रैक्ट भी निकाला जा सकता है। वैसे किसानों के स्तर पर इसके सूखे पत्ते बेचा जाना ही उपयुक्त होता है। स्टीविया के पत्तों की बिक्री दर भी कई कारकों पर निर्भर करती है जिसमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण है कि इनमें उपस्थित स्टीवियोसाइड की मात्रा जिसके अनुसार इसकी बिक्री होती है, उसे भण्डारण के समय सुरक्षित रखा जाय।



वर्षवार उत्पादन :

उत्पादन प्रति वर्ष चार कटाई से	18 कु. सुखी पत्तियाँ	20 कु. सुखी पत्तियाँ	22 कु. सुखी पत्तियाँ	20 कु. सुखी पत्तियाँ	18 कु. सुखी पत्तियाँ
पत्तियों से बिक्री से प्राप्तियाँ : (100 रुपये प्रति किग्रा. की दर से)	180,000	2,00,000	2,20,000	2,00,000	1,80,000



61. गुलाब की उन्नतशील खेती

जलवायु :

गुलाब के लिए बीच की जलवायु न जाड़े में अधिक ठंडक, न गर्मियों में अधिक गर्म चाहिए अर्थात् दिन का तापमान 25° – 30° सेल्सियस तथा रात का 2° – 4° सेल्सियस अति उत्तम माना जाता है।

खुले क्षेत्र में गुलाब उगाना :

भूमि : गुलाब हेतु मिट्टी दोमट तथा अधिक कार्बनिक पदार्थ वाली होनी चाहिए जिनका pH.एच. मान 5.3 से 6.5 तक हो।

प्रजातियाँ :

1. **संकर :** क्रिमसन ग्लोरी, मिस्टर लिंकन, लव, जान एफा केनडी, जवाहर मृणालिनी, प्रेसीडेन्ट, राधा कृष्णन, फर्स्ट लव, अपोलो, पूसा सोनिया, गंगा, टाटा सेटनरी, आर्किड, सुपर स्टार, अमेरिकन हेरिटेज आदि।
2. **पाली एन्था :** अंजनी, रश्मि, नर्तकी, प्रीति स्वाती।
3. **फ्लोरीबन्डा :** बंजारन, देहली प्रिंसेज, डिम्पल, चन्द्रमा, सदाबहार, सोनोरा, नीलाम्बरी, करिश्मा, सूर्य किरण आदि।
4. **गैन्डी फ्लोरा :** कवीन एलिजावेथ, मान्टे जुमा आदि।
5. **मिनीपेचर :** ब्यूटी सीक्रेट, रेड फ्लश, पुश्कला, बेबी गोल्ड स्टार, सिल्वर टिप्स आदि।
6. **लता गुलाब :** काकटेल, ब्लैक ब्वाय, लैमार्क, पिंक मैराडोन, मैरिकल नील आदि।

पौध तैयार करना :

जंगली गुलाब के ऊपर 'टी' बिंग द्वारा इसकी पौध तैयार होती है। गुलाब की कलम जून–जुलाई में क्यारियों में लगभग 5 सेमी. की दूरी पर लगा दी जाती है और इनमें पत्तियाँ फूट जाती हैं। नवम्बर–दिसम्बर में चाकू की सहायता से फुटाव आई टहनियों पर से कांटे साफ कर दिये जाते हैं। जनवरी में अच्छी किस्म के गुलाब से टहनी लेकर 'टी'आकार कालिका निकालकर जंगली गुलाब के ऊपर लगाकर पालीथीन से कसकर बांध देते हैं।

पौध रोपण:

पौधशाला से सावधानीपूर्वक पौध खोदकर उत्तर प्रदेश के मैदानी भागों में सितम्बर–अक्टूबर में पौध की रोपाई करना चाहिए। खोदे गये पिञ्ची से लिपटी घास–फूस हटा दें और ध्यान दें कि रोपाई वाला भाग रोपाई के समय भूमि की सतह से 15 सेमी. ऊँचा रहे। पौधे से पौधे व लाइन से लाइन की दूरी 30x60 सेमी. रखी जाती है। पौध लगाने के तुरन्त बाद सिंचाई कर दें।

सिंचाई :

गुलाब के लिए सिंचाई का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिए और आवश्यकतानुसार गमटट में 5–7 दिनों बाद और सदटट में 10–12 दिनों बाद सिंचाई करना चाहिए।

कटाई–छटाई (प्रूनिंग) :

काट–छांट के लिए उ. प्र. के मैदानी भागों में अक्टूबर महीने का दूसरा सप्ताह उपयुक्त होता है, बशर्ते काट–छांट के समय वर्षा न हो। पौधों में 3–5 मुख्य टहनियों को 30–45 सेमी. लम्बी रखकर काट दिया जाता है। जहाँ पर काटा जाये वहाँ पर आंख बाहर की तरफ हो, इस बात का ध्यान रखना चाहिए। इसमें 45 अंश (डिग्री) पर आंख के 5 मिमी. ऊपर से काटा जाता है, जिससे आंख खराब न हो पाये। काट–छांट का कार्य तेज चाकू और सिकेटियर से करना चाहिए। कटे हुए भाग पर कवकनाशी दवाओं जैसे कापर आक्सीक्लोरोइड, कार्बन्डाजिम का लेप लगाना आवश्यक है।

खाद एवं उर्वरक :

गुलाब के विकास के लिए जाड़े के दिनों में 3–4 घण्टे की धूप और रात्रि की ओस बहुत आवश्यक है। उत्तम कोटि का फूल लेने के लिए (प्रूनिंग के बाद) प्रति पौधा 10 किग्रा. गोबर की खाद मिट्टी में मिलाकर सिंचाई करना चाहिए। गोबर



की खाद देने के एक सप्ताह पश्चात् जब पौधों में नई कोपलें फूटने लगें तब 200 ग्राम नीम की खली, 100 ग्राम हड्डी का चूरा तथा रासायनिक खाद का मिश्रण 50 ग्राम प्रति पौधा जिसमें यूरिया, सुपर फास्फेट तथा पोटेशियम सल्फेट 1 : 2 : 1 अनुपात में हो, देना चाहिए।

फूलों की कटाई :

सफेद, लाल, गुलाबी रंग के फूल अधिकृती पंखुड़ियों में जब ऊपरी पंखुड़ी नीचे की ओर मुड़ना शुरू हो तब काटने ठीक रहता है। फूलों को काटते समय एक या दो पत्तियाँ टहनी पर छोड़ देनी चाहिए जिससे पौधों को वहाँ से फिर बढ़वार मिलती है।

फूलों की कटाई के बाद देखरेख :

फूल काटते समय पानी की बाल्टी साथ रखें जिससे फूलों को काटने के तुरन्त बाद पानी में रखा जा सके। बाल्टी में कम से कम 10 सेमी. पानी अवश्य होना चाहिए जिससे फूलों की डंडी अच्छी तरह से भीग जाये। पानी के अन्दर प्रज़रवेटिव (परिरक्षक) भी मिलाते हैं।

फूलों को कम से कम 3 घण्टे पानी में रखने के बाद ही उनकी ग्रेडिंग के लिए निकालना चाहिए। यदि ग्रेडिंग देर से करनी हो तो फिर फूलों को कोल्ड स्टोरेज में रखना चाहिए, जिसका तापक्रम 1°–3° से. होना चाहिए।

गुलाब के प्रमुख रोग एवं कीट तथा उनके नियंत्रण :

- पाउडरी मिल्ड्यू रोग (खरा)** : फफूँदी जनित इस रोग में पत्तियों, तनों तथा कलियों पर सफेद चूर्ण फैला दिखाई देता है।

उपचार :

- गुलाब की कटाई-छटाई के समय सभी पत्तियों को काट दें जिससे संक्रमण का स्रोत नष्ट हो जाय।
- पौधों पर रोग के रोकथाम हेतु घुलनशील गंधक (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में) या मैकोज़ेब 75 प्रतिशत डब्लू.पी. 2.5 ग्राम / लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अंतर पर दो छिड़काव करें।
- डाईबैक या उल्टा सूखा रोग** : इस रोग का प्रकोप वर्षा के बाद से प्रारम्भ होकर दिसम्बर के अन्त तक होता है। इसमें टहनियों ऊपर से शुरू होकर नीचे की ओर सूखना शुरू कर देती है तथा पौधे का तना काला पड़कर मर जाता है।

उपचार :

- प्रभावित भाग को काटकर जला दें तथा कटे भाग पर चौबटिया पेरस्ट (4 भाग कपरकार्बोनेट + 4 भाग रेडलेट + 5 भाग अलसी का तेल) या बोर्डे पेरस्ट का लेप कर दें।
- 50% कापर आक्सीक्लोराइड को 3 ग्राम प्रति ली. पानी का दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

कीट :

- माहू (एफिड) :**

उपचार : इसके उपचार हेतु कीट दिखाई देते ही तुरन्त डाईमिथोएट 1.5 मिली./ लीटर पानी में अथवा इमिडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत एस.एल. 0.3 मिली. प्रति लीटर पानी में घोलकर 2–3 छिड़काव करें अथवा सामान्य अवस्था में उपर्युक्त कीटनाशकों का कलियाँ आते समय पुष्पावस्था पर छिड़काव करें। तेज हवा के समय छिड़काव न करें।

शल्क कीट : इसका प्रकोप गुलाब के पौधे पर बहुतायत में होता है। ये लाल और भूरे रंग के शल्क कीट मुलायम तने को ढक लेते हैं और पौधे का रस चूस कर उन्हें कुरुप बना देते हैं। इसके नियंत्रण हेतु माहू में संस्तुत कीटनाशकों का प्रयोग करें।

दीमक : ये गुलाब के भूमिगत भागों को खाते हैं, जिससे सम्पूर्ण पौधा सूखकर नष्ट हो जाता है।

नियंत्रण :

- कीट का आक्रमण दिखाई देते ही सिंचाई करना चाहिए।
- क्लोरपाइरीफॉस 10 प्रतिशत जी. की 10 किग्रा./हे. मात्रा प्रति हे. भूमि में मिला दें अथवा क्लोरपायरीफास 20 प्रतिशत ई.सी. 2–3 लीटर प्रति हे. भूमि में मिला दें।

62. गेंदा की उन्नतशील खेती

अफ्रीकन गेंदा :

इस किस्म को व्यापारिक स्तर पर कटे फूलों के लिए उगाया जाता है। यह वार्षिक किस्म है। इसके तने और शाखाये सीधी बढ़ती हैं। बढ़वार भी अधिक होती है। इस गेंदे की कुछ किस्मों के नाम नीचे दिये गये हैं जिन्हें उगाकर अधिक उपज ली जा सकती है। क्लाइमैक्स, कौलेरेट, क्राउन ऑफ गोल्ड, क्यूपिड येलो, फर्स्टलेडी, फुलकी रूफल्स, जाइन्ट सनसेट, इन्डियन चीफ, ग्लाइटर्स, जुबली, मैन इन दी मून, ममोथ मम, रिवर साइड ब्यूटी, येलो सुप्रीम, स्पन गोल्ड।

मैक्सिन गेंदा :

इस वर्ग की प्रजातियों में प्रमुख है : टगेट्स ल्यूसीडा, टगेट्स लेम्मोनी, टगेट्स माइन्यूटा।

फ्रेन्च गेंदा :

यह एक झाड़ीनुमा प्रजाति है जिसका पौधा फैलने वाला होता है। आमतौर पर इस किस्म के पौधे छोटे होते हैं। इसके फूल धारीदार या धब्बे वाले होते हैं। जो देखने में अत्यन्त आकर्षक होते हैं।

ऊँची बढ़ने वाली किस्मों को क्यारियों और गमलों में उगाया जा सकता है। दोनों किस्मों को खिड़कियों के बक्सों, लटकती टोकरियां और शैल उद्यानों में उगाया जाता है। इसकी कुछ गंधविहीन झाड़ीवाली किस्में भी उगाई जाती है। कुछ आकर्षक किस्मों के नाम इस प्रकार हैं : बोलेरो, गोल्डी, गोल्ड स्ट्रीप्स, गोल्डन आरेनज, गोल्डन जेम, रेड कोट, पिगमी, प्रेटी जॉय, डेन्ची मैरिएटा, रोजन, रेड हैड, गोल्डन बॉल।

संकर किस्में :

संकर प्रजातियां विकसित हुई हैं जैसे— नगेट, टेट्रा सफउ रेड, पूसा नारंगी गेंदा, पूसा बसंती गेंदा।

भूमि :

गेंदे को विभिन्न प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है। उचित जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए उचित मानी गई है। जिस भूमि का पी.एच. मान 7–7.5 के बीच हो, वह भूमि गेंदे की खेती के लिए अच्छी रहती है।

बीज की मात्रा :

संकर किस्मों में 700–800 ग्राम बीज प्रति हेक्टर तथा अन्य किस्मों में लगभग 1.25 किग्रा. बीज प्रति हेक्टर पर्याप्त होता है।

प्रसारण :

गेंदे का प्रवर्धन मुख्यतः बीज द्वारा होता है। इसकी बुवाई जलवायु की भिन्नता के अनुसार भिन्न भिन्न होती है। उत्तर प्रदेश में बीज मार्च से जून तथा अगस्त—सितम्बर में बोया जाता है।

पौधशाला :

गेंदे के बीज को पहले पौधशाला में बोया जाता है। पौधशाला में पर्याप्त मात्रा में गोबर की खाद डालकर भली भांति खुदाई कर ली जाती है। क्यारियों में रेत भी डाली जाती है, मिट्टी को भुरभुरा कर लेना चाहिए। इसके बाद नर्सरी क्यारियां जिन पर बीज बोना है, 15 सेमी. ऊँची व एक मीटर चौड़ी तथा 5–6 मीटर लम्बी बना लेनी चाहिए। बीजों को कतारों में बुवाई के बाद ऊपर से गोबर की खाद से ढक देते हैं, जब तक बीज जमना शुरू न कर दे, हजारे से ही पानी देना चाहिए। बीज जमने के बाद खुला पानी दिया जा सकता है।

खाद एवं उर्वरक :

250–300 कुन्तल प्रति हेक्टर की दर से गोबर की खाद भूमि में जुताई कर मिला देना चाहिए। अच्छी फसल के लिए 120 किग्रा. नाइट्रोजन, 80 किग्रा. फास्फोरस तथा 80 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टर की दर से देना चाहिए। फास्फोरस

तथा पोटाश की पूर्ण मात्रा भूमि की तैयारी करते समय ही डाल कर अच्छी तरह मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन को दो भागों में प्रयोग करना चाहिए। प्रथम भाग क्यारियों में पौध लगाने के एक माह बाद देना चाहिए तथा दूसरा भाग पौधा लगाने के दो महीने बाद प्रयोग करना चाहिए।

रोपाई :

गेंदा के पौधों की रोपाई समतल क्यारियों में की जाती है रोपाई की दूरी उसकी उगाई जाने वाली किस्मों पर निर्भर करती है। अफ्रीकन गेंदे के पौधों की रोपाई 45–60 सेमी. की दूरी पर की जाती है। अन्य किस्मों की रोपाई 40×40 सेमी. की दूरी पर करना चाहिए।

सिंचाई :

गेंदे की फसल में सिंचाई का विशेष महत्व है। सिंचाई भूमि की किस्म और मौसम पर निर्भर करता है। गर्मियों में 4–5 दिन के अन्तर पर सिंचाई करना चाहिए तथा सर्दियों में 10–12 दिन का अन्तर रखना ठीक है।

उपज :

गेंदे की उपज भूमि की उर्वराशक्ति और फसल की देखभाल पर निर्भर करती है। आमतौर पर 125–150 कुन्तल प्रति हेक्टर फूल मिल जाते हैं। कुछ उन्नत शील किस्मों से पुष्प उत्पादन 350 कुन्तल प्रति हेक्टर भी पाया गया है।

तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन :

1. फूलों को हमेशा प्रातः काल में ही पौधें से काटना चाहिए ताकि सूर्य की तेज किरणें फूलों पर न पड़े।
2. फूलों को सदा तेज चाकू या सिकेटियर की सहायता से तिरछा काटे।
3. फूलों को जिस पात्र में रखना है साफ होना चाहिए।
4. कटाई के बाद फूलों को छायादार स्थान पर फैलाकर रखना चाहिए।
5. पूर्ण विकसित फूलों को ही काटना चाहिए।
6. फूलों को ताजा रखने के लिए 8° सेन्टीग्रेड तापमान तथा 80 प्रतिशत आर्द्रता सर्वोत्तम है।
7. कट पलावर के रूप में इस्तेमाल किए जाने वाले फूलों के पात्र में 1 चम्च चीनी मिला देने से फूल अधिक समय तक रखा जा सकता है।

प्रमुख रोग :

1. आर्द्र पतन :

उपचार :

- ◆ कार्बोण्डाजिम 2.5 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज या
- ◆ कैप्टान 3.0 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज या
- ◆ थीरम 3.0 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज छिड़काव के लिए मैकोज़ेब 1 ग्रा. प्रति लीटर पानी की दर से अथवा कापरयुक्त रसायन 1 ग्रा. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

2. खर्रा रोग:

उपचार :

इसकी रोकथाम हेतु प्रकोप की दशा में संस्तुत कवकनाशी रसायनों में से 800–1000 लीटर पानी में घोल बनाकर दो छिड़काव 5 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए।

3. विषाणु रोगः

संस्तुत रसायन :

- ◆ ऑक्सीडिमेटान मिथाइल 2 मिली. या
- ◆ डाइमेथोएट 1 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से संस्तुत रसायनों को 800—1000 लीटर पानी का घोल बनाकर प्रति हेक्टर खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए।

4. मृदु गलन रोगः

- ◆ स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट 90 प्रतिशत + टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड 10 प्रतिशत 40—50 पी.पी.एम. का 20—25 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें।

प्रमुख कीट :

1. कली बेधक (हैलिकोवर्पा आमट्टजेरा) :

नियंत्रण :

- ◆ ग्रसित कलिकाओं/पुष्पों को एकत्र करके नष्ट कर देना चाहिए।
- ◆ फसल समाप्त होने पर खेत की गहरी जुताई करने से प्यूपा सतह पर आ जाने से चिड़ियों और धूप द्वारा नष्ट हो जाते हैं।
- ◆ प्रकोप दिखाई देने पर क्यूनालफास 0.07 प्रतिशत का छिड़काव आवश्यकतानुसार करना चाहिए।
- ◆ ट्राइकोग्रामा का प्रयोग करें।

2. पर्ण फुदका :

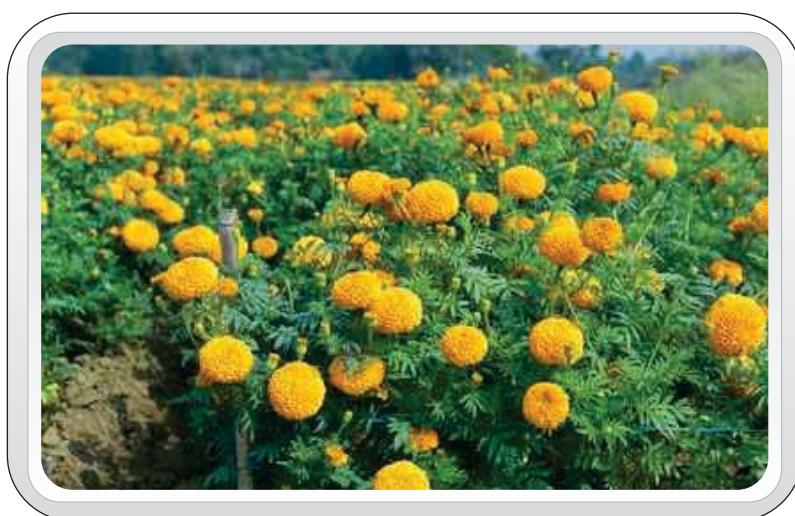
नियंत्रण :

- ◆ प्रकाश प्रपंच खेतों में लगाने चाहिए।
- ◆ प्रकोप दिखाई देने पर डाइमेथोएट 0.05 प्रतिशत के घोल का छिड़काव 10 से 15 दिन के अन्तर से 2—3 बार करना चाहिए।

3. थिप्स :

नियंत्रण :

- ◆ इसका रासायनिक नियंत्रण पर्ण फुदका कीट की भौति ही करें।



63. ग्लैडियोलस की उन्नतशील खेती

ग्लैडियोलस फूल का प्रयोग साज—सज्जा तथा गुलदस्ता के रूप में किया जाता है। इसकी स्पाइक बहुत ही आकर्षक होती है जिसका बाजार में अच्छा मूल्य प्राप्त होता है।

भूमि : अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी इसकी खेती हेतु उपयुक्त है।

खाद एवं उर्वरक : खेती की तैयारी के समय 500 कुन्तल गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर भूमि में मिला देना चाहिए। अच्छे फूल प्राप्त करने हेतु 200 किग्रा. नत्रजन, 400 किग्रा. फास्फोरस तथा 200 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा भूमि तैयार करते समय तथा बची हुई नत्रजन की आधी मात्रा कन्द लगाने के लगभग एक माह बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में देना चाहिए।



बुवाई समय : विभिन्न समयों पर फूल प्राप्त करने हेतु निम्न माहों में ग्लैडियोलस के कन्द लगाये जा सकते हैं—

1. जुलाई—अगस्त,
2. सितम्बर—अक्टूबर,
3. नवम्बर

बीज की आवश्यकता : एक हेक्टेयर भूमि हेतु लगभग 2 लाख कन्द की आवश्यकता होती है। 1–2½ इंच व्यास के कन्द उपयुक्त होते हैं।

बीज से बीज की दूरी : कंदों को कार्बन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में आधा घंटा डुबोकर 20x20 सेमी. दूरी पर 5 सेमी. गहराई में बोना चाहिए।

प्रजातियां : ग्लैडियोलस की कई हजार प्रजातियां हैं परन्तु उनमें से प्रदेश हेतु प्रमुख निम्नवत हैं—

1. राष्ट्रीय वनस्पति अनुसन्धान संस्थान, लखनऊ से अरुण, हंस ज्वाला, मनोहर, सदाबहार, त्रिलोकी।
2. भारतीय बागवानी अनुसन्धान संस्थान, बंगलौर से आरती, मीरा, नजराना, कुमकुम, तिलक।
3. हिमालय जैव सम्पदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर से अनुराग, क्यूट, ग्रेस, मुन्नी, डिलाइट।
4. भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली से अग्निरेखा, सुहागिन, नूपुर, नीलकंठ।

सिचाई : रोपण के पश्चात हल्की सिचाई 10 से 15 दिन बाद करनी चाहिए।

मुख्य कीट एवं रोग : सॉफ्ट रॉट तथा पर्णदाग/झुलसा मुख्य है। कंदों का उपचार ट्राइकोडर्मा जैव फफूदीनाशक पाउडर से करना चाहिए। बोने से पहले कदों को कार्बन्डाजिम (0.2 प्रतिशत) नामक फफूदनाशक से भी उपचारित कर सकते हैं। पौधे पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के 40–50 पी.पी.एम. का छिड़काव करने से सॉफ्टरॉट पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

कटाई एवं पैकेजिंग : फूलों के स्पाइक की कटाई प्रातः करनी चाहिए। काटने के बाद स्पाइक्स को बाल्टी में भरे पानी में रखना चाहिए। इन स्पाइक्स को 100–100 के गुच्छे में बाधकर बाजार भेजना चाहिए।

उपज : बुवाई के 80–90 दिन में स्पाइक निकलने लगते हैं। जिसकी उपज पौधों की दूरी के अनुसार प्राप्त होती है। एक हेक्टेयर से लगभग एक लाख से सवा लाख स्पाइक्स प्राप्त होती है।

64. रजनीगंधा (ट्यूबरोज़) की उन्नतशील खेती

रजनीगंधा का पुष्प तथा सुगन्ध उद्योग में महत्वपूर्ण स्थान है। इसका तेल काफी महंगा होता है।

भूमि :

इसकी खेती समुचित जल निकास वाली उर्वर, दोमट, बलुई दोमट जिसका पी.एच.मान 6.5 – 7.5 हो, आसानी से की जा सकती है।

खेत की तैयारी :

मिट्टी पलटने वाले हल से 6–8 इंच गहरी जुताई कर दो तीन जुताई उन्नतशील कृषि यंत्र / कलटीवेटर्स से करने के बाद मिट्टी को भुरभुरी बना लेते हैं। आखिरी जुताई से पहले खाद और उर्वरक की संस्तुत मात्रा खेत में डालकर यदि खेत में दीमक हो तो थिमेट का प्रयोग करते हुए पाटा लगाकर खेत को समतल कर लेते हैं।

खाद एवं उर्वरक :

अन्तिम जुताई के समय खेत में 30 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद देते हैं तथा 100 किग्रा. नाइट्रोजन, 60 किग्रा. फारफोरस तथा 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा और फारफोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले डालनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष मात्रा के लिए 100 किग्रा. यूरिया दो बार खड़ी फसल ने रोपण के 40–50 तथा 70–75 दिनों बाद डालनी चाहिए।

प्रजातियाँ :

किस्मों को मुख्यतः चार वर्गों में बाँटा गया है –

- | | |
|---|--------------------------|
| 1. इकहरे पुष्प वाली (सिंगल टाइप) | — रजत रेखा |
| 2. दुहरे पुष्प वाली (डबल टाइप) | — पर्लडबल, स्वर्णरेखा |
| 3. अर्द्ध दुहरे पुष्प वाली (मध्यम प्रकार) | — वैभव, अंगार, सुवासिनी। |
| 4. अलंकारिक पत्तियों वाली | — स्वर्ण रेखा, रजत रेखा। |

रोपण :

फरवरी के अन्तिम सप्ताह से अप्रैल मध्य तक बुवाई कर सकते हैं। सर्वोत्तम समय मार्च माह है। कंदों को 30 X 30 सेमी की दूरी पर बनाई गई कतारों के बाद 60 सेमी. स्थान छौथी एवं पांचवीं कतार के बीच छोड़ देना चाहिए। 3–6 सेमी. की गहरी बुवाई करनी चाहिए। एक हेक्टेयर हेतु लगभग 1200–1500 किग्रा. कंदों की आवश्यकता होती है।

सिंचाई :

जब तक कल्ले न अंकुरित हो जाए तब तक सिंचाई नहीं करना चाहिए।

तुडाई :

कंदों की बुवाई के लगभग 80 से 100 दिन के उपरान्त पुष्प आने लगते हैं। इन पुष्पों के स्पाइक को छोटे-छोटे समूह बनाकर बिक्री हेतु बाजार में भेजना चाहिए।

उत्पादन :

प्रथम वर्ष में 150 से 200 कुन्तल दूसरे वर्ष 200—250 कुन्तल फूलों की उपज प्राप्त होती है। एक बार रोपी गई फसल से तीन वर्षों तक ही आय प्राप्त होती है।

रोग एवं कीट : इसमें कीट एवं बीमारियों का प्रकोप कम होता है। कंदों को रोपण से पूर्व उपचार अवश्य कर लेना चाहिए। मकड़ी कीट के नियंत्रण हेतु बाईफेन्श्रिन 8 प्रतिशत एस.सी. 1.25—1.50 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। माहू प्रकोप हेतु 0.25 प्रतिशत मैलाथियान का घोल छिड़काव करना चाहिए। पत्तियों पर झुलसा या धब्बा रोग नियंत्रण हेतु 2 ग्राम/लीटर पानी में मैंकोज़ेब का छिड़काव करना चाहिए।



65. पशुपालन प्रबन्धन

दूध, दही, घी, पनीर, खोया, मट्ठा हमारे आधार में पोषक तत्व का अभिन्न अंग है, जिसके कारण दूध का महत्व दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है। प्रदेश में दूध उत्पादन बढ़ाने के लिए व्यापक स्तर पर पशुओं की नस्ल सुधार कर नयी संकर नस्ल को विकसित किया गया है। डेयरियों/पशुपालन का कार्य कृषि के साथ या स्वतंत्र उद्योग के रूप में किया जा सकता है। दूध उत्पादन के साथ दूध से निर्मित अन्य पदार्थ जैसे— पनीर, दही, घी आदि का व्यवसाय रोजगार का साधन सिद्ध हो सकता है।

दुधारू नस्लों की बढ़ोत्तरी के लिए संकरण तकनीकी :

पशुओं का दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए संकरण तकनीक एक ऐसी महत्वपूर्ण पद्धति है जिसके द्वारा दुधारू नस्लों को संवर्धित किया जा सकता है। इस तकनीकी के द्वारा विदेशी नस्ल की अच्छी आनुवंशिकता वाले सांड़ों के वीर्य से देशी नस्ल का मिलान कराकर नस्ल सुधार किया जाता है। इस तकनीकी से जन्मे संकर पशु दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से बहुत उपयोगी है। संकर पशु उन क्षेत्रों के लिए उपयोगी है जहाँ चारे की अच्छी सुविधायें हों और दूध की बिक्री की सुविधा हो, इनकी स्वास्थ्य प्रबन्ध चिकित्सा का पूर्ण सुविधा होनी चाहिए।

तकनीक :

हमारे प्रदेश में ऐसे पशुओं की संख्या बहुतायत में है जिसकी नस्ल का ही पता नहीं है। अतः उन्नयन तकनीकी से अवर्णित गायों का वर्णित नस्ल के सांड़ों का टीका लगाया जाता है। जिन क्षेत्रों में गैर नसली पशु हैं वहाँ सुपरिचित मौजूदा नस्लों में से किसी एक नस्ल के सांड़ प्रयोग किये जाये और इस प्रकार देशी गायों को दुग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए सुधारा जा सकता है।

चयनात्मक पद्धति :

चयनात्मक पद्धति में नस्ल वाली गायों का प्रजनन उसी नस्ल वाले सांड़ों से किया जाता है। गायों का चुनाव उनकी दूध देने की क्षमता पर किया जाता है। अधिक दुग्ध उत्पादन वाले पशुओं की संख्या तेजी से बढ़ाने के लिए जैव तकनीकी के क्षेत्र में भ्रूण प्रतिरोपण, भ्रूण विभेदन, डिम्ब द्विगुणन आदि तकनीकियों का विकास किया गया है।

पशु आहार पोषण सम्बन्धी तकनीकी :

गेहूँ और धान के भूसे का पोषक मूल्य बढ़ाने के लिए विविध रासायनिक और जैविक पद्धतियां प्रयोग की गई हैं, जो कि सस्ती तकनीकी है। एन.डी.आर.आई., करनाल (हरियाणा) के वैज्ञानिकों ने एक यूरिया शीरा खनिज मिश्रण पिंड विकसित किया है जो बढ़ते पशुओं द्वारा भूसा उपयोग की क्षमता में सुधार करता है। इस प्रतिपूरक का उपयोग प्राकृतिक आपदाओं के दौरान पशुओं को बचाने के लिए किया जाता है। इस यूरिया शीरा खनिज पिंड को पशु स्वाद से चाटते हैं।

पशुओं को परम्परागत आहार जुटाने की समस्या अपने आप में विशेष महत्व रखती है। अतः कृषि अपशिष्ट उप उत्पादों को पशु आहार के रूप में प्रयोग किये जाने तथा कुछ कृषि खद्यानों जैसे महुआ, खली, नीम—खली, साल बीज खाद्य में विषेले तत्वों की हटाने की समुचित प्रौद्योगिकी विकसित की है, जिससे इनको पशु आहार के रूप में प्रयोग किया जा सके।

गाय और भैंसों का प्रजनन प्रबन्ध :

गाय व भैंसों से उचित दुग्ध उत्पादन के लिए पशुओं का अच्छी नस्ल का होना या दुग्ध उत्पादन के लिए पशु में अच्छे लक्षणों का होना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि इन पशुओं में प्रजनन भी ठीक प्रकार से होना चाहिए।

गाय व भैंसों में प्रजनन सम्बन्धी जो प्रमुख समस्यायें हैं वे निम्नलिखित हैं —

1. प्रथम व्यात की अधिक उम्र ।
2. लम्बा शुष्क काल ।
3. छोटा दुग्ध स्रवण काल ।
4. दो व्यात के बीच लम्बी अवधि ।
5. शान्त या क्षीण ऋतुकाल
6. पशु का बार—बार ऋतुकाल में आना ।

पशुपालक का यह प्रयत्न होना चाहिए कि मादा पशु का नर से संगम कम आयु में ही हो जाये परन्तु ऐसा करने के लिए पशु की आयु की तुलना में उसके भार को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। प्रथम गर्भाधान के समय गायों में वजन कम से कम 200—250 किग्रा। एवं भैंसों में 300—350 किग्रा। होना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में गायों के संदर्भ में प्रथम व्यात की उम्र 4 वर्ष एवं भैंसों में प्रथम व्यात की उम्र 4 से 4 1/2 वर्ष होती है।

गाय व भैंसों में गर्भकाल क्रमशः 280—285 दिन और 300—315 दिन होता है। चूंकि अन्तिम 6—8 सप्ताह में शिशु सबसे अधिक विकास होता है, अतः लगभग दो माह का शुष्क काल पर्याप्त होगा। यह वह अवधि है जब पशु से दुग्ध नहीं लिया जा रहा हो या दुग्ध स्रवण नहीं होता। अधिकतर पशुओं में शुष्क काल 90 दिन के लगभग मिलता है जो कि संकर पशुओं में अपेक्षाकृत कम होता है। काफी पशु ऐसे भी हैं जिनमें शुष्क काल 90 दिन से भी अधिक मिलता है।

वर्तमान में 45—60 दिन का शुष्क काल वैज्ञानिक दृष्टि से अधिक आदर्श समझा जाता है। इस प्रकार से गायों के संदर्भ में एक वर्ष में एक बच्चा एवं भैंसों के सदर्भ में लगभग 15 माह में एक बच्चा लिया जा सकता है।

पशु से दूध दोहन को निम्न प्रकार से बन्द किया जा सकता है :—

1. यदि पशु का प्रतिदिन दूध 4—5 लीटर से अधिक नहीं है और थनैला जैसी बीमारी से स्वतंत्र है तो इस दिशा में दुग्ध दोहन क्रिया एकदम बन्द की जा सकती है।
2. जब गाय या भैंस 5 लीटर से अधिक दूध दे रही हैं तो उन्हें शुष्क करने के लिए पहले 2—3 दिन 24 घण्टे के अन्तर पर दुग्ध दोहन करते हैं। फिर 36 घण्टे के अन्तर पर 2—3 दिन दुग्ध दोहन करते हैं। एवं बाद में 2—3 दिन 48 घण्टे के अन्तर पर दुग्ध दोहन कर सकते हैं, फिर अन्तिम रूप से दुग्ध दोहन बन्द कर देते हैं।
3. पशु को शुष्क करने के लिए उसको दिये जाने वाले चारे की गुणवत्ता व मात्रा आदि में परिवर्तन एवं ऊपर लिखित दूसरी विधि, दोनों को संयुक्त रूप से अपनाया जा सकता है।

व्यात के बाद प्रथम दो ऋतुकाल को छोड़कर तीसरे ऋतुकाल में मादा पशु को गर्भित कराया जाना चाहिए। प्रथम दो ऋतुकाल छोड़ने का कारण यह है कि मादा को प्रसव अवस्था में जो शरीर में क्षति होती है, उसको पूरा कर सके। इस प्रकार से व्यात के लगभग 2 माह बाद पशु को गर्भित करा देना चाहिए। गर्भाधान प्राकृतिक या कृत्रिम दोनों प्रकार से कराया जासकता है। गाय व भैंसों में गर्भाधान का सही समय क्रमशः ऋतुकाल के लक्षण प्रदर्शित करने की मध्य से अन्तिम अवस्था एवं अन्तिम अवस्था में होता है। उदाहरणार्थ यदि गाय आज शाम 6 बजे ऋतु काल में लक्षण प्रदर्शित करती है तो उसको अगले दिन प्रातःकाल में गर्भित कराएं और सबेरे जो पशु ऋतुकाल के लक्षण प्रदर्शित करता है उसको शाम को गर्भित कराए। यदि दो बार अलग—अलग समय पर पशु को गर्भित कराया जाता है तो यह अधिक उचित होगा।

गाय व भैंसों में ऋतुकाल के प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं –

1. पशु के चरने तथा खाने के स्वभाव में अन्तर आ जाता है।
2. पशु जुगाली करना बन्द कर देता है।
3. दुग्ध उत्पादन घट जाता है।
4. गाय दूसरी गाय पर चढ़ती है या अन्य गायों के चढ़ने पर शान्त खड़ी रहती है।
5. पशु बार—बार थोड़ी—थोड़ी मात्रा में मूत्र त्याग करता है।
6. ऋतुमयी मादा अन्य पशुओं को चाटती है।
7. पशु की भग शोफयुक्त तथा उपकला सुर्ख हो जाती है।
8. भग से स्वच्छ पानी जैसा श्लेषिक स्राव लटकता दिखाई देता है।

उपरोक्त बातों के अतिरिक्त अन्य प्रबन्ध सम्बन्धी मुख्य बातें संक्षिप्त रूप से नीचे दी गयी हैं उन पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए –

1. गर्भित पशुओं को दौड़ाना नहीं चाहिए और हो सके तो अन्य पशुओं से अलग रखें जिससे गर्भपात जैसी घटना न हो।
2. गर्भधारण की तिथि व पशु के गर्भकाल द्वारा प्रसव की संभावित तिथि का अनुमान लगाया जा सकता है।
3. गर्भावस्था की अन्तिम अवधि में पशु के पोषण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।
4. समय—समय पर विभिन्न प्रकार की संक्रामक बीमारियों से बचाव के लिए टीके लगवाने चाहिए।
5. पशुओं को लवण मिश्रण संतुलित मात्रा में मिलना चाहिए।

इस प्रकार से उपर्युक्त जानकारी को ध्यान में रखते हुए एक पशुपालक अपने पशुओं से अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकता है।

पशु स्वास्थ्य—चारा

मवेशियों के लिए हरे चारे वाले संतुलित आहार

पशु का विवरण		आहार
1. 363 किग्रा. वजन वाली ऐसी गाय के लिए जो न दूध देती है न गाभिन है।	1.	हरी चरी या एम०पी० चरी या हरी जई या हरी मक्का 23 किलो ग्राम, मूँगफली की खली 110 ग्राम। या
	2.	हरी लोबिया, हरी बरसीम या हरी लूसर्न 12 किलो, भूसा 4.5 किग्रा. ग्राम। या
	3.	जई या अंजना घास की 'हे' 8 किलो।
2. 363 किग्रा. वजन वाली ऐसी गाय जो प्रति दिन करीब 8 किग्रा. दूध देती है।	1.	हरी चरी या एम०पी० चरी या हरी मक्का 25 किग्रा. जौ, चना खली, चोकर का मिश्रण 2.5 किग्रा०। या
	2.	हरी लोबिया या हरी बरसीम या हरी लूसर्न 12 किग्रा. भूसा 4.5 किग्रा. जौ, चना, खली, चोकर का मिश्रण 2 .5 किग्रा०।
	3.	जई की 'हे' या अंजन की 'हे' 7.25 किग्रा. जौ० चना, खली व चोकर का मिश्रण 3 किग्रा०।

बछड़े—बछियों के लिए आहार

पशु का विवरण	आहार
1. ऐसे बछड़े या बछियों के लिए जिनका वजन 182 किग्रा. के लगभग है।	1. हरी बरसीम 9 किग्रा., भूसा 2.25 किग्रा., दाना, खली, चोकर का मिश्रण 1.33 किग्रा.। या
	2. जई की 'हे' या अंजन की 'हे' 3.5 किग्रा. दाना, खली, चोकर का मिश्रण 1.33 किग्रा।

गर्भावस्था के लिए अतिरिक्त आहार :

अधिक मात्रा में दूध देने वाली गाय भैसों के उनकी गर्भावस्था के अंतिम दो—तीन मास में जबकि वह दूध न दे रही हों, तब भी अगले व्यांत में उनसे पूरी मात्रा में दूध लेने के लिए यह बहुत आवश्यक है कि उनकी खिलाई—पिलाई की तरफ खासतौर से ध्यान दिया जाय। जीवन निर्वाह के भोजन के अतरिक्त गाय को 2 से 2.5 किग्रा. तथा भैंस को 4.33 किग्रा. तक दाने व खली चोकर का मिश्रण दूध की उत्पादन शक्ति के अनुसार देना चाहिए।

बैलों के लिए आहार

पशु का विवरण	आहार
363 किग्रा. वजन वाले बैल के लिए मध्यम रूप से जुताई, छुलाई, पानी की सिंचाई इत्यादि का काम लेने के लिए।	1. हरी ज्वार या मकचरी या एम०पी० चरी की कुट्टी 23 किलो भूसा, 2.5 किग्रा. दाने, खली चोकर का मिश्रण 1 किलो या
	2. हरी बरसीम या लूसर्न 18 किग्रा. भूसा 4.5 किग्रा. ग्राम।

अगर दाने के मिश्रण में खनिज लवण का मिश्रण सम्मिलित न हो तो उपरोक्त प्रत्येक राशन में लगभग 3 ग्राम खड़िया मिट्टी में मिलाकर खिलाना चाहिए।

दाने, खली, चोकर के मिश्रण :

1.	मूँगफली की खली	25	भाग प्रतिशत
	चना की खली	20	" "
	जौ की खली	15	" "
	गेहूँ की चोकर	40	" "
2.	सरसों की खली	40	" "
	जौ की खली	40	" "
	गेहूँ का चोकर	20	" "
3.	बिनौला	35	" "
	सरसों या दुआं की खली	25	" "
	जौ	20	" "
4.	बिनौले की खली	35	" "
	गवार	15	" "
	चने की चूनी	20	" "
	गेहूँ का चोकर	20	" "

ऊपर लिखे हुए मिश्रण के प्रत्येक 100 किग्रा. में खड़िया मिट्टी 3 किग्रा. के हिसाब से मिला देना चाहिए।

पशुओं को परजीवी से नुकसान व बचाव

प्रश्न 1 : परजीवी क्या होते हैं?

उत्तर : एक जीव का दूसरे जीव पर पूर्ण आश्रित हो जाने या अपने जीवन काल का कुछ भाग आश्रित होने वाले जीव पर रहकर बिताने वाले जीव परजीवी हैं। यह जिसपर आश्रित होता है उसे नुकसान पहुंचाता है और यहां तक कि मृत्यु का कारण बनता है।

प्रश्न 2 : परजीवियों से पशुओं को क्या नुकसान होते हैं?

उत्तर : परजीवी दूसरे पशु पर आश्रित हैं जिसके कारण –

1. पशु के शरीर के उस हिस्से पर जहाँ परजीवी रह रहा है या चिपका है घाव करता है।
2. पशु जो आहार लेता है उसके आवश्यक तत्वों को ये परजीवी उपयोग कर लेते हैं, जिससे पशु लगातार आवश्यक आहार तत्वों के अभाव में कमी के कारण कमज़ोर हो जाता है।
3. पशु में खून की कमी हो जाती है।
4. वृद्धि रुक जाती है।
5. परजीवियों द्वारा छोड़े गये विष पदार्थों से शरीर पर प्रति क्रिया होती है और नाड़ी तंत्र या सुषुमना तंत्र का नुकसान होता है और फालिज भी पड़ सकता है।
6. अधिक परजीवियों के कारण मृत्यु भी हो जाती है।
7. परजीवी एक पशु से दूसरे पशु तक कुछ रोगों के रोगाणु ले जाते हैं, जिससे रोग फैलता है।

प्रश्न 3 : परजीवी कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर : मुख्य रूप से परजीवी दो प्रकार के होते हैं –

1. **वाह्य परजीवी**— शरीर के बाहर खाल पर चिचड़ी चीलर, जूँ चीलर।
2. **अन्तः परजीवी**— शरीर के अन्दर
अन्तः परजीवी दो प्रकार के होते हैं –
(अ) **रक्त परजीवी**— ट्रिपेनोसोमा, बेबेसिया, थीलेरिया आदि।
(ब) **उदर परजीवी**— गोल कृमि, चपटे कृमि या लीवर फ्लूक, फीता कृमि

प्रश्न 4 : परजीवियों की रोकथाम के क्या उपाय हैं?

उत्तर : परजीवियों की रोकथाम हेतु आवश्यक है कि –

1. पशुओं का आवास साफ सुथरा हो।
2. पशुओं का शरीर साफ हो।
3. पशुओं के आवास में व उसके आस-पास कीटनाशक औषधि का स्प्रे करवायें।
4. टिक्स या बाह्य परिजीवी शरीर में हो तो उन्हें छुड़ा कर नष्ट कर दें।
5. पशु को चिचड़ी, मच्छर मक्खी आदि ग्रस्त पशु या पशुशाला के पास न ले जाये और न इस प्रकार के पशुओं को पशुशाला आने दें।
6. अन्तः परजीवी से बचाव के लिए आवश्यक है कि पशु को तालाब, नहर पोखर या रुके हुए पानी के किनारे के खरपतवार को न खाने दें।

7. जहाँ मृत पशुओं का शव विच्छेदन हो या चमड़ा निकाला जाता हो वहाँ पशु को चरने से रोके।
8. बीमार पशु ने जहाँ मल त्यागा हो उसके आसपास न चरने दें।
9. उथले पोखर, सड़ रहे पानी या गंदे पानी को न पीने दे।
10. बीमार पशु के पास स्वस्थ पशु को न रखे।
11. समय समय पर कृमिनाशी औषधि दें कृमिनाश औषधियां पशुशाला के सब पशुओं को एक साथ दें इसी प्रकार चिंचड़ी नाशक औषधि का स्प्रे एक साथ पूरे पशुशाला में कराये।
12. कृमिनाशक औषधियों के लिए आवश्यक है कि पशुओं के गोबर की जांच समय समय पर कराये और उसी के अनुसार औषधि दें।

प्रश्न 5 : पशु को अन्तः परजीवी हो गये हों तब उसके क्या लक्षण हैं?

उत्तर : वाह्य परजीवी आंख से दिख जाते हैं। परन्तु अन्तः परजीवियों का पता लगाने के लिए उसके गोबर की जांच करानी आवश्यक है। वैसे गोबर के पतला होने, बदबू आने, रंग बदलने काला रंग होने पेट बढ़ाने जिसे पाट बैली कहते हैं। गले के नीचे सूजन जिसे वटलेक कहते हैं, आंख आ जाना, खाना कम खाना या औसत से अधिक खाना, उत्पादन कम होना, खाल शुष्क व चमकदार न होना आदि लक्षण पाये जाते हैं। कभी—कभी कीड़े गोबर से निकलते भी हैं।

प्रश्न 6 : कृमिनाशक औषधियां कब दी जायें?

उत्तर : जब पेट में कीड़े होने की आशंका हो, वैसे बचाव के लिए पशु को बरसात से पूर्व तथा बरसात के बाद पेट के कीड़े की औषधि अवश्य देना चाहिए।

प्रश्न 7 : कृमिनाशक औषधि पान कैसे करायें?

उत्तर : समीप के पशु चिकित्सालय के पशु चिकित्सा विशेषज्ञ से परामर्श कर औषधि दें।



66. मत्स्य पालन तकनीक

जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि के परिणाम स्वरूप रोजी—रोटी की समस्या के समाधान के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि आज के विकासशील युग में ऐसी योजनाओं का क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाय जिनके माध्यम से खाद्य पदार्थों के उत्पादन के साथ—साथ भूमिहीनों, निर्धनों, बेरोजगारों, मछुआरों आदि के लिए रोजगार के साधनों का सृजन भी हो सके। उत्तर प्रदेश एक अन्तर्रर्थलीय प्रदेश है जहाँ मत्स्य पालन और मत्स्य उत्पादन की दृष्टि से सुदूरवत्तट ग्रामीण अंचलों में तालाबों व पोखरों के रूप में तमाम मूल्यवान जल सम्पदा उपलब्ध है। मछली पालन का व्यवसाय निःसंदेह उत्तम भोजन और आय का उत्तम साधन समझा जाने लगा है तथा इस आशय की जानकारी परम आवश्यक है कि मछली का उच्चतम उत्पादन प्राप्त करने के लिए कौन—कौन सी व्यवस्थायें अपनायी जायें? मत्स्य पालन तकनीक के विषय में मत्स्य पालकों के लिए उपयोगी जानकारी निम्न प्रकार है :

तालाब का चयन :

मत्स्य पालन हेतु 0.20 से 2.00 हेक्टर तक के ऐसे तालाबों का चुनाव किया जाना चाहिए जिनमें कम से कम वर्ष में 8—9 माह अथवा वर्ष भर पानी बना रहे। तालाबों को सदाबहार रखने के लिए जल की पूर्ति का साधन अवश्य उपलब्ध होना चाहिए ताकि आवश्यकता पड़ने पर जल की आपूर्ति की जा सके। तालाब में वर्ष भर 1—2 मीटर पानी अवश्य रहे। तालाब उसी प्रकार के चुने जायें जिनमें मत्स्य पालन आर्थिक दृष्टि से लाभकारी हो और उनकी प्रबन्ध व्यवस्था सुगमता से संभव हो सके। यह भी ध्यान देने की बात है कि तालाब बाढ़ से प्रभावित न होते हो और उन तक आसानी से पहुंचा भी जा सके।

तालाब का सुधार :

अधिकांश तालाबों में बंधों का कटा—फटा या ऊँचा—नीचा होना, पानी आने जाने के रास्तों का न होना अथवा दूर के क्षेत्रों से अधिक पानी आने की सम्भावनाओं का बना रहना आदि कमियां स्वाभाविक रूप से पायी जाती हैं जिन्हें सुधारोपरान्त दूर किया जा सकता है। तालाब को समतल बनाने के लिए यदि कहीं पर टीले हों तो उनकी मिट्टी निकाल कर बंधों पर डाल देनी चाहिए। कम गहराई वाले स्थान से मिट्टी निकाल कर गहराई एक सामान की जा सकती है। बंधे बाढ़ स्तर से ऊँचे रखने चाहिए। पानी के निकास तथा पानी आने के मार्ग में उपयुक्त जाली की व्यवस्था हो ताकि अवांछनीय मछलियां तालाब में न आ सकें और पाली जाने वाली मछलियां बाहर न जा सके। तालाबों का सुधार कार्य मई—जून तक अवश्य करा लेना चाहिए जिससे मत्स्य पालन समय से प्रारम्भ किया जा सके।

तालाब की प्रबन्ध व्यवस्था :

अवांछनीय जलीय पौधों का उन्मूलन :

पानी की सतह पर स्वतंत्र रूप से तैरने वाले जलीय पौधे उदाहरणार्थ जल कुम्भी, लेमना, पिस्टिया, एजोला आदि अथवा जड़ जमाकर सतह पर तैरने वाले पौधे जैसे कमल इत्यादि अथवा जल में डूबे रहने वाले जड़दार पौधे जैसे हाइड्रिला, नाजाज इत्यादि का तालाब में आवश्यकता से अधिक होना मछली की अच्छी उपज के लिए हानिकारक है। यह पौधे पानी का एक बहुत बड़ा भाग घेरे रहते हैं, जिससे मछली के घूमने—फिरने में असुविधा होती है। साथ ही सूर्य की किरणों का जल में प्रवेश भी बाधित होता है, जिससे मछली का प्राकृतिक भोजन उत्पन्न होना रुक जाता है और अन्ततोगत्वा मछली की वृद्धि प्रभावित होती है। जलीय पौधों की बाहुलता जाल चलाने में भी बाधक होती है।

जलीय पौधों को श्रमिक लगाकर उखाड़कर फेंक देना चाहिए। रसायनों का प्रयोग गांव के तालाबों में करना उचित नहीं होता क्योंकि उनका विषेलापन पानी में काफी दिनों तक बना रहता है। अतः अच्छा यही है कि अनावश्यक पौधों का उन्मूलन मानव शक्ति से ही किया जाय।

अवांछनीय मछलियों की सफाई :

ऐसे तालाब जिनमें मत्स्य पालन नहीं हो रहा है और पानी पहले से मौजूद है में पढ़िन, अँगन, सौल, गिरई, सिंधी, मांगुर आदि अवांछनीय मछलियां स्वाभाविक रूप से पायी जाती हैं जिनकी सफाई आवश्यक है। अवांछनीय मछलियों की सफाई बार—बार जाल चलवा कर अथवा 25 कुन्टल/हेक्टेयर/ मीटर पानी की गहराई के हिसाब से महुए की खली के प्रयोग स्वरूप की जा सकती है। यदि महुआ की खली का प्रयोग किया जाता है तो 6–8 घंटों में सारी मछली ऊपर आकर मर जायेंगी जिसे उपभोग हेतु बेचा जा सकता है। महुए की खली के विष का प्रभाव 15–20 दिन तक पानी में बना रहता है। तत्पश्चात् यह उर्वरक का कार्य करती हैं और पानी की उत्पादकता बढ़ाती है।

जल—मृदा परीक्षण :

मछली की उच्छी पैदावार के लिए तालाब की मिट्टी—पानी का उपयुक्त होना आवश्यक है। मत्स्य पालकों को चाहिए कि वे अपने तालाब की मिट्टी—पानी का परीक्षण मत्स्य विभाग की प्रयोगशालाओं द्वारा करा कर निर्धारित मात्रा में कार्बनिक व रसायनिक उर्वरकों के उपयोग हेतु संस्तुतियां प्राप्त कर वैज्ञानिक मत्स्य पालन अपनाएं।

जलीय उत्पादकता हेतु चूने का प्रयोग :

चूना जल की क्षारीयता में वृद्धि करते हुए अम्लीयता व क्षारीयता को संतुलित करता है, साथ ही यह मछलियों को विभिन्न परजीवियों के प्रभाव से मुक्त रखता है। बुझे हुए चूने का प्रयोग 250 किग्रा./हे. की दर से मत्स्य बीज संचय से लगभग 1 माह पूर्व अथवा गोबर की खाद डालने के 15 दिन पूर्व किया जाना चाहिए।

उर्वरकों का प्रयोग :

तालाब में गोबर की खाद तथा रसायनिक खादों का प्रयोग भी किया जाता है। सामान्यतः एक हेक्टेयर के तालाब में 10 टन प्रति वर्ष गोबर की खाद प्रयोग की जानी चाहिए। इस सम्पूर्ण मात्रा को 10 समान मासिक किश्तों में विभक्त करते हुए तालाब में डालना चाहिए।

रसायनिक खादों का प्रयोग प्रत्येक माह गोबर की खाद के 45 दिन बाद करना चाहिए तथा प्रयोग दर निम्नवत् है :—

यूरिया	—	200 किग्रा./ हे. प्रति वर्ष
सिंगिल सुपर फास्फेट	—	250 किग्रा./ हे. प्रति वर्ष
म्यूरेट ऑफ पोटाश	—	40 किग्रा./ हे. प्रति वर्ष
<u>490 किग्रा./ हे. प्रति वर्ष</u>		

मत्स्य बीज संचय :

तालाब में 50 मि.मी. या अधिक लम्बाई की 5000 स्वरथ अगुलिकायें प्रति हेक्टेयर की दर से संचित की जा सकती हैं। विभिन्न प्रजातियों हेतु संचय अनुपात निम्न हो सकते हैं—

मत्स्य प्रजातियां	6 प्रजातियों का पालन	4 प्रजातियों का पालन	3 प्रजातियों का पालन
कतला	10 प्रतिशत	30 प्रतिशत	40 प्रतिशत
रोहू	30 प्रतिशत	25 प्रतिशत	30 प्रतिशत
नैन	15 प्रतिशत	20 प्रतिशत	30 प्रतिशत
सिल्वर कार्प	20 प्रतिशत	—	—
ग्रास कार्प	10 प्रतिशत	—	—
कामन कार्प	15 प्रतिशत	25 प्रतिशत	—

पूरक आहार दिया जाना :

पूरक आहार के रूप में आमतौर पर मूँगफली, सरसों या तिल की खली एवं चावल के कना अथवा गेहूँ के चोकर को बराबर मात्रा में मिश्रण स्वरूप मछलियों के भार का 2 प्रतिशत की दर से प्रतिदिन दिया जाना चाहिए। यदि ग्रास कार्प मछली का पालन किया जा रहा है तो पानी की वनस्पतियों जैसे लेमना, हाइड्रिला, नाजाज, सिरेटोफाइलम आदि तथा स्थलीय वनस्पतियों जैसे नैपियर, बरसीम व मक्का के पत्ते, शहतूत इत्यादि जितना भी वह खा सकें, प्रतिदिन खिलाना चाहिए।

मछलियों की वृद्धि व स्वास्थ्य का निरीक्षण :

प्रत्येक माह तालाब में जाल चलवा कर मछलियों की वृद्धि व स्वास्थ्य का निरीक्षण किया जाना चाहिए। यदि मछलियां परजीवियों से प्रभावित हों तो एक पी.पी.एम. पोटशियम परमैग्नेट या 1 प्रतिशत नमक के घोल में उन्हें डुबाकर पुनः तालाब में छोड़ देना चाहिए। यदि मछलियों पर लाल चकते व घाव दिखायी दें तो मत्स्य पालकों को चाहिए कि वे मत्स्य विभाग के जनपदीय कार्यालय में तुरन्त सम्पर्क करें तथा संस्तुतियां प्राप्त कर आवश्यक कार्यवाही करें।

मछलियों की निकासी :

2 से 6 माह के बीच जब मछलियां 1–1.5 किग्रा. की हो जाये तो उन्हें निकलवा कर बेच देना चाहिए।



67. रिसर्कुलेशन एक्वाकल्चर सिस्टम (आरएएस) के द्वारा मछली पालन

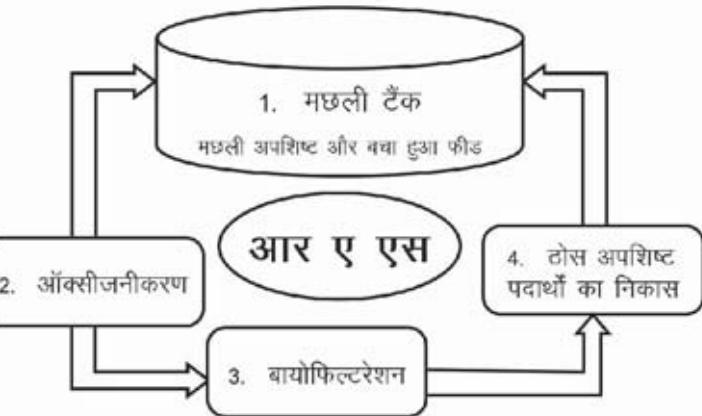
परिचय

गरीबी से लड़ने और असमानता को कम करने के हथियार के रूप में मत्स्य पालन ने हाल के वर्षों में नए सिरे से ध्यान आकर्षित किया है। पूरी दुनिया में 30 मिलियन से अधिक मछुआरे और मछली किसान और उनके परिवार मत्स्य पालन से अपनी आजीविका प्राप्त करते हैं। वैश्विक मछली उत्पादन पिछले पांच दशकों में खाद्य मछली की आपूर्ति में 3.2% की औसत वार्षिक दर से बढ़ रहा है, जबकि दुनिया की जनसंख्या वृद्धि 1.6% से बढ़ रहा है। कैचर फिशरीज और मत्स्य पालन ने 2014 में 167.2 मिलियन टन मछली के साथ दुनिया को आपूर्ति की, जिसमें 93.4 मिलियन टन कैचर

फिशरी और 73.8 मिलियन टन मत्स्य पालन (एफएओ, 2016) से था। उसी वर्ष, भारत का कुल मछली उत्पादन 10.69 मिलियन टन था जिसमें कैचर फिशरी से 3.491 मिलियन टन और मत्स्य पालन से 6.577 मिलियन टन शामिल था और 1.3% की जनसंख्या वृद्धि दर की तुलना में लगभग 5.2% की वार्षिक दर से वृद्धि देखी गई। मछली की घरेलू मांग 2025 में 16 मिलियन टन के स्तर को पार करने की उम्मीद है। मत्स्य पालन क्षेत्र में काफी संभावनाएं हैं, लेकिन अभी भी इस क्षेत्र की क्षमता पूरी तरह से उपयोग नहीं हुई है। खाद्य सुरक्षा के प्रति इस क्षेत्र की भविष्य की संभावना मछली उत्पादन को बढ़ाने के लिए नई तकनीक का उपयोग करने पर निर्भर करती है। मछली उत्पादन के लिए भारत में उपयोग की जाने वाली हालिया तकनीक में से एक पुनर्चक्रीय जलकृषि पद्धति है।

पुनर्चक्रीय जलकृषि पद्धति (आरएएस) :

आरएएस (RAS) वह तकनीक है, जिसमें पानी का बहाव निरंतर बनाए रखने लिए पानी के आने-जाने की व्यवस्था की जाती है। आरएएस आमतौर पर एक अत्यधिक गहन एवं बन्द क्षेत्र में मछली उत्पादन करने की प्रणाली है जिसने कम पानी के उपयोग और न्यूनतम अपशिष्ट निपटान के साथ विदेशों में कई महत्वपूर्ण प्रजातियों के बहुत उच्च उत्पादन स्तर का प्रदर्शन किया है। इसमें कम पानी और कम जगह की जरूरत होती है। सामान्य तौर पर एक एकड़ तालाब में 20 हजार मछली डाली है तो एक मछली को 300 लीटर पानी में रखा जाता है जबकि इस सिस्टम के जरिए एक हजार लीटर पानी में 110–120 मछली डालते हैं। इस हिसाब से एक मछली को केवल नौ लीटर पानी में रखा जाता है। इस तकनीक से अगर कोई मछली पालक मछली पालन करना चाहता है तो उसके लिए 625 वर्ग फीट और 5 फीट गहराई का सीमेंट का बना टैंक बनाने होंगे। इसमें एक टैंक में 4 हजार मछली पाली जा सकती है।



पुनर्चक्रीय जलकृषि पद्धति (आरएएस) प्रणाली का लाभ :

रीसर्कुलेशन एक्वाकल्चर में मछली पालन के क्षेत्र में विश्व स्तर पर बहुत तेजी से काफी रुचि पैदा और विस्तार की है। रीसर्कुलेशन एक्वाकल्चर को स्थापित करने में कई फायदे हैं।

- ◆ इस मछली पालन प्रणाली में उद्यमी के पास उत्पादन और मार्केटिंग से संबंधित अधिकांश चीजों को मापने और नियंत्रित करने की क्षमता होती है।
- ◆ इसे चरम मौसम के क्षेत्र में भी आसानी के साथ इस्तेमाल किया जा सकता है।
- ◆ तालाब में मछली पालन की तुलना में भूमि और पानी की बहुत कम आवश्यकता।
- ◆ भूमि आधारित बड़े जल स्रोत से स्वतंत्रता।
- ◆ अपशिष्ट जल निकासी की मात्रा में कमी होती है और पर्यावरण की निगरानी और नियंत्रण बारीकी से कर सकते हैं जिससे उत्पादन क्षमता को अधिक कर सकते हैं।
- ◆ यदि कोई बीमारी के प्रकोप आता है तो का इलाज करने में आसानी और जैव सुरक्षा में वृद्धि होगी।
- ◆ इस प्रणाली में मछली का घनत्व 50–150 किग्रा./मी. रखते हैं जिससे कम क्षेत्र से अधिक मछली उत्पादन होती है।

आरएएस के लिए आवश्यकता :

- ◆ बुनियादी ढांचे और सामग्री में उच्च अग्रिम निवेश।
- ◆ परिचालन की गहन तकनीकी निगरानी।
- ◆ संचालन के लिए ऊर्जा की आपूर्ति का आश्वासन।

आरएएस में उपचार प्रक्रिया के श्रृंखला में जैविक और अन्य ऑक्सीजन प्रलंबित ठोस पदार्थ जैसे पोषक तत्व, वसा, तेल, अपशिष्ट और रोगजनकों को जल से हटा देती है ताकि पानी का सुरक्षित पुनः उपयोग किया जा सकता है। पुनर्चक्रीय जलकृषि पद्धति में मुख्य रूप से मछली टैंक, मैकेनिकल फिल्टर, बायोफिल्टर, ट्रिकलिंग फिल्टर, डिग्रेसर, ऑक्सीजन संवर्धन इकाई एवं यूवी. कीटाणुनाशक होते हैं। इन प्रणालियों का मूल परिचालन सिद्धांत यह है कि मछली टैंक से पानी यांत्रिक फिल्टर के माध्यम से जैविक फिल्टर में जाता है एवं वायु-मिश्रण से पहले पानी से कार्बन डाइऑक्साइड निकाल लिया जाता है और मछली टैंक में पुनः छाना हुआ पानी वापस आता है।

आरएएस मछली पालन के मछली टैंक :

इन प्रणालियों में जलीय कृषि या मछली पालन के लिए टैंक किसी भी आकार के हो सकते हैं जैसे— आयताकार, वृत्ताकार, अंडाकार इत्यादि ज्यादातर गोलाकार या अंडाकार टैंक पसंद किए जाते हैं, क्योंकि वे साफ करने और आसान जल परिसंचरण सुविधा के लिए आसान होते हैं। आयताकार टैंक आमतौर पर इच्छुक क्षेत्र में उपयोग किए जाते हैं। मछली पालन टैंक का आकार 500 से 500000 गैलन क्षमता तक हो सकता है और यह मछली के प्रकार, स्टॉक रेट, पानी की आवश्यकता और गुणवत्ता जैसे कारकों पर निर्भर करता है।

टैंक इस तरह बनाया जाना चाहिए कि यह सिस्टम के अन्य घटकों के साथ संयोज्य हो। टैंक बनाने के लिए आवश्यक सामग्री धातु, लकड़ी, कांच, रबर, कंक्रीट या प्लास्टिक का उपयोग किया जा सकता है। टैंक के निर्माण के लिए कोई भी सामग्री जो गैर विषैले और जो धुल नहीं सकती है उसे इस्तेमाल किया जा सकता है। टैंक की आंतरिक सतह साफ और चिकनी होनी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए उपयोग की जाने वाली प्रत्येक सामग्री के अपने फायदे और नुकसान हैं। मछली टैंक का झुकाव आसान निकास में मदद कर सकता है, लेकिन स्वयं सफाई की क्षमता पर बहुत कम या कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अधिकांश आधुनिक टैंकों का निर्माण निकास के साथ किया जाता है जिनमें सर्वोत्तम

अपशिष्ट हटाने की क्षमता है और उपयुक्त मेश स्क्रीन के साथ फिट होती है। इन निकास से मृत मछलियों को निकालना भी आसान हो जाता है। कुछ टैंक में पानी के स्तर, ऑक्सीजन, तापमान आदि का पता लगाने के लिए सेंसर के साथ भी फिट किया जाता है ताकि अपने आप इसे नियंत्रित किया जा सके। ऑक्सीजन की पर्याप्त आपूर्ति के लिए टैंक में डिफ्यूजर भी होना चाहिए।

आरएएस में मछली पालन के लिए पानी के पम्प और प्रवाह :

जलीय कृषि प्रणालियों के पुनर्संरचना में, पानी का निरंतर प्रवाह होना चाहिए और आवश्यकता के आधार पर गति, दबाव और दिशा में परिवर्तन की संभावना होना चाहिए। आरएएस में पानी का गमनागमन को गुरुत्वाकर्षण के माध्यम से नियंत्रित किया जाता है और सिस्टम में उपयोग करने से पहले इसे आम तौर पर ऊंचाई पर पम्प किया जाता है जहाँ से यह सरलता से बहने लगता है। आरएएस में उपयोग किए जाने वाले सबसे सामान्य प्रकार के पम्प एक केन्द्रापसारक पम्प है जो पम्प हेड में तेज गति से पानी के धूमने से उत्पन्न धक्का से संचालित होता है। पम्प आमतौर पर टैंक के बाहर रखा जाता है जो उच्च दबाव पर काम करता है। उच्च प्रवाह और भार उठाने के क्षमता वाले पम्प को न्यूनतम ऊर्जा की खपत करने के लिए चुना जाता है। पहले केन्द्रापसारक पम्पों में 25 फीट का पुनरावृत्ति दबाव होता था, लेकिन अब दबाव लगभग 10 फीट होते हैं। दो अन्य प्रकार की पंपिंग व्यवस्थाएं अक्षीय और एयरलिफ्ट पम्प हैं।

आरएएस मछली पालन के यांत्रिक फिल्टर :

आरएएस प्रणाली में यांत्रिक फिल्टर का उपयोग सिस्टम के जल प्रवाह से निलंबित ठोस पदार्थों को हटाने के लिए किया जाता है। पानी की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए मुख्य रूप से मल संबंधी ठोस पदार्थों को हटा दिया जाना चाहिए। हमलोग स्थिति के आधार पर या तो ड्रमफिल्टर या अवसादन फिल्टर को उपयोग कर सकते हैं।

अवसादन फिल्टर :

फिश टैंक से निकलने वाले पानी अवसादन टैंक से होते हुए अगले फिल्टर में जाता है। इस टैंक में गैर-घुलनशील, ठोस कणों को गुरुत्वाकर्षण के उपयोग से सिस्टम के पानी से अलग किया जाता है। अवसादन टैंक एक विशेष रूप से अनुकूलित पॉलीप्रोपाइलीन फिल्टर पैक से भरा होता है। इस फिल्टर पर ठोस पदार्थों को जमने दिया जाता है। ठोस पदार्थों के कण टैंक के तलछट तल पर गाद की एक परत बनाते हैं। यह गाद जैविक रूप से बहुत सक्रिय होते हैं। जैव उर्वरक द्वारा उत्पादित नाइट्रोट्रैट् का 60% तक गाद को नाइट्रोजन गैस में बैक्टीरिया द्वारा निष्क्रिय कर दिया जाता है। भोजन की मात्रा के आधार पर, अवसादन टैंक को नियमित रूप से साफ किया जाना चाहिए। सफाई के बाद अपशिष्ट जल, और गाद को खेत में या सीवेज सिस्टम में डाला जा सकता है। इस यांत्रिक उपचार के बाद, सिस्टम का पानी अगले फिल्टर चरण में बहता है।

ड्रमफिल्टर :

फिश टैंक से आने वाले पानी को ड्रमफिल्टर का उपयोग करके यंत्रवत् रूप से साफ किया जा सकता है। ठोस पदार्थ लगातार और स्वचालित रूप से सिस्टम के पानी से हटाए जाते हैं और इसलिए ड्रमफिल्टर को दैनिक रखरखाव की आवश्यकता नहीं होती है। ड्रमफिल्टर का एक नकारात्मक पक्ष है बिजली की निरंतर आवश्यकता। ड्रमफिल्टर में फिश टैंक से पानी फिल्टर स्क्रीन (नीला तीर) से गुजरता है। इस प्रक्रिया में, सिस्टम के पानी के कण फिल्टर स्क्रीन द्वारा अवरुद्ध हो जाते हैं। फिल्टर स्क्रीन के क्लॉजिंग के कारण ड्रम के अंदर जल स्तर बढ़ जाएगा। नतीजतन, फ्लशिंग तंत्र को ऑपरेशन में डाल दिया जाता है। ड्रम धूमने लगता है, और ड्रम के बाहर से फिल्टर पानी के माध्यम से नलिका से उच्च दबाव के तहत छिड़काव किया जाता है, जिससे स्क्रीन से अपशिष्ट कणों को बहाया जाता है। अपशिष्ट कणों के साथ मिलकर पानी को गटर में छोड़ दिया जाता है। मछली की प्रजातियों और मछली के आकार के आधार पर विभिन्न फिल्टर स्क्रीन को चुना जा सकता है।

आरएएस मछली पालन के जैविक फिल्टर :

यह आरएएस का सबसे महत्वपूर्ण घटक है क्योंकि यह अपशिष्ट उपचार के दौरान पानी से बारीक प्रदूषकों को हटाने में मदद करता है। फिल्टर के भीतर का मीडिया प्लास्टिक शीट, बीड़स, लावा चट्टान, बजरी या रेत के दाने जैसी

सामग्रियों से बना होता है। मीडिया के गुण ऐसे होने चाहिए कि इसकी सतह क्षेत्र अधिक होनी चाहिए, जीवाणु वृद्धि के लिए क्षेत्र, पानी के संचलन के लिए छिद्र, अवरुद्ध प्रतिरोधी और साफ करने में आसान होना चाहिए।

एक साधारण बायोफिल्टर एक पहिया, बैरल या बॉक्स हो सकता है जिसमें मीडिया भरा होता है, जिस पर नाइट्रिफाइंग बैकटीरिया विकसित होता है। यह प्लास्टिक, लकड़ी, कांच, धातु या कंक्रीट से बना हो सकता है। बायोफिल्टर का आकार मछली की वहन क्षमता पर निर्भर करता है। फिल्टर का सतह क्षेत्र बड़ा होना चाहिए ताकि उच्च घनत्व वाले बैकटीरिया समायोजित हो जिससे मछली टैंक में मौजूद कचरे को संसाधित करने में मदद हो सकता है। बायोफिल्टर्स की सतह के क्षेत्र को डिजाइन करते समय, अमोनिया लोडिंग और हाइड्रोलिक लोडिंग का ठीक से अनुमान लगाया जाना चाहिए। इन फिल्टर को कई तरीकों से कॉन्फिगर किया जा सकता है और जैविक फिल्टर की दो प्रमुख श्रेणियां हैं:

सबमर्ज्ड बेड फिल्टर — पानी के गुजरने से पहले और बाद में उन्हें वातन की आवश्यकता होती है।

इमर्ज्ड बेड फिल्टर — इस फिल्टर में निरंतर ऑक्सीजन की आपूर्ति होती है और दो प्रकार के होते हैं :

- ◆ ट्रिकलिंग फिल्टर
- ◆ रोटेटिंग बायोलॉजिकल कॉन्ट्रैक्टर्स

जब पानी का तापमान और पीएच स्तर ठीक से नियंत्रित हो तभी बायोफिल्टरेशन प्रभावी रूप से काम कर सकता है। पानी का न्यूनतम तापमान $10-35^{\circ}\text{C}$ के बीच होना चाहिए और पीएच 7 से 8 के आसपास होनी चाहिए। उच्च और निम्न पीएच के बजह से फिल्टर की अक्षमता और उच्च विषाक्त प्रभाव का परिणाम हो सकता है। बायोफिल्टरेशन के लिए संतुलन अत्यधिक महत्वपूर्ण है और यह दो कारकों पर निर्भर करता है। फिल्टर की जैविक गतिविधि और टैंक में नाइट्रीकरण प्रक्रिया में उत्पादित कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा।

आरएएस मछली पालन का नाइट्रिफिकेशन :

अमोनिया को डिटॉक्सीफाई करने की प्रक्रिया को नाइट्रिफिकेशन कहा जाता है। अमोनिया नाइट्रोजन को कम विषेले नाइट्रोजन डाइऑक्साइड में परिवर्तित करना और अंत में बैकटीरिया की कार्रवाई के माध्यम से गैर विषेले नाइट्रेट के लिए नाइट्रिफिकेशन का सिद्धांत है। इस प्रक्रिया के होने के लिए जीवाणु को एक सतह पर उगाया जाता है और सामान्य तापमान वाले साफ पानी का उपयोग किया जाना चाहिए। इस प्रक्रिया के लिए आवश्यक बैकटीरिया दो प्रकार के होते हैं। एक जो अमोनिया को नाइट्रोजन डाइऑक्साइड में परिवर्तित करता है 'नाइट्रोसोमोनास बैकटीरिया' कहा जाता है और दूसरा जो नाइट्रोजन डाइऑक्साइड को नाइट्रेट में परिवर्तित करता है 'नाइट्रोबैक्टर बैकटीरिया' कहा जाता है। नाइट्रिफिकेशन की पूरी प्रक्रिया प्रकृति में एरोबिक है इसके लिए आक्सीजन की आवश्यकता होती है। 1 मिलीग्राम अमोनिया को बदलने के लिए आवश्यक ऑक्सीजन की न्यूनतम मात्रा 5 मिलीग्राम के आसपास है। इसके अलावा बैकटीरिया को जीवित रहने के लिए अतिरिक्त 5 मिलीग्राम ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि बड़े टैंक में मछली की अधिक घनत्व और ज्यादा अमोनिया की मात्रा के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता भी बहुत अधिक है जिसे बायोफिल्ट्रेशन प्रक्रिया से पहले और बाद में आपूर्ति की जानी चाहिए। 5 मिलीग्राम ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि बड़े टैंक में मछली की अधिक घनत्व और ज्यादा अमोनिया की मात्रा के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता भी बहुत अधिक है जिसे बायोफिल्ट्रेशन प्रक्रिया से पहले और बाद में आपूर्ति की जानी चाहिए।

आरएएस मछली पालन में अपशिष्ट संग्रह के लिए नाबदान :

टैंक में कचरे की उपस्थिति ऑक्सीजन की मांग को बढ़ाती है और घुलित ऑक्सीजन की मात्रा को कम करती है, जिससे टैंक में मछली का घनत्व कम हो जाता है। एक नाबदान या विशुद्धक टैंक का उपयोग धीमी दर पर अतिरिक्त अपशिष्ट इकट्ठा करने के लिए किया जाता है। नाबदान का उपयोग मुख्य रूप से सभी ठोस को इकट्ठा और गाद करना है जो अपशिष्ट बायोफिल्टर को अवरुद्ध कर ऑक्सीजन का उपयोग कर सकता है। इसे मछली टैंक से अलग बनाना

चाहिए, और समय—समय पर सफाई होनी चाहिए। नाबदान का आकार 'ट' होना चाहिए, ताकि आसानी से सफाई हो सके।

आरएएस मछली पालन में गैस निष्कासन :

मछली टैंक में संचित गैसों को उचित वातन प्रदान करके साफ किया जाना चाहिए और इस विधि को स्ट्रिप्पिंग कहा जाता है। मछलियों के श्वसन से कार्बन डाइऑक्साइड और जैविक फिल्टर में बैकटीरिया द्वारा उत्पन्न नाइट्रोजन हानिकारक हैं। यदि खारे पानी की टंकी है, तो हाइड्रोजन सल्फाइड उत्पादन हो सकता है, जो मछली के लिए विषाक्त है। टैंकों में हवा भरने से गैसों को टर्बुलेंश के द्वारा दूर किया जा सकता है। इस प्रक्रिया के लिए अक्सर एक ट्रिक्लिंग फिल्टर सिस्टम का उपयोग किया जाता है। जब फिल्टर के ऊपर से प्लास्टिक मीडिया के माध्यम से एक कॉलम पानी को बहता है टर्बुलेंश और संपर्क के बजाए से गैसों को दूर करने में मदद मिलती है।

आरएएस मछली पालन में वातन या ऑक्सीजनीकरण :

टैंकों में पानी को ऑक्सीजन की आपूर्ति प्रदान करना वातन कहा जाता है। गर्म और ठंडा पानी के रिसर्कुलेटिंग प्रणाली में मछली और बैकटीरिया को जीवित रहने के लिए क्रमशः 6 और 8 पीपीएम ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। आरएएस टैंक जिनकी वहन क्षमता अधिक है, उन्हें हर 20 – 30 मिनट में ऑक्सीजन को बदलने में सक्षम होना चाहिए। उचित और नियमित ऑक्सीजन की आपूर्ति होना चाहिए एवं बड़े रिसर्कुलेटिंग सिस्टम के बैकअप की व्यवस्था होनी चाहिए अन्यथा मछली का नुकसान हो सकता है। आमतौर पर टैंक को वायु-संचारण करने के लिए जलमग्न ऐअर स्टोन इस्टेमाल की जाती है। मछली को दिए जाने वाले एक पाउंड भोजन के के लिए, लगभग 187 lpm/kg/day हवा की आवश्यक मात्रा है। वातन के लिए डिफ्यूजर नली और एयरलिफ्ट उपयोग किए जाने वाले उपकरण हैं। जब वातन को पर्याप्त रूप से प्रदान किया जाता है, तो अलग से कार्बन डाइऑक्साइड स्ट्रिपिंग इकाई की आवश्यकता नहीं होती है।

मछली के लिए भोजन :

मछली की बढ़वार के लिए भोजन दिया जाना चाहिए। मछली प्रोटीन संश्लेषण के लिए ऑक्सीजन लेती है और अपशिष्ट के रूप में कार्बन डाइऑक्साइड और अमोनिया का उत्पादन करती हैं। मछली पानी में अपचित भोजन निकालती है और इसके परिणामस्वरूप प्रलंबित कचरे या जैविक कचरे बनते हैं, इसलिए रिसर्कुलेशन एक्वाकल्वर सिस्टम में मछलियों को सूखा चारा दिया जाना चाहिए ताकि टैंक में प्रदूषण और बीमारी कम हो। यह अनुशासा की जाती है कि फीड उपयोग की दर उच्च होनी चाहिए, ताकि पानी में कम अपशिष्ट बचे जिससे उपचार प्रणाली पर कम बोझ हो। रिसर्कुलेशन एक्वाकल्वर सिस्टम को डिजाइन करने से पहले, फीड रूपांतरण दर सावधानीपूर्वक अनुमानित होनी चाहिए और केवल उपयुक्त फीड देनी चाहिए ताकि पैसे और अनावश्यक फिल्टर पर भार को बचाया जा सके। आरएएस में मछली पालन के लिए उपयुक्त मछली के प्रकार रूपांतरण दर सावधानीपूर्वक अनुमानित होनी चाहिए और केवल उपयुक्त फीड देनी चाहिए ताकि पैसे और अनावश्यक फिल्टर पर भार को बचाया जा सके।

आरएएस में मछली पालन के लिए उपयुक्त मछली के प्रकार :

पुनर्नवीनीकरण पानी प्राकृतिक पानी की तुलना में गर्म होता है और यह माना जाता है कि ठंडे पानी की नस्लों जैसे सालमोन और ट्राउट पालन के लिए यह प्रणालियों का बहुत ज्यादा उपयुक्त नहीं हैं। कैटफिश, बारामुंडी, कार्प, पर्च, तिलापिया, पंगोसियस, सफेद मछली, अटलांटिक कॉड, ब्लूफिन टूना, रेनबो ट्राउट, स्टर्जन, सीबास आदि प्रजातियाँ आरएएस में पाली जा सकती हैं।

आरएएस मछली पालन में मछली स्टॉक का प्रबंधन

रिसर्कुलेशन एक्वाकल्वर सिस्टम की क्षमता के अनुरूप मछली के उत्पादन को बनाए रखना महत्वपूर्ण है। यह सिस्टम में भारी स्टॉक घनत्व के ओवरलोडिंग से बचने के लिए, कई तकनीकों का उपयोग किया जाता है:

- ◆ एक ही आकार के टैंक में विभिन्न आकार की मछलियों को पाला नहीं जाता है।
- ◆ मध्यवर्ती आकार में उगाई जाने वाली मछलियों को श्रेणीबद्ध करके दूसरे टैंक में ले जाया जाता है

- ◆ मछली पालन टैंकों में पेश करने से पहले क्वारंटाइन टैंकों में फिंगरलिंग्स को रखा जाता है
- ◆ क्वारंटाइन टैंक और मछली पालन टैंक उपयोग के रूप से अलग—अलग हैं
- ◆ किसी भी बीमारी या संक्रमण के लिए अंगुलियों की जांच और उपचार के लिए 3 से 6 सप्ताह का समय क्वारंटाइन टैंक में रखना आवश्यक है

आरएएस मछली पालन की निगरानी और नियंत्रण :

आरएएस में मछली पालन तभी ठीक से किया जा सकता है, जब उसके भीतर एक नियंत्रित और निगरानी प्रणाली हो। पानी में ऑक्सीजन के स्तर, पीएच रेंज और पानी की लेवेल जैसी कुछ विशेषताओं को नियंत्रित करने और निगरानी करने के लिए एक केंद्रीय प्रणाली सिस्टम के कुशल संचालन के लिए जरूरी है। स्वचालित सेंसर या अलार्म इन प्रणालियों में जब कोई समस्या उत्पन्न होती स्थापित संकेत दे सकता है। भले ही सिस्टम स्वचालित रूप से संचालित हो, उन्हें कुशल कर्मियों द्वारा नियमित रूप से निगरानी रखने की आवश्यकता होती है जिससे कि कोई नुकसान न हो। आपातकाल के मामले में, शुद्ध ऑक्सीजन का उत्पादन क्षेत्र में होना आवश्यक है। आरएएस के कुशल संचालन के लिए पूरक विद्युत आपूर्ति के लिए एक जनरेटर भी आवश्यक है।

निष्कर्ष :

मछली के लिए बाजार की मांग को पूरा करने और भूमि आधारित खेती के संचालन की बदलती जरूरतों को पूरा करने के लिए आरएएस एक अच्छे विकल्प के रूप में ऊंचा रहा है। रिसर्चलेशन एक्वाकल्चर सिस्टम जलीय कृषि की भविष्य की कुंजी है। इस प्रणाली में पर्यावरण के अनुकूल होने के कारण, उत्पादन पर नियंत्रण होती है, और बाजार मांग की स्थितियों के अनुसार आपूर्ति को पूरा कर सकती है। इसके अलावा, रीसर्चलेशन एक्वाकल्चर सिस्टम के परिवेश में कम प्रदूषण होता है। अतः भारत में मछली उत्पादन एवं किसानों कि आय में वृद्धि के लिए पुनर्चक्रीय जलकृषि पद्धति का उपयोग एक वरदान के रूप में साबित हो सकती है।



68. मधुमक्खी पालन

मौनपालन में आधुनिक युग उस समय से माना जाता है जबसे मौनों को रखने के लिए फ्रेमयुक्त मौनगृह प्रयोग में लाये गये और शहद निकालने के लिए मधु निष्कासन यन्त्र का अविष्कार हुआ। मधुमक्खियों की आदतों तथा क्रमानुसार उनकी आवश्यकताओं को भली—भाँति समझकर उन्हीं के अनुरूप सुविधायें उपलब्ध कराकर और कम से कम कष्ट पहुंचाकर अधिक से अधिक लाभ अर्जित करने के व्यवसाय को मौनपालन कहते हैं।

मधुमक्खी की प्रजातियाँ :

जीव विज्ञान के अनुसार मधुमक्खियों की चार प्रजातियाँ पायी जाती हैं—

1. भँवर या सारंग :

यह भारत वर्ष की सबसे बड़ी मधुमक्खी है। इसे पहाड़ी महाल या दानव मधुमक्खी भी कहते हैं। यह खुले स्थानों में जैसे पेड़ की ऊँची डालों पर, ऊँचे मकान की दीवारों पर तथा कम ऊँचाई वाले लगभग 400 फीट की ऊँचाई पर्वतीय भाग समुद्र तल से छत्ते बनाती है। यह मधुमक्खी तापक्रम में परिवर्तन एवं मधुस्राव सीजन के अनुसार काफी दूरी तक एक स्थान से दूसरे स्थान पर स्थानान्तरित होती रहती है। यह इकहरे छत्ते बनाती है, जो एक से डेढ़ मीटर तक लम्बे और एक मीटर तक नीचे लटके हुए होते हैं। यह मधुमक्खी बहुत ख़तरनाक होती है। यहाँ तक कि यह पानी के भीतर तक अपने दुश्मन का पीछा नहीं छोड़ती है।

कमेरी कठिन परिश्रमी होती हैं तथा इसके द्वारा 25 किग्रा. से लेकर 40 किग्रा. तक शहद का उत्पादन हो जाता है। इस मधुमक्खी से सम्पूर्ण उत्पादित मधु एवं मोम लगभग 75 प्रतिशत प्राप्त होता है।

2. छोटी मधुमक्खी या पतिंगा :

यह मधुमक्खी छोटी—छोटी झाड़ियों व पेड़ की नीची डालियों पर अपना इकहरा छत्ता बनाती है। नर काले एवं कमेरी की अपेक्षा बड़े होते हैं। इसके छत्ते की लम्बाई $30/15$ सेमी. पायी जाती है। यह एक वर्ग इंच में लगभग 100 कोष्ठ बनाती है। मधु उत्पादन की दृष्टि से यह बहुत उपयोगी नहीं होती क्योंकि यह बहुत कम मात्रा में मधु एकत्र करती है। परन्तु पर—परागण में इस मधुमक्खी का बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

3. भारतीय मौन :

यह पेड़ों व दीवालों के खोखलों में पहाड़ों पर चट्टान की दरारों में छत्ते समानान्तर 6 से 7 की संख्या में बनाती है। यह एक स्थान पर कई वर्षों तक रहते हैं। इस गुण के कारण इस मधुमक्खी को आधुनिक मौनगृहों में पाला जाना सम्भव हो सका है। यह मधुमक्खी सारंग एवं इटेलियन मौन से छोटी तथा पोतिंगा से बड़ी होती है। एक मौनवंश से औसतन 5 किग्रा. से लेकर 15 किग्रा. तक मधु का उत्पादन होता है।

4. पश्चिमी मौन :

यह मधुमक्खी मूलतः यूरोप की है। यह भारतीय मौन की अपेक्षा आकार में बड़ी परन्तु सारंग से छोटी होती है। यह भी 9—10 समानान्तर छत्ते बनाती है। इसलिए इसमें मधु एवं पराग एकत्रित करने तथा अण्डे देने की क्षमता तदनुसार अधिक होती है। इसकी आदत भारतीय मौन से काफी मिलती—जुलती है। इसलिए घरछूट एवं बकछूट की घटनायें बहुत ही कम होती हैं। इसमें भीषण से भीषण परिस्थितियों में भी घर छोड़ने की आदत नहीं है।

मधुमक्खी वंश का संगठन :

मधुमक्खी वंश को अत्यधिक संगठित सामाजिक समुदाय की श्रेणी में रखा जाता है क्योंकि यह अपनी क्षमता के कारण निरन्तर सफल रहती है। एक मौनवंश में एक रानी 20 से 30 हजार की संख्या में कमेरी मौन और कई सौ नर होते हैं।

1. रानी मौन :

सामान्यतः एक मौनवंश में एक रानी मौन होती है। इसका प्रमुख कार्य अप्डे देना होता है। मौनवंश से यह सबसे बड़ी होती है और इसका उदर चमकीला तथा सुनहरे रेशों से ढका—रहता है। मौनवंश में यही एक मधुमक्खी होती है जो गर्भित एवं अनगर्भित अप्डे देने वाली होती है। जिनसे रानी, कमेरी एवं नर की उत्पत्ति होती है। इसके पंख उदर की लम्बाई से छोटे होते हैं। रानी मौन के डंक कमेरी मौन की अपेक्षा कम टेढ़े और छोटे तीर वाले होते हैं। रानी मक्खी अपने डंक का प्रयोग केवल नई आने वाली रानी को मारने लिए करती है। इसका कोई अन्य उपयोग नहीं है।

रानी का जीवनकाल सामान्यतया: 1 से 2 वर्ष का होता है।

2. नर मौन :

नर मौन के कोष कमेरी मौन की अपेक्षा बड़े होते हैं। इनसे स्वयं की रक्षा हेतु डंक नहीं पाये जाते हैं। इसका कार्य रानी मौन का गर्भाधान करना है। इसके अतिरिक्त यह मौनगृह के अन्दर के तापक्रम को अनुकूल बनाये रखने में सहयोग देते हैं। नर मौन के पास पराग टोकरी, मोम एकत्रित करने की ग्रन्थियाँ नहीं होती हैं। गर्भाधान किया सम्पन्न करने के पश्चात नर मौन का जीवनकाल समाप्त हो जाता है।

मधुसाव—सीजन में नर मौन हजारों की संख्या में पाये जाते हैं। लेकिन कुछ ही नर व्यावहारिक होते हैं। नर मौन का बहुलता, भोजन की उपलब्धता पर निर्भर करता है। पैदा होने के 12 दिन बाद नर मौन के शुक्राणु परिपक्व हो जाते हैं।

3. कमेरी मौन :

मौनवंश में कमेरी मौन की संख्या अधिक होती है। कमेरी मौने प्रजनन के लिए अयोग्य होती हैं पर वे अन्य मातृत्व उत्तरदायित्व पूरी निष्ठा के साथ निभाती हैं। वे कमेरी कोषों में पाली जाती हैं। इनका जीवन काल 3 या 4 सप्ताह से लेकर 6 महीने तक हो सकता है। कमेरी के मुखांग मकरन्द को चूसने के लिए उपयुक्त रचना में रूपान्तरित होते हैं। इनके शरीर का आकार रानी मक्खी की अपेक्षाकृत छोटा होता है, इनके उदर पर पीली या काली धारी पायी जाती है। यह नोकदार, काठेदार डंक से जुड़ी रहती है, पंख की लम्बाई उदर के बराबर होती है और इसके पिछले पैर में पराग टोकरी पायी जाती है। उदर में नीचे के अन्तिम चार खण्डों की प्लेट पर 4 जोड़ी मौन ग्रन्थियाँ पायी जाती हैं, आहार नली का एक भाग मधु संग्रह थैली में परिवर्तित होता है। यह जीवन के तीसरे दिन से मोम से निर्मित कोषों की सफाई, चौथे दिन से घर के अन्दर का कार्य, पाँचवें दिन से रायलजेली पदार्थ को रानी एवं शिशुओं को खिलाने, 12 से 18 दिन में छत्तों का निर्माण, द्वार रक्षा, मकरन्द का परीक्षण एवं तापमान को अनुकूल बनाये रखने का कार्य करती है। क्षेत्रीय मौन, मकरन्द एवं पराग को मौनगृह के अन्दर लाने का कार्य आरम्भ कर देती है।

मौन—प्रबन्ध :

मौनपालन में मौनपालक को दैनिक एवं मौसमी बहुत सी समस्यायें होती हैं। मौनें अपने अंतिम उददेश्य की पूर्ति के लिए जहाँ तक सम्भव होता है, सैनिक की तरह कार्य करती हैं।

विभिन्न मौसमों में मौनपालकों को बहुत सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। मौनों को मौनगृह में बराबर बने रहने के लिए तथा पर्याप्त लाभ लेने के लिए मौन प्रबन्ध को समझना बहुत ही आवश्यक।

मौनवंश का सामयिक निरीक्षण :

मधुमक्खियाँ अधिक हस्तक्षेप पसन्द नहीं करती। इसलिए जहाँ तक सम्भव हो उनको कम से कम छेड़ना चाहिए। मधुसाव सीजन में वंशवृद्धि तेजी से हो रही हो तो मौनों का निरीक्षण सप्ताह में एक बार अवश्य कर लेना चाहिए परन्तु जब मधुसाव न चल रहा हो तो महीने में कम से कम दो बार निरीक्षण कर लेना चाहिए।

मौनें जब मकरन्द एवं पराग एकत्रित करने में व्यस्त हों, मौनवंश का निरीक्षण किया जा सकता है, गर्भी के मौसम में प्रातः या सांयकाल तथा सर्दी के मौसम में दिन के मध्य में निरीक्षण करना चाहिए। तेज हवा, वर्षा, रात में तथा जब मौने

अन्दर बाहर आती जाती न हों तो मौनगृह नहीं खोलना चाहिए। सर्दी के मौसम में शिशु फ्रेम को अधिक समय तक खुला नहीं रहने देना चाहिए। जब कभी मौनों में लूट-लड़ाई या मौनालय में किसी अन्य प्रकार की परेशानी हो तो मौनगृहों के प्रवेशद्वार पर रानी रोकद्वार लगा देना चाहिए। मौनवंशों का निरीक्षण करने से पूर्व मुंह रक्षकजाली और दस्तानों को लगाना हितकर होता है। मौनगृह के बगल में फ्रेम स्टेप्ड एवं धुंवाकार भी रखना चाहिए। प्रदेश द्वार एवं अन्तरपट के छिद्र से हल्की सी धूनी से धुंवा कर देना चाहिए। एक-एक करके फ्रेमों को बाहर निकालिए और उनको लम्बाई में टांग दें निरीक्षणोपरान्त उन छत्तों को जहाँ से निकाला गया था वहाँ पर रख देना चाहिए। मौनों की देखभाल करते समय रानी पर नजर रखें ताकि वह कहीं दब न जाय। डंक लगने से बचाव करना अति आवश्यक है। डंक लग जाने पर खुजलाहट एवं दर्द होता है जहर की गन्ध अधिक मौनों को डंक मारने हेतु आमंत्रित करती है, जिससे निरीक्षण करने में कठिनाई उत्पन्न होती है। डंक लग जाने पर किसी तेज धार बाले चाकू से दिखायी पड़ने वाले डंक को निकाल देना चाहिए। उंगलियों से दबाव डाल कर डंक को नहीं निकालना चाहिए। निरीक्षण करने के तुरन्त पश्चात मौनगृह को बन्द बार देना चाहिए। ऊपरी ढक्कन एवं अन्य भागों को बन्द करते समय मौनों को दबने से बचाना बहुत जरूरी है। नोटबुक में प्रत्येक मौनवंश का ब्योरा रखिए। यह विवरण मौनों की आवश्यकताओं के अनुसार समयानुसार समाग्री प्रदान करने में सहायक होता है। मौनों के कार्यों को सफलतापूर्वक चलने हेतु मौनवंश के निरीक्षण का उददेश्य, समयानुसार आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है, जिससे कि उत्पादन में बढ़ोत्तरी होती है। मौनवंश का निरीक्षण करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :—

1. मौनवंश के पर्याप्त मात्रा में भोजन है या कृत्रिम भोजन देने की आवश्यकता है।
2. रानी या अप्डे मोजूद हैं? ताजे क्रमबद्ध अकेले अप्डे रानी की मौजूदगी का द्योतक हैं, यदि अप्डे मौजूद नहीं हैं तो रानी का पता लगाने की आवश्यकता पड़ती है। अगर रानी नहीं है तो मौनवंश को नई रानी उपलब्ध कराना आवश्यक होता है।
3. यदि कोई रानी कोष दिखायी दे, तो रानी को नष्ट कर देना चाहिए। बकछूट काल में रानी कोष का निर्माण यह इंगित करता है कि मौनवंश बकछूट करने की तैयारी कर रहा है। यदि मौनवंशों को बकछूट के लिए उत्प्रेरित करता है तो रानी कोष को, रानी निकालने तक पड़े रहने देना चाहिए। जब मधुमाला काल नहीं होता है और रानी कोष बनते हैं तो इससे पता चलता है कि या तो रानी गायब हो गयी है या मौन वृद्धोद्वार (गर्भधारण) करना चाहती है।
4. रानी को अप्डे देने या मधु के एकत्रीकरण हेतु पर्याप्त संख्या में छत्तों को देना चाहिए।
5. मौनों के शत्रुओं एवं बीमारियों के प्रति सावधानियाँ एवं उपचार तुरन्त करना चाहिए।

मौनवंशों का विभाजन :

मौनों में घरछुट की प्रवृत्ति बहुत कम होती है। इसलिए घरछुट काल में मौनवंशों को पकड़कर इनकी संख्या में वृद्धि की जा सकती है। दूसरे तरीके से मौनवंशों की संख्या में वृद्धि करके शक्तिशाली मौनवंशों को शरद ऋतु में दोपहर बाद 2 से 3 बजे एवं बसन्त ऋतु में 4 से 5 बजे नये मौनगृह में 3 से 4 फ्रेम के मौनवंश रखकर या तो 3 से 4 किमी. की दूरी से अधिक क्षेत्र में रखकर या पुराने मौनगृह के मूल स्थान से कुछ दूरी पर अगल-बगल से हटाकर नये-नये मौनगृह में मौनवंशों को रखकर विभाजन की प्रक्रिया पूरी की जाती है। रानी विहीन मौनवंश को पुराने मौनवंशों से एक दो वूड वाले छत्ते देना लाभकारी होता है ताकि कमेरी मौनों की संख्या में कमी न होने पाये और रानी मौन को गर्भधान में किसी प्रकार का व्यवधान उत्पन्न न हो।

मौनवंश विभाजन का कार्य आरम्भ होने से पाले रानी कोष या रानी मौन की आवश्यकता सुनिश्चित करना लाभप्रद होता है। मौनालय में सर्वप्रथम किसी शक्तिशाली मौनवंश से 3-4 फ्रेमों में न्यूकिलियस मौनवंश विभाजित करके क्वीन सेल तैयार कराये जाने चाहिए। विभाजित किये जाने वाले मौनवंश को शक्तिशाली बनाना चाहिए ताकि परिपक्व क्वीन सेल मिलने पर विभाजन पश्चात अतिरिक्त मौनवंश बनाये जा सके। क्वीन सेल 13-14 दिन के हो जाने पर एक-एक स्वस्थ

एवं परिपक्व वीन सेल रानी विहीन मौनवंश को देकर कम समय में अधिक से अधिक मौनवंशों का विभाजन किया जा सकता है।

मौनवंश में रानी का प्रवेश :

जब मौनवंश में रानी नहीं होती है या पुरानी रानी को मौनों ने मार दिया होता है तो मौनवंशों में नई रानी देने की आवश्यकता पड़ती है। मौनवंश में रानी देने के लिए पहले उसको रानी विहीन बनाया जाता है। उसके बाद ही नई रानी का प्रवेश कराना ठीक होता है। यदि मौनवंश काफी समय से रानी विहीन रहा है तो कमेरी मातायें अण्डा देना शुरू कर देती है। ऐसी स्थिति में वह नई रानी को स्वीकार नहीं करती है। अन्त में इस तरह के मौनवंश को दूसरे मौनवंश है मिला दिया जाता है।

रानी को प्रवेश कराने से पूर्व बने रानी कोषों को नष्ट कर दिया जाता है। रानी मौन को रानी पिंजड़ा में कुछ कमेरी मौन के साथ बन्द कर दिया जाता है। रानी पिंजड़े के द्वार पर चीनी के पाउडर एवं कुछ मधु मिलाकर पिंजड़े को बन्द करके दो फ्रेमों के बीच लटका देते हैं। कुछ ही दिनों में मौने इस कैन्डी को खाना शुरू कर देती हैं और धीरे-धीरे रानी को बाहर निकाल लाती है। कुछ समय में मौनवंश की गन्ध रानी मौन प्राप्त कर लेती है। अब कार्क प्लग को हटाकर रानी को खोल दिया जाता है। यदि रानी को मौनें स्वीकार नहीं करती हैं तथा शत्रुतापूर्वक व्यवहार करती हैं तो रानी को पिंजड़े में पुनः बन्द करके पहले की तरह दो फ्रेमों के बीच में लटका दिया जाता है तथा 24 घण्टे के बाद दुबारा रानी मौन को बाहर किया जाता है।

मौनवंशों का स्थानान्तरण :

यदि मौनवंशों को 100 मीटर के अन्दर ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर खिसकाना होता है और जमीन समतल होती है तो मौनवंशों को धीरे-धीरे 3 या 4 फीट प्रतिदिन खिसकाना चाहिए ताकि मौन आस-पास के स्थानों को आशानी से पहचान सके। यदि मौनवंश को शीघ्र ही 100 मीटर से अधिक दूरी पर हटाना होता है तो सबसे अच्छा तरीका है कि मौनवंश को तीन-चार किलोमीटर दूर ले जाकर 5 या 6 दिन तक रखा जाता है और उसके बाद ऐच्छिक स्थान पर लाकर रखा जाता है। इस बीच मौनों को अपने पुराने स्थान की याददारत भूल जाती है। मौनगृह को स्थानान्तरित करने के लिए शिशु खण्ड के सभी फ्रेमों को एक किनारे दाब देकर कस दिया जाता है। अन्तिम फ्रेम को दोनों किनारों पर एक-एक कील लगा देने से फ्रेमों में झटका नहीं लगता है।

मौनगृह के सबसे ऊपर अन्तपट रखकर उसमें बने हुए छिद्र पर तार की जाली लगाकर कील लगा देते हैं तथा अन्य खिसकने वाले भागों को टिन की पत्ती के सहारे कील लगाकर मौनों के निकलने के रास्ते को पूर्ण रूप से बन्द कर दिया जाता है। सायंकाल जब मौनें अपने घर में वापस आ जाती हैं तो प्रवेश द्वार को भी कागज के टुकड़े से बन्द कर देते हैं। इस प्रकार से मौनगृह को स्थानान्तरित करने के लिए तैयार कर लिया जाता है। गर्भ के मौसम में या दूरस्थ स्थानों पर ले जाते समय प्रतिदिन मौनगृह के ऊपर पानी का छिड़काव किया जाना हितकर होता है।

मौनों का प्रतिपूरक भोजन :

मौनों के प्राकृतिक भोजन में कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन इत्यादि तत्व पाये जाते हैं। फूलों के मकरन्द को मौनें एकत्रित करती हैं और शहद में परिवर्तित कर देती है। यह कार्बोहाइड्रेट्स और विटामिन्स का स्रोत है। फूलों में जो पीले रंग का पाउडर होता है वह प्रोटीन का मुख्य स्रोत है। उसको शिशुओं को खिलाने के पूर्व मधु के साथ मिश्रित करके खिलाया जाता है। पंखदार मधुमक्खियाँ नौजवान भी इस मिश्रित पदार्थ को खाती हैं। इस पदार्थ को खाने से कमेरी मौनें शीघ्र ही शक्तिशाली हो जाती हैं और मौनी दुर्घ स्रावित करती है, जो रानी का भोजन होता है। यह पदार्थ लार्वा की वृद्धि के लिए प्रारम्भ में कमेरी मौनों द्वारा दिया जाता है। इनमें से नौजवान मधुमक्खियाँ नर्स का काम करती हैं। जैसे ही पुरानी होती हैं बाहर के कार्यों को करने लगती हैं। मौनगृह के अन्दर कमेरी मौनों का अधिकांशतयः एक कोष से दूसरे कोष में नवजात शिशुओं को भोजन खिलाते हुए देखा गया है।

शिशुपालन हेतु पर्याप्त संख्या में फूलों का मिलना महत्वपूर्ण होता है क्योंकि फूल ही मकरन्द तथा पराग के स्रोत होते हैं। एक शिशु को प्रौढ़ मधुमक्खी बनने तक पूर्ण रूप से भरा हुआ एक कोष शहद एवं एक कोष पराग की आवश्यकता पड़ती है। यह कहा जा सकता है कि एक शिशु फ्रेम के बच्चों के पालन पोषण के लिए दो फ्रेम मधु एवं पराग की आवश्यकता होती है।

मौन, चीनी के शर्बत को भी भोजन के रूप में लेती हैं चीनी के शर्बत का घोल मधु के स्थान पर प्रतिपूरक का कार्य करता है जो शक्तिहीन मौनवंश को बचाने के लिए फलोरा के अभाव में दिया जाता है। मधुस्रावकाल के आरम्भ में, जब फूल पर्याप्त मात्रा में नहीं मिलते, बच्चों के पालन पोषण कार्य को उत्तेजित करने के लिए कृत्रिम भोजन दिया जात है। सफल मौनपालन के लिए यह एक महत्वमूर्न कारण है। मधुस्राव काल में मौनवंशों को पूर्णरूप से शक्तिशाली रखना चाहिए ताकि अधिक से अधिक लाभ लिया जा सके। एक साधारण मौनवंश के पास कम से कम 2 से 3 किग्रा. मधु का संग्रह रहता है। मधु का स्तर इससे नीचे होने की स्थिति में मौनों को कृत्रिम भोजन दिया जाना चाहिए।

भोजन को रेप्रिड फीडर या चौड़ मुँह वाले गोल शीशी में रखकर मौनगृह के अन्दर रख दिया जाता है। गेहूँ या पुआल के छोटे-टुकड़ों को रैप्रिड फीडर में शर्बत के ऊपरी सतह पर तैरा दिया जाता है। मधुमक्खियाँ इन टुकड़ों पर बैठ जाती हैं और शरबत में डूबने या भीगने से बच जाती है। चीनी के घोल को खाली छत्तों में भी दिया जा सकता है। एक खाली छत्ते को मौनवंश से निकाल कर थाली में खड़ी अवस्था में रख दिया जाता है। चीनी के गाढ़े शरबत को छत्तों के कोषों में भर दिया जाता है। एक तरफ के कोषों के पूर्ण रूप से भर जाने पर दूसरी तरफ के कोषों में भी भर दिया जाता है। यह मधुमक्खियों को भोजन देने की सुरक्षित एवं आसान विधि है।

शक्तिशाली मौनवंश बनाये रखने के लिए निम्न प्रमुख बातों को ध्यान में रखकर भोजन देना चाहिए :

1. मधुमक्खियों के वंश को ठीक समय पर भोजन देना : एक साधारण मौनवंश के पास 2 से 3 किग्रा. मधु का संग्रह मधुस्राव सीजन के समाप्ति पर होना चाहिए ताकि वे भविष्य में भी प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना कर सके। मौनवंश में मधु एवं पराग की कमी को देखते ही मधु एवं पराग पूर्तिकारक पदार्थों को दिया जाना चाहिए। प्रकृति में मकरन्द एवं पराग उत्पादित करने वाले फूलों की कमी से यह स्थिति उत्पन्न होती है। एक अच्छे एवं कुशल मौनपालक के लिए यह आवश्यक है कि आगामी मधुस्राव का लाभ अधिक से अधिक लेने के लिए फूलों के अभाव के समय मौनवंश को सुदृढ़ बनाये रखें ताकि वह मकरन्द का भरपूर दोहन तथा अपनी फसल/बागवानी में पूर्ण तथा सही पर-परागण का लाभ उठा सके। निम्न दशाओं में मौनवंशों को भोजन दिया जाता है—

अ— मौनवंशों को उत्तेजित करने के लिए भोजन देना : मौनवंशों में निम्न क्रियाकलापों को पूर्ण करने के लिए उत्तेजित किया जाता है—

1. रानी मौन को बराबर अण्डे देने के लिए
2. मौनवंश को शक्तिशाली बनाने के लिए
3. मौनवंश की संचय क्षमता बनाये रखने के लिए

ब— शिशु प्रजनन हेतु भोजन देना : शिशु प्रजनन में मकरन्द/शहद की पूर्ति के साथ-साथ पराग की मात्रा में उपलब्ध रहना निर्भर करता है। पराग में प्रोटीन महत्वपूर्ण तत्त्व होता है, जो शिशुओं के विकास में आवश्यक होता है। पराग की कमी को देखते हुए प्रोटीनयुक्त पदार्थ बताये गये मात्रा के अनुसार देने से शिशुओं का विकास तेजी से होता है। मौनवंशों को सुदृढ़ बनाये रखने के लिए उचित मात्रा में मकरन्द एवं पराग पूर्तिकारक पदार्थ समय से दिया जाना चाहिए।

स— आकस्मिक शिशु प्रजनन बन्द होने पर भोजन देना : मकरन्द एवं पराग पूर्तित वाले फलों की अनुउपलब्धता के समय कमेरी मौनों को भोजन नहीं मिल पाता है, जिससे शिशु ग्रन्थियों में मौनी दुर्गम का

उत्पादन कम होने लगता है। ऐसी स्थिति में रानी मौन तथा शिशुओं को मौनी, दुर्घट बहुत ही कम मिल पाता है जिसकी प्रतिपूर्ति मधु तथा पराग के मिश्रण को कमेरी मौनें खिलाकर करती है। इन पदार्थों की कमी में रानी मौन अण्डा देना बन्द कर देती है या बहुत ही कम संख्या में अण्डे देती है। ऐसे शिशुओं से जो वयस्क बनते हैं। और प्रायः कमजोर व कम कार्यक्षमता वाले होते हैं। यह समय मौनों के लिए प्रतिकूल समय कहलाता है। मैदानी क्षेत्र में यह समय मई से अगस्त का महीना तथा सर्दी के मौसम में शीत लहर का समय तथा पर्वतीय क्षेत्र में दिसम्बर, जनवरी तथा जून से अगस्त का होता है जिसमें प्रकृति में मकरन्द एवं पराग देने वाले फूल बहुत ही कम मिलते हैं। ऐसे काल में उचित अनुपात में कृत्रिम भोजन दिया जाना नितान्त आवश्यक है अन्यथा मौनों घरछूट कर जायेंगी या धीरे—धीरे मौनें समाप्त हो जायेंगी।

- द. छत्ता निर्माण हेतु भोजन देना :** मोमी छत्ता कमेरी मौनों द्वारा बनाया जाता है। मोम उत्पादन हेतु शहद का खाया जाना नितान्त आवश्यक है। एक किग्रा मोम निर्माण हेतु कम से कम 9–10 किग्रा शहद का खाया जाना आशयक होता है। यह मोम कमेरी मौन के उदर के निचले चार जोड़ी मोमी ग्रन्थियों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है। कृत्रिम भोजन देने से नये छत्तों का निर्माण मौन करने लग जाती है, जिससे मधुम्राव सीजन आने पर शहद के उत्पादन एवं वंशवृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

शहद की उपयोगिता :

मधु अतिपौष्टिक, खाद्य पदार्थ तो है ही साथ ही औषधि भी है। मधु में निम्नलिखित तत्व पाये जाते हैं। –

जल 17 से 18 प्रतिशत, फलों की चीनी 42.2 प्रतिशत, अंगूरी चीनी 34.71 प्रतिशत, एल्यूमिनाइड, 1.18 प्रतिशत एवं खनिज पदार्थ 1.06 प्रतिशत। इसके अतिरिक्त मधु में विटामिन सी, विटामिन बी, फोलिक एसिड, साइट्रिक एसिड इत्यादि महत्वपूर्ण पदार्थ भी पाये जाते हैं। मधु भोजन के रूप में, दवा के रूप में एवं सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में प्रयोग किया जाता है।



69. व्यावसायिक ब्रायलर पालन

पिछले तीन दशकों में उत्तर प्रदेश में कुक्कुट पालन का विकास बहुत तेजी से हुआ है तथा इस व्यवसाय की महत्ता से सभी लोग पूर्णतया परिचित हो चुके हैं। इसी कारण यह व्यवसाय एक पूर्ण उद्योग का रूप ले चुका है। कृषक भाइयों, मांस के लिए पाली जाने वाली मुर्गियाँ जिनमें शारीरिक बढ़वार काफी तेजी से होती हैं, इन्हें ब्रायलर कहा जाता है। ब्रायलर उत्पादन निम्नलिखित कारणों से अधिक प्रचलित हो रहा है –

1. इसमें लगाई पूंजी की शीघ्र वापसी हो जाती है।
2. यह व्यवसाय अपेक्षाकृत कम लागत पर शुरू किया जा सकता है।
3. जहाँ यातायात के साधन न हों, वहाँ भी यह व्यवसाय शुरू किया जा सकता है।
4. ब्रायलर पालन एक पूरक व्यवसाय के रूप में उस समय भी किया जा सकता है जब कृषक भाई ऐसे दूसरे व्यवसाय में लगे हों जिसमें कुछ विशेष समयों के लिए अवकाश रहता हो।



हर व्यवसाय की तरह ब्रायलर उत्पादन को व्यवसाय के रूप में अपनाने से पहले उन सारी बातों को भली—भाँति जान लेना आवश्यक है जिनपर इसकी उत्पादन कीमत आधारित है, क्योंकि हर बात की छोटी से छोटी जानकारी पर ही पूर्ण लाभ सुनिश्चित होता है। सफल ब्रायलर पालन के लिए निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए –

1. ब्रायलर पालन पद्धति का चुनाव।
 2. चूजों का चुनाव।
 3. ब्रूडिंग व्यवस्था।
 4. समुचित आहार।
 5. देख—रेख की सामान्य विधि।
- 1. ब्रायलर पालन पद्धति :** इस व्यवसाय में पक्षी दो प्रकार से पाले जाते हैं।
- क. प्रथम प्रकार की पद्धति में फार्म पर एक समय में एक ही उम्र के पक्षी पाले जाते हैं और उन्हें एक साथ बैंच दिया जाता है। इस पद्धति को “आल टर्न आल आउट” के नाम से जाना जाता है। नये पक्षी समूह के फार्म में आने से पूर्व कुछ ऐसा समय होता है जिस समय फार्म पर एक भी पक्षी नहीं होता। इस समय फार्म की सफाई की जाती है, जिससे नये समूह को पुराने समूह में उपस्थित संक्रामक जीवाणुओं (अगर कोई संक्रामक बीमारी हो) से बचाया जा सके। इस प्रकार एक के बाद एक समूह पाला जाता है। संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए यह उपयुक्त पद्धति है।
- ख. दूसरी पद्धति में एक साथ कई उम्र के पक्षियों के अलग—अलग समूह पाले जाते हैं, जिसे “मल्टीपल ब्रूडिंग” पद्धति कहते हैं। इस पद्धति से अनेक लाभ हैं –
- अ. इस विधि से ब्रूडिंग की जगह, ब्रूडिंग उपकरण, चूजों के खाने और पीने के उपकरणों इत्यादि के खर्च को घटाया जाता है, क्योंकि चार सप्ताह के बाद पक्षियों के समूह को दूसरे बड़े घरों (ग्रोवर हाउस) में डाल दिया जाता है। अच्छी तरह सफाई के बाद पुनः नया समूह ब्रूडिंग के लिए लाया जाता है। ऐसा क्रमशः चलता रहता है, जिससे उपकरणों का उपयोग निरंतर होता रहता है तथा बारी—बारी से नये समूहों की ब्रूडिंग उन्हीं उपकरणों द्वारा हो जाता है, जहाँ अच्छी बढ़वार के लिए ज्यादा जगह और अधिक खाने और पीने की जगहों का प्रबन्ध होता है। इस प्रकार फार्म की सारी जगहों और उपकरणों का उपयोग हमेशा होता रहता है।

- ब. इस विधि से आनुपातिक तौर पर कम जगह में अधिक पक्षियों को पाला जाता है, जिससे आमदनी में वृद्धि होती है।
- स. अनेक उम्र के पक्षियों की उपलब्धता के कारण पक्षियों को लगातार बाजार भेजा जाता है, जिससे लगातार आमदनी होती रहती है तथा बाजार की आवश्यकतानुसार छोटे या बड़े पक्षी उपलब्ध कराये जा सकते हैं।
उपरोक्त लाभों के कारण आधुनिक ब्रायलर व्यवसाय में दूसरी पद्धति ज्यादा प्रचलित है।
- 2. चूजों का चुनाव :** ब्रायलर पालन में चूजों का चुनाव सबसे महत्वपूर्ण है। सामान्यतयः यह देखा गया है कि एक ही समूह के पक्षियों में बिक्री के समय वजन में काफी अन्तर रहता है। नर और मादा पक्षियों के वजन में अन्तर के अलावा यह अन्तर एक ही प्रजाति के पक्षियों में भी स्पष्ट रूप से देखा जाता है। यह अन्तर जितना ही अधिक होता है उस समूह से आमदनी उतनी ही घटती चली जाती है। इस प्रकार से तेजी और समान रूप से बढ़ने वाले चूजे किसी मान्यता प्राप्त व्यक्तिगत अथवा सरकारी संस्थाओं से प्राप्त किये जा सकते हैं। चूजे हैचरी से प्राप्त करने के पूर्व यह सुनिश्चित कर लें। कि उनके अभिजनक (पेरेन्ट्स) उत्तम स्वास्थ्य के हैं तथा उनमें पुलोरम, टाईफाइड तथा ऐसी कोई अन्य बीमारी नहीं है। अच्छा तो यह होगा कि अच्छे चूजे की प्राप्ति के लिए “रेंडम ब्रायलर टेस्ट” के परिणामों का सहारा लिया जाये।

चूजे खरीदने के स्थान के चुनाव के बाद दूसरा क्रम स्वस्थ चूजों के चुनाव का आता है। चुस्त, फुर्टीले, चमकदार आँखों वाले तथा समान आकार के चूजे उत्तम होते हैं। स्वस्थ चूजों की पिण्डली या पैर की खाल चमकदार होती है। जहाँ तक संभव हो चूजे एक ही अभिजनक समूह के होने चाहिए।

- 3. ब्रूडिंग व्यवस्था :** ब्रायलर पालन में आवास सबसे महत्वपूर्ण है। चूंकि ब्रायलर पालन विशेष तौर पर चूजों की ब्रूडिंग क्रिया पर निर्भर करता है। अतः इनके आवास में चूजों के लिए पर्याप्त जगह, खाना और पानी, तापमान, आर्द्रता, हवा की गति और प्रकाश जैसी बातों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

आवश्यक जगह : चूजों के भार में वृद्धि तथा दाने को मांस में परिवर्तन करने की क्षमता प्रति चूजे उपलब्ध जगह की व्युतक्रमानुपाती (युनिवर्सली प्रोपोर्शनल) होती है, फिर भी ब्रायलर पालन में कम जगह में ज्यादा से ज्यादा चूजे पालने का प्रयास किया जाता है, जिससे लागत पूँजी की आमदनी को बढ़ाया जा सके। ब्रायलर उत्पादक चूजे की वृद्धि तथा दाना परिवर्तन क्षमता के कुछ अंश की कुर्बानी करके प्रति चूजे को कुछ कम जगह देकर अधिक चूजे पालते हैं, जिससे उन्हें अधिक आमदनी होती है। चूजों के लिए आवश्यक जगह तथा दाना-पानी के लिए उपयुक्त स्थान हेतु हैचरी द्वारा दिये गये निर्देशों का पालन करना चाहिए। अगर हैचरी से ऐसे निर्देश न मिल सकें तो सारणी सं. 1 पालन करना उचित होगा।

सारणी—1

प्रति ब्रायलर चूजे को ब्रूडिंग एवं बढ़वार की स्थिति में फर्श, दाने तथा पानी हेतु आवश्यक स्थान

1. फर्श हेतु स्थान

क. पिंजरा पद्धति	ब्रूडिंग स्थिति में	0.25 वर्ग फीट
ख. गहरी बिछाली पद्धति	बढ़वार स्थिति में	0.50 वर्ग फीट
	ब्रूडिंग स्थिति में	0.50 वर्ग फीट
	बढ़वार स्थिति में	1.00 वर्ग फीट
2. दाने हेतु स्थान	ब्रूडिंग स्थिति में	2 इंच
	बढ़वार स्थिति में	4 इंच
3. पानी हेतु स्थान	ब्रूडिंग स्थिति में	1 इंच
	बढ़वार स्थिति में	2 इंच

तापमान : चूजों को ब्रूडर में रखने के बाद इस बात का अवलोकन करना चाहिए कि तापमान उनके लिए उपयुक्त है या नहीं, क्योंकि तापमान की कमी अथवा अधिकता से चूजों की बढ़वार पर बुरा प्रभाव पड़ता है। ब्रूडिंग के लिए एक निश्चित तापमान बताना सीधा नहीं है क्योंकि यह मौसमों और चूजों की सामान्य स्थिति पर निर्भर करता है। तापमान कम, अधिक

या उपयुक्त है, पमान प्रारम्भ के दो—तीन दिनों तक सर्वोत्तम रहता है और उसके बाद तापमान को 2.5° डिग्री सेन्टीग्रेड प्रति सप्ताह कम करते रहना चाहिए जबतक कि तापमान 21 डिग्री सेन्टीग्रेड अथवा कमरे के तापमान पर न आ जाये। ग्रोवर अवस्था में 21 डिग्री सेन्टीग्रेड का तापमान सर्वोत्तम पाया गया है। इसकी जानकारी चूजे स्वयं देते हैं। चूजों का हर जगह समान रूप से बिखरा रहना तथा चारों ओर घूमना—फिरना ठीक तापमान को प्रदर्शित करता है। चूजों का प्रकाश स्रोत के पास इकट्ठा होना कम तापमान का द्योतक है, वर्षी इनका ब्रूडर गार्ड के पास चारों तरफ इकट्ठी होना अधिक तापमान को दर्शाता है। इस तरह चूजों की स्थिति को देखकर तापमान घटाया या बढ़ाया जा सकता है। प्रयोगों से पता चलता है कि 33° सेन्टीग्रेड तापमान प्रारम्भ के दो—तीन दिनों तक सर्वोत्तम रहता है और उसके बाद तापमान को 2.5° सेन्टीग्रेड प्रति सप्ताह कम करते रहना चाहिए जबतक कि तापमान 21 डिग्री सेन्टीग्रेड अथवा कमरे के तापमान पर न आ जाये। ग्रोवर अवस्था में 21 डिग्री सेन्टीग्रेड का तापमान सर्वोत्तम पाया गया है।

आर्द्रता : ब्रायलर पालन में आर्द्रता का भी बहुत महत्व है। अधिक शुष्क वातावरण में बिछावन शुष्क हो जाता है, जिससे स्वांस सम्बन्धी समस्या उत्पन्न हो सकती है तथा पंख की वृद्धि अच्छी नहीं होती जिसके फलस्वरूप पंख की सफाई के समय पंख का छोटा या कॉटीनुमा हिस्सा (पिन फैदर्श) चमड़ी में रह जाता है। यह मांस की बिक्री में कठिनाई उत्पन्न कर सकता है। बहुत अधिक आर्द्रता से बिछावन भीग हरता है, जिससे कॉक्सीडियोसिस तथा अन्य कई बीमारियों के फैलने की संभावना बढ़ जाती है। 50 से 60 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता का होना इसके लिए सर्वोत्तम पाया गया है।

वायु का उचित आवागमन : चूजों के अच्छे स्वास्थ्य तथा उत्तम कुक्कुट आवास में ताजी वायु का उचित आवागमन अत्यंत आवश्यक है। प्रति घण्टे 3 से 5 बार कमरे की वायु को परिवर्तन करना पर्याप्त है। वायु के अपर्याप्त बहाव के कारण कमरे में कार्बनमोनोआक्साइड तथा अमोनिया गैस इकट्ठी हो जाती है, जिससे बिछावन भीग जाता है। अमोनिया की अप्रिय गंध से पक्षियों की आँखों में खुजलाहट होती है तथा उनकी शारीरिक वृद्धि रुक होती है। कार्बनमोनोक्साइड गैस का 0.01 प्रतिशत से ज्यादा अनुपात चूजों के लिए प्राणघातक है। भीग बिछावन कॉक्सीडियोसिस की महामारी फैलाने में सहायक होता है। जहाँ अग्नि की ज्वाला वाले (फ्लेम टाइप) ब्रूडर काम में लाये जाते हैं। वहाँ अधिक ताजी वायु के आवागमन की आवश्यकता होती है।

कमरे में वायु की गन्ध तथा बिछावन की स्थिति से वायु के सही आगमन का अन्दाजा लगाया जा सकता है। कमरे में तीखी अमोनिया की गंध तथा बिछावन का भीग होना अपर्याप्त वायु के आगमन को दर्शाता है, जबकि बिछावन का सूखा होना तथा कमरे का अमोनिया की गन्ध से मुक्त होना वायु के पर्याप्त आवागमन का द्योतक है। इस बात की सावधानी भी अत्यंत आवश्यक है कि कमरे में वायु के झोंके न आने पाये। कमरे में वायु का झोका आ रहा है या नहीं, इसे भी चूजे ही बताते हैं। चूजों का ब्रूडर के किसी एक भाग में इकट्ठा होना वायु के झोंके आने का द्योतक है।

प्रकाश प्रबन्ध : कुक्कुट पालन में प्रकाश प्रबन्ध आमतौर पर विद्युत बल्ब से किया जाता है, जिससे रोशनी के साथ—साथ कमरे का तापमान भी उपयुक्त बना रहता है। साधारणतया ब्रायलर पालक कुक्कुट आवास में 23 घण्टे लगातार विद्युत का उपयोग करते हैं और 1 घण्टा अंधेरा रखा जाता है, चाहे वह आवास खुले हो अथवा खिड़की या रोशनदान रहित हो। कुछ समय अंधेरा रहना इसलिए आवश्यक माना जाता है ताकि किसी समय अचानक विद्युत आपूर्ति भंग होने पर पक्षी प्रत्याबल के शिकार न हो। परन्तु नवीनतम अनुसंधान के अनुसार अगर खिड़की रहित आवास में 24 घण्टे विद्युत आपूर्ति के अन्तराल में प्रारम्भ के 1—2 घण्टे विद्युत आपूर्ति करने के उपरान्त 2—4 घण्टे अंधेरा रखा जाये तो इससे पक्षी की आहार ग्रहण क्षमता सुधरती है। अनेक कुक्कुट पालक, जिनके पास खिड़की रहित आवास है, उपर्युक्त विधि द्वारा लाभान्वित हुए हैं।

प्रारम्भ के 1 से 15 दिन तक 200 वर्ग फीट आकार के कमरे में 40—60 वॉट के बल्ब के प्रयोग से चूजों को दाना—पानी ग्रहण करने में सुविधा होती है। इसके बाद 15 वॉट का बल्ब प्रकाश के लिए काफी होता है। चार सप्ताह के बाद अधिक विद्युत प्रबलता पक्षी की बढ़वार पर विपरीत प्रभाव डालती है। गन्दे बल्ब समय—समय पर साफ करना तथा टूटे व फ्यूज बल्ब बदल देना चाहिए। गन्दे बल्ब 60—70 प्रतिशत विद्युत प्रबलता को कम कर देते हैं, जिससे विद्युत की खपत बढ़ जाती है तथा आग लगने का खतरा भी रहता है। कुक्कुट पालकों को यह ध्यान रखना चाहिए कि प्रकाश सम्पूर्ण कमरे में समान रूप से हो।

4. समुचित आहार : सामान्यतः ब्रायलर को शुरू से अन्त तक भर पेट खिलाया जाता है। ब्रायलर चूजों को अधिक से अधिक खाने के लिए प्रेत्साहित किया जाता है। अधिक खाकर वे तेजी से बढ़ते हैं तथा इससे दाने को मांस में बदलने की क्षमता भी बढ़ती है। ब्रायलर चूजे अण्डे देने वाली मुर्गी के चूजे की तुलना में काफी तेजी से बढ़ते हैं। अतः इनका आहार भी तेजी से बढ़ते हैं परन्तु बाद में वृद्धि की गति में कुछ कमी आ जाती है। वृद्धि की गति को ध्यान में रखकर इनके लिए दो प्रकार के आहार उपयोग में लाये जाते हैं—

क. ब्रायलर स्टार्टर

ख. ब्रायलर फिनिशर

प्रारम्भ के चार सप्ताह में ब्रायलर स्टार्टर का प्रयोग किया जाता है, जिसमें प्रोटीन 23 प्रतिशत तथा ऊर्जा 3000 K.Cal/Kg होती है। चार सप्ताह के बाद से अन्त तक ब्रायलर फिनिशर का प्रयोग किया जाता है जिसमें ऊर्जा में तो कोई परिवर्तन नहीं किया जाता लेकिन प्रोटीन की मात्रा घटाकर 20 प्रतिशत कर दी जाती है। दोनों प्रकार के दानों की विस्तृत जानकारी सारणी—2 में दी गयी है।

ब्रायलर व्यवसाय में आहार सबसे मंहगी चीज है जो सम्पूर्ण खर्च का 60 से 70 प्रतिशत होता है अतः इस पर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है। यह देखा गया है कि आहार को मैश की तुलना में पिलेट के रूप में खिलाना अधिक लाभदायक है। प्रारम्भ के दो सप्ताह तक मैश का प्रयोग करके बाकी समय में पिलेट्स का उपयोग करना चाहिए। दाने के खर्च को कम करने के लिए ब्रायलर पालन की नवीनतम तकनीकी के अनुसार अब दो की जगह तीन प्रकार के दाने का उपयोग हो रहा है, जिसमें 4 सप्ताह की आयु तक स्टार्टर, 5–6 सप्ताह की आयु तक ग्रोवर तथा बाकी समय के लिए फिनिशर आहार

सारणी—2 : ब्रायलर मुर्गियों हेतु प्रस्तावित आहार

पोषक तत्व (किग्रा./ 100 किग्रा.)	ब्रायलर स्टार्टर			ब्रायलर फिनीशर		
	1	2	3	1	2	3
मक्का	55.00	44.00	48.00	60.00	52.00	56.00
चावल की कनी/बाजरा	-	10.00	9.56	-	10.00	9.66
मूँगफली की खली (40% प्रोटीन)	-	7.00	5.00	-	7.00	-
सूरजमुखी की खली (32% प्रोटीन) (वितैलित)	6.00	-	5.00	5.00	-	5.00
चावल चोकर (वितैलित)	4.87	-	-	-	-	-
मछली का चूरा (50% प्रोटीन)	8.00	10.00	-	6.00	4.00	-
चावल पौलिस	-	5.60	-	7.87	5.87	-
सोयाबीन मील (वितैलित) (50% प्रोटीन)	23.00	20.00	28.00	18.00	18.00	25.00
नमक	0.30	0.30	0.40	0.30	0.30	0.40
एल लाइसिन (एच.सी.एल.)	-	-	0.15	0.10	0.10	0.15
डी.एल. मिथियोनिन	0.20	0.20	0.25	0.10	0.10	0.15
विटामिन बी समूह	0.02	0.02	0.03	0.02	0.02	0.03
डीसीपी/हड्डी का चूरा	-	-	1.00	-	-	1.00
कॉकसीडियोस्टेट	0.05	0.05	0.05	0.05	0.05	0.05
एन्टीबायोटिक	0.05	0.05	0.05	0.05	0.05	0.05
खनिज मिश्रण (आई.एस.आई.)	2.50	2.50	2.50	2.50	2.50	2.50
विटामिन मिश्रण (ए, बी2, डी3, के)	0.01	0.01	0.01	0.01	0.01	0.01

का प्रयोग किया जाता है। यह पाया गया है कि सावधानी के अभाव में 8 सप्ताह की आयु तक लगभग 3 से 6 प्रतिशत दाने की बर्बादी हो जाती है। अगर दाने के बर्तन का दो तिहाई भाग भरा जाता है, तो बर्बादी 10 प्रतिशत तक हो जाती है जो आधा तथा तिहाई भाग भरने पर घटकर क्रमशः 3 प्रतिशत और 1 प्रतिशत तक होती है। अतः दाने की बर्बादी को बचाने के लिए दाने के बर्तनों की संख्या बढ़ाकर कम से कम दाना भरना चाहिए। एक बार के बजाय तीन—चार बार दाना डालकर भी इसकी बर्बादी से बचा जा सकता है। एक बार से अधिक दाना डालने पर दाने को मांस में परिवर्तित करने की क्षमता भी बढ़ती है। ब्रायलर दाने में मिलायी जाने वाली सभी औषधियाँ ब्रायलर को बाजार भेजने के एक सप्ताह पहले से बंद कर देनी चाहिए।

5. देख—रेख की सामान्य विधि : व्यवसाय से पूर्ण लाभ पाने के लिए सही देख—रेख की सर्वमान्य विधि अपनानी चाहिए, इसे साधारण तौर पर दो भागों में बांटा गया है—

क. चूजों के फार्म पर आने के पूर्व की तैयारी :

1. सर्वप्रथम ब्रूडर घर की सतह, छत और दीवार को अच्छी तरह धो लें तथा किसी संक्रामक कीटनाशक द्रव्य का उपयोग करके इसे जीवाणु रहित कर ले।
2. दाना—पानी के उपकरणों तथा ब्रूडर होवर को भी अच्छी तरह धोकर जीवाणु रहित कर ले।
3. चूजे आने से दो—तीन दिन पहले ही ब्रूडर को चालू कर दें तथा देख लें कि सभी चीजें ढंग से कार्य रही हैं या नहीं। ऐसा कर लेने से किसी भी प्रकार के खोए उपकरणों या टूट—फूट का पता चल जायेगा तथा समय रहते उसे ठीक करा ले।
4. ब्रूडर की सतह पर एक इंच मोटा स्वच्छ और सूखा बिछावन बिछा दें (अगर डीप लीटर विधि से ब्रूडिंग करना हो)।
5. ब्रूडर गार्ड अच्छी तरह साफ तथा जीवाणु रहित करके लगा दे।
6. चूजों को रखने से पूर्व कमरे का तापमान 90 डिग्री फारेनहाइट (32–35 डिग्री सेन्टीग्रेड) होना चाहिए। कमरे के थर्मामीटर को देखकर सुनिश्चित करें कि ब्रूडर होवर के नीचे उचित तापक्रम है।
7. पानी के बर्तनों में चूजों के आने से पूर्व स्वच्छ पानी भर देना चाहिए ताकि चूजों के आने तक पानी कमरे के तापमान के बराबर हो जाये।
8. पहले से ही यह सुनिश्चित कर लें। कि प्रत्येक ब्रूडर होवर के नीचे कितने चूजे छोड़ना है। चूजों की संख्या होवर के नीचे प्रति चूजे के लिए आवश्यक उपलब्ध जगह पर निर्भर करती है।

ख. चूजों के फार्म पर आने के बाद की देख—रेख :

1. जितनी जल्दी हो सके चूजों को हैचरी से लाकर ब्रूडर में रखना चाहिए। अगर चूजे बाहर से मंगाना हो तो यह सावधानी बरतनी चाहिए कि चूजे 24 घण्टे के अन्दर ही ब्रूडर तक पहुँच जाये। अनावश्यक देर होने से चूजे पानी और दाने के अभाव में कमजोर हो जाते हैं, जिससे मृत्यु दर में काफी वृद्धि हो जाती है। गर्भी के दिनों में तो इस पर अमल और भी आवश्यक होता है, क्योंकि पानी के अभाव में डीहाइड्रेशन हो सकता है इसे दूर करने के लिए चूजों को ग्लूकोजयुक्त पानी पिलाना चाहिए।
2. चूजों के फार्म पर आते ही यह पता करें कि उन्हें उस क्षेत्र में प्रचलित रोग निरोधक टीके दे दिये गये हैं या नहीं। चूजों को रानीखेत तथा मैरेक्स रोग के टीके लगवा देना आवश्यक है।
3. जब तक चूजे दो से तीन घण्टे तक पानी न पी लें तब तक दाने के बर्तनों को ब्रूडर में न रखे।
4. प्रथम सप्ताह के शुरू के तीन दिनों तक एन्टीबायोटिक्स की खुराक पानी में देना अच्छा होता है। वैसे अगर चूजे सभी तरह से स्वस्थ हों तथा सभी चीजें जीवाणु रहित हों तो एन्टीबायोटिक्स का प्रयोग करना कोई जरूरी नहीं है।
5. प्रथम सप्ताह के लिए ब्रूडर का तापमान 32–35 डिग्री सेन्टीग्रेड रखना अच्छा होता है परन्तु यह तापमान मौसम पर निर्भर करता है। उसके बाद तापमान में 2 से 3 डिग्री सेन्टीग्रेड प्रति सप्ताह की दर से कमी की जाती है जबतक कि

तापमान 21 डिग्री सेन्टीग्रेड या वातावरण के तापमान पर न आ जाये। 21 डिग्री सेन्टीग्रेड का तापमान अच्छी बढ़वार के लिए उपयुक्त पाया गया है।

6. ब्रूडर गार्ड को प्रतिदिन थोड़ा—थोड़ा हटाते जाना चाहिए जिससे बढ़ते हुए चूजों को ज्यादा जगह मिल सके। 5—6 दिनों के बाद गार्ड को पूरा हटा देना चाहिए।
7. प्रथम दो दिनों तक दाने को अखबार पर बिखरा देना चाहिए या बहुत ही छिछली तस्तरी का प्रयोग करना चाहिए। जब चूजे खाना सीख जायें तब छिछले फीडर का प्रयोग करना चाहिए। फीडर का दो तिहाई भाग ही दाने से भरना चाहिए।
8. प्रारम्भ के दिनों में 2—3 घण्टे पर ब्रूडर में चूजों की देखभाल करना चाहिए। इस बात का ध्यान रहे कि दाना और पानी के बर्तन हमेशा भरे रहें तथा तापमान चूजों के लिए उपयुक्त हो।
9. मरे या अस्वस्थ चूजों को जितनी जल्दी हो सके, हटा देना चाहिए।
10. चूजों को आवास में रखने के पश्चात पूरा विवरण लिखना उत्तम रहता है। जैसे चूजों के आने की तिथि, चूजों की मृत्यु दर, टीके व दवाई का विवरण, दाने का हिसाब तथा अन्य ऐसी सूचनाएं जिनका चूजों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।
11. जहाँ ब्रूडर और ग्रोवर आवास अलग—अलग हों, वहाँ चार सप्ताह बाद चूजों को ब्रूडर से निकल कर ग्रोवर आवास में डाला जाता है। ग्रोवर आवास में प्रति चूजे अधिक जगह दी जाती है तथा दाने और पानी के बर्तन भी उसी अनुपात में बढ़ा दिये जाते हैं।
12. आपत्तिजनक स्थितियों में जैसे अचानक पक्षी खाना छोड़ दें या मृत्युदर में वृद्धि हो जाए तो शीघ्र ही इसके कारणों का पता लगाना चाहिए। रोग की निश्चित जानकारी के बाद ही उपचार शुरू करना चाहिए। इसके लिए अगर संभव हो तो बीमार पक्षियों को रोग निदानशाला भेजना चाहिए।
13. ब्रूडिंग के समय बिजली कट जाना सामान्य घटना है। अगर कड़ाके की सर्दी का मौसम है तो चूजों को ठण्ड लग जाने तथा उससे मृत्यु दर बढ़ जाने की संभावना रहती है। ऐसी स्थिति में तापमान को नियंत्रित करने हेतु प्रबंध करना आवश्यक है। छोटे फार्म के लिए बुखाड़ी का प्रयोग अच्छा साबित होता है तथा बड़े फार्म के लिए विद्युत जनरेटर की व्यवस्था बहुत आवश्यक है।

संक्रामक जीवाणुओं से बचाव

किसी भी मुर्गी समूह को संक्रामक जीवाणुओं से पूर्णतया बचाये रखना तो असंभव है लेकिन सावधानी का पालन करके किसी महामारी के प्रकोप को निश्चित रूप से टाला जा सकता है। इसके लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :

1. मुर्गी आवास हमेशा सूखा होना चाहिए। अधिक नमी वाली नीची सतह की जमीन कभी भी मुर्गी पालन के लिए नहीं चुननी चाहिए।
2. अलग—अलग उम्र के पक्षियों को अलग—अलग रखना चाहिए।
3. निश्चित रूप से इन्क्यूबेटर (ऊष्मायन यंत्र), ब्रूडर और मुर्गी घर की सफाई तथा उसे जीवाणु रहित करते रहना चाहिए। यह क्रिया हर नये समूह के लिए दोहराना आवश्यक है।
4. मेले इत्यादि हेतु बाहर भेजे गये पक्षियों को पुनः समूह में नहीं मिलाना चाहिए। ऐसे पक्षियों को मेले में ही बेच देना चाहिए।
5. बाहर से आये व्यक्तियों को कभी भी मुर्गी फार्म में जाने की अनुमति नहीं देना चाहिए।
6. अगर संभव हो तो हर उम्र की मुर्गियों की देखभाल के लिए अलग—अलग व्यक्ति होने चाहिए। अगर ऐसा संभव नहीं हो तो छोटे चूजों का दाना—पानी करने के बाद बड़े पक्षियों की ओर जाना चाहिए।

7. बीमार मुर्गियों को तुरंत अलग कर देना चाहिए। मरी हुई मुर्गियों को गाड़ या जला देना चाहिए। चूजों की उम्र के अनुसार रोग निरोध टीके लगाना अनिवार्य है। टीका लगाते समय निम्नलिखित सावधानी बरतनी चाहिए :

- ◆ समय बचाने के लिए टीका लगाते समय दो तरह के टीकों को मिलाना नहीं चाहिए।
- ◆ गर्भी के महीनों में डाक द्वारा टीके कभी न मंगवाये।
- ◆ टीके को उचित तापमान पर लाने के लिए डीप फ्रिज या रेफ्रिजरेटर में रखें।
- ◆ टीके को व्यवहार में लाने के लिए टीके बनाने वाली कम्पनी के निर्देशों का पालन करना चाहिए।
- ◆ जब पक्षी किसी रोग से पीड़ित हो तो टीका नहीं लगाना चाहिए।
- ◆ टीके के प्रत्याबल को कम करने के लिए टीका लगाने के तीन दिन पहले और तीन दिन बाद तक एन्टीबायोटिक्स और विटामिन्स का प्रयोग करना चाहिए।
- ◆ एक समूह के पक्षियों को एक साथ ही टीका लमाना चाहिए।
- ◆ बिना टीका लगे पक्षियों को टीका लगे पक्षियों के संसर्ग में नहीं आने देना चाहिए।
- ◆ जहाँ तक संभव हो सके टीका शाम के ठण्डे वातावरण में लगाना चाहिए।
- ◆ टीका लगाने का पूर्ण लेखा रखना चाहिए।

व्यावसायिक ब्रायलर उत्पादन में साधारणतया रानीखेत (एफ स्ट्रेन) तथा मैरेक्स का टीका प्रथम दिन ही लगा दिया जाता है इसके बाद कोई टीका नहीं लगाया जाता।

ब्रायलर उत्पादन को अधिक लाभप्रद बनाने के नुस्खे :

1. ब्रायलर को कटने के 10 घण्टे पहले दाना देना बंद कर देना चाहिए लेकिन पानी उपलब्ध कराते रहना चाहिए।
2. जहाँ तक संभव हो सके कम से कम औषधि का प्रयोग करना चाहिए। ब्रायलर के दाने में मिलायी जाने वाली सभी औषधियाँ उसके बाजार भेजने से एक सप्ताह पूर्व बंद कर देना चाहिए।
3. आधुनिक ब्रायलर पालन में चौंच काटना (डिबीकिंग) दो कारणों से लाभकारी है –
 - क. इससे कैनीबोलिज्म का भय नहीं रहता है।
 - ख. इससे दाने की बर्बादी भी कम हो जाती है। प्रयोगों के द्वारा यह साबित हुआ है कि इसका उपयुक्त समय 6 से 8वें दिन है। लेकिन व्यावहारिक रूप से इसे हैचरी में (प्रथम दिन) कर लेना अधिक लाभदाय है क्योंकि इससे चूजों को पुनः पकड़ने के परिश्रम से बचा जा सकता है।
4. ब्रायलर उत्पादन में बिछावन की खपत बहुत होती है क्योंकि हर नये समूह के लिए नये बिछावन की आवश्यकता होती है। अगर पहले समूह के पक्षियों को किसी प्रकार की बीमारी न हुई हो तो पुराने बिछावन को पुनः व्यवहार में लाया जा सकता है। ऐसे बिछावन पर नये समूह को रखने से पहले कुक्कुट आवास की दीवारें, छत, खिड़की, पर्दा इत्यादि को अच्छी तरह साफा-सुथरा कर लेना चाहिए। बिछावन को अच्छी तरह चलाकर (रेकिंग कर) उसमें उपरिथित सभी पंख तथा अन्य कूड़ा आदि निकाल देना चाहिए। अगर पुराने बिछावन की मोटाई कम हो तो नया बिछावन डालकर उसे पूरा कर लेना चाहिए। इस बात पर पूरा ध्यान रखना चाहिए कि पुराने बिछावन से अमोनिया की गंध न आती हो तथा हवा का आवागमन अच्छा हो।
5. ब्रायलर 6 या 8 सप्ताह में जब निश्चित भार के हो जायें तो जल्दी से जल्दी बेच देना चाहिए। क्योंकि उसके बाद वे ज्यादा दाना खाकर कम बढ़ते हैं। उनको अधिक दिन तक फार्म पर रखना लाभ की जगह नुकसानदायक होता है।

70. कड़कनाथ कुक्कुट पालन

चिकन खाने के बहुत नफे नुकसान के बारे में आपने सुना—पढ़ा होगा लेकिन कड़कनाथ चिकन की एक ऐसी प्रजाति है जिसका गोश्त खाने से काफी हद तक पोषक तत्वों की पूर्ति हो जाती है। औषधीय गुण, कम वसा और हमेशा याद रहने वाला लजीज स्वाद के लिए कड़कनाथ से बेहतर और कुछ नहीं हो सकता है। इसलिए ठण्ड के दिनों में इसकी माँग बढ़ जाती है। मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्र झाबुआ और धार जिले में यह काफी लोकप्रिय मुर्गा हो जाता है। यह मुर्गा देश के कई हिस्सों जैसे तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और गुजरात के कुछ हिस्सों में मिलता है। कड़कनाथ उत्तर प्रदेश के कुछ जनपदों में चूजों का पालन किया जा रहा है।

कड़कनाथ की विशेषता :

स्थानीय भाषा में कड़कनाथ को कालामासी भी कहते हैं। क्योंकि इसका मांस, चोंच, जुबान, टांग, चमड़ी आदि सब कुछ काला होता है। इसलिए इसे बी.एम.सी. (ब्लैक मीट चिकन) भी कहा जाता है। शोध के अनुसार सफेद चिकन के मुकाबले इसमें कोलेस्ट्रॉल का स्तर काफी कम होता है तो वहीं अमीनो एसिड का स्तर ज्यादा होता है। इसका स्वाद भी बाँयलर और देशी मुर्गे से अलग होता है। इसमें आयरन की मात्रा काफी अधिक होती है। यह प्रोटीनयुक्त होता है और इसमें वसा नाम मात्र होती है। कड़कनाथ दिल और डायबिटीज रोगियों के लिए बेहतरीन दवा है। इसके अतिरिक्त कड़कनाथ को सेक्स वर्धक भी माना जाता है। इसके सेवन से शरीर को विटामिन बी1, बी2, बी6, बी12, विटामिन सी, अमीनो एसिड, केलिशयम और फास्फोरस भरपूर मात्रा में मिलता है तथा इसका मांस खाने से आँखों की रोशनी भी बढ़ती है। काला मुर्गा आसानी से उपलब्ध नहीं होता है और देश के कुछ हिस्सों में ही पाया जाता है। इस मुर्गे का बिजनेस कैसे किया जाय तथा इनकी खूबियाँ निम्नलिखित हैं –

- ◆ यह दुर्लभ मुर्गे की प्रजाति है जो दूसरी मुर्गा प्रजातियों से ज्यादा स्वादिष्ट, पोष्टिक, सेहतमन्द और कई औषधीय गुणों से भरपूर होता है। कालामासी में 25 प्रतिशत जबकि बाकी मुर्गों में 18 से 20 प्रतिशत ही प्रोटीन पाया जाता है।

तुलनात्मक पोष्टिक तत्वों की मात्रा

तत्व	कड़कनाथ प्रजाति में	अन्य मुर्गा प्रजाति में
प्रोटीन	25 से 27 प्रतिशत	18 से 20 प्रतिशत
फैट	0.73 से 1.03 प्रतिशत	13 से 25 प्रतिशत
कोलेस्ट्रेल	184.75 मिग्रा. प्रति 100 मिग्रा.	218.12 मिग्रा. प्रति 100 मिग्रा.
लिनोलिक एसिड	24 प्रतिशत	21 प्रतिशत

कड़कनाथ तीन प्रकार के होते हैं :

कड़कनाथ मुर्गे की प्रजाति तीन प्रकार की होती है – पहला जेट ब्लैक – इसके पंख पूरी तरह से काले होते हैं। दूसरा पेन्सिल – इस मुर्गे का आकार पेंसिल की तरह होता है। पेंसिल शेड मुर्गे के पंख पर नजर आता है। जबकि तीसरी प्रजाति गोल्डन कड़कनाथ होती है। इस मुर्गे के पंख पर गोल्ड छींटे दिखाई देते हैं।

कैसे करें कड़कनाथ मुर्गे का बिजनेस :

इस मुर्गे के बिजनेस के लिए कुछ खास बातों पर ध्यान देना जरूरी है यदि 100 चिकन से व्यवसाय शुरू करना है तो 150 फीट जगह की जरूरत होती है। यदि 1000 कड़कनाथ मुर्गे रखने हैं तो 1500 वर्गफीट जगह की आवश्यकता होगी। मुर्गे का फार्म गाँव या शहर से बाहर मेन रोड से दूर हो तथा पानी, बिजली की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए। फार्म ऊँचाई पर हो जहाँ जल का जमाव न होता हो।

कड़कनाथ चिकन का संक्षिप्त विवरण –

अण्डे का वजन	: 45–50 ग्राम
फीड आवश्यकता	: पूरे जीवन चक्र में 50 किग्रा.
नर कड़कनाथ चिकन का वजन	: 2.3 से 2.6 किग्रा.
मादा कड़कनाथ चिकन का वजन	: 1.5 से 1.7 किग्रा.
कड़कनाथ चिकन के बच्चों का वजन	: 25 – 30 ग्राम
मांस का रंग	: काला
कड़कनाथ अण्डे का रंग	: भूरा
मांस की कीमत	: 800 रुपये
अण्डे का दाम	: 40 से 50 रुपये



कड़कनाथ के पालने में किन बातों का रखें ध्यान –

चूजों और मुर्गियों को अंधेरे में या रात में खाना नहीं देना चाहिए। मुर्गी के शेड में प्रतिदिन कुछ घण्टे प्रकाश की आवश्यकता होती है। दो पोल्ट्री फार्म एक दूसरे के करीब नहीं होने चाहिए तथा दो शेड के बीच में करीब 50 फीट की दूरी होनी चाहिए। एक शेड में हमेशा एक ही प्रजाति के चूजे रखने चाहिए। पानी पीने के बर्तन प्रतिदिन लाल दवा से साफ करना चाहिए। फार्म हवा का आवागमन एवं रोशनी पर्याप्त मात्रा में पहुँचनी चाहिए।

कहाँ से प्राप्त कर सकते हैं?

कड़कनाथ मुर्ग का पोल्ट्री फार्म खोलने के लिए आपको इण्डिया मार्ट पर मौजूद विक्रेताओं से सम्पर्क स्थापित कर ये मुर्ग प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा इन्टरनेट पर भी कई ऐसे पोल्ट्री फार्म मिल जायेंगे जो काले मुर्ग के चूजे और अण्डे बेचते हैं अधिक जानकारी के लिए कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटावा, आजमगढ़ से सम्पर्क करें जहाँ पर कालामसी मुर्ग का पालन चल रहा है।

कैसे तैयार करें चारा :

बैकयार्ड कुकुरुट जयादातर चरने पर ही निर्भर रहते हैं परन्तु मौसम खराब होने पर या रात्रि के समय इन्हें राशन देना जरूरी होता है। इसके लिए मार्बल के छोटे-छोटे टुकड़े 98.0 प्रतिशत को पानी में भिगोकर तथा मिनरल मिक्वर 2.0 प्रतिशत की परत चढ़ा देते हैं। मिक्वर को एक घण्टे धुप में सुखाकर 300 ग्राम प्रति मुर्गी के दर से खिलाना चाहिए।

ठण्डी तासीर वाली ग्रेवी में पकाया जाता है—

कड़कनाथ मुर्ग की तासीर गर्म होती है, इसलिए इसे ऐसी ग्रेवी के साथ पकाया जाता है जिसकी तासीर ठण्डी हो। इसमें मुर्ग को पहले उबाला जाता है और ग्रेवी को अलग से बनाया जाता है। इसमें धी, हींग, जीरा, मेथी, अजवाइन साथ ही धनिया पावडार डाला जाता है। इसके बाद दोनों को मिलाकर मुर्ग को पकाया जाता है। यह पकने में आम मुर्ग से ज्यादा वक्त लेता है। हालांकि इसका मांस काफी नर्म होता है। अच्छी तरह पहने के बाद इसका मांस आसानी से चबाया जा सकता है।

रोस्टेड तरीके से भी बना सकते हैं—

कड़कनाथ मुर्ग के चिकन को रोस्टेड तरीके से भी बनाया जा सकता है। इस विधि में चिकन मांस के टुकड़े को गर्म मसालों में मिलाकर एक नर्म कपड़े से लपेटा जाता है तथा आटे से अच्छी तरह लपेटकर कवर किया जाता है। तत्पश्चात् इसे आंच पर या अंगारों पर रखकर भूना जाता है। 15 से 20 मिनट तक भूनने के बाद आटे और कपड़े की परत हटाकर खाया जाता है।

71. व्यावसायिक बटेर पालन

जापानी बटेर पालन मुर्गी पालन क्षेत्र में व्यावसायिक रूप में लाभदायक अण्डे और मांस उत्पादन की उत्तम क्षमता के कारण एक विकल्प के रूप में उभरा है। जापानी बटेर कोटरनिक्स जापोनिका जाति से सम्बन्धित है, जिसे सर्वप्रथम 1595 में पालतू पाला गया तथा हमारे देश में पहली बार वर्ष 1974 में कुक्कुट अनुसंधान विभाग, इज्जतनगर (वर्तमान में केन्द्रीय पक्षी अनुसंधार संस्थान), बरेली द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा संयुक्त राष्ट्र विकास परियोजना के संयुक्त तत्वावधान में कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय, यू.एस.ए., जर्मनी एवं कोरिया से लाया गया। केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान द्वारा किये गये अनुसंधान के फलस्वरूप हमारे देश के लिए कैरी उत्तम, कैरी उज्जवल, कैरी ब्राउन, कैरी श्वेता और कैरी पर्ल बटेर की प्रजातियां विकसित की गई हैं। पालतू जाति के जापानी बटेर को हमारे देश में लाया जाना किसानों के लिए स्वरोजगार के तौर पर काफी महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। सह आहार में मांस एवं अण्डे के रूप में प्रयोग किये जाने के अतिरिक्त अपने अन्य विशेष गुणों के कारण भी व्यावसायिक तौर पर लाभदायक हैं।



- बटेर पालन के लिए मुर्गी पालन की अपेक्षा कम स्थान की आवश्यकता होती है। छोटे आकार के कारण (व्यावसायिक शरीर भार 200–250 ग्राम) इसका संचालन आसान होता है, साथ ही दाने की खपत भी कम होती है। एक मुर्गी पालने के लिए निर्धारित स्थान में 5–6 बटेर रखे जा सकते हैं।
- बटेर की शारीरिक बढ़वार तीव्र होती है तथा ये 5 सप्ताह में खाने योग्य हो जाते हैं तथा मादा बटेर 41 से 45 दिन की आयु से ही अण्डा देना आरम्भ कर देती है और 60वें दिन तक पूर्ण उत्पादन की अवस्था में आ जाती है। एक वर्ष में बटेर औसतन 280–300 अण्डे देती है।
- बटेर से एक वर्ष उसकी 5–6 पीढ़ियों प्राप्त की जा सकती हैं।
- बटेर के अण्डे और मांस में अमीनो अम्ल, विटामिन, वसा और, खनिज लवण भी संतुलित मात्रा में होते हैं। बटेर के अण्डे का वजन 9–14 ग्राम के लगभग होता है। अण्डे का रंग चित्तीदार (बहरंगी एवं सफेद) होता है लेकिन सफेद रंग के भी अण्डे पाये जाते हैं। बटेर के अण्डे गुणवत्ता में मुर्गी के अण्डे से कम नहीं होता है।

जापानी बटेर के अण्डे की गुणवत्ता / संगठन :

पानी	प्रोटीन	वसा	कार्बोहाइड्रेट	ऊर्जामान
24 प्रतिशत	13 प्रतिशत	11 प्रतिशत	1 प्रतिशत	649 मि.जू./ 100 ग्राम तरल

बटेर से प्राप्त मांस में 20.54 प्रतिशत प्रोटीन 3.85 प्रतिशत वसा लवण, 0.50 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट तथा 1.12 प्रतिशत खनिज लवण पाये जाते हैं। इसके साथ ही साथ बटेर के अण्डों में कोलेस्ट्रोल की मात्रा सबसे कम 18.08 मि.ग्रा./ग्राम योक में पायी जाती है जबकि यही कोलेस्ट्रोल असील में (22.19), कडकनाथ (22.01), आईआर-3 ब्रायलर (20.87), आईएलआई-80 (19.32) और गिनी फाउल में 18.77 मि.ग्रा. प्रति मांस में पाया जाता है।

- मुर्गियों की अपेक्षा बटेरों में रोग कम लगते हैं। इसी कारण इनको किसी प्रकार का टीका नहीं लगाया जाता है क्योंकि अभी तक इनमें कोई विशेष बीमारी सामने नहीं आई है।

अपने कम वजन, कम जगह की आवश्यकता, शीघ्र वयस्कता की प्राप्ति, अधिक अण्डा एवं मांस उत्पादन की क्षमता के कारण बटेर पालन जापान, सिंगापुर, हांगकांग, फ्रांस, इंग्लैण्ड, इटली आदि देशों के लिए बटेर पशु प्रोटीन का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन सकता है, अतः आवश्यकता इसके वैज्ञानिक ढंग से पालन की है।

बटेर प्रजनन :

बटेर पालन अधिक लाभप्रद बनाने के लिए इनकी उचित प्रजनन व्यवस्था अपनाना आवश्यक है। उचित समय पर प्रजनन न होने से उत्पादन क्षमता में कमी आती है तथा बटेर की उत्पादकता उम्र भी कम हो जाती है। बटेर प्रजनन

व्यवस्था के अन्तर्गत मुख्य रूप से बटेर का चयन एवं उपयुक्त प्रजनन विधि का अपनाना है। बटेरों में चयन सामान्यता सामूहिक वरण या फिर वैयक्तिक वरण विधि द्वारा किया जाता है। इसमें बटेर का चयन उसके उत्पादन (लक्षण—प्रारूप) के आधार पर किया जाता है। यह सर्वोत्तम विधि है एवं अनेक परिस्थितियों में सर्वाधिक तीव्र परिणाम देने वाली होती है। इसके लिए बटेर की व्यक्तिगत पहचान आवश्यक है। बटेर की व्यक्तिगत पहचान के लिए उनके पंखों में विशेष रूप से तैयार धातु की जलकी और पतली विंग बैंड लगायी जा सकती है। यह नवस्फुटिट चूजे के किसी एक पंख की डिल्ली पर लगायी जाती है जिस पर पहले से ही नम्बर लिखे होते हैं।

नर मादा अनुपात :

बटेर से निषेचित अण्डे प्राप्त करने के लिए नर और मादा का अनुपात 1:1 अथवा 1:2 होना चाहिए। यदि बटेरों को समूह में रखना हो तो केवल एक नर पर्याप्त होता है।

निषेचित अण्डे प्राप्त करने के लिए 10 से 24 सप्ताह की आयु की बटेर उत्तम है। समूह में समागम कराये जाने की स्थिति में नर को हटाने के बाद भी मादा की निषेचित अण्डा देने की क्षमता 7–10 दिन रहती है लेकिन उत्तम निषेचित अण्डे प्राप्त करने के लिए नर हटाने के बाद केवल 3 दिन तक ही अण्डा एकत्र करना चाहिए।

चूजों एवं वयस्क बटेरों की देखभाल :

बटेर के चूजों के पालने के लिए अच्छा ब्रूडर गृह तथा तापक्रम नियमित रखने की आवश्यकता होती है। शुरुआत में बटेर के चूजों को प्रथम दो सप्ताह बहुत ही नाजुक दौर से गुजरना पड़ता है क्योंकि एक दिन के चूजे का शारीरिक भार 6 से 7 ग्राम का होता है। यह चूजे स्ट्रेस के प्रति बहुत ग्राही होते हैं। शुरू के दो सप्ताह बटेरों की उचित तापमान व खान-पान अच्छा न होने पर मृत्युदर बढ़ सकती है। साथ ही साथ बढ़वार भी अच्छी नहीं होती है। बटेर में 0–3 सप्ताह ब्रूडिंग अवस्था, 4–5 सप्ताह बढ़वार अवस्था और 5 सप्ताह के बाद वयस्क अवस्था होती है।

चूजों के आने से पहले निम्न बातों का ध्यान रखें :

1. चूजों के आने के 10 दिन पहले ब्रूडर गृह, दाना पानी के बर्तन व बिछावन या बैटरी ब्रूडर गृह को जीवाणु रहित कर लेना चाहिए।
2. चूजों के आने के 24 घण्टे पहले दाना व पानी के बर्तनों की व्यवस्था ब्रूडर गृह में कर लेनी चाहिए।
3. सस्ता तथा स्थानीय उपलब्ध बिछावन, जो फफूंदी या विष रहित, धूल रहित तथा छोटे-छोटे टुकड़ों में हों, उपयोग में लायें।
4. बिछावन या बैटरी ब्रूडर पिंजड़ों में कार्लगेटेड पेपर बिछाना चाहिए। इसमें चूजों के पैर नहीं फैलते हैं साथ ही साथ धूमना—फिरना सुगमतापूर्वक रहता है। कार्लगेटेड पेपर को छठे दिन हटा देना चाहिए।
5. दाना व पानी के बर्तनों को क्रमबद्ध तरीके से रखें।
6. चिक गार्ड को होवर से 50 सेमी. दूर रखें।
7. बटेर पालक को कोशिश करनी चाहिए कि चूजों को दिन के सुबह पाली में प्राप्त करें।
8. चूजों को ठण्डे समय में देखना चाहिए कि होकर अच्छी तरह से फैले हुए हैं या नहीं।

प्रकाश व्यवस्था :

ब्रूडर गृह में खिड़कियां व रोशनदान होना अति आवश्यक है जिसमें एक समान रोशनी मिल सके। चूजों को शुरू के प्रथम दो सप्ताह 24 घण्टे प्रकाश की व्यवस्था करनी चाहिए। यदि गर्भी पहुँचाने का स्रोत बिजली के अलावा अन्य हो तो 40 वाट / 10 मी. जमीन के एरिया के हिसाब से या 60 वाट एक टायर के बैटरी पिंजड़े में पर्याप्त होता है। यदि चूजों को जल्दी वयस्क करना हो तो 24 घण्टे प्रकाश की व्यवस्था 5 सप्ताह तक करनी चाहिए।

फर्श स्थान :

तेज बढ़वार वाले चूजों के लिए फर्श स्थान की समस्या आती है। बैटरी पिंजड़ों में प्रत्येक चूजे के लिए 80 सेमी. होवर और 80 सेमी. रन स्पेस 1 सप्ताह तक के बटेरों के लिए पर्याप्त होता है।

उचित खान पान :

बटेर के चूजों को पूर्णतया संतुलित आहार देना चाहिए। साथ ही साथ अच्छी बढ़वार के लिए 6–8 प्रतिशत शरीर का घोल चूजों को 3–4 दिनों तक देना चाहिए। चूजों एवं वयस्क बटेरों को संतुलित आहार बनाने के लिए निम्न मिश्रणों को मिलायें—

क्र.सं.	संघटक (भाग / 100 भाग)	बटेर I	स्टार्टर 0–3 सप्ताह II	लेयर या ब्रीडर बटेर हेतु	
				I	II
1.	ब्रायलर कंसन्ट्रेट	—	56.00	—	45.00
2.	मक्का	42.00	20.00	45.00	25.00
3.	चावल कनी	15.00	12.00	10.00	10.00
4.	चावल घूटा	—	—	6.00	—
5.	मूँगफली की खल	15.00	—	12.00	—
6.	गेहूँ का चोकर	—	12.00	—	15.00
7.	सोयाबीन की खल	15.00	—	10.00	—
8.	मछली का चूरा या मांस का चूरा	10.00	—	10.00	—
9.	डाईकैल्शियम फास्फेट	1.5	—	1.5	—
10.	चूना पथर / सीपी का चूरा	1.0	—	5.00	5.0
11.	सादा नमक	0.3	—	0.3	—
12.	विटामिन, खनिज लवण	0.2	—	0.2	—
कुल		100.00	100.00	100.00	100.00

बैटरी ब्रूडिंग :

बैटरी ब्रूडर होवर का परिवर्तित रूप होता है जिसमें 5–7 मंजिलों के पिंजड़ों में चूजों को रखा जाता है। यह $1/2 \times 1/2$ सेमी. वायर मेंश के बने होते हैं। एक बैटरी ब्रूडर 5–6 मंजिलों में बना होता है। यह बैटरी ब्रूडर दो भागों में बंटे होते हैं तथा लम्बाई \times चौड़ाई \times ऊँचाई $\times 180 \times 180 \times 28$ सेमी. होती है। इनमें गर्मी पहुँचाने के लिए विद्युत के 5 प्वाइंट होते हैं, जिनमें आवश्यकतानुसार बल्ब लगा लिए जाते हैं। यह काफी महंगी पद्धति है साथ ही साथ विद्युत की बहुत ज्यादा खपत होती है। उदाहरण के लिए एक बैटरी ब्रूडर 5 मंजिल में बना होता है। 5 विद्युत प्वाइंट प्रति एक खाना को मिलाकर ($5 \times 5 = 25$) प्वाइंट हो गये तथा 100 वाट के 25 बल्ब लगेंगे जबकि गहन बिछाली पद्धति के लिए एक 60 वाट का बल्ब 10–20 वर्ग फुट के लिए पर्याप्त होता है।

सामूहिक पिंजड़ा पद्धति :

वयस्क बटेरों को पालने के लिए पिंजड़ा बैटरी केजिज में रखते हैं। यह उद्देश्य पर निर्भर करता है कि किस प्रकार के केजिज पर रखा जाये जैसे कि एकल पिंजड़े में एक नर व मादा रखते हैं लेकिन इस पद्धति में खर्चा ज्यादा है। इसलिए सामूहिक पिंजड़ा में रखना ज्यादा उचित होता है। व्यावसायिक दृष्टि से एक सामूहिक पिंजड़ा में 150 बटेर रख सकते हैं। एक सामूहिक पिंजड़ा 5–6 मंजिलों में बना सकते हैं तथा लम्बाई \times चौड़ाई \times ऊँचाई $\times 120 \times 60 \times 25$ सेमी. रखते हैं जिससे दैनिक कार्यों को आसानी से किया जा सके। प्रति पक्षी 200–250 वर्ग सेमी. जगह पर्याप्त होती है। फिर जिस तरह के पक्षी हो ऐसी तरह की व्यवस्था करनी चाहिए। 12.5 से.मी., 3.0 लिनियर सेमी. प्रति पक्षी दाना और पानी स्थान देना चाहिए।

लिंग—भेद

बटेरों में लिंग की पहचान भी मुर्गी के चूजों की तरह एक दिन की आयु पर की जा सकती है परन्तु 3 सप्ताह की आयु पर पंखों के रंग से ही नर जिसमें गर्दन के नीचे के पंख लाल, भूरे, घूसर रंग तथा मादा की गर्दन के नीचे के पंख हल्के सुरमझे रंग के होते हैं जिनपर काले रंग के धब्बे होते हैं, देखकर पृथक किये जा सकते हैं। युवा नर बटेरों की गुदा के ऊपरी किनारे पर गोलाकार ग्रन्थि (क्लोयकल ग्लैड) होती है जोकि लीकिन चुस्त नरों में ही पायी जाती है तथा युवा नर एक प्रकार का साबुन के झाग के समान का फोम निकालते हैं। नर बटेरों की अपेक्षा मादा बटेरों का शारीरिक भार 15–20 प्रतिशत ज्यादा होता है।

लेयिंग नेस्ट :

लेयिंग नेस्ट एक पक्षी व सामूहिक पक्षियों के लिए पिंजड़े बाक्स टाइप के बनाये जा सकते हैं। यदि एक लेयिंग नेस्ट बनाना है तो उसका साईज $15 \times 20 \times 20$ सेमी। जबकि सामूहिक नेस्ट बॉक्स प्रति एक की लम्बाई पाँच छेदों के साथ 20 सेमी। गहरा, 20 सेमी। ऊँचाई व 15 सेमी। चौड़ाई प्रति पक्षी के प्रवेश हेतु चाहिए। लेयिंग नेस्ट के पिछले हिस्से में जाली का भी प्रयोग किया जा सकता है। लेयिंग, नेस्ट घर में बटेर प्रवेश करने के पहले उपलब्ध होना चाहिए। एक लेयिंग नेस्ट 5–6 बटेरों को पर्याप्त होता है जबकि एक सामूहिक लेयिंग नेस्ट 30–35 बटेरों के लिए पर्याप्त है। लेयिंग नेस्ट लकड़ी मिट्टी व मोल्डिंग इस्पात से भी बनाये जा सकते हैं।

प्रकाश व्यवस्था :

वयस्क बटेरों या अण्डा देने वाली बटेरों के लिए 16 घण्टे का प्रकाश तथा 8 घण्टे का अंधेरा ही ठीक रहता है। बटेरों को मोटा करने के लिए बाजार भेजने से 7–10 दिन पूर्व से 8 घण्टे रोशनी और 16 घण्टा अंधेरे में रखना चाहिए।

अण्डा उत्पादन :

मुर्गियों से 75 प्रतिशत अण्डा उत्पादन सुबह के समय होता है जबकि बटेर अपने दैनिक अण्डा उत्पादन का 70 प्रतिशत अपराह्न 3–6 के मध्य देती है तथा शेष 20 प्रतिशत अंधेरे में देती है। अण्डों को टूटने से बचाने के लिए दिन में कम से कम 3 बार इकट्ठा करना चाहिए।

पकड़ने में सावधानी बरतें :

साधारणतया अण्डा देने वाली बटेरों को छेड़े नहीं जब तक कि इसकी आवश्यकता न हो। रोज—रोज पकड़ने तथा डिस्टर्ब करने से अण्डा देने की शुरूआत देर से होती है साथ ही साथ अण्डा उत्पादन गिर जाता है, मृत्युदर बढ़ जाती है।

भोजन पानी की व्यवस्था :

पूर्णतया संतुलित आहार प्रचुर मात्रा में उपलब्ध करायें। प्रचुर मात्रा में साफ सुधरा पीने योग्य जल उपलब्ध करायें क्योंकि जल बहुत आवश्यक अवयव है। सभी प्रकार के तत्वों को उपलब्ध करवाने में संतुलित आहार बनाने की विधि सारणी में देखें।

उत्तम उर्वरक क्षमता के लिए :

बच्चे निकालने वाले अण्डे के उत्पादन के लिए नर तथा मादा 10–28 सप्ताह की आयु के बीच होने चाहिए। एक नर बटेर तीन या इससे कम मादाओं से मिलाना चाहिए। अण्डे नर तथा मादाओं के मिलाने के कम से कम चार दिन पश्चात् से बचाने या इकट्ठे करने चाहिए और नर अलग कर लेने के पश्चात् तीन दिन तक बचाये जा सकते हैं। पक्षियों को प्रजनन राशन देना चाहिए जोकि पूर्णतया संतुलित हो। बटेरों की चौंच तथा पैर के नाखून थोड़ा काट देना चाहिए ताकि एक दूसरे को जख्मी न कर पायें।

टीकाकरण :

बटेरों में अभी तक किसी भी प्रकार का टीका नहीं लगाना पड़ रहा है। क्योंकि बटेर काफी रोग प्रतिरोधका रखती है जबकि मुर्गियों में ऐसा कम पाया जाता है। कुछ हद तक एन्टीबायोटिक्स तथा एन्टीस्ट्रेस घोल देते हैं। अधिक बढ़वार के लिए 5 प्रतिशत केसीन (दूध को फाड़कर उसका सफेद भाग) सूखा करके बटेर के दाने में मिलाने से मृत्युदर कम होती है, साथ ही साथ बढ़वार भी बहुत अच्छी होती है।

अन्य प्रबन्ध :

बटेरों के लिए ज्यादा गर्मी और ज्यादा सर्दी दोनों ही मौसम हानिकारक होते हैं, क्योंकि अण्डा उत्पादन कम हो जाता है। इसलिए उचित तापमान देना चाहिए जोकि 55° – 75° फारेनहाइट (13° – 24° सेन्टीग्रेड) के आस-पास होना चाहिए। साधारणतया बटेरों में किसी भी उम्र पर टीके नहीं लगाये जाते। अधिक अण्डा उत्पादन हेतु पशु चिकित्सक या मुर्गी विशेषज्ञ की संस्तुति के आधार पर विटामिन मिक्सचर जैसे मिराल, फैमीटोन, कैल्डीसोल इत्यादि देना चाहिए।

अण्डा उत्पादन के लिए बटेर पालन :

बटेर के छूजे खरीदते समय निम्नलिखित महत्वपूर्ण बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए –

1. कम से कम तीन दिवसीय छूजों को ही खरीदें। इससे मृत्युदर कम होगी।
2. बटेर के छूजे हमेशा मिश्रित लिंग (नर तथा मादा) के ही बेचे जाते हैं।
3. यदि ब्रूडिंग सुविधा उपलब्ध नहीं है तो वयस्क मादा बटेर (कम से कम 4 सप्ताह की आयु के) खरीदें।
4. विजातीय छूजों को बटेर के छूजों के साथ अधिक देर तक बिना दाना पानी के नहीं ले जाना चाहिए।

लगभग 4 सप्ताह की आयु पर बटेर को देखकर दोनों लिंगों की पहचान निम्न प्रकार से की जा सकती है –

नर : नर बटेर की पहचान उसके गले के ऊपरी भाग तथा सीने के निचले भाग पर चॉकलेटी भूरे रंग के पृच्छ को देखकर आसानी से की जा सकती है।

मादा : मादा बटेर भी रंग में नर के समान होती है किन्तु उनके गले छाती के ऊपरी भाग पर पृच्छ लम्बे बिन्दूदार तथा बहुत ही हल्के रंग के होते हैं। इनकी छाती पर पृच्छ काले धारीदार होते हैं।

सेना (ब्रूडिंग) : बटेर के छूजों को विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक ब्रूडरों अथवा बॉक्सों में सफलतापूर्वक सेया (ब्रूड किया) जा सकता है।

परिमाप : मादा बटेरों की संख्या के आधार पर इसे तैयार किया जा सकता है। 2.0 मी. लम्बे, 2.0 मीटर चौड़े तथा 0.5 ऊँचाई के एक ब्रूडर बॉक्स में 1 दिन से 3 सप्ताह के अधिकतम 200 मिश्रित लिंग के छूजों को सेचा (ब्रूड किया) जा सकता है।

उपकरण :

0–2 सप्ताह के छूजों के लिए 6×1.5 लीटर आकार के पानी के उथले बर्तन उपलब्ध कराना चाहिए। पानी पीने के बर्तन में छूजों के झूबकर मरने से बचाने के लिए बर्तन की तली में रंगीन कांच के संगमरमर भर देना चाहिए, जिसे देखकर छूजे पानी पीने के लिए आकर्षित हों। 2 सप्ताह बाद 4×3 लीटर आकार के बिना संगमरमर भरे हुए ड्रिंकिंग उपलब्ध कराना चाहिए। दाना देने के लिए कुछ दिनों तक पेपर की प्लेट अथवा गत्ते का प्रयोग करना चाहिए बाद में दाने के खराब होने से बचाने के लिए ऊपरी सिरे पर बेलनाकार मुर्गी के लम्बे कलईदार (5 सेमी. \times 5 सेमी. दाने के बर्तन (फीडर) का प्रयोग करें। फर्श को खुरदरे सतह वाले कागज से ढकें तथा उस पर लकड़ी का बुरादा फैलायें। छूजों को पहुँचने से पहले प्रचालन उपकरण तैयार रखें। प्रतिदिन साफ पानी तथा दाना दें। छूजों को अच्छे ढंग से उठाएं तथा परेशानी से बचाएं। यह बहुत जल्द डर जाते हैं।

छूजों को कम से कम 35° सेन्टीग्रेड (95° फारेनहाइट) तापमान पर पालन प्रारम्भ करें और प्रत्येक सप्ताह लगभग 3° सेन्टीग्रेड (5° फारेनहाइट) तापमान कम और उसके बाद 5 सप्ताह तक 60 वाट के दो बल्ब जलायें और उसके बाद अपेक्षित तापमान के लिए 40 वाट के दो बल्ब पर्याप्त होंगे। तापमान 35° सेन्टीग्रेड से अधिक नहीं होना चाहिए। ऊपर के ढक्कन अथवा दरवाजों को टाट की बोरियों से ढकें, इससे तापमान को नियंत्रित तथा नियमन करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

प्रकाश : पहले दो सप्ताह तक छूजों को 24 घण्टे प्रकाश में सेएं (ब्रेड करें) और उसके बाद प्रतिदिन 12 घण्टे तक प्रकाश में सेएं। यदि पहले ही परिपक्वता चाहते हैं तो छूजों को 6 सप्ताह तक 24 घण्टे प्रकाश में सेएं। कालोनी अथवा बैटरी

पिंजरों में से 4 सप्ताह पर मादाओं को अलग करें तथा ब्रूडर बॉक्स में नर बटेरों को रहने दें और सप्ताह बाद मांस के लिए उन्हें बेच दें।

आहार : बटेर स्टार्टर मैश (25 प्रतिशत कच्चा प्रोटीन तथा 2900 उपा. ऊ. कि. कैलोरी / किग्रा.) 0–3 सप्ताह। बटेर लेयर मैश (20 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन तथा 2600 उपा. ऊ. कि. कैलोरी / किग्रा.) चौथे सप्ताह से।

वयस्क बटेर के लिए आवास

बटेर शेड : बटेर लेयरों को बैटरी पिंजरों अथवा तार से बने फर्श वाले कालोनी पिंजरों से आसानी से पाला जा सकता है। मुर्गियों के लिए डिजाइन किये गये पिंजरा घर बटेर लेयरों के लिए उपर्युक्त होते हैं। लेकिन कुक्कुट पालक को ध्यान देना होगा कि वायरमेश का साइज $1/2 \times 1/2$ सेमी. एस.डब्लू.जी. में होना चाहिए। बटेरों को सूर्य की सीधी रोशनी तथा सामने की सीधी हवा से अधिक बचाइए। मुर्गियों की अपेक्षा बटेर अधिक गर्म वातावरण सहन कर सकते हैं बशर्ते कि उपर्युक्त वायु संचार की सुविधा उपलब्ध हो।

अण्डा उत्पादन :

- आशाजनक अण्डा उत्पादन के लिए बटेरों को प्रतिदिन 17 घण्टे प्रकाश की आवश्यक होती है। सूर्यस्त के बाद कम से कम 4 घण्टे तक विद्युत प्रकाश अथवा लैम्प जलाना चाहिए।
- सामान्यता बटेर 42 दिन की आयु के बाद अण्डा देना प्रारम्भ करती है।
- बटेर अपराह्न 4.00 से 5.00 बजे के बीच सभी अण्डों का लगभग 75 प्रतिशत अण्डा देती है और शेष अण्डे अंधेरे में देती है (मुर्गी अपने 75 प्रतिशत अण्डे प्रातःकाल में देती है)।
- बटेर अपने सर्वोच्च उत्पादन पर 93 प्रतिशत तक अण्डे दे सकती है तथा 16 माह की आयु तक 60 प्रतिशत अण्डा देती है। बटेर को अण्डा उत्पादन के लिए 18 माह से अधिक करखना मितव्ययी नहीं होता है। 300 पैरेन्ट बटेर (कार्टनिक्स जापानिका) एवं व्यावसायिक बटेर पालन का कार्यक्रम।

आहार (दाना) तथा आहार देना : 0–6 सप्ताह की आयु के बटेरों को पूरा आहार (दाना) दें। उसके बाद, लेयर मैश को 25 ग्रा./बटेर/दिन से अधिक नहीं खिलाना चाहिए। बटेर स्टार्टर तथा लेयर मैश को निम्नलिखित संस्तुत आहार अवयवों को शामिल कर तैयार किया जा सकता है।

संघटक (भाग / 100 भाग)	बटेर स्टार्टर मैश (प्रतिशत)	बटेर लेयर मैश (प्रतिशत)
मक्का	55.00	44.00
टूटे चावल	—	10.00
फिश मील	10.25	70.00
सोयाबीन मील	33.00	26.00
हड्डी का चूरा	0.75	1.00
गेहूँ का चोकर	—	4.00
घास	—	3.00
चूने का पत्थर के टुकड़े	—	2.50
ओइस्टर सेल के टुकड़े	—	2.00
प्रीमिक्स	0.50	0.50
योग :	100.00	100.00
कच्चा प्रोटीन	24.5 प्रतिशत	20.5 प्रतिशत
उपाऊ. / कि.कै. / कि.ग्रा.	2927	2697

बटेर और मुर्गी का तुलनात्मक विवरण - एक झलक

	बटेर	मुर्गी
प्रथम अण्डा उत्पादन की आयु	42 दिन	130 दिन
अण्डे का आकार (ओसत)	12 ग्राम	56 ग्राम
आहार से अण्डे में अन्तरण अनुपात (पक्षी के भार, नस्ल तथा अण्डा उत्पादन के आधार पर)	1.9—2.9	2.7—5.0
अण्डे में प्रोटीन की मात्रा	11.5 प्रतिशत	12.8 प्रतिशत
वार्षिक अण्डा उत्पादन	200—300	200—300
अण्डा उत्पादन के लिए अपेक्षित प्रकाश की मात्रा	14—18 घण्टे	14—10 घण्टे
आहार में प्रोटीन की मात्रा : स्टार्टर	25—28 प्रतिशत	19—21 प्रतिशत
लेयर	21—25 प्रतिशत	15—19 प्रतिशत
हैचिंग दिन	18	21
मांस में प्रोटीन की मात्रा	20—25 प्रतिशत	22 प्रतिशत

जापानीज बटेर (पालतू) एवं भारतीय (जंगली बटेर) देशी बटेरों में अन्तर

पालतू बटेर	जंगली बटेर
1. पंखों के आधार पर सफेद, लाल, काली (फरोह) एवं काली सफेद पंखों में पाई जाती है।	1. जंगली बटेरों में सिर्फ एक ही रंग काला (फरोह) पाया जाता है।
2. पाँच सप्ताह में शारीरिक भार 200—300 ग्राम तक होता है।	2. जंगली बटेर के सम्पूर्ण जीवनकाल में 40—50 ग्राम से ज्यादा वजन नहीं होता है।
3. पालतू बटेर वर्ष भर में 280—305 अण्डे तक देती है।	3. ये मौसमी अण्डे देती हैं तथा वर्ष में 40—50 अण्डे देती हैं।
4. पालतू बटेरों में अण्डा बहुरंगीय एवं सफेद नीला रंगों में पाया जाता है।	4. जंगली बटेरों में सिर्फ बहुरंगीय अण्डा पाया जाता है।
5. पालतू बटेर बहुत ही शीघ्र वंशावली को बढ़ाती हैं।	5. बटेर साल में एक बार ही वंशावली को बढ़ाती है।
6. मांस का भार चार गुना से ज्यादा पाया जाता है।	6. ड्रेस करने के बाद चौथाई भाग मॉस की मात्रा पाई जाती है।
7. पालतू बटेर विदेशी/जापानीय उत्पत्ति की है।	7. जंगली बटेर भारत एवं एशिया महाद्वीप की उत्पत्ति है।
8. सघन बिछाली पद्धति में रखा जा सकता है।	8. नहीं रखा जा सकता है।
9. हैचरी से व्यावसायिक स्तर पर बच्चे निकाले जा सकते हैं।	9. इनमें प्राकृतिक (पक्षी द्वारा) विधि द्वारा बच्चा मिलता है।

72. सूकर पालन : एक लाभकारी व्यवसाय

सूकर पालन व्यवसाय कम समय में अधिक आय अर्जित करने वाला व्यवसाय है। पूर्व में देशी नस्ल के सूकर/सूकरियों पाली जाती थी, परन्तु क्रास ब्रीडिंग द्वारा इनकी नस्ल में पर्याप्त सुधार हुआ तथा आज देशी नस्ल की जगह क्रास ब्रीड़ प्रजाति के सूकरों द्वारा ले ली गई है। लार्ज व्हाइट यार्कशायर/मिडिल व्हाइट यार्कशायर अच्छी नस्ल का सूकर ही एक ऐसा जीव है, जो मात्र 5–6 माह की आयु में 70–80 किग्रा. शारीरिक भार के अच्छी सुपोषण, प्रबंधन की प्रक्रिया फलस्वरूप हो जाते हैं। यह पौष्टिक आहार तथा कृषि अन्य जैव उत्पाद का उपयोग कर अति पौष्टिक प्रोटीन युक्त मास में परिवर्तन कर देता है। इसके मांस के उत्पादन में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है। इसके मांस की मांग में तीव्र गति से वृद्धि हो रही है तथा निर्यात की मांग में भी वृद्धि हो रही है। यह विदेशी मुद्रा अर्जन में भी सहायक है।

1. इस व्यवसाय को करने हेतु निम्न बिन्दुओं पर ध्यान आवश्यक है—

1. सरती आवासीय व्यवस्था।
2. न्यूनतम उत्पादन लागत व्यवस्था।
3. संतुलित पशु आहार।
4. उत्तम नस्लों का चयन पालन हेतु।
5. लाभप्रद बाजारों की जानकारी।
6. प्रभावी रोग नियंत्रण।
7. सुनियोजित प्रदचना।

2. व्यवसाय कैसे प्रारम्भ करें :

अच्छे आवास का निर्माण प्रथम आवश्यकता होती है। ग्रामीण परिवेश में सरस्ते पक्के आवास का निर्माण किया जाता है क्योंकि वाहों पर खुली जगह पर्याप्त रूप में उपलब्ध होती है।

आवास हेतु 7–40 वर्ग फीट प्रति पशु विभिन्न आयु शारीरिक भार अनुरूप आवश्यक होता है, इसके अतिरिक्त जच्चा—बच्चा शेंडे बच्चों के लिए शेड तथा सूकर वादा का निर्माण चरही के साथ किया जाता है। आवास हवादार प्रकाश युक्त तथा सफाई के ध्येय से पक्के फर्श का निर्माण आवश्यक होता है। आवास में ही जल प्रबन्ध की भी उचित व्यवस्था सुनिश्चित की जाती है। 5–20 लीटर प्रति पशु जल की आवश्यकता विभिन्न आयु/शारीरिक भार अनुरूप होती है।

3. उत्तम नस्ल के पशुओं का चयन :

इसमें लार्ज व्हाइट यार्कशायर प्रजाति पशुओं का ही क्य सूकर पालन व्यवसाय हेतु किया जाय। सूकर पालन प्रशिक्षण केन्द्र, अलीगढ़ से 10 दिवसीय प्रशिक्षण प्राप्त अभ्यार्थियों को पुस्तकीय मूल्य पर व मादा सूकर व्यवसाय प्रारम्भ करने हेतु उपलब्ध कराया जाता है।

4. उत्तम आहार व्यवस्था :

चरही का निर्माण सूकर बालों में 10 इंच चौड़ी 20 इंच लम्बी, बड़े पशुओं तथा 12–14 इंच, छोटे पशुओं प्रति पशु के अनुरूप किया जाता है तथा आहार हेतु 250 ग्राम से 2.5 किग्रा. पौष्टिक आहार प्रति पशु विभिन्न आयु/शारीरिक भार हेतु दिया जाता है। दूध देने वाली सूकरियों को 500 ग्राम दाना प्रति पशु/प्रतिदिन 60 दिन तक दिया जाता है। इसके अतिरिक्त इसे हरा पौष्टिक चारा बरसीम, लूसर्न, गोभी के पत्ते तथा हरी सब्जियों का मार्केट बेस्ट आलू तथा रेस्टोरेन्ट नेस्ट

आहार भी खाने में दिया जाता है। बच्चों को 30–60 दिन तक माँ के दूध का सेवन कराया जाता है। तत्पश्चात् इनको माँ से अलग रखा जाता है और शिशु आहार पर रखा जाता है। आहार की मात्रा 50–100 ग्राम प्रति पशु से शुरू कर धीरे-धीरे बढ़ाकर 500 ग्राम प्रति पशु तदोपरान्त 1–15 किग्रा। प्रति पशु वयस्क होने की अवस्था तक दी जाती है। 15 किग्रा। शारीरिक भार तक शिशु आहार तथा 15–45 किग्रा। शारीरिक भार तक बढ़कर राशन पौष्टिक आहार के रूप में दिया जाता है।

5. प्रजनन :

वयस्कता प्राप्त होते ही मादा पशु गर्भ होता है जिसको अर्थ नर पशु के संसर्ग में लाकर गर्भाधान कराया, जाता है। गर्भित पशु का गर्भ काल 114–118 दिनों का होता है। गर्भित मादा पशुओं को अलग रखा जाता है। वैसे 30 दिन के उपरान्त बच्चों की वीनिंग (माँ से अलग) की जाती है, तथा सपरेटा दूध / आहार तथा समुचित देखभाल बच्चा देते समय की जाती है। बच्चों को माँ के दूध का सेवन 30–60 दिनों आयु तक दिया जाता है।

6. रोग नियंत्रण :

संक्रामक रोग जैसे – स्वाइन फीवर गलाघोट, खुरपका, मुंहपका के विरुद्ध प्रतिरक्षात्मक टीकाकरण पशु चिकित्सक द्वारा किया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्तपरजीवियों के विरुद्ध समय–समय पर उपचार कराते रहना चाहिए।



73. बकरी पालन : एक लाभकारी व्यवसाय

प्रदेश में सीमान्त एवं लघु पशुपालकों के लिए बकरी पालन एक सफल व्यवसाय है। इसको आसानी से अपनाया जा सकता है, व्यवसाय में लागत कम है तथा कम स्थान की आवश्यकता होती है। साथ ही उन्नत नस्ल के बकरें/बकरियों की बिक्री कर आर्थिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। बकरी का दूध स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से उत्तम आहार है। इसमें अत्यधिक मात्रा में विटामिन ए, डी, ई पाया जाता है। जिसमें मुख्य रूप से बरबरी, बीटल एवं जमुनापारी बकरियां पाली जा रही हैं।

बकरी पालन से सम्बन्धित कुछ प्रमुख बिन्दु :

- ❖ बकरी पालन हेतु नस्ल का चयन स्थानीय मौसम को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।
- ❖ बकरियों की बरबरी प्रजाति, मांस उत्पादन हेतु उपयुक्त होती है।
- ❖ बरबरी नस्ल की बकरियों को विशेषतः बाँधकर (स्टाल फीड) खिलाकर पालन किया जा सकता है।
- ❖ प्रजनन कार्य हेतु बकरा चयन करते समय उसकी नस्ल की बच्चा देने की क्षमता और दूध देने की क्षमता को विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।
- ❖ 100 बकरियों के बाड़ा बनाने हेतु 20x60 वर्गफुट निर्मित क्षेत्र एवं बाहरी जीवों से बचाव हेतु खुले क्षेत्र की बाउन्ड्री आवश्यक है।
- ❖ बकरी बाड़ा में निर्मित क्षेत्र की दीवार 1 मीटर ऊँची हो तथा उसके ऊपर जाली लगवानी चाहिए। शेड की लम्बी दीवार पूरब—पश्चिम में रखे तो उत्तम होगा।
- ❖ बकरियों का प्रजनन गर्भी में आने के 12 घण्टे बाद करवाना उचित रहता है।
- ❖ बकरियों में इन—बीडिंग को हमेशा बचाना चाहिए। इन—ब्रीडिंग के कारण बच्चों में विकलांगता आ सकती है तथा उनकी वृद्धि दर में भी कमी आ सकती है।
- ❖ जिस बकरें से बकरी का प्रजनन कराया गया है उसी से उसकी संतति (बच्चे) का प्रजनन कदापि न कराये।
- ❖ एक प्रौढ़ बकरी को उसके वजन का 3—5% भूसा देना चाहिए। दलहनी फसलों को भूसा उत्तम होता है।
- ❖ सामान्य अवस्था में एक प्रौढ़ बकरी को 100—200 ग्राम दाना देना आवश्यक होता है तथा गाभिन/दुधारू बकरी को 300—500 ग्राम दाना प्रतिदिन दिया जाना चाहिए। सम्भव हो तो दाना घर पर ही बनायें जिसमें निम्न अवयव हों—
 - ◆ दला हुआ अनाज — 60%
 - ◆ चोकर — 10—15%
 - ◆ खली — 10—15%
 - ◆ मिनिरल मिक्वर — 2%
 - ◆ नमक — 1%
- ❖ बकरियों को उनके वजन के अनुसार 500 ग्राम (1 किग्रा) हरा चारा देना चाहिए।

- ❖ बकरियों में संक्रामक बीमारी से बचाव हेतु समय—समय पर टीकाकरण करवाते रहना चाहिए। जैसे— पी0पी0आर0. इन्टेरोटाक्सिनिया, खुरपका, मुँहपका, गलाधोट्, चेवक आदि।
- ❖ कम से कम 3 माह के उपरान्त ही बकरियों में टीकाकरण करवाना चाहिए।
- ❖ बकरियों में पेट के कीड़े की दवा वर्ष में दो बार प्रति ४ माह पर पिलाना चाहिए तथा पशुचिकित्साधिकारी की उचित सलाह के बाद ही देना चाहिए।
- ❖ बकरियों को वाह्य परजीवी से सुरक्षा हेतु पशुचिकित्साधिकारी से सलाह अनुसार दवा घोलकर स्नान कराना कराना चाहिए।
- ❖ बकरी को व्याने के पश्चात् बच्चे की नाल 2 इंच छोड़कर /धागे से बांधकर उसके नीचे से नई ब्लेड से काटकर उसपर टिंचर आयोडीन लगाना चाहिए।
- ❖ बकरी के बच्चे को पैदा होने के आधे घण्टे के अन्दर माँ का दूध पिलाना चाहिए।
- ❖ बकरी के बच्चे को 6–12 माह की आयु पर बेचना लाभकारी होता है। विशेषतः त्योहारों जैसे— ईद, बकरीद, होली आदि।
- ❖ बकरी का मूल्य उनके जिंदा वजन के अनुसार ही निर्धारित करना चाहिए।



74. मीठे जल में महाझींगा पालन

मीठे जल का महाझींगा (जायन्ट फ्रेस वाटर प्रॉन) जिसका वैज्ञानिक नाम मैक्रोबेकियम रोजनबर्गाई है। जल में नीचे अथवा किनारों पर रेंगने वाला आलसी प्रवृत्ति का सर्वभक्षी जीव है। जलीय कीड़े—मकोड़े, क्रस्टेशियन लार्वा तथा छोटे घोंघे आदि इसका प्राकृतिक भोजन है और रात्रिचर होने के कारण यह रात्रि काल में अधिक सक्रिय होता है। मीठे जल के महाझींगा में स्वजातिभोजी प्रवृत्ति होती है। खाद्य पदार्थ की उपलब्धता के अभाव अथवा भूख की अवस्था में बड़े झींगे छोटे झींगों को अपना आहार बना लेते हैं।

उत्तर प्रदेश एक अन्तर्राज्यीय राज्य है तथा मीठे पानी के विभिन्न प्रकार की जल संसाधनों से सम्पन्न है। विशेषकर तालाबों में मीठे जल के महाझींगा पालन हेतु काफी संभावनायें हैं। अभी तक मुख्य रूप से कार्प मछलियों (भारतीय मेजर कार्प यथा रोहू व नैन तथा विदेशी कार्प यथा सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प व कामन कार्प) के पालन की ओर ध्यान केन्द्रित रहा है परन्तु वर्तमान में मत्स्य विभाग द्वारा झींगा पालन पर भी बल दिया जा रहा है। मत्स्य पालक भी झींगा पालन के माध्यम से पर्याप्त रूप से लाभान्वित हो सकते हैं। जायन्ट फ्रेस वाटर प्रान यद्यपि भार में 400 ग्राम तक हो जाता है किन्तु लगभग 50 ग्राम का झींगा बाजार में विक्रय योग्य माना गया है। 6–7 माह में तैयार होने वाली यह नगदी फसल है तथा भार के अनुसार झींगों का मूल्य रु. 200.00 से रु. 300.00 प्रति किग्रा प्राप्त हो सकता है।

झींगा पालन हेतु तालाब :

झींगा पालने के लिए 0.4 से 1.0 हेक्टेयर क्षेत्रफल के आयताकार ऐसे तालाब जिनमें पानी भरने व बाहर निकालने की उचित व्यवस्था हो उपयुक्त होते हैं। ताकि पानी बाहर निकालकर झींगों को आसानी से पकड़ा जा सके।

तालाब की मिट्टी :

तालाब की मिट्टी पी.एच. 6.5–7.5, रेत 40 प्रतिशत, क्ले की मात्रा 40 प्रतिशत व सिल्ट 20 प्रतिशत उपयुक्त होती है।

तालाब का जल :

तालाब के जल का रंग हल्का हरा अथवा भूरा तथा गहराई 1.0 मीटर होनी चाहिए। पारदर्शिता 35–40 सेमी., पी.एच. मान 7.5–8.5 जलीय तापमान 8–34 डिग्री. से. (28–32 डिग्री. सेंट्रे. अधिक उपयुक्त) घुलित आक्सीजन 5 मिग्रा. प्रति ली. तथा कठोरता 40–50 मिग्रा. प्रति ली. उपयुक्त होती है। वांछित घुलित आक्सीजन के लिए तालाब में ताजा पानी मिलाया जाना चाहिए अथवा एरेटर की व्यवस्था की जानी चाहिए। मत्स्य पालक अपने तालाब की मिट्टी व पानी का परीक्षण मत्स्य विभाग की प्रयोगशालाओं द्वारा करा सकते हैं।

चूने का प्रयोग व उर्वरकीकरण :

तालाब में पानी भरने के बाद पी.एच. मान को दृष्टिगत रखते हुए 250–500 किग्रा./हे. की दर से चूने का प्रयोग एवं मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन व फास्फोरस को देखते हुए क्रमशः 250 किग्रा./हे. यूरिया व 200 किग्रा./हे. सिंगिल सुपर फास्फेट का प्रयोग विभागीय प्रयोगशालाओं की संस्तुतियों के अनुसार किस्तों में करना चाहिए ताकि तालाब में छोटे छोटे कीड़े उत्पन्न हो सके और प्राकृतिक आहार के रूप में उनका भक्षण झींगा द्वारा किया जा सके।

झींगा बीज संचय :

1.0 हेक्टेयर जलक्षेत्र के ऐसे तालाब जिसमें पानी बदलने और वायुकरण की सुविधा न हो में 20000–35000 तथा ऐसे तालाब जिसमें जल बदलाव, वायुकरण आदि सुविधायें उपलब्ध हो, में 70000–80000 तक झींगा बीज संचय किया जा सकता है।

झींगा बीज की उपलब्धता :

जायन्ट फ्रेश वाटर प्रान के प्रजनन के लिए खारे जल की आवश्यकता होती है। इसके लिए मत्स्य पालक उत्तर प्रदेश में मत्स्य विभाग में सम्पर्क कर सकते हैं। उत्तर प्रदेश की जलवायु को देखते हुए प्रदेश में मार्च / अप्रैल में झींगा बीज संचित किया जाना तथा नवम्बर माह तक हारवेस्टिंग किया जाना उपयुक्त व लाभकारी हो सकता है।

झींगा हेतु कृत्रिम आहार :

झींगा हेतु कृत्रिम आहार में 28–30 प्रतिशत प्रोटीन (50 प्रतिशत जन्तु और 50 प्रतिशत वनस्पति साधन में) उपलब्ध होनी चाहिए। आहार ऐसा दिया जाना चाहिए जो झींगा के लिए संतुलित भोजन हो, पानी में स्थिर रहे तथा जल को कम प्रदूषित करें।

उत्पादन एवं विपणन :

मादा झींगा की अपेक्षा नर झींगे आकार में बड़े होते हैं। सभी झींगे तालाब को खाली करके निकाले जा सकते हैं। 6–7 माह की पालन अवधि में लगभग 1000 किग्रा./हें. झींगा उत्पादन हो सकता है जिसे यदि रु. 250/- प्रति किग्रा. की दर से बेचा जाये तो रु0 2,50,000 की आय सम्भव है। तालाब प्रबन्ध व्यवस्था, उर्वरक, झींगा बीज, कृत्रिम आहार, विटामिन, मिनरल एवं दवाईयां, अन्य विविध व्यय आदि पर लगभग रु. 1,25,000 का व्यय सम्भावित है तथा इस प्रकार 1.0 हें. का जलक्षेत्र से लगभग रु. 1,25,000 का शुद्ध लाभ अर्जित किया जा सकता है। स्पष्ट है कि झींगा पालन में लाभ की काफी संभावनायें हैं।

मछली की अपेक्षा झींगा शीघ्र खराब होकर दुर्गन्ध उत्पन्न करता है। इसे पकड़ने के तुरन्त बाद बर्फ में रखा जाय तथा निर्यातको अथवा शहरों में बड़े होटलों में सम्पर्क स्थापित करते हुए झींगा की बिक्री की जाय ताकि उचित मूल्य मिल सके।



75. दुध उत्पादन

जैसा कि हम सभी जानते हैं कि दूध एक सर्वोत्तम पेय एवं खाद्य पदार्थ है। इसमें भोजन के सभी आवश्यक तत्व जैसे प्रोटीन, शक्कर, वसा, खनिज लवण तथा विटामिन आदि उचित मात्रा में पाये जाते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक होते हैं। इसीलिए दूध को एक सम्पूर्ण आहार कहा गया है।

दूध में पाये जाने वाले उपर्युक्त आवश्यक तत्व मनुष्यों की ही भौति दूध में पाये जाने वाले सूक्ष्म (आँख से न दिखायी देने वाले) जीवाणुओं की वृद्धि के लिए भी उपयुक्त होते हैं, जिससे दूध में जीवाणुओं की वृद्धि होते ही दूध शीघ्र खराब होने लगता है। इसे अधिक समय तक साधारण दशा में सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है। दूसरे कुछ हानिकारक जीवाणु दूध के माध्यम से दूध पीने वालों में विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ पैदा कर देते हैं। अतः दूध को अधिक समय तक सुरक्षित रखने, गन्दे एवं असुरक्षित दूध की पीने से होने वाली बीमारियों से उपभोक्ताओं को बचाने तथा अधिक आर्थिक लाभ कमाने के उद्देश्य से दूध का उत्पादन साफ तरीकों से करना अत्यन्त आवश्यक है।

स्वच्छ दूध :

वह दूध जो साफ एवं बीमारी रहित जानवरों से, साफ वातावरण में, साफ एवं जीवाणु रहित बर्तन में, साफ एवं बीमारी रहित ग्वालों द्वार निकाला गया हो तथा जिसमें दिखाई देने वाली गन्दगियों (जैसे गोबर के कण, घास—फूस के तिनके, बाल मच्छर, मक्खियाँ आदि) बिल्कुल न हो तथा न दिखाई देने वाली गन्दगी जैसे सूक्ष्म आकार वाले जीवाणु कम से कम संख्या में हो। दूध में दो प्रकार की गन्दगियाँ पायी जाती हैं :—

1. आँख से दिखाई देने वाली गन्दगियाँ—जैसे गोबर के कण, घास—फूस के तिनके, बाल धूप के कण, मच्छर, मक्खियाँ आदि। इन्हें साफ कपड़े या छनने से छान कर अलग किया जा सकता है।
2. आँख से न दिखाई देने वाली गन्दगियाँ—इसके अन्तर्गत सूक्ष्म आकार वाले जीवाणु आते हैं, जो केवल सूक्ष्मदशट्ट यन्त्र द्वारा ही देखे जा सकते हैं। इन्हें नष्ट करने के लिए दूध को गरम करना पड़ता है दूध को लम्बे समय तक रखना हो तो इसे ठंडा करके रखना चाहिए।

गन्दगियों के स्रोत :

उपरोक्त गन्दगियों के दूध में प्रवेश करने के मुख्यतः दो स्रोत हैं :

1. जानवरों के अयन से :

थनों के अन्दर से पाये जाने वाले जीवाणु।

2. बाहरी वातावरण से :

- अ) जानवर के बाहरी शरीर से।
- ब) जानवर के बंधने के स्थान से।
- स) दूध के बर्तनों से।
- द) दूध दुहने वाले ग्वाले से।
- य) अन्य साधनों से मच्छर, मक्खियों, गोबर व धूल के कणों, बालों इत्यादि से।

हमारे प्रदेश में इस समय कुल दूध का उत्पादन 318.20 लाख मीट्रिक टन हो रहा है जो अधिकतर गाँवों में या शहर की निजी डेरियों में ही उत्पादित किया जाता है, जहाँ सफाई पर ध्यान न देने के कारण दूध में जीवाणुओं की संख्या बहुत अधिक होती है तथा दिखाई देने वाली गन्दगियाँ जो नहीं होने चाहिए वह भी मौजूद रहती है। इसके मुख्य कारण निम्न हैं—

1. गाय के बच्चे को थन से दूध का पिलाना।
2. गाँवों एवं शहरों में गन्दे स्थानों पर दूध निकालना।

3. गन्दे बर्तनों में दूध निकालना एवं रखना ।
4. पशुओं को दुहने से पहले ठीक से सफाई न करना ।
5. पशुओं को दुहने वाले के हाथ एवं कपड़े साफ न होना ।
6. दूध दुहने वाले का बीमार होना ।
7. दूध बेचने ले जाते समय पत्तियों, भूसे व कागज आदि से ढकना ।
8. देश की जलवायु का गर्म होना ।
9. गन्दे पदार्थों का दूध में अपमिश्रण करना ।

साफ दूध का उत्पादन स्वास्थ्य एवं आर्थिक लाभ के लिए आवश्यक है अतः ऐसे दूध का उत्पादन करते समय निम्न बातों पर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है :—

1. दूध देने वाले पशु से सम्बन्धित सावधानियाँ :

- अ) दूध देने वाला पशु पूर्ण स्वस्थ होना चाहिए। टी.बी., थनैला आदि बीमारियाँ नहीं होनी चाहिए। पशु की जॉच समय—समय पर पशु चिकित्सक से कराते रहना चाहिए।
- ब) दूध दुहने से पहले पशु के शरीर की अच्छी तरह सफाई कर लेना चाहिए। दुहाई से पहले पशु के शरीर पर खरैरा करके चिपका हुआ गोबर, धूल, कीचड़, घास आदि साफ कर लेना चाहिए। खास तौर से पशु के शरीर के पीछे हिस्से, पेट, अयन, पूँछ व पेट के निचले हिस्से की विशेष सफाई करनी चाहिए।
- स) दुहाई से पहले अयन की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए एवं थनों को किसी जीवाणु नाशक के घोल की भीगे हुए कपड़े से पोंछ लिया जाय तो ज्यादा अच्छा होगा।
- द) यदि किसी थन से कोई बीमारी हो तो उससे दूध नहीं निकालना चाहिए।
- य) दुहाई से पहले प्रत्येक थन की दो चार दूध की धारें जमीन पर गिरा देनी चाहिए या अलग बर्तन में इकट्ठा करना चाहिए।

2. दूध देने वाले पशु के बांधने के स्थान से सम्बन्धित सावधनियाँ :

- अ) पशु बॉधने का व खड़े होने के स्थान पर्याप्त होना चाहिए।
- ब) फर्श यदि सम्भव हो तो पक्का होना चाहिए। यदि पक्का नहीं हो तो कच्चा फर्श समतल हो उसमें गड्ढे इत्यादि न हो। मूत्र व पानी निकालने की व्यवस्था होनी चाहिए।
- स) दूध दुहने से पहले पशु के चारों ओर सफाई कर देनी चाहिए। गोबर, मूत्र हटा देना देना चाहिए। यदि बिछावन बिछाया गया हो तो दुहाई से पहले उसे हटा देना चाहिए।
- द) दूध निकालने वाली जगह की दीवारें, छत आदि साफ होनी चाहिए। उनकी चूने से पुताई करवा लेनी चाहिए तथा फर्श की फिनाईल से धुलाई दो घण्टे पहले कर लेनी चाहिए।

3. दूध के बर्तन से सम्बन्धित सावधानियाँ :

- अ) दूध दुहने का बर्तन साफ होना चाहिए। उसकी सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दूध के बर्तन को पहले ठण्डे पानी से, फिर सोडा या अन्य जीवाणु नाशक रसायन से मिले गर्म पानी से, फिर सादे खौलते हुए पानी से धोकर धूप में चूल्हे के ऊपर उल्टी रख कर सुखा लेना चाहिए।
- ब) साफ किए हुए बर्तन पर मच्छर, मकिखियों को नहीं बैठने देना चाहिए तथा कुत्ता, बिल्ली उसे चाट न सके।
- स) दूध दूहने के बर्तन का मुँह चौड़ा व सीधा आसमान में खुलने वाला नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे मिट्टी, धूल, गोबर आदि के कण व घास—फूस के तिनके, बाल आदि सीधे दुहाई के समय बर्तन में गिर जायेंगे इसलिए बर्तन सकरें मुँह वाले हो तथा मुँह टेढ़ा होना चाहिए।

4. दूध दुहने वाले व्यक्ति से सम्बन्धित सावधानियाँ :

- अ) दूध दुहने वाला व्यक्ति स्वस्थ होना चाहिए तथा उसे किसी प्रकार की कोई बीमारी न हो।
- ब) उसके हाथों के नाखून कटे होने चाहिए तथा दुहाई से पहले हाथों को अच्छी तरह से साबुन से धो लिया गया हो।
- स) ग्वाले या दूध दुहने वाले व्यक्ति के कपड़े साफ होने चाहिए तथा सिर कपड़े से ठका हो।
- द) दूध निकालते समय सिर खुजलाना व बात करना, तम्बाकू खाकर थूकना, छींकना, खांसना आदि गन्दी आदतें व्यक्ति में नहीं होनी चाहिए।

5. अन्य सावधानियाँ :

- अ) पशुओं को चारा, दाना, दुहाई के समय नहीं देना चाहिए, बल्कि पहले या बाद में दें
- ब) दूध में मच्छर, मक्खियों का प्रवेश रोकना चाहिए।
- स) यदि दूध को लम्बे समय तक रखना चाहिए। ठण्डा करने से दूध में पाये जाने वाले जीवाणुओं की वृद्धि रुक जाती है। दूध को गर्मियों में ठण्डा करने के लिए गाँवों में सबसे सरल तरीका यह कि घर में सबसे ठण्डे स्थान पर जमीन में एक गड्ढा खोद लें और उसमें बालू बिछा दें तथा उसे पानी से तर कर दें और उसके ऊपर दूध का बर्तन जिसका मुँह महीन साफ कपड़े से बंधा हो, उसमें रख दें समय—समय पर गड्ढे में पानी डालते रहे। ऐसा करने पर आप दूध को अधिक समय तक बिना खराब हुए रख सकते हैं।
- द) दूध को कभी भी बिना गर्म हुए प्रयोग में नहीं लाना चाहिए।

इस प्रकार से उत्पन्न दूध वास्तव में अमूल्य होता है लेकिन यही दूध अगर अस्वच्छ व असामान्य दशाओं में पैदा किया व रखा गया हो तो वही दूध हानिकारक हो जायेगा।





ज्वार (Sorghum Millet)



बाजरा (Pearl millet)



कंगनी (Foxtail Millet)



रागी (Finger Millet)



सांवा (Barnyard)



चेना (Proso Millet)



कुटकी (Little Millet)



कोदो (Kodo Millet)



कुट्टू (Buckwheat)



रामदाना (Amaranth)

गेहूँ, चावल की तुलना में कदन्न (श्री अन्न) अनाजों का पोषक मान (प्रति 100 ग्राम)

कदन्न अनाज	प्रोटीन (ग्राम)	कार्बो हाइड्रेट (ग्राम)	वसा (ग्राम)	ऊर्जा (कि.कौ.)	रेशा (ग्राम)	कैलिशायम (मिग्रा.)	फास्फोरस (मिग्रा.)	मैग्नी सियम (मिग्रा.)	जिंक (मिग्रा.)	आयरन (मिग्रा.)	थायमिन (मिग्रा.)	राइबो फ्लेविन (मिग्रा.)	विटामिन (मिग्रा.)	फोलिक एसिड (मिग्रा.)
ज्वार	09.97	67.68	1.73	334	10.2	27.6	274	133	1.9	3.9	0.35	0.14	2.1	39.4
बाजरा	11.92	66.80	5.01	378	8.70	42.0	285	114	1.7	8.00	0.42	0.29	1.8	14.0
रागी	07.16	66.82	1.92	320	11.2	364.0	210	146	2.5	4.6	0.37	0.17	1.3	34.7
चीना	12.50	70.40	1.10	341	—	14.0	206	153	1.4	0.8	0.41	0.26	4.5	—
कोदो	12.30	60.10	4.30	331	—	31.0	166	81	2.4	2.8	0.59	0.11	3.2	15.0
कुटकी	8.92	65.55	3.89	346	7.7	16.1	130	91	1.8	1.2	0.26	0.05	1.3	36.2
सांवा	06.20	66.66	2.20	307	—	20.0	280	82	3.0	5.0	0.33	0.10	4.2	—
गेहूँ	10.59	64.72	1.47	321	11.2	39.4	315	125	2.8	3.9	0.46	0.15	2.7	30.1
चावल	07.94	78.24	0.52	356	02.8	07.05	96	19	1.2	0.8	0.05	0.05	1.7	9.32

स्रोत : न्यूट्रीटिव वैल्यू ऑफ इण्डियन फूड्स—राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद (2018)

2023

कृपया अधिक जानकारी हेतु निःशुल्क दूरभाष 1800-180-1551 पर सम्पर्क करें

विशेष जानकारी हेतु कृषि विभाग के स्थानीय कर्मचारी/अधिकारी से सम्पर्क करें
अथवा कृषि विभाग की वेबसाइट : <http://upagripardarshi.gov.in> देखें।